भारतीय भक्ति परम्परा में श्री हनुमान

शोध-प्रबन्ध

इलाहाबाद विश्वविद्यालय
की
डी० फिल० उपाधि हेतु
प्रस्तुत

निर्देशक
साहित्य वाचस्पति, डॉ० राम कुमार वर्मा
पद्मभूषण

शोधकर्ता
सुरेन्द्र देव पाण्डेय



हिन्दी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद
१९८६

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध शोधकर्ता की मौलिक कृति है। मैं इसे परीक्षार्थ अग्रसारित करता हूँ।

रामकुमार वर्मा

डॉ॰ राम कुमार वर्मा
निर्देशक

साकेत,
इलाहाबाद।

प्राक्कथन

प्रस्तुत प्रबन्ध का विषय है-"भारतीय भक्ति परम्परा में श्री हनुमान" भारतीय धर्मशास्त्रों में भक्ति की विभिन्न परम्पराओं का वर्णन प्राप्त होता है। प्राचीन काल में "भक्ति" शब्द का प्रयोग आधुनिक अर्थ में नहीं था, तथापि सुनिश्चित है कि भक्ति भाव के अंकुर वैदिक युग में विद्यमान थे। इसी अतीतभाव के गर्भ से भक्ति भाव प्रस्फुटित होभक्ति परम्परा की अविरल धारा प्रवाहित हो उठी। भक्ति के प्रमुख आचार्यों ने ईश्वर के प्रति अनुरक्ति की पराकाष्ठा को भक्ति की संज्ञा दी है। वस्तुतः धर्म की अनुराग पूर्ण अनुभूति ही भक्ति है।

भक्ति परम्परा में भक्ति भाव वह दर्पण है, जिसके प्रतिबिम्ब में भक्त का अपूर्व आदर्श और उत्कृष्ट जीवन दर्शन सदा सर्वदा प्रतिबिम्बित होता रहता है। भक्ति परम्परा में हनुमान जी को आदर्श भक्त के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है, जिनके आदर्श भक्ति रूपों का वर्णन महर्षि बाल्मीकि तथा गोस्वामी तुलसी दास जी एवं अन्य राम काव्य प्रणेताओं ने मुक्त कंठ से वर्णित किया है। भक्ताधिराज श्री हनुमान जी के अन्तःकरण में अखिल कोटि ब्रह्माण्ड नायक परात्पर परब्रह्म, भगवान श्री राम एवं पराम्बा भगवती सीता की पवित्र विरुदावली सदैव विद्यमान रहती है।

एम0ए0 में विशेष कवि के रूप में गोस्वामी तुलसीदास जी पर अध्ययन करने के उपरांत हनुमदभक्ति आदर्श पक्ष ने मुझे विशेष आकृष्ट किया। भक्ति विषयक सन्दर्भों में हनुमान भक्ति का दिव्यातिदिव्य चरित्र एवं उदात्त व्यक्तित्व का अध्ययन तथा उनके विविध स्वरूपों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन, चिंतन,

करने की इच्छा बलवती हुई। फलतः हनुमान जी की ही अनुकम्पा से परम श्रद्धेय गुरुवर डॉ0 राम कुमार वर्मा ने "भारतीय भक्ति परम्परा में श्री हनुमान" विषय पर शोधकार्य करने की अनुमति प्रदान की। इलाहाबाद विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग के शोध समिति ने उक्त विषय पर ही संस्तुति प्रदान करके मनोबल में वृद्धि की। शोध प्रबन्ध सात अध्यायों में विभक्त है, जिसके अध्यायों का संक्षिप्त विवरण क्रमशः निम्नवत है-

प्रथम अध्याय के अन्तर्गत भक्ति शब्द के विभिन्न अर्थों तथा परिभाषाओं को प्रस्तुत किया गया है। तदनन्तर भक्ति विषयक सन्दर्भों में आचार्यों के विभिन्न मन्तव्य एवं भक्ति के विभिन्न भागों को यथारूप प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। भक्ति के विभिन्न भेदों में विवेचन के साथ ही साथ वैदिक युगीन भक्ति का रूप शास्त्रानुकूल वर्णित किया गया है। भक्ति का वैदिक युग से लेकर हिन्दी साहित्य तक का वर्णन प्रस्तुत किया गया है। भक्ति के विभिन्न आचार्यों तथा आचार्य कोटि के भक्त कवियों का भी विश्लेषण किया गया है।

द्वितीय अध्याय के अन्तर्गत सम्प्रदाय बद्ध साहित्य के अन्तर्गत भक्ति के विकासात्मक स्वरूप की विभिन्न परिभाषाएँ प्रस्तुत की गयी हैं। तदनन्तर भक्ति कालीन संतों के दृष्टिकोण के वर्णन के साथ-साथ विभिन्न सम्प्रदाय तथा सम्बन्धित आचार्यों का भी उल्लेख किया गया है। सगुण निर्गुण भक्ति को व्याख्यायित करते हुए उपासना पद्धतियों एवं सगुण मार्गी साधकों का भी विवेचन करने का प्रयास किया गया है।

तृतीय अध्याय के अन्तर्गत हनुमान जी के भक्ति परक चरित्र के उल्लेख में भारतीय साहित्य के काव्य और नाटक साहित्य में हनुमद्भक्ति स्वरूपों का वर्णन किया गया है। हनुमान के भक्ति-भावित चरित्र के विवेचन के साथ ही साथ उनके अपूर्व व्यक्तित्व, अप्रतिम शौर्य, आदि का उल्लेख किया गया है। मेरे जैसे अकिंचन के लिए हनुमान का गरिमायुक्त चरित्रांकन करना नितान्त असंभव है, तथापि यत्किंचित जो चरित्रांकन की चेष्टा की गई, उसमें हनुमान जी की कृपा को ही सर्वोपरि समझना चाहिए।

तदनन्तर चतुर्थ अध्याय के अन्तर्गत हिन्दी एवं हिन्दीतर कुछ प्रमुख साहित्य में वर्णित हनुमद्भक्ति के विभिन्न रूपों का चित्रण किया गया है। उदाहरणार्थ- मलयालम, तमिल, राजस्थानी, बुन्देली आदि। तदनन्तर कृष्ण काव्य में प्राप्त हनुमद्भक्ति विषयक सन्दर्भों को प्रस्तुत किया गया है।

पंचम अध्याय के अन्तर्गत हनुमान के विभिन्न स्वरूपों एवं उनके नामाभिप्रायों का विवेचन प्रस्तुत किया गया है। तदनन्तर हनुमान जन्म के विभिन्न हेतुओं तथा कतिपय विशिष्ट गुणों का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

षष्ठ अध्याय के अन्तर्गत हनुमद्भक्ति के प्रतीक भारत के प्रमुख मन्दिरों का विवरण दिया गया है, साथ ही साथ हनुमान भक्ति के मन्त्रों तथा उनके प्रभावों को प्रस्तुत करने की यथा संभव चेष्टा की गयी है।

सप्तम अध्याय के अन्तर्गत हनुमान स्वरूप का वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। हनुमान जी को प्राणवायु (ऑक्सीजन) रूप में प्रदर्शित

करने की चेष्टा की गई है। हनुमान(प्राणवायु) वैज्ञानिक दृष्टि से ऑक्सीजन ही हैं। ऑक्सीजन रूप में हनुमान समस्त जगत में व्याप्त हैं, एतदर्थ उन्हे भविष्य देवता के रूप में भी स्वीकार किया गया है। हनुमान के आधुनिक स्वरूप को सर्वव्यापी रूप में चित्रित किया गया है। उपसंहार के अन्तर्गत भक्ति के विभिन्न पक्षों को उद्घाटित किया गया है, तथा भक्ति परम्परा में हनुमान को सर्वोत्कृष्ट आदर्श भक्त के रूप में चित्रित किया गया है।

प्रबन्ध के अध्यायों का संक्षिप्त विवरण देने के पश्चात् उन सभी महानुभावों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना चाहूँगा जिनके प्रेरणा, सहयोग से यह प्रबन्ध पूर्ण हुआ। सर्वप्रथम मैं परमश्रद्धेय सिद्ध सारस्वत, अनन्य शब्दाराधक, शब्द मर्मी भाषा साधक, परमपूज्य गुरुवर डॉ० राम कुमार वर्मा के प्रति हृदय से कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ, जो कि आकृति से प्रभास्वर, प्रकृति से सौम्य भाव से कृश हैं। आपने अपने अत्यन्त व्यस्तमय जीवन में भी सदैव योग्यतम पथ प्रदर्शन, निर्देशन एवं प्रोत्साहन दिया है। तदनन्तर श्री हनुमान आराधना मंडल प्रयाग के संचालक एवं श्री रामदूत त्रैमासिक के सम्पादक श्री कृष्ण चन्द्र जोशी जी के प्रति आभार प्रकट करता हूँ, जिनके द्वारा मुझे सर्वदा अथक सहयोग एवं सत्प्रेरणायें प्राप्त होती रही हैं। आपके द्वारा संचालित मंडल से हनुमद्भक्ति का प्रचार प्रसार सम्पूर्ण भारत में अबाध गति से हो रहा है।

तत्पश्चात साकेत के महान् संत मानस तत्वान्वेषी सुप्रसिद्ध चिन्तक, नित्यानवरत भारती समाराधन तत्पर पं० राम कुमार दास रामायणी

का मैं अत्यन्त आभारी हूँ, जिन्होंने न केवल श्री राम ग्रन्थागार से अमूल्य सामग्रियाँ प्रदान की अपितु विभिन्न प्रकार के यथावश्यक निर्देश भी दिये।

एम0ए0 परीक्षा §का0सु0साकेत म0फैजाबाद§ से उत्तीर्ण करने के कारण वहाँ के गुरुजनों की महती कृपा से शोध प्रबन्ध को संबल मिला है। अतः उन श्रद्धेय गुरुजनों में डाँ0 राधिका प्रसाद त्रिपाठी, डाँ0 राम शंकर त्रिपाठी डाँ० जनार्दन उपाध्याय, डाँ0 श्री कृष्ण उपाध्याय, डाँ० कमलाकर पाण्डेय तथा अन्य सभी गुरुजनों के प्रति कृतज्ञताज्ञापित करना अपना परम कर्तव्य समझता हूँ, जिनका आशीष एवं सत्प्रेरणा ही मेरा पथ प्रदर्शन करता रहा है।

तत्पश्चात् पुरुषोत्तम नारायण मिश्र एवं राम स्वरूप को तथा अन्य विज्ञजनों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने समय-समय पर सहयोग प्रदान किया है।

भक्ति रस धारा में प्रवाहमान, परमपूज्य पिता श्री के सतत् साधना के प्रतिफल स्वरूप ही शैशव काल से भक्ति पथ की ओर उन्मुखता प्राप्त हुई, उक्त प्रबन्ध की परिपूर्णताश्रेय उनकी महती अनुकम्पा ही है, जिनका जीवन विगत दो दशकों से भगवत्कथामृत प्रवचन, मनन, चिन्तन एवं समाराधन में ही व्यतीत हो रहा है।

अग्रज डाँ० नरेन्द्र देव पाण्डेय § प्रवक्ता हिन्दी, काशी नरेश रा0स्नातकोत्तर म0 ज्ञानपुर, वाराणसी § की सत्प्रेरणा एवं प्रबन्ध के विहंगाव लोकन से भी अन्तिम छोर तक पहुँचने में सहयोग प्राप्त हुआ, उनके प्रति मुझे कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए संकोच का अनुभव हो रहा है।

तदुपरान्त इलाहाबाद विश्वविद्यालय पुस्तकालय से शोध प्रबन्धों तथा शोध से सम्बन्धित पुस्तकों का अवलोकन एवं निरीक्षण करने का अवसर प्राप्त हुआ। एतदर्थ सभी कर्मचारियों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ। इसके अतिरिक्त अन्य सुविज्ञ, मर्मज्ञ, आलोचकों, समीक्षकों तथा अनुसंधाताओं की कृतियों का मैंने यथेष्ट लाभ उठाया है, अतः मैं इन सबों का आभारी हूँ।

अन्त में आभार स्वीकृत करने के सन्दर्भ में समवेत रूपेण उन अनेक मनीषियों के प्रति भी कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ, जिनकी रचनाओं से प्रत्यक्ष या अपरोक्ष रूप से सहयोग प्राप्त हुआ है। अपनेअभिन्न अनुसंधित्सु मित्रों के प्रति मौन रहना सर्वथा अनुचित है, इसलिए सर्वश्री बलराम, नंदलाल तथा दिनेश कुमार त्रिपाठी आदि को धन्यवाद देता हूँ। तदनन्तर अन्य मित्रों को भी धन्यवाद देना चाहूँगा जिन्होंने समय-समय पर यथावश्यक रूप से सहयोग प्रदान किया है।

शोध प्रबन्ध में टंकण की अशुद्धियों को यथासंभव सुधारने का प्रयास किया है, फिर भी यदि कहीं अशुद्धियां शेष रह गयी हों तो उनके लिए क्षमा प्रार्थी हूँ। टंकण यन्त्र में कतिपय अक्षरों एवं मात्राओं का अभाव है जिससे लिपि की शुद्धता का पूर्ण निर्वाह नहीं हो सका है।

अन्त में शोध प्रबन्ध टंकक श्री शशि कान्त श्रीवास्तव का भी मैं आभारी हूँ, जिन्होंने यथासंभव शुद्ध टंकण कार्य कर संशोधन सम्बन्धी विशेष कठिनाइयों से बचाते हुए मेरी सहायता की है।

भारतीय भक्ति परम्परा में हनुमान दास्य भक्ति के अप्रतिम निदर्शन हैं। उनके दिव्यातिदिव्य चरित्र में भक्ति के समस्त उपमान समाहित हैं।

वह परम प्रभु राम के अनन्य उपासक हैं, उनके अविराम सेवक हैं, वह आजन्म ऊर्ध्वरेता ब्रह्मचारी हैं। सांसारिक विषय वासनाओं से सर्वथा अप्रभावित अस्पृष्ट हैं और अनन्तः वह ज्ञान विज्ञान के भंडार हैं और विश्व वाङ्मय में मारुति सरीखे, अनन्य सेवी; अकिंचन, निरीह, निःस्वार्थ एवं निष्ठावान भक्त का उदाहरण अन्यत्र अप्राप्त है।

भारतीय भक्ति परम्परा में हनुमान के अतिरिक्त अन्य आदर्श भक्तों का भी विवेचन किया जाना अपेक्षित है। भारतीय भक्ति परम्परा में श्री हनुमान के यदि विशेष पक्षों का विश्लेषण तथा भक्ति का स्वरूपात्मक दृष्टिकोण यत्किंचित प्रतिभासित हुआ है तथा भक्ति साहित्य के सुधी अन्वेषक एवं चिन्तक शोध प्रबन्ध के उपादेयता से आकृष्ट हुए, तो मैं अपने श्रम को सार्थक समझूँगा।

सुरेन्द्रदेव पाण्डेय
३१।१०।८६ई०
(सुरेन्द्र देव पाण्डेय)

"सोपान"
जमदग्निपुरी (गोण्डा)
हनुमज्जयन्ती
शुक्रवार, कार्तिक कृष्ण पक्ष
चतुर्दशी, वि०सं० 2043
तदनुसार- 31 अक्टूबर, 1986 ई०

विषयानुक्रमणिका

संकेताक्षर

पृ०सं०

प्राक्कथन - क- च

प्रथम अध्याय- विषय प्रवेश 1- 105

क- भक्ति शब्द की व्युत्पत्ति अर्थ तथा परिभाषा 1-9
नारद, शाण्डिल्य, व्यास, गर्गाचार्य, मध्वाचार्य
मधुसूदन सरस्वती, वल्लभाचार्य, जीवस्वामी,
रूप गोस्वामी, नाभादास, श्री कृष्ण स्वामी,
रामानन्द, गोस्वामी तुलसीदास, डॉ भंडारकर
आचार्य राम चन्द्र शुक्ल, डॉ० मुंशी राम शर्मा,
आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ०

ख- वैदिक भक्ति- ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद 10-71
ब्राह्मण और आरण्यक, उपनिषदों में भक्ति
श्रीमद भागवत, श्रीमद्भागवत गीता, पुराणों में
भक्ति, रामायण में भक्ति, शिलालेखों में
भक्ति, तुलसी साहित्य में भक्ति, महाभारत
में भक्ति, भक्ति सूत्रों में भक्ति, आलवार भक्त
और भक्ति तथा आचार्य कोटि के भक्त कवि

ग- भक्ति के भेद- भक्ति के लक्षण, अंग और साधन, 72-97
भक्ति की भूमिकाएं, अवतारवाद साहित्य में
भक्ति का उद्भव तथा विकास

घ- हिन्दी साहित्य का भक्ति काल और 98-105
भक्ति भावना, ज्ञानाश्रयी भक्ति, वैष्णवभक्ति
निर्गुण भक्ति सगुण भक्ति, शैव भक्ति, मध्ययुगीन
भक्तों के सामान्य विश्वास, निष्कर्ष

पृ० सं०

द्वितीय अध्याय -सम्प्रदाय वद्ध साहित्य में भक्ति का स्वरूप 106-167

अ- समन्वय की प्रक्रिया- भक्ति के स्वरूप में विकासात्मक अन्तर- वैदिक काल, उपनिषदकाल ज्ञान मूला भक्ति, श्रमण संस्कृति और उसमें भक्ति के तत्व, आगम साहित्य में भक्ति, पुराणों में भक्ति का स्वरूप, पंच देवोपासना और दशावतार, भक्ति में वैखानस का प्रभाव, शैव शाक्त आगमों का प्रभाव, भाव साधना और उसका प्रभाव। 106-116

ब- भक्ति कालीन संतो का दृष्टिकोण- निर्गुण रूप;-कबीर, जायसी, सगुण भक्ति का रूप विविध सम्प्रदाय तथा सिद्धान्त, श्री रामानुजाचार्य-, विशिष्टा द्वैत 1017-1137 द्वैता द्वैत - श्री निम्बार्काचार्य, 11 वीं शताब्दी, उत्तरार्द्ध, द्वैतवाद मध्वाचार्य 1199 ई० शुद्धाद्वैत विष्णुस्वामी, वल्लभाचार्य 1479 ई०, रामानन्द 1450 से 1526 वि०तक गोस्वामी तुलसी दास 1531 ई०, सूरदास 1478 ई०, निर्गुण सगुण में अन्तर 116-160

स- भक्ति आन्दोलन और उसकी पृष्ठभूमि उपासना पद्धति और सूफी मार्गी साधक, सूफी साधना और उसका स्वरूप 160-167

पृ०सं०

तृतीय अध्याय- हनुमान के भक्ति परक चरित्र के उल्लेख में भारतीय साहित्य के काव्य नाटक साहित्य में सन्दर्भ- 168-277

हनुमान शब्द के व्युत्पत्ति उनके व्यक्तित्व का निरूपण

क- काव्य साहित्य में- वेद,वाल्मीकि रामायण 168-267
महाभारत,में वर्णित हनुमान भक्ति का रूप,पुराण
उपनिषद,अध्यात्म रामायण ,आनन्द रामायण,
तत्व संग्रह रामायण ,हनुमत् संहिता,अपभ्रंश
रामायण पउम चरिउ,गोविन्द रामायण
कृति वासीय रामायण- कंबन रामायण,तुलसी
साहित्य

ख- संस्कृत नाट्य साहित्य में हनुमान के भक्ति 267-277
परक चरित्र- हनुमन्नाटक,महावीर चरितम,
उत्तरराम चरितम- अनर्घराघव,महानाटक
प्रसन्न राघव।

चतुर्थ अध्याय- हिन्दी एवं कुछ प्रमुख हिन्दीतरसाहित्य में वर्णित हनुमान भक्ति का रूप 278-345

क- हिन्दी साहित्य- [illegible] ,[illegible] 278-335
मलयालम ,वंगीय स्मृति,राजस्थानी लोक
साहित्य,मालवी लोक साहित्य,बुन्देली लोक
साहित्य,तेलगु,नागपुरी लोक साहित्य एवंअन्य

पृ0 सं0

पंचम अध्याय- हनुमान के विभिन्न स्वरूपों का परिचय- जन्म कथाओं के सन्दर्भों के आधार पर श्री हनुमन्नाम विवेचन-हनुमान — 346-421

शंकर सुवन,पवन तनय,केसरी नन्दन,आंजनेय, हनुमान का मधुर स्वरूप,हनुमान का महावीरत्व ज्ञानि नामाग्रगण्य हनुमान,अतुलित बलशाली हनुमान ,संगीत कोविद हनुमान,दास्याभक्ति के अप्रतिम निदर्शन हनुमान,हनुमान का पंचमुखी स्वरूप,हनुमान का सान्निध्य,आदर्श सेवक हनुमान, रुद्रावतार मारुति,गीतोक्त अनन्य भक्ति के मूर्तरूप हनुमान,निष्कर्ष ।

-

षष्ठम् अध्याय- श्री हनुमान भक्ति के प्रतीक मन्दिरों का संक्षिप्त परिचय एवं आराधना विषयक तथ्य- — 422-473

अ- भारत के प्रमुख श्री हनुमान मन्दिर-अयोध्या- हनुमान गढ़ी,हनुमन्निवास- पहाड़पुर,ज्ञानमुद्रा में हनुमान,दास भाव में हनुमान,व्यास हनुमान वाराणसी के हनुमान मन्दिर ,प्रयाग के हनुमान मन्दिर,चित्रकूट,हनुमान धारा ,लखनऊ- अन्य प्रमुख मन्दिर। — 422-436

ब- बिहार प्रान्त के कुछ प्रमुख मन्दिर आंजन जनकपुर,सीतामढ़ी — 436-438

स- बंगाल के प्रमुख मन्दिर — 439

		पृ०सं०
य-	असम प्रदेश के कुछ प्रमुख मन्दिरें	440
य-	दक्षिणभारतीय प्रसिद्ध श्री हनुमान मन्दिर	441-447
र-	मध्य प्रदेश के प्रसिद्ध हनुमान मन्दिर	448-451
ल-	गुजरात के प्रमुख.हनुमान मन्दिर	451-452
व-	राजस्थान के प्रमुख मन्दिर	452-455
श-	हरियाणा एवं पंजाब के प्रमुख हनुमान मन्दिर	454-457
ष-	महाराष्ट्र के प्रमुख हनुमान मन्दिर	457-458
	पूजन की विधि उपासना,उपवास	
	हनुमान भक्ति के मन्त्र तथा प्रभाव	
	हनुमान भक्ति की विशिष्टता	458-473

सप्तम अध्याय-	474- 503
हनुमान स्वरूप का वैज्ञानिक विवेचन	
हनुमान का आधुनिक स्वरूप- अन्य देवताओं की भक्ति से हनुमान भक्ति का तुलनात्मक विश्लेषण - विदेशों में हनुमान स्वरूप की झलक मात्र	
उपसंहार	504-512
परिशिष्ट"क"कमोन्द्र प्रयोग ले०तुलसीदास	513- 523
परिशिष्ट"ख" सहायक ग्रन्थों की अनुक्रमणिका	
1- संस्कृत	
2- हिन्दी	
3- पत्र-पत्रिकाएं	
4- अंग्रेजी	

संकेताक्षर

वा० रा०	वाल्मीकि रामायण
रा० मा०	राम चरित मानस
मा०पी०	मानस पीयूष
क०ग्र०	कबीर ग्रन्थावली
कं० रा०	कंबन रामायण
मे० को०	मेदिनी कोश
अ० रा०	अध्यात्म रामायण
गी०	गीतावली
वा०पु०	वायु पुराण
ऋ०	ऋग्वेद

प्रथम अध्याय

विषय प्रवेश

(क) "भक्ति" शब्द की व्युत्पत्ति, अर्थ तथा परिभाषाएं-

"भक्ति" शब्द के मूल पर विचार करते समय अधिकांश मनीषियों ने "भज्" धातु से इसकी व्युत्पत्ति मानी है।[1] "भज्" सेवायाम् अथवा "भज्" पूजायाम् के अर्थ में प्रयुक्त धातु से "भक्ति" शब्द निष्पन्न होता है। नगेन्द्र नाथ वसु ने हिन्दी विश्वकोष में "भक्ति" के अठारह अर्थों का उल्लेख किया है।[2] उन्होंने भी "भज्यते" की मूल व्युत्पत्ति "भज्-क्तिन" से मानी है। यद्यपि वाचस्पत्य, वृहद्संस्कृताभिधान, शब्दार्थ चिन्तामणि आदि ने अभिधान की दृष्टि से भक्ति के अनेक अर्थ किये हैं, जिनमें सेवा, आराधना, श्रद्धा, अनुराग विशेष विभागादि प्रमुख हैं। "भक्ति शब्द के भज् धातु का अधिक समीचीन अर्थ है,

---

1- 'The word' 'Bhakti' with the allied word Bhagwata is derived From a Sanskrit root 'Bhaj' meaning in this case is to dorl. Encyclopaedia of Religion and ethics - James Hastings, P.530.

2- 1. भाग, विभाग 2. सेवा शुश्रूषा, 3. अनेक अंगों में विभक्त करना, 4. अंग अवयव 5. खंड, 6. वह विभाग जो रेखा द्वारा किया जाय. 7. विभाग करने वाली रेखा, 8. पूजा अर्चन, 9. श्रद्धा, 10. रचना. 11. विश्वास. 12. अनुराग स्नेह, 13. जैन मतानुसार वह ज्ञान जिसे अतिशय आनन्द हो. जो सर्वप्रिय अन्य प्रयोजन विशिष्ट तथा वितृष्णा का उदय कारक हो, 14. भंगी 15. गौणवृत्ति, 16. उपचार 17. एक वृत्त का नाम- इसके प्रत्येक चरण में तगण भगण और अन्त में गुरु होता है। 18. पूजा विषयक अनुराग भक्ति हिन्दी विश्वकोष।

शरण में जाना या भाग लेना।

"भज्" धातु से व्युत्पन्न होकर भी भक्ति के अनेक अर्थ माने जाते हैं। इन्हीं अर्थों के अनुसार विभिन्न आचार्यों ने भक्ति को परिभाषित किया है। ये परिभाषाएं भक्ति के मूल का द्योतन तो करती ही हैं; साथ ही आचार्यों के विभिन्न मन्तव्यों का भी उद्घाटन करती हैं। श्री कुंज गोविन्द गोस्वामी ने भक्ति की व्याख्या करते हुए लिखा है- कि इस प्रकार भक्ति का अभिप्राय भजन करने से अथवा आराधना करने से है। "भगवत" का अभिप्राय है- जिसकी आराधना की जाय अर्थात् आराध्य। आराध्य देव के प्रति आराधना की भावना को भक्ति कहेंगे। ऐतरेय ब्राह्मण की तृतीय पंचिका के बीसवें खण्ड और सप्तम पंचिका के चतुर्थ खण्ड में तथा दैवत ब्राह्मण के तृतीय अध्याय की बाईसवीं कंडिका में "भक्ति" शब्द मिलता है किन्तु वहाँ भी भक्ति का अभिप्राय भाग(हिस्सा) लिया गया है वहाँ यही अर्थ प्रतीत होता है।

कतिपय विद्वानों ने "भक्ति" की व्युत्पत्ति "भंज्" से भी की है। उनके अनुसार "भंजन" का अभिप्राय है टूटना अथवा विलग होना। भक्ति की स्थिति भी तभी संभव होती है, जबकि दो पृथक अस्तित्व विद्यमान हों। जब तक गुरु शिष्य, परमात्मा आत्मा की पृथकता नहीं तब तक शिष्य अथवा आत्मा का भक्ति-भाव किस प्रकार संभव हो सकता है। इस पार्थक्य की अनिवार्यता का द्योतन ही "भक्ति" शब्द करता है। जो पृथक नहीं उसे न भक्ति करने का अधिकार है, न उसके लिए संभव ही है। जिन सम्प्रदायों में आत्मा और परमात्मा की पृथक सत्ता स्वीकार नहीं की जाती वहाँ भक्ति

को स्वीकार किया है तथा उसकी सत्ता ब्रह्म और जीव से पृथक माना है। भक्ति माया है जो दोनों मध्यवर्ती सूत्र है। यद्यपि "भक्ति" की शाब्दिक व्युत्पत्ति आज भी निर्णीत नहीं है, फिर भी "भज्-सेवायाम" से ही अधिकांश विद्वान "भक्ति" शब्द की व्युत्पत्ति मानते हैं। संस्कृत वाङ्मय में "भज्" से मुख्यतः दो शब्दों की रचना होती है-

1- भक्ति 2- भाग। इन दोनों शब्दों में प्रत्यय का क्रम भिन्न है, किन्तु दोनों ही प्रत्ययों का व्याकरणिक अर्थ एक ही माना गया है।

"भज्-सेवायाम्" में पाणिनि के सूत्र "स्त्रियांक्तिन्" के अनुसार "क्तिन्" प्रत्यय लगाने पर "भक्ति" शब्द का निर्माण होता है, "भक्ति" शब्द की व्युत्पत्तियां निम्नलिखित प्रकार से की जाती है: भजनं भक्ति; भज्यते अनया इति भक्ति; "भजन्ति अनया इति भक्तिः" इन व्युत्पत्तियों से स्पष्ट है कि "भक्ति" का अर्थ सेवा है किन्तु साहित्य में कहीं-कहीं "भाग" अर्थ में भी इसका प्रयोग मिलता है।[1]

1-(क) अथैतानि अग्नि भक्तीनि अयं लोक,
प्रातः सवनम् वसन्तःगायत्री इत्यादि।

(यह भूमि लोक, यज्ञ का प्रातःसवन, बसन्त ऋतु, गायत्री छन्द-ये सब अग्नि की भक्ति हैं, अर्थात अग्नि देवता के भाग (हिस्से) में आये हुए हैं- यहां पर निरुक्त कार ने "भक्तीनि" शब्द का प्रयोग भाग के अर्थ में किया है।)

(ख) भज् धातु घञ् प्रत्यय (अष्टाध्यायी भावे 3/3/18) लगाने पर चजोःकु-घिण्यतोः (अष्टाध्यायी 7/3/51) से कुत्व करने पर अत उपधायाः (वही 7/2/116) से उपधादीर्घ करने पर भाग शब्द निष्पन्न होता है।

प्राचीन युग में "भक्ति" शब्द एवम् भक्ति भाव का अंकुर विद्यमान था, किन्तु जिस भाव को आज हम "भक्ति" की संज्ञा प्रदान करते हैं, उस अर्थ का द्योतन "भक्ति" शब्द नहीं करता था।

श्वेताश्वतरोपनिषद् के अतिरिक्त दस प्रमुख उपनिषदों में भी "भक्ति" शब्द का प्रयोग नहीं है, प्रत्युत सर्वत्र मोक्ष के उपायों का विस्तृत वर्णन उपलब्ध होता है। मुख्यतः यह सत्य है कि प्राचीन काल में "भक्ति" शब्द का प्रयोग आधुनिक अर्थ में नहीं था। भक्ति भाव को भी वह वैशिष्ट्य प्राप्त नहीं था तथापि सुनिश्चित है यह कि उक्त भाव के अंकुर वैदिक युग में विद्यमान थे। इसी अतीत भूमि के गर्भ से भक्तिभाव प्रस्फुटित हो मध्य युग में लहलहा उठा। अतः "भक्ति" शब्द का उद्भव विदेशी स्त्रोतों से हुआ, यह धारणा नितांत भ्रामक एवं मिथ्या है। श्री नरेन्द्र नाथ चौधरी ने "भक्ति" को अन्तःकरण से किये गये भजन का फल माना है।[1]

"भक्ति" शब्द की मूल व्युत्पत्ति जितनी विवादग्रस्त है उसका अर्थ तथा परिभाषा भी कुछ अधिक विवादास्पद है।

भक्ति की प्रमुख परिभाषाएं-

1- ईश्वर के प्रति प्रेम अथवा अनुराग ही भक्ति है।[2]

2- परमेश्वर के प्रति उत्कट कोटि की रति का नाम भक्ति है।[3]

1- भजनमन्तःकरणस्य तदाधारता रूपं भक्ति रितिभावव्युत्पत्त्या भक्ति शब्देन फलमभिधीयते।

2- सा त्वस्मिन् परमप्रेमरूपा-नारदभक्ति सूत्र

3- सापरानुरक्तिरीश्वरे-शाण्डिल्य भक्ति सूत्र- 1/1-2

3- परमात्मा में व्याप्त गुण श्रवण और कथन भक्ति कहलाता है।[1]

4- भक्ति का तात्पर्य परमेश्वर के कथा कीर्तन तथा सप्रेम कीर्तन श्रवण से है।[2]

5- प्रेम पूर्वक पूजा आदि नियमों का पालन ही भक्ति कहलाता है।[3]

6- जब मानव अलौकिक लक्ष्य की प्राप्ति के लिए आत्म समर्पण कर देता है और रात दिन उसी में लीन रहता है, तभी भक्ति की स्थिति उत्पन्न होती है।[4]

7- भगवान में ज्ञान पूर्वक सुदृढ़ और सतत स्नेह का नाम "भक्ति" है।[5]

8- श्री राम चरण रति को गोस्वामी तुलसी दास ने चारों पुरूषार्थों से श्रेष्ठ माना है।[6]

9- श्री राम कृष्ण परम हंस ने ईश्वर के चरणों में रति तथा नाम गुण कीर्तन में निरतगीत को भक्ति की संज्ञा प्रदान की है।[7]

10- वल्लभाचार्य ने अनुरक्ति की पराकाष्ठा को भक्ति के रूप में स्वीकार किया है।[8]

1- पूजादिष्वनुराग इति पाराशर्यः -व्यास जी मधुसूदन सरस्वती
2- कथादिष्विति गर्गः ।-गर्गाचार्य
3- सर्वेशेमनसा वृत्तिर्भक्तिरित्यभिधीयते- श्रीमद भक्ति रसायनम्पृ033/1-3
4- सर्वेपुसां परोधर्मो यतो भक्तिरधोक्षजे
अहैतुक्य प्रतिहता यथात्मा संप्रसीदति।।-श्री मदभागवत-1-2-6
5- महात्म्य ज्ञान पूर्वस्तु सुदृढ़ सर्वतोधिकः। महाभारत तात्पर्य निर्णय, 1/86/107
स्नेहाभक्तिरिति प्रोक्तस्तयासु क्तिर्नचान्यथा मध्वाचार्य
6- अरथ धरम न कामरुचि, गति न चहहुँ निर्वान।
जनम जनम रतिराम पद, यह वरदानन आन।। राम चरित मानस-अयोध्या कांड दोहा संख्या-204
7- भागवत धर्म-हरि भाऊ उपाध्याय
8- महात्म्य ज्ञान पूर्वस्त सुदृढ़ सर्वतोधिकः।
स्नेहोभक्तिरिति प्रोक्तस्तदा मुक्तिर्नचान्यथा।। तत्त्व दीप निबन्ध। ज्ञान प्रकारण-श्लोक 46/

11- जीव स्वामी ने भगवान से दाम्पत्य की स्थापना को माधुर्यभाव माना है तथा विभावादि के संयोग द्वारा उक्त भाव से निष्पन्न रस को मधुर, उज्ज्वल या भक्ति रस कहा है।[1]

12- रूप गोस्वामी के अनुसार श्रीकृष्ण का अनुकूल रूप में अनुशीलन जिसमें अन्य किसी प्रकार की अभिलाषा न हो भक्ति कहलाती है।[2]

13- अन्याभिलाषिता शून्य ज्ञान कर्माद्यनावृतम्
अनुकूल्येन कृष्णानुशीलनम् भक्ति रुत्तमा ।।

13- श्री नाभादास ने माना कि जो भगवत्प्रेमालोक अज्ञानांधकार नष्ट करने में समर्थ हो सकता है। वही भक्ति है।

14- श्री कुंज गोविन्द स्वामी ने माना कि आराध्य देव के प्रति आराधना के भावना को ही भक्ति कहते हैं। वही अनुरक्ति है।[3]

15- सातैलधारा समानित्य संस्मारित सन्तान स्पेशि परानुरक्ति का भक्ति विवेकादि सप्त जन्या तथा यनादृष्ट सुबोध कांगा।[4]

16- आधुनिककाल में आचार्य राम चन्द्र शुक्ल ने कहा है कि "भक्ति धर्म की रसात्मक अनुभूति है।"[5]

1- भक्ति का विकास- मुंशी राम शर्मा पृ 307
2- रूपगोस्वामी- हरि भक्तिरसामृतसिन्धु।
3- A Study of Vaishnavism by Sir Kunja Govind Goswami, CahpterII,
4- रामानन्द- वै0म0-65।
5- चिन्तामणि-पृ0-40।

17- डॉ0 भंडारकर के मत में "भक्ति" का अभिप्राय मात्र प्रेम भाव है।[1]

18- जब भौतिक सुख दुःखों का त्यागकर मनुष्य ब्रह्म की ओर अग्रसर होता है, तो उसके प्रतिराग की प्रवृत्ति ही भक्ति कहलाती है।[2]

19- डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार भक्ति भगवान के प्रति अनन्यगामी एकान्त प्रेम का ही नाम है।[3]

20- "Bhakti is an invention and apparently a modern one of the institution of the existing in tended like that of mystical holiness of the Gurus to extend their own authority.[4]

21- नारद के अनुसार भक्ति चित्त की वह वृत्ति है, जिसकी प्राप्ति होने पर भक्ति के सारे कर्म, सारे आचार ईश्वर को अर्पित हो जाते हैं, और तदनुरूप ही साधक साध्य अथवा ध्येय की विस्मृति होते ही अत्यन्त व्याकुल और अधीर हो उठता है।[5]

22- ध्रुवानुस्मृतिरेव भक्ति शब्देनाभिधीयते।

उपासना पर्यायत्वाद भक्ति शब्दस्य।।6

ध्रुवस्मृति ही भक्ति और परमात्मा का पर्यायवाची है।[6]

1- Vaishnavism and Shaivism by Sir R.G.Bhandarkar, P.194

2- भक्ति का विकास-डॉ0 मुंशी राम शर्मा, पृ068-69

3- मध्यकालीन धर्म साधना- पृ0 182

4- Hindustan Religion - H.H. Wilson P. 232

5- नारद एवं शांडिल्य की भक्ति पद्धति-राधा प्रसाद मिश्र-हिन्दुस्तानी एकेडमी की त्रैमासिक पत्रिका-अक्टूबर-1946

6- रामानुज ब्रह्मसूत्र-।।-रा0भा।

23- कृपास्य दैन्यादि युंगि प्रजायते,
यथा भवेत प्रेमविशेष लक्षणा।
भक्तिह्यर्नन्याधिपते महात्मन:,
सा चोत्तमा साधना रूपि रापरा।।[1]

दैन्यादिगुणों से युक्त पुरूष के उपर भगवान श्री कृष्ण की कृपा होती है उस कृपा के द्वारा सर्वेश्वर परमात्मा में प्रेम विशेषरूपा भक्ति उत्पन्न होती है।

24- "Bhakti is according to venkatnath, the feeling of Joy (Priti) in adorable, and not mere knowledge Emanicipation as Saujua (Someness of Quality) with Ishwer is the result of Such Bhakti".[2]

25- मद्गुणश्रुति मात्रेण मयि सर्वगुहाशये,
मनोगति-रविच्छन्ना यथा गंगाम्भ सो बुधौ।
लक्षणं भक्ति-योगस्य निर्गुणस्यह: युदाहितम्,
अहैतुक्यव्यवहिता या भक्ति:पुरूषोत्तमे।।[3]

1- निम्बार्काचार्य, ।।, श्लोक -9

2- A History of Indian philosphy Vol.III By Dasgupta P.161.

3- श्रीमद्भागवत- 3-39, 11-12

संसार में स्वत: प्रवाहित गंगा के जल की धारा के समान जो मनोगति मेरे श्रवण मात्र से फलानुसंधान रहित तथा भेदभाव दर्शनविहीन (अनन्यथा) होकर सर्वान्तर्यामी मुझ पुरुषोत्तम में अविच्छन्न भाव से विहित होती है, वह मनोगतिरूपा भक्ति ही निर्गुण भक्ति योग का स्वरूप है।

आशय यह है कि भक्ति ईश्वर विषयक अनन्य अनुराग है, जिसके हृदय में स्थित हो जाने पर ज्ञान, कर्म शून्य से हो जाते हैं। भक्ति मुख्यत: अहैतुकी ही है जिसके उदय मात्र से ही भक्त की सम्पूर्ण अस्मिता का विलयन हो जाता है, और आकांक्षाएं भी समाप्त हो जाती है, यह भक्ति किसी विराट स्वरूप के प्रति ही होती है और जिसे इसकी मार्मिक अनुभूति होती है, वही सच्चा भक्त हुआ करता है। भक्ति वह दर्पण है, जहाँ सद् प्रतिबिम्बित होता है, वह अटल विश्वास है, जो मार्मिक शरणं व्रज, की दीक्षा देता है।

वैदिक भक्ति- वेदों में भक्ति-

यह सत्य है कि वेदों में भक्ति शब्द का अर्थ राग और श्रद्धान्वित भावना से नहीं लिया जा रहा था किन्तु दूसरी ओर यह भावना स्वतंत्र रूप से अंकुरित हो रही थी, ब्रह्म के विभिन्न शक्तियों से अनेक सम्बन्ध स्थापित करना ही भक्ति का आरम्भिक रूप है।[2] भक्ति के जिस स्वरूप का विकास मध्य युग में हुआ, वह वैदिक युग में विद्यमान नहीं था। उस युग में भगवान की प्रत्येक शक्ति को एक देवता के रूप में लिया गया था- इसी से बहुदेववाद का जन्म हुआ। शिवलिंग के अतिरिक्त आज तक भी जितने पूजनीय देवता हैं, प्रायः सबके नाम वेदों में विद्यमान है। इतना अवश्यक है कि वैदिक युग में उनकी प्रतिमाओं की पूजा नहीं की जाती थी। निराकार होते हुए भी वेदों में भगवान निर्गुण और सगुण दोनों रूप व्यक्त किये गये हैं प्रतीकोपासना का वहां अभाव था।[3] भक्ति वट की शाखा प्रशाखाओं का मूल वैदिक साहित्य में था। कतिपय अंशों में मध्ययुगीन भक्ति के तत्वों से युक्त थी।[4]

1- गीता रहस्य अथवा कर्मयोग शास्त्र-श्री बालगंगाधर तिलक, पृ03
2- त्वंहि नः पितावसोत्वं माता शतक्रतो विर्भूविथ। अधाते सुम्नमी महे। ऋग्वेद।
3- न तस्य प्रतिमा अस्ति। -यजुर्वेद, 30-30
4- क- को नानाम वचसा सोम्याय, मनायुर्वाभवति वस्त उस्राः
 क इन्द्रस्य युज्यं कः सखायः भ्राते वष्टिकवेय कः ऊती।। ऋग्वेद4।25।2
 ख- यस्माद्दृते न सिध्यति यज्ञोविपश्चितश्चन।
 स धीनां योगमिन्वति-ऋ 01/18/6।
 ग- नतं विदाथ यइमा जजान, अन्यद युष्मा कमन्तरं बभूव।
 नीहारेण प्रावृता-जल्याः, चासुतृपउक्थशासश्चरंति।। ऋग्वेद-10/82/

ऋग्वेद में विष्णु का उल्लेख आदित्य के रूप में मिलता है। उदय, मध्यान्ह और अस्तलीन अवस्थाओं विष्णु के तीन पग पृथ्वी, आकाश और परमपद है।

त द्विष्णोः परमं पदं सदापश्यन्ति सूरयः दिवीव चक्षुराततम्।[1]

इसी को आधार बनाकर उत्तरकाल में विष्णु के वामनावतार की कथा पुराणों में प्रचलित हुई। अतः भक्ति का अनेक अंशों में बीजारोपण वेदों में हो चुका था, यह निश्चित है। वैदिक साहित्य में इन्द्र, विष्णु, वायु, वरुण, आदि देवताओं के प्रति भक्ति परक उक्तियाँ उपलब्ध है। तद्विषयक मन्त्रों से स्पष्ट है कि वैदिक युग में मानव जाति के हृदय में देवताओं के लिए अपरिमित श्रद्धा तथा प्रेमभाव विद्यमान थे। देवता उनके प्रत्येक संघर्ष में सहायक रहते थे।[2]

यद्यपि देवताओं का शासक इन्द्र को माना गया है, तथापि ऐसी अनेक उक्तियाँ भी विद्यमान हैं, जहाँ इन्द्र की अपेक्षा विष्णु की श्रेष्ठता प्रकट की गयी है।[3] परवर्ती भक्तिपरक ग्रन्थों में जिस नवधाभक्ति का विवेचन मिलता है, उसमें से श्रवण, कीर्तन, तथा स्मरण का उल्लेख भी वैदिक वाङ्मय में सहज उपलब्ध है।[4]

1- ऋग्वेद-1/22/20
2- हिन्दुस्तान की पुरानी सभ्यता- डॉ0 बेणी प्रसाद ,पृ0 42
3- क- Callected work of R.G.Bhandarkar,Vol.IV,P.47
   ख- Vishnu is Vidas From the Valumi Studies in Indology.
4- क- ऋक् -1,156/2-3 ख-ऋक 1/154/1-4/
   ग- ऋक 1/155/4।।

वेदों में ईश्वर सम्बन्धी अनेक प्रकार की चर्चाएँ मिलती हैं। यदि ईश्वर भक्ति सम्बन्धी चर्चा वेदों में मिलती है,तो यह नितान्त स्वाभाविक है। आध्यात्मिक अनुभूतियों की प्रधानता भारतीय जनजीवन की सर्वप्रमुख विशेषता रही है,आदि काल से ही धर्मसाधना के तीन सोपान की परिकल्पना की जाती रही है- क्रिया पक्ष,बुद्धिपक्ष और हृदय पक्ष। यही वास्तव में कर्ममार्ग,ज्ञानमार्ग और भक्ति मार्ग का मूल है।

वैदिक साहित्य में जो वेदत्रयी के नाम से प्रख्यात है,इन तीनों का एक साथ विधान मिलता है। वहाँ ज्ञान,कर्म,उपासना का सम्यक निर्देशन दिग्दर्शित होता है। इसके बावजूद भक्ति अपने आप में विवाद पूर्ण विषय रहा है,इसके प्रथमाविर्भाव,इसके आरम्भिक स्त्रोत आदि विषयों पर विद्वानों के विभिन्न मतों ने (अनायास) जन्म दिया। गहन आलोड़न की स्थिति यहाँ तक पहुँच गयी कि कतिपय पाश्चात्य विद्वानों ने इसे अभारतीय तक सिद्ध करने का प्रयत्न किया। इस क्षेत्र में वेबर,कीथ,ग्रियर्सन आदि उल्लेख्य हैं। वेबर ईश्वर की रूप कल्पना क्राइस्ट से देते हैं। इसीप्रकार ग्रियर्सन ने अपने एक निबन्ध में[1] भक्ति के आदि क्षेत्र का श्रेय मद्रास की एक ईसाई बस्ती को दिया है। जिसके प्रभाव से वह हिन्दुओं में प्रसारित हुई। एक अन्य विद्वान विल्सन ने इसे अर्वाचीन युग की देन कहा है[2] किन्तु इन विद्वानों का भक्ति को अभारतीय सिद्ध करना उनका

1- ग्रियर्सन और लेख- Journal of Royal Asiatie Society. (1907P.31-36) Enyeyclopadea of Religion and Ethics Part II P.539.

2- Bhakti is an inoentionand apparently a modern one of the institution of the existing intended like that of mystical holiness of the Grus to extend their own authority-H.H.Wilson, Hindustan Religion.P.232.

अकाट्य सिद्ध हुआ। इनके मत का खंडन भारतीय विद्वान श्री राय चौधरी ने किया है। अपनी पुस्तक अर्ली हिस्ट्री ऑफ वैष्णव सेक्टस में इन भ्रान्तियों का निराकरण करतेहुए उनकी उक्ति है कि जो लोग यह मानते हैं कि भारत में भक्ति का स्त्रोत सर्वप्रथम रामानुज ने बहाया है, और उनकी यह उपासना ईसाइयों से उधार ली गई है, वह पूर्णतः भ्रममात्र है।[1]

इस प्रकार वेदों की भक्ति भी अत्यन्त विवादास्पद रही है। इस क्षेत्र में दो प्रकार के विद्वान सामने आये हैं, कुछ वेद को भक्ति शून्य मानते हैं और दूसरे इसमें भक्ति की अजस्त्रधारा के दर्शन करते हैं।

इस दिशा में डॉ0 सम्पूर्णानन्द उल्लेख्य है, जिन्होंने वेद में भक्ति के अस्तित्व को नकारा है। "भक्ति" शीर्षक निबन्ध में उनकी स्पष्ट स्वीकारोक्ति है, किसी भी संहिता की किसी प्रसिद्ध शाखा में यह शब्द में नहीं मिलता, यदि कहीं आ भी गया होगा, तो उसका व्यवहार उसी अर्थ में नहीं होगा जिस अर्थ में हम आजकल उसका प्रयोग करते है। उपनिषद भाग को छोड़कर ब्राह्मणों का शेष अंश कर्मकाण्ड परक है, उसमें भक्ति की बात हो ही नहीं सकती।[2]

डॉ0 सम्पूर्णानन्द ने इस विचार को पुष्टि के लिए यह तर्क उपस्थित किया है कि वेदों में भक्ति शब्द का प्रयोग नहीं हुआ है दूसरे कि कर्मकांड परक होने के कारण ही वह सर्वथा भक्ति से दूर है। दूसरे विद्वान

1- राम कृष्ण काव्येतर हिन्दी सगुण भक्ति काव्य- डा0 छोटेलाल दीक्षित-पृ

2- भक्ति डॉ0 सम्पूर्णानन्द, कल्याण का भक्ति विशेषांक, पृष्ठ -109

श्री रामावतार ने भी वेद को जीवन साहित्य माना है। उनकी धारणा यह है कि वेद "ब्रह्म" को साकार रूप में ही नहीं आबद्ध करता, फलत: व्यक्तिगत सम्बन्ध की स्थिति असंभव है।[1] वास्तव में यहाँ भी इसी प्रकार दुष्कर है।

सच्ची बात संभवत: यह है कि अपने मूल रूप में भक्ति आर्येतर प्रवृत्ति थी, द्रविड़ भारत में पहले आए इसीलिए भक्ति तत्त्व पहले द्रविड़ धर्म में समाविष्ट हुआ। वैदिक आर्यों में भक्ति का प्रस्फुटित रूप नहीं मिलता, क्योंकि उनका धर्म हवनादि तक सीमित था। विद्वानों ने भक्ति के बीज का प्रादुर्भाव वेदों में माना है उनकी धारणा है कि भारतीय वाङ्मय का यदि वेद से लेकर हिन्दी संत साहित्य तक सूक्ष्म रूप से अवलोकन किया जाय तो यह दृष्टिगत होता है कि वेद, ब्राह्मण, उपनिषद, वैखानस, आगम, भागवत साहित्य के विभिन्न स्त्रोतों से भक्ति की धारा प्रवाहित होती रही है। पर्वतों का लघु स्त्रोत जैसे समतल मैदान से समुद्र तक आते जाते विशाल नद का रूप ले लेता है उसी प्रकार वैदिक साहित्य की भक्ति की क्षीण मन्दाकिनी भागवत साहित्य में आकर विशाल नदी बन गयी।[2]

1- सम्मेलन पत्रिका भाग-44, संख्या-4, पृष्ठ 32-33, श्री रामावतार

2- भक्ति का विकास- डॉ० मुन्शीराम शर्मा

डॉ० मुन्शी राम शर्मा ने अपने प्रबन्ध[1] में वेदों के अनेक उदाहरण देकर यह सिद्ध किया है कि भागवत काल में जो भक्ति के विविध रूप पनपे वह वेदों में पहले से ही उपलब्ध हैं। इसीप्रकार दुर्गाशंकर मिश्र[2], बल्देव उपाध्याय[3] सातवेलकर, राणाडे, नन्ददुलारे बाजपेयी, प्रभृति विद्वानों ने भी वेद को ही भक्ति का आदि स्त्रोत निर्धारित किया है। इस सन्दर्भ में जिसकी व्याख्या अपेक्षित है। ऋग्वेद का एक मन्त्र है- इतिवाइति मे मनोगाम श्वं सनुयामिति कुवित सोमस्यापामिति।[4] अर्थात मेरे मन में यह आता है कि अपनी गायों और घोड़ों को उनको दे डालूं जिन्हे इनकी आवश्यकता है, क्योंकि मैंने बहुतबार सोम का पान किया है। यहाँ सोम शब्द का अर्थ सोमलता नहीं बल्कि आनन्द से परिपूर्ण भगवान है। स्वयं वेद इसका अर्थ स्पष्ट करते हैं- कि कोई पिसी हुई सोम औषधि ही पीकर यह न समझ लें कि मैंने सोमपान किया है जिस सोम का ब्राह्मण लोग पान करते हैं उसे सांसारिक भोगों में आसक्त व्यक्ति नहीं पी सकता[5] यह सोम कौन है

1- भक्ति का विकास, डॉ० मुन्शीराम शर्मा

2- वेदों में भक्ति की महिमा स्वीकार की गयी है तथा वैदिक काल में तो भक्ति का महत्व विशेष रूप से प्रतिपादित किया गया है- दुर्गाशंकर मिश्र- भक्ति काव्य के मूल स्त्रोत

3- वैदिक साहित्य के बाद अनुशीलन से यही स्पष्ट होता है कि वेद कर्म तथा ज्ञान का उदय स्थल हैं वैसे ही यह भक्ति का भी उद्गम स्थल है- बल्देव उपाध्याय, भागवत सम्प्रदाय, पृ०-60

4- कल्याण का भक्ति अंक पृ066 पर उद्धृत।

5- सोमं मन्यते पपिवान् यत्सम्पिषन्त्योषधिम् सोमं ब्राह्मणों विदुर्नतस्याश्नाति कश्चन।

जो ब्राह्मण लोग पान करते हैं? इस प्रश्न के उत्तर में बताया गया है- कि वह सबको रक्षा करने वाला भगवान है जो स्वत:अपने भक्त के हृदय में प्रकट होता है।[1] इसप्रकार सोम का भावार्थ हुआ प्रभु के भक्त का भक्ति रस में भीगकर डूब जाना, वस्तुत: यही भक्ति है।

डॉ० मुन्शीराम शर्मा ने भक्ति के विकास में भक्ति के तीन अंगों की परिकल्पना की है- स्तुति प्रार्थना और उपासना। स्तुति में प्रभु के गुणों का कीर्तन होता है किसी के गुणों का ज्ञान ही उसके स्वरूप को समझने में अधिक सहायक होता है, प्रार्थना में प्रभु से पापों के प्रक्षालन और पुण्य की प्राप्ति के लिए याचना की जाती है, और उपासना है उस लक्ष्य के उप अर्थात् समीप, आसन अर्थात आसीन कर देती है। भक्ति के यही तीन अंग वेदत्रयी द्वारा प्रतिपादित ज्ञान, कर्म और उपासना के त्रिमार्ग का रूप धारण कर लेते हैं।[2] वेदों का सच्चा उपदेश तो मानव ईश्वरीय आराधना के द्वारा कर्मों के फल से अनासक्त रहकर नैष्कर्म्य की स्थिति को प्राप्त कर ले यही भक्ति है।

वेदों में अनुस्यूत भक्ति का तत्त्व के विवेचन के लिए कतिपय उदाहरणों में उसकी संपुष्टि अनिवार्य है।

स्तुति (गुणकीर्तन)

अनुत्तमा ते मघवन्न किर्नु न त्वावाँ अस्ति देवता विदान:।
न जाय मानो नशते न जातो यानि करिष्या कृणुहि प्रवृद्ध।।[3]

1- उदीचीदिक सोमोऽधिपति:स्वजोरक्षिता-कल्याण का भक्ति अंक, पृ०66
2- भक्ति का विकास-मुन्शीराम शर्मा सोम, पृ०111
3- ऋग्वेद 1/165/9

हे परमैश्वर्य सम्पन्न प्रभु हे सबसे प्राचीन सनातन शाश्वत,परमेश्वर आपके अस्तित्व से बढ़कर यहाँ किसी का भी नहीं है। आपकी ही सत्ता सर्वोत्तम सत्ता है। आपके समान कोई ज्ञानी देव भी यहाँ नहीं है आप जो कुछ कर रहे हैं और जो कुछ करेंगे उसे यहाँ के उत्पन्न हुए और उत्पन्न होने वाले प्राणियों में से कोई भी नहीं जानता।

प्रार्थना- प्रार्थना में जीव का ध्यान सर्वप्रथम अपनी न्यूनता पर जाता है, वह सर्वसमर्थ प्रभु को पुकार करके विनय करता है- यन्मे छिद्रंचक्षुषो हृदयस्य मनसो वातितृण्णं बृहस्पतिर्मेतद्दधातु शन्नो भवतु भुवनस्यस्पति:।[1] प्रभु मेरे चक्षु आदि बाह्य इन्द्रियों में जो छिन्द्र हैं,दोष हैं,न्यूनताएं हैं, अथवा हृदय और मनादि अन्त:करणों में जो गहरे घाव हैं,उन्हे आप ही दूर कर सकते हैं। आप निखिल जगत के स्वामी है,आपसे बढ़कर मेरा कोई रक्षक नहीं है,प्रभु इनको दूर कर आप ही मेरा कल्याण करें। भक्त अपने बाह्य और आन्तरिक दोनों की पवित्रता की कामना करता है,वह सुख भी चाहता है शान्ति भी- प्रभो आप सर्वव्याप्त हैं,कल्याणकारी है, देव हमारी अभीष्ट सिद्धि तथा पूर्ण तृप्ति के लिए कल्याणकारी बनें हमारे ऊपर चारों ओर सुख और शान्ति की वर्षा करें।[2]

शन्नो देवी रभिष्टय आपोभवन्ति पीतये
शंयोरभिस्त्रवन्तु न:।2

1- यजुर्वेद-36,2
2- यजुर्वेद-26,12

उरूनो लोक मनुमेषि विद्वान स्ववर्त ज्योतिरभयं स्वस्ति।

ऋष्वा त इन्द्र स्थविरस्य बाहू उपस्थे याम शरणा बृहन्ता।।[1]

भगवान तुमने बहुतों को पार किया है, दीक्षा और तप के द्वारा तुमने भक्त ऐसे लोक में पहुँचे हैं, जहाँ निरन्तर प्रकाश बना रहता है, जहाँ आनन्द ही आनन्द है, जहाँ मरण रहित क्षय रहित अवस्था है। हे प्रभु मुझे उसी लोक में ले चलो, मैंने सुना है कि तुम महान हो, तुम्हारी विशाल भुजाएं फैली हैं, जो भक्तों के कष्टों को दूर करती हैं। पिता क्या तुम्हारी वह व्यापक शरण मुझे नहीं मिल सकती मैं भी तुम्हारी इस शरणदायिनी आनन्दमयी गोद में बैठना चाहता हूँ।। भक्ति-भावना संसार-सन्तप्त आत्मा की शाश्वत पुकार है। विश्व के बीहड़ बन में भटकता हुआ जीव जब व्यथित हो उठता है, तब अपने स्त्रोत, चिदानन्द घन परमात्मा को याद करने लगता है। असहाय अवस्था में वह उस अपने को पुकार उठता है, यह पुकार ही आत्माभिव्यक्ति है, भक्ति भावना की भव्य भूमिका है।[2]

भागवत धर्म के आचार्यों ने वैदिक भक्ति का जो विवेचनात्मक स्वरूप प्रस्तुत किया है, उस की समग्र पृष्ठभूमि वेद के इन मन्त्रों में विद्यमान है। वैष्णव धर्म के आचार्यों ने आत्मनिवेदन या प्रपत्ति (शरणागति) को छः भागों में विभाजित किया है: अनुकूल का संकल्प, प्रतिकूल का त्याग,

---

1- ऋग्वेद 6/47/9
2- भक्ति का विकास- डॉ मुंशी राम शर्मा- पृष्ठ-150

गोप्तृत्ववरण, रक्षा का विश्वास, आत्म निक्षेप और कार्पण्य[1]। इनसे सम्बन्धित वेद मन्त्र नीचे दिये जा रहे हैं:-

अनुकूल का संकल्प-

प्रभु प्राप्ति के पथ में जो साधन अनुकूल पड़ते हैं उन्हीं को अपनाने के लिए भक्त दृढ संकल्प करता है-

सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम्।
दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये।।[2]

भक्त संकल्प करता है कि आज मैं निष्पाप होकर ऐसी नाव पर पैर रखता हूँ, ऐसे साधनों का अवलम्बन लेता हूँ, जो निसन्देह मेरा कल्याण करने वाले हैं। ये नावरूपी साधन भली भाँति रक्षा शक्तियों से युक्त है, विशाल है प्रकाशमय हैं, अनिष्ट की आशंका से रहित हैं, सुखद है सुन्दर पथ पर ले जाने वाले हैं, शत्रुओं से बचाने वाले हैं और दृढ़ हैं।

अवधीत कामो मम ये सपत्ना उरुं लोकमकरन्मह्यमेधतुम।
मह्यं नमन्तां प्रदिशश्चतस्रो मह्यं षडुर्वीर्घृतमा वहन्तु ।।[3]

1- अनुकूलस्य संकल्प: प्रातिकूलस्य वर्जनम्।
रक्षिष्यतीति विश्वासो गोप्तृत्ववरणं तथा।।28।।
आत्मनिक्षेप-कार्पण्ये षड्विधाशरणागतिः।।29।।
2- ऋग्वेद -8,63, 10।
3- अथर्ववेद-9,2,11

आज मेरा काम, मेरा संकल्प, जागृत हो चुका है, इसने मार्ग में आने वाले शत्रुओं को निहत कर दिया है विस्तृत लोक मेरे लिए उन्मुक्त हो गये हैं, मेरे दृढ़ संकल्प के आगे सब दिशाएं झुक जावेंगी और मेरे वांछित फल साधन में सहायक बनेंगे।

<u>प्रतिकूल का त्याग-</u>

प्रभु को प्राप्ति में जो साधन अवरोध उपस्थित करते हैं उनका परित्याग ही श्रेयस्कर समझा जाता है-

नाहमतो निरया दुर्गहैतत् तिरश्चता पार्श्वान्निर्गमाणि।
बहूनि मे अकृता कर्त्वानि युध्यै त्वेन सं त्वेन पृच्छै।।[1]

<u>गोप्तृत्ववरण-</u>

प्रभु के रक्षक स्वरूप का वरण करना, उसे ही अपने त्राता के रूप में स्वीकार करना-

प्रमंहिष्ठाय बृहते बृहते सत्यशुष्माय तवसे मतिंभरे।
अपामिव प्रवणे यस्य दुर्धरं राधो विश्वायुशवसे अपावृतम।।[2]

प्रभु आज मैं महान् से महान्, प्रवणायित जल की भांति दुर्निवार, सबके लिए अनावृत, बृहत् से बृहत शक्ति देने वाले रक्षक स्वरूप को अपनी मति में भरता हूँ, हृदय से वरण करता हूँ।

1- ऋग्वेद-4,18,2,
2- ऋग्वेद- 1,57,1

रक्षा का विश्वास-

सुख: दु:ख के संघर्ष में पड़ा हुआ साधक जब साधना में विचलित हो उठता है उस समय प्रभु अपनी रक्षा का वरदहस्त रखकर उसे समाश्वस्त कर देते हैं। प्रभु की इस रक्षण शक्ति में विश्वास ही उस समय हल देता है न जाने कहाँ से किस प्रकार प्रभु की रक्षा की छाया उसके सिर के ऊपर छा जाती है,और भक्त संघर्ष संताप में शीतलता का अनुभव करने लगता है। वेद कहता है-

महीरस्य प्रणीतय: पूर्वीरुत प्रशस्तय:।
नास्यक्षीयन्त ऊतय:।।[1]

भगवान की प्रणीतियाँ,रक्षा प्रणालियाँ महान हैं । उन्हें कोई भी नहीं जानता। इस सम्बन्ध में प्रभु की प्रशंसा भक्त जन बहुत पहले से करते आये हैं। प्रभु अनेक भक्तों का उद्धार कर चुके,बहुतों का कर रहे हैं,परन्तु उनकी रक्षा शक्तियों में क्षीणता नहीं आयी। वे न तो कम हुई हैं,और न भविष्य में कम होगी।

आत्मनिक्षेप-

भक्त सर्वात्मना अपने आप को प्रभु के हाथों में समर्पित कर देता है,प्रभु उसके लिए जो उचित समझे करे- यमग्ने मन्यसेरयिं सहसावन्नमर्त्य।

1- ऋग्वेद-6/45/3/

तमा नो वाजसातये विवामदे यज्ञेषु चित्रमाभरा विवक्षेस।।[1]

कार्पण्य-

भक्त का दैन्य भाव,उसकी विवश एवं कातर अवस्था में ही प्रभु के आगे प्रकट होता है। अपने दुःख को भक्त प्रभु के समक्ष करूण क्रन्दन द्वारा उन्मुक्त करता है।

क्वस्य तेरूद्र मृळयाकुर्हस्तो यो अस्ति भेष जोजलाषः।
अपभर्ता रपसो दैवस्याभी नुमा वृषभ चक्षमीथाः।।[2]

हे परमबल सम्पन्न प्रभुः क्षमा करो। तुम्हारे वरद,सुखद क्रोड के संरक्षण से निकलकर आज मैं कितना दुःखी हूँ,कितना रोगाक्रान्त हूँ।नाथ। तुम्हारा वह सुखदायक हाथ आज कहाँ है? वहीं तो मेरे संतापों का शमन करने में अमोघ औषधि का कार्य करता है। देवताओं के सम्बन्ध में पाप करके आज मैं कितना दुःखी हूँ। रूद्र अपने रोग विनाशक,आनन्द प्रदायक हाथ को पुनः मेरे शिर पर रख दो।

प्रेमाभक्ति-

कर्म और ज्ञान की सम्पत्ति के साथ वेद ने प्रभु प्रेम को भी महत्ता दी है इस सम्बन्ध में कुछ संकेत हम इसके पहले कर चुके हैं। जिन स्थलों पर वैदिक मंत्रों में कर्म और ज्ञान द्वारा अमृत तत्व की प्राप्ति का

1- ऋग्वेद- 10/21/4/
2- ऋग्वेद- 2/ 33/7

वर्णन है, वहाँ प्रभु में प्रवेश पाने के लिए द्वारोद्घाटन द्वारा जैसा सिद्धार्थ समझना चाहिए। स्वयं कर्म, कर्म के जटिल जाल को काटने वाला है। ज्ञान की अग्नि भी वासना जाल को भस्म करती है और भक्ति भी सभी कर्म के लोप को प्रभु अर्पित करके उसे क्षीण कर देती है अत: तीनों साधन भिन्न-भिन्न स्वरूप के होते हुए भी अन्त में एक ही उद्देश्य के साधक सिद्ध होते हैं। तीनों एक दूसरे के पूरक भी हैं कर्मकाण्ड मालिन्य का परिक्षालन करता है, ज्ञान प्रकाश देता है, मार्ग प्रदर्शन करता है, और भक्ति भावना आत्मा को परमात्मा के समीप आसीन कर देती है। नीचे अंकित वेद मन्त्र एकान्त प्रेम प्रवण भक्ति भावना को अभिव्यक्त करते हैं-

को नानाम वचसा सोम्याय, मनायुर्वा भवति व स्तउस्ना:।
क इन्द्रस्य युज्यं क: सखायं, भ्रातं वष्टि कवेय क ऊती।।[1]

यहाँ कौन है, जो उस योग्य प्रभु के आगे स्तुति वचनों द्वारा प्रणत होता है, ऐसा कौन है, जो उसके मनन को, उसे मन में लाने की इच्छा करता है, और उसकी किरणों को अपने अन्दर धारण करता है? ऐसा कौन है जो प्रभु के साथ रहने की उसका सखा बनने की और उसके भ्रातृभाव की कामना करता है। है कोई ऐसा प्रभु का प्यारा भक्त, जो उस महान कवि के लिए अपने हृदय में भक्ति भावना रखता है।

1- वेदों में भक्ति, वेणी राम शर्मा- कल्याण में भक्ति विशेषांक के पृष्ठ 41 पर

मुन्शी राम शर्मा ने अपनी पुस्तक "भक्ति का विकास" में एवं श्री वेणी राम शर्मा ने अपने एक निबन्ध[1] में वेदों में वर्णित नवधा भक्ति का उदाहरण प्रस्तुत किया है। इसी प्रकार प्रपत्ति के छः विभेदों और आसक्तियों की तथा भक्ति के साधनों को भी स्पष्ट निदर्शना की गई है।[2] वेद में भक्ति के लिए जिन साधनों का प्रतिपादन हुआ है उनमें जगत ज्ञान, आत्म ज्ञान और परमात्म ज्ञान सम्मिलित है उसी प्रकार भक्ति में जिस सिद्ध रूप मोक्ष की अवस्था का वर्णन है उसमें जीव का अहंभाव सुरक्षित है। ऋग्वेद में विविध देवों की अर्चा का विधान भी एक देवता या ईश्वर की भक्ति का विधान है, एक ही ईश्वर या सत इन्द्र मित्र वरूण भी और अग्नि भी। वही सुन्दर पंखों वाला गरूड़ भी है, इसलिए वहाँ एक मात्र सत् अग्नि यममात रिश्वा भी कहलाता है।[3] वैदिक भक्ति की एक और विशेषता है, वह यह कि वेदमें कोई भी ऐसा मन्त्र नहीं मिलेगा जिसमें उपासक, साधक अथवा भक्त को अपने अधम नीच पापी या खल कहे या प्रभु को किसी प्रकार का उपालम्भ दें। इस प्रकार वेद के द्वारा प्रभु यह आदेश देते हैं कि निर्बल और अशक्त आत्मा सच्चा भक्त नहीं बन सकता इसी से वहाँ -

तेजोऽसि तेजो मयि धेहि, वीर्यमसिवीर्यमहि धेहि,

बलमसि बलं मयि धेहि, ओजोऽस्योजो महि धेहि।।

— यजुर्वेद

1- वेदों में भक्ति, वेणी राम शर्मा-कल्याण में भक्ति विशेषांक के पृष्ठ-42 पर

2- भक्ति का विकास- पृष्ठ-150 पर

3- राम कृष्ण काव्येतर हिन्दी सगुण भक्ति काव्य- छोटे लाल दीक्षित पृ012

प्रभु का को तेज,वोर्यबल,ओज का अजस्त्र भंडार मानता हुआ उसको कामना करता है।

ब्राह्मण ग्रन्थ और आरण्यक-

ब्राह्मण ग्रन्थ वेदों के भाष्य हैं। चारो वेदों से सम्बन्धित अनेक ब्राह्मण ग्रन्थ हैं। ऐतरेय ब्राह्मण में ऋग्वेद का भाष्य है,अतः ज्ञानकाण्ड से सम्बन्धित होने के नाते उसमें भक्ति भाव को शून्यता है। शतपथ ब्राह्मण यजुर्वेद से सम्बन्धित है। उक्त वेद के मन्त्रों को व्याख्या हो शत पथ ब्राह्मण में मिलती है निरूक्त में अनेक मन्त्रों में भक्ति भाव ढूंढा गया है। जहाँ कहीं भो ब्रह्म का गुणकथन है,निरूक्त कार ने उसे भक्ति के अन्तर्गत स्वीकार किया है।[1] शतपथ ब्राह्मण में भी यज्ञ को महत्ता पर विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है। सबसे प्रेम करना,द्वेष से दूर रहना,क्रोध न करना,इत्यादि जिनको भक्ति का प्रमुख अंग माना जाता है-शतपथ ब्राह्मण में वे विशेष रूप से वर्णित है।[2] इसी रूप में आर्षेय ब्राह्मण को गणना सामवेद के आठ ब्राह्मणों में होती है। सामवेद उपासना का वेद कहलाता है। प्रारम्भिक कुछ मन्त्रों के अतिरिक्त शेष सभी साधना सम्बन्धी मन्त्र हैं,साधक ज्ञान के आलोक को प्राप्त कर भावमय हो जाता है और अपना सर्वस्व परमात्मा के चरणों में अर्पित करने को उसकी इच्छा जागृत हो उठती है। तब उसके हृदय में उदारता का समावेश होता है एवं संकोच को सोमाएं नष्ट हो जाती है,राम में भी कुछ इसी प्रकार को स्थिति होती है।

1- निरूक्त,7/7/24

2- क-तद्दै देवानाम्भाग आस।कनीयः इत नु अतोऽधिकम्-शतपथ-1-4-6-4
ख-दैव्याय कर्मणे शुन्धध्वम् देव यज्याये युष्मोऽशुद्धाः पराजघ्नुरिदं वस्तच्छुन्धामि
- यजुर्वेद1/13

गोपथ ब्राह्मण की रचना संभवत: श्रीमद्भागवत के आसपास हुई है। इसमें भक्ति भाव का अपेक्षाकृत अधिक वर्णन किया गया है। उत्तर भाग की तीसरी कंडिका में ओंकार को अमृत माना है। प्रपाठक पाँच की सातवीं कंडिका में सामवेद को ब्राह्मणकार ने सब वेदों का रस मानकर उपासना काण्ड युक्त सामवेद का स्थान सर्वोपरि प्रतिष्ठित कर दिया है। इस प्रकार यहाँ भक्ति को ज्ञानकांड का रस माना गया है।[1] वेदों में विष्णु इन्द्र का सहायक था, ब्राह्मण युग में विष्णु को सर्वाधिक लोक प्रियता प्रदान की गयी[2], और वह अत्यधिक महत्वपूर्ण देवता के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया गया।

भक्ति में जिस प्रकार दिव्यतत्व का ध्यान किया जाता है, उसी प्रकार यज्ञ के अन्दर भी करना पड़ता है, ऐतरेय ब्राह्मण में लिखा है-

यस्मै देवतायै हविर्गृहीतं स्यात् तां ध्यायेत्।[3]

जिस देवता के लिए हवि दी जाती है, उसी देवता का ध्यान करना चाहिए, आचार्य सायण ने इसके भाष्य में लिखा है: देवता अर्थात् दिव्य शक्ति आँखों से दिखायी नहीं देती, अत: उस का मानस प्रत्यक्ष करना विवक्षित है, जो ध्यान द्वारा ही सम्भव है।

1- भक्ति का विकास- डॉ0 मुंशी राम शर्मा, पृ0 219

2- क- भागवत सम्प्रदाय- बल्देव उपाध्याय, पृ0 82

ख- अग्निर्वै देवानामवमो विष्णु: परम, तदन्तरेण सर्वा अन्या देवता:- ऐतरेय ब्राह्मण 1/1

3- ऐतरेय ब्राह्मण-11/8

ऐतरेय ब्राह्मण का सम्बन्ध ऋग्वेद के साथ है,जो ज्ञान काण्ड का वेद है। ज्ञान को भावना तक पहुँचने में देर लगती है। जब तक ज्ञान भावना में परिणित न हो, तब तक वह सबसे दूर-दूर रहता है अत: ऐतरेय ब्राहमण में भक्ति भावना स्वल्पांश है तो इसमें आश्चर्य की बात नहीं। समस्त वेदों,विद्याओं तथा स्वर समूहों का मूल ओउम है। अत: उसकी महत्ता ऐतरेय ब्राह्मण में भी असंदिग्ध रूप से वर्णित है।

शतपथ ब्राह्मण यजुर्वेद के मन्त्रों और शब्दों की व्याख्या करता है। यथा:मेध्या वा आपःवज्रो वा आप: योषा वा आप:। ज्योतिर्वै हिरण्यम। अमृतं हिरण्यम। निरूक्तकार ने इस प्रकार की गुण कल्पना को भक्ति नाम दिया है।[1]

यह एक प्रकार की शब्द भक्ति कही जा सकती है। जैसे भक्तिकाण्ड में प्रभु के नानागुणों को लेकर उनकी स्तुति की जाती है वैसे ही यहां शब्द की स्तुति है। शतपथ ब्राह्मण की उक्ति भक्ति काण्ड के निकट ही है-

वृतो हवा इदं सर्ववृत्त्वा शिश्ये।[2] तमिन्द्रो जघान।[3]

भक्ति का मार्ग प्रियत्व अथवा प्रेम का मार्ग है,श्रद्धा इसका मुख्य अंग है-

अहं व: प्रियो भूयासम इत्येव एतदाह।[4]

1- निरूक्त- 7,7,24
2- शतपथ ब्राह्मण 3/4
3- वही - 3/5
4- शतपथ ब्राह्मण-2-3-2-34

शतपथ ब्राह्मण के भक्ति -सम्बन्धी जो वाक्य ऊपर उद्धृत किये गये हैं,उनसे सिद्ध होता है कि यह ब्राह्मण भक्ति के कतिपय अंगों का विशद वर्णन करता है। आर्षेय ब्राह्मण भक्ति के सम्बन्ध में कुछ मौलिक विचार प्रस्तुत करता है। साधक का ज्ञान जब भावना को रूप धारण कर लेता है और उसमें अपने सर्वस्व को भगवान के चरणों में समर्पित कर देने की आंकाक्षा जागृत हो उठती है,तो उसके आन्तरिक रूप में संकोच के स्थान पर विस्तार आ जाता है।

भक्ति भावना इसी हेतु संकोच से हटकर विशाल और उदाररूप धारण करती है। सामवेद जो ऋग्वेद की ऋचाओं से कई गुना बढ़कर बोला जाता है,और उसका एक-एक शब्द दूर-दूर तक अनेक वर्णों और मात्राओं में फैल जाता है- उसका यही कारण विशेष है- ज्ञानी के समक्ष भक्त की महत्ता भी इसी हेतु अधिक है।

गोपथ ब्राह्मण का रचयिता भक्ति काण्ड को ज्ञान काण्ड का सार समझता है,या कि नीरस ज्ञानकाण्ड में यदि सरसता का संचार किसी प्रकार से होता है,तो वह प्रकार भक्ति या उपासना ही है-

"अथो सर्वेषां वा एषः वेदानां रसः सत् साम सर्वेषामेव तत् वेदानारसेन अभिषिंचत। "

चारों वेदों से सम्बन्धित चार ब्राह्मणों की जो भक्ति विषयक सामग्री प्राप्त होती है,वह वेदों के अनुकूल ही है। ऐतरेय ब्राह्मण ऋग्वेद

का ब्राह्मण है,औरज्ञानकाण्ड से सम्बद्ध है। अतः उसमें भक्ति से सम्बन्धित सामग्री का प्रायः अभाव है। सामवेद के ब्राह्मण में उपासना स्पष्ट हो उठा है। गोपथ ब्राह्मण भक्ति को ज्ञान का रस कहकर इस सम्बन्ध में सामवेद की ही प्रतिष्ठा का वर्द्धन करता है।.

गोपथ ब्राह्मण में ब्राह्मण भक्ति परक जो पंक्तियाँ उपलब्ध हैं, उनमें प्रभु के "ओउम" नाम का ही महत्व प्रतिपादित है। आर्षेय ब्राह्मण में भी "ओउम्" का अविनश्वर उद्गीथ माना गया है,और उसी के उपासना की प्रेरणा दी गयी है।

<u>उपनिषदों में भक्ति-</u>

उपनिषदों में भक्ति का पर्याप्त विकास दृष्टिगत होता है। ब्राह्मण काल तक यज्ञ अनुष्ठान पर विशेष बल दिया जा रहा था,किन्तु उपनिषदों में ज्ञान कर्म और उपासना के सामंजस्य का महत्व प्रदान किया गया। उपनिषदों में ज्ञान की प्रधानता है,भक्ति का मूल है भगवत् कृपा- जिसका सम्यक् विकास वैष्णव एवं शैव दोनों ही सम्प्रदायों में हुआ।

प्रभु की कृपा का वर्णन उपनिषदों में सविस्तार उपलब्ध है,इस युग में ज्ञान का महत्व बढ़ा,किन्तु ॠषियों ने भक्ति के महत्व को स्वीकार किया है। ज्ञानकाण्डी होते हुए भी वे भक्ति के अंचल को वे पूर्णरूपेण त्याग न पाये। अतः क्षीण रूप से भक्ति के उस युग में विद्यमान रही। श्वेताश्वतरोपनिषद में सर्वप्रथम देव और गुरु की महिमा का गान गाया गया है।[1]

1- यस्य देवेपरा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशयन्ते महात्मनः।।- श्वेताश्वतरोपनिषद-6-23

छान्दोग्योपनिषद् में उपासना के अंगों में भक्ति तत्व को भी स्थान दिया गया है।[1] प्रस्तुत उपनिषद में विज्ञानमयी आत्मा से आनन्दमयी आत्मा को अधिक महत्व प्रदान किया गया है।[2]

उपनिषदों का जन्म निष्प्राण कर्मकाण्ड के विरोध में हुआ था, अतः मुण्डकोपनिषद में कहा गया कि वेदों को यज्ञ प्रक्रिया संसार सागर को पार उतारने के लिए कमजोर नौका है।[3]

ब्रह्म घट-घट वासी है, संसार के अणु मात्र में विद्यमान है। भक्त परमात्मा की मंगलमयी गोद का अनुभव करता है। परमात्मा की कृपा में निष्काम साधक उसका दर्शन करता है, भगवान के साक्षात्कार के उपरांत ही भक्त शोकहीन होकर परमात्मा की महिमा से अपने को महिमावान अनुभव करता है।[4] परमात्मा शास्त्रीय व्याख्यान, अथवा बुद्धि के द्वारा उपलब्ध नहीं हो सकता। जो भक्त निष्काम होकर उसकी प्रार्थना एवं आराधना करता है, वही उसे प्राप्त कर सकता है।[5]

1- छान्दोग्योपनिषद- प्रथम अध्याय, एकादशखण्ड-2
2- क-बृहदारण्यक में प्रस्तुत-मधुविज्ञान
ख- छान्दोग्योपनिषद- 3/14/2
3- प्लवाह्येते अदृढाः यज्ञरूपाः मुण्डकोपनिषद 1/1/7
4- अणोरणीयान महतो महीयानात्मास्य जन्तोर्निहतो गुहायाम। कठोपनिषद, तमक्रतुःपश्यति वीतशोको धातुः प्रसादा न्महिमानमात्मनः 1/2/20
5- कठोपनिषद- 1/2/23

मुण्डकोपनिषद और ऋग्वेद संहिता में परमात्मा और मुक्तात्मा का बहुत सुन्दर रूपक प्रस्तुत किया गया है।

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।

तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्ति अनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति।।[1]

एक वृक्ष पर (इस प्रकृति रूपी जंगल में) मित्रवत दो पक्षी बैठे हुए हैं, उनमें एक पक्षी (जीवात्मा) स्वादुफल (कर्मफल) का उपभोग करता है, किन्तु दूसरा (परमात्मा) आहार नहीं करता वह दृष्टा मात्र है। उपनिषदों में ब्रह्मोपासना को अपनाने पर बल दिया गया है। जगत की सभी वस्तुएं ब्रह्म से अनुशासित हैं, अतः उसी का चिन्तन और मनन करना चाहिए। ओंकार को ब्रह्म रूप में उपासना करने की शिक्षा दी गयी है। यह ओंकार ही (ओउम् प्रणव) ही कभी नष्ट न होने वाला अक्षर ब्रह्म है। उसकी अक्षर रूप में उपासना करने पर भक्त अभिलषित प्राप्त करता है।[2] रस प्रेम स्वरूप है। जीव उस रस-स्वरूप को प्राप्त कर प्रसन्न होता है।

औपनिषदिक साहित्य में ब्रह्म के अनेकानेक रूपों के अंकन के साथ-साथ ब्रह्म साक्षात्कार के मार्गों की प्रतिष्ठा भी हुई। ब्रह्म साक्षात्कार के लिए दो प्रकार के मार्गों का निर्देश मिलता है: एक विशुद्ध बुद्धि पर एक मार्ग (हृदय पक्ष की पूर्ण उपेक्षा के साथ ज्ञान मार्ग की प्रतिष्ठा) और दूसरा हृदय पक्ष समन्वित ज्ञान मार्ग।[3] जहाँ एक ओर ब्रह्म की सर्वव्यापकता एवं

1- मुण्डकोपनिषद-3/1
2- ऋग्वेद संहिता, 1/164/25
2- एतद्ध्येवाक्षरं ब्रह्म एतद्ध्येवाक्षरं परम् एतद्ध्येवाक्षरं ज्ञात्वायदि इच्छति तस्य तत कठोपनिषद- 1-2-16
3- भक्ति का विकास- पं० राम चन्द्र शुक्ल (सूरदास नामक पुस्तक में संoलेख)

ऐन्द्रिय अगोचरता पर प्रकाश डाला गया है,वहाँ दूसरी ओर उत्कट प्रेम तथा ज्ञान के माध्यम से प्राप्त दिव्य आनन्द का स्वरूप भी स्पष्ट किया गया है,उपनिषद काल में समस्त देवता ब्रह्म से अभिन्न मान लिये गये।[1] अत: देवताओं की पूजा के स्थान पर निर्गुण ब्रह्म की प्रतिष्ठा तथा शुद्ध चिन्तन के महत्व को स्वीकृति होने लगी।

भक्ति भावना के विकास में वेदों के अतिरिक्त उप निषद,ब्राह्मण और आरण्यक तंत्र ग्रन्थ पांचरात्र वैष्णव पुराण,भागवत,गीता ,संस्कृत काव्य तथा विभिन्न आचार्यों की भक्ति सम्बन्धी मान्यताएं भी सहायक हैं। अत: उनकी व्याख्या भी आवश्यक है।

उपनिषदों में वेदों के समान ही भक्ति का अस्तित्व परिलक्षित होता है जिस प्रकार संहिताओं में कर्मकाण्ड की प्रधानता होते हुए भी उनके बहुत से मन्त्रों में भक्ति के उद्गार मिलते हैं उसी प्रकार उप निषदों में भी प्रेम या भक्ति के द्वारा ईश्वर को प्राप्त करने की भावना मिलती है वस्तुत: भक्ति शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग उपनिषद साहित्य में ही मिलता है। श्वेता-श्वतरोपनिषद में यह वर्णित है,कि जिसकी परमेश्वर में परम भक्ति है और जैसा परमेश्वर में है वैसी गुरु में ,उस महान पुरुष के हृदय में कहे हुए रहस्य मय अर्थ प्रकाशित हो जाते हैं:-

---

1- त्वं ब्रह्मा त्वंच वैविष्णु त्वं रुद्र त्वं प्रजापति:- मैत्रायण्युपनिषद।

यस्यदेवे पराभक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ।

तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः।।[1]

बृहदारण्यक उपनिषद में भक्ति और प्रीति को समानान्तर ले चलने वाली भावना मिलती है जिस प्रकार अपनी प्रियतमा से आलिंगन होने पर न कुछ बाहरी वस्तुका अनुभव होता है न भीतरी वस्तु का, उसी प्रकार परमात्मा का आलिंगन होने पर मनुष्य न कुछ बाहरी बात जानता है न भीतरी।[2]

केन में भगवान की उपासना की शिक्षा मिलती है-तद्वनमित्युपासितव्यम्

अर्थात तद्(ब्रह्म) वनम् (भजनीयम्) इति उपासितव्यम् भजनीय वस्तु होने के कारण ब्रह्मकी उपासना करनी चाहिए, इसी प्रकार कठोपनिषद में -

ऊर्ध्वं प्राणमुन्नयत्यपानं प्रत्यगस्यति।

मध्ये वामनमासीनं विश्वे देवा उपासते।।[3]

अर्थात् ब्रह्म प्राण-वायु को ऊर्ध्व दिशा में प्रेरित करता है अपान को निम्न दिशा में प्रेरित करता है। वह स्वयं भजनीय स्वरूप से हृदय

1- श्वेताश्वतरोपनिषद-6/23

2- बृहदारण्यक, अध्याय 4/3/

3- कठोपनिषद-अध्याय-2,2-3

में अवस्थान करता है, और उसकी सारे देवता उपासना करते हैं। मुण्डक में प्रणव (ओंकार) की कल्पना धनुष के रूप में, आत्मा (जीवात्मा) को शर के रूप में की गयी है जिसका लक्ष्य ब्रह्म है।

प्रणवो धनुः शरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्य मुच्यते।
अप्रमत्तेन वे द्धव्यं शरवत्तन्मयो भवेत् ।।[1]

प्रणव धनुष है, आत्मा शर है और ब्रह्म उसका लक्ष्य। यत्नपूर्वक लक्ष्य भेद करें। शर के समान तन्मय हो जाय। उपनिषदों में प्रभु को भूमा कहा गया है जिस प्रकार समुद्र में गोता लगाने से सारे शरीर का मैल धुल जाता है उसी प्रकार भक्ति रूपी मानसरोवर में गोता लगाने से मन का समस्त कल्मष दूर हो जाता है।[2]

मुन्शी राम शर्मा ने अपने प्रबन्ध में उपनिषदों की भक्ति पर विचार करते हुए उपनिषदों में व्यक्त भक्ति भावना और श्रद्धा जो भक्ति का एक अंग है, की विवेचना की है। वस्तुतः श्रद्धा से युक्त ही भक्ति की स्थिति है और उपनिषदों में यही स्वीकारा भी गया है कि आत्मा को जानने का सर्वप्रमुख साधन श्रद्धा ही है अतः भक्ति का यहीं मूलाधार है।

भक्ति के क्षेत्र में गुरू की महत्ता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है, उपनिषद भी इसी सत्य को पुष्ट करता है। श्वेताश्वतर में गुरु को विशुद्ध भक्तिरूप कहा गया है- जिसकी परमेश्वर में परमभक्ति है, और

1- मुण्डक- 2/2/4
2- उपनिषद् में भक्ति, रामकिशोरी देवी, कल्याण में भक्ति अंक, पृष्ठ-52 पर

जैसी परमेश्वर में है, वैसी गुरु में भी है। छान्दोग्य, तैत्तरीय ,ईशोपनिषद, प्रश्नोपनिषद में "ओइम्" का महत्व प्रतिपादित हुआ है। इस प्रकार उपनिषद साहित्य में भक्ति एवं उसके विविध अंगोपांग सम्यक् विवेचना हुई है।

वैदिक वाङ्मय में उपनिषदों का विशेष मूल्य है, आत्मसाक्षात्कार के लिए भक्ति की महत्ता प्राय: सभी सम्प्रदायों को मान्य है, भक्त अपने आराध्य देव को भक्ति-भावना द्वारा अवगत करना चाहता है। ज्ञानमार्ग की दुरूहता, योगपथ की जटिलता, तथा कर्ममार्ग की वीभत्सता से घबड़ाकर सरल वृत्ति का साधक-वृन्द ही चल सकता है, पर भक्ति पथ सबके लिए उन्मुक्त है। इस मार्ग में साधक को अपनी मनोवृत्ति केवल एक ओर से दूसरी ओर मोड़ देनी पड़ती है। भक्त अपने इष्टदेव की आराधना में अपने सर्वस्व को समर्पित कर देता है। भक्त का जीवन भगवन्मय होता है उसके अन्दर प्रभुदर्शन की उत्कृष्ट लालसा रहती है और उसकी बांकी झांकी पर, स्वल्प झलक पर, वह आनन्द विभोर हो उठता है। भक्ति मार्ग सरस मार्ग है। जिस प्रकार निरीह बालक सांसारिक ऐषणाओं में आसक्त नहीं होता है, उसी प्रकार भक्त भी निरीह और निस्पृह होता है। बालक अपनी सुरक्षा के लिए मां पर अवलम्बित है, वैसे ही भक्त अपने प्रभु पर, परमदेव की कृपा ही भक्त का सर्वस्व है।

श्रीमद भागवत में भक्ति-

श्रीमदभागवत भक्ति शास्त्र का अद्वितीय ग्रन्थ है, जिसका अभीष्ट विषय ही ऐसा है, कि भक्ति प्राप्ति के लिए कोई भी साधन और

साध्य अवशिष्ट नहीं रह जाता है, इतना ही नहीं साधनकाल में भी भक्तियोग स्वतन्त्र होने के कारण भक्ति योगी के लिए अन्य साधनों की अपेक्षा नहीं रह जाती। श्रीमद्भागवत के एकादश स्कन्ध के चतुर्थ अध्याय में भक्ति की महत्ता बताते हुए उद्धव से भगवान कृष्ण की यह उक्ति है, मैं न योग द्वारा और न ज्ञान द्वारा प्राप्त होता हूँ वरन् मेरी प्राप्ति का साधन तो भक्ति ही है-

> न साधयति मां योगो न सांख्य धर्म उद्धव।
> न स्वाध्याय स्तपस्त्यागो यथा भक्तिर्ममोर्जिता।।
> भक्त्या इह मैं यथाग्राह: श्रद्धयात्मा प्रिय:सताम्।
> भक्ति पुनातिमन्निष्ठा श्वपाकानपि सम्भवात्।।[1]

वेदत्रयी में ज्ञान, कर्म एवं भक्ति तीनों साधन एक दूसरे के पूरक सिद्ध होते हैं, ज्ञान हमे लक्ष्य का बोध कराता है, कर्म उस लक्ष्य तक पहुंचाता है, और भक्ति उस लक्ष्य में तल्लीन कर देती है। ज्ञान कर्म और भक्ति को प्रदीप्त करता है। भक्ति ज्ञान और कर्म का उद्रेक करती है। गीता में भी ज्ञान कर्म और भक्ति का आदर्श विद्यमान है। यद्यपि भक्ति अपना स्वर दोनों से कुछ ऊँचा अवश्य किये हुए है। श्री मद्भागवत में ज्ञान और कर्म को भक्ति से नीचा स्थान प्राप्त है। उसके माहात्म्य प्रकरण में ज्ञान और वैराग्य को भक्ति की सन्तान की संज्ञा से अभिहित किया जाता है।

1- श्रीमद् भागवत- 11/4/20,21

भेद की दृष्टि से भागवतकार ने "नवधा" भक्ति की परिकल्पना की है-

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्म निवेदनम्।।[1]

"भागवत की नवधा-भक्ति को कनिष्ठ कोटि की माना है, इसी प्रकार भक्ति के अंगों का भी वर्णन वहाँ सुलभ है।[2]

भागवत कार की मान्यता है कि जैसे पुष्प की सुगन्धि वायु द्वारा उड़कर नासिका में पहुँच जाती है, वैसे ही भक्ति के इन अंगों में तत्पर, रागद्वेषादि विकारों से शून्य चित्त परमेश्वर को प्राप्त कर लेता है।

भगवान स्वयं अपनी वाणी से श्रीमद्भागवत में कहते हैं कि जो गदगद वाणी से द्रवित चित्त हो, कभी रोता हुआ कभी हँसता हुआ कभी लज्जा को छोड़ गाता हुआ और नाचता हुआ मेरी भक्ति में निरत होता है, वह इस निखिल विश्व को पवित्र कर देता है। जैसे अग्नि द्वारा स्वर्ण का मलदूर होकर फूँकने पर स्वर्ण अपने रूप में मिल जाता है, उसी प्रकार मेरे भक्ति योग से कर्म विपाक दूर करता हुआ आत्मा मुझे ही प्राप्त कर लेता है, मेरे पवित्र चरित्रों का श्रवण एवं ध्यान करता हुआ आत्मा जैसे-जैसे शुद्ध होता जाता है, वैसे ही वैसे अञ्जनाञ्जित आँखों की तरह वह सूक्ष्म वस्तु के दर्शन करने लगता है।

1- श्रीमद्भागवत-7/5/23
2- भक्ति का विकास- मुंशीराम शर्मा-पृ0 309

श्रीमद्भागवत में वर्णित भक्ति के स्वरूप के सम्बन्ध में निम्न लिखित बातें ज्ञात होती हैं:-

1- भगवान भक्ति द्वारा ही प्राप्त होते हैं।

2- योग, ज्ञान, स्वाध्याय तप अर्थात् वानप्रस्थ, और त्याग अर्थात् सन्यास प्रभुप्राप्ति के वैसे साधक नहीं हैं।

3- भक्ति में एक निष्ठा होनी चाहिए।

4- भक्ति से भक्त में पवित्रता आती है, जो उसके संसर्ग में आने वालों को पवित्र करने वाली है।

5- भक्ति से कर्म-विपाक नष्ट होता है, और उसके नष्ट होने पर भगवान प्राप्त होते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से भागवत की भक्ति स्वतः स्पष्ट हुई।

श्रीमद भगवद गीता में भक्ति-

गीता समस्त शास्त्रों का और विशेषकर उपनिषदों का सार है। श्री वेदव्यास ने महाभारत के भीष्म पर्व में कहा है- गीता-सुगीता कर्तव्या कि मन्यैः शास्त्र संग्रहै,। स्वयं श्री कृष्ण ने भी गीता में कहा है कि सब शास्त्रों में जो बात कही गयी है वह मुझसे सुन।

गीता में कर्मयोग, ज्ञानयोग और भक्ति योग की क्रमशः विवेचना है, फिर भी भक्ति को ही वहां प्रधानता है, क्योंकि ज्ञान और कर्म वाले अध्यायों में भी भक्ति अन्तःसलिला की भांति प्रवाहित होती रहती है, भगवान श्री कृष्ण की यहां स्पष्ट उद्घोषणा है-

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।[1]

चौथे अध्याय में भगवान अपने स्वरूप का वर्णन करते हुए ये घोषित करते हैं कि-"ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्"[2] जो भक्त मुझे जिस प्रकार भजता है, मैं उसे उसी प्रकार भजता हूँ। गीता का मूलाधार प्रपत्ति या शरणागति है। समस्त अठारहवें अध्याय में इसी की मीमांसा हुई है। गीता में चार प्रकार के भक्तों की कोटियां स्वीकारी गयी है-

"आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ।।[3]

गीता में वस्तुतः ज्ञान योग और भक्ति योग का समन्वय कर्मयोग में किया गया है, जिसके स्पष्ट ही दो पक्ष हैं- एक आन्तरिक भक्ति और दूसरी बहिर्भक्ति। आन्तरिक भक्ति के द्वारा व्यक्तिगत विकास को समष्टि के विकास में जोड़ना होता है। इन दोनों के समन्वय का नाम ही पराभक्ति या फलरूपाभक्ति है।

गीता में भगवान श्री कृष्ण अपने भक्तों को यह आश्वासन देते हैं कि जो कोई भक्त मेरे लिए प्रेम से पत्र, पुष्प, फल, जलादि का अर्पण करता है, उस शुद्ध बुद्धि निष्काम प्रेमी भक्त को प्रेम पूर्वक अर्पण किया हुआ वह पत्र पुष्पादि मैं सगुण रूप से प्रगट होकर मैं प्रीतिसहित खाता हूँ।

1- श्रीमद् भगवद्गीता- 18/66/
2- श्रीमद् भगवद्गीता- 4/22/
3- श्रीमद् भगवद्गीता- 7/16/

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।

तदहं भक्त युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः।।[1]

इसी प्रकार अनन्य भक्ति की व्याख्या भी भगवान करते हैं, जो पुरुष केवल भगवान के लिए यज्ञ, दान, तप और सम्पूर्ण कर्तव्यों को संपादित करता है और ईश्वर को ही परमगति मानकर उसकी प्राप्ति के लिए तत्पर रहता है। आसक्तिरहित होता वही अनन्य भक्ति है-

मत्कर्मकृन्मत्परमो मद्भक्तः संग वर्जितः।

निर्वैरः सर्वभूतेषु यः समामेति पाण्डव।।[2]

भक्ति भावना की दृष्टि से गीता वस्तुतः अमृत तुल्य है, अमृत का काम नव जीवन प्रदान करना। भक्ति भी एक संजीवनी है और गीता में प्रतिपादित मूर्तिमती भक्ति है। गीता में वर्णित भक्ति से भक्ति की गरिमा महिमामंडित सिद्ध होती है।

गीता में भक्ति का रहस्योद्घाटन भगवान श्री कृष्ण नवे अध्याय में करते हुए कहते हैं:-

इदं तु ते गुह्यतमं प्रवक्ष्याम्यनसूयवे।

ज्ञानं विज्ञान सहितं यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात्।।

राज विद्या राजगुह्यं पवित्र मिदमुत्तमम्।

प्रत्यक्षा वगमं धर्म्यं सुसुखं कर्तुमव्ययम्।।[3]

1- श्रीमद्भगवद्गीता- 9/26

2- श्री मद् भगवद्गीता-11/55

3- श्री मद्भगवत गीता- 9/1-2

अर्थात् सगुण भक्ति,राजयोग या भक्ति मार्ग ज्ञान विज्ञान से संयुक्त परम पवित्र प्रत्यक्ष,धर्मयुक्त और सुखकर है,इसीलिए भगवान ने इसे "राजविद्या राजगुह्य:" कहा है।

सर ए.डी.एडिंग्टन लिखते हैं- ·

"In History religious mysticism has aften been associated with extravaganess that cannot be approved.. "A Point that must be insisted on is that religion or contact with spiritual power,is has any general importance, must be a common place matter of daily life and it should be treated as such in any discussion.[1]

अर्थात् भक्ति मार्ग अतिशयोक्ति पूर्ण है,यह कहते हुए भी उसकी सर्वसाधारण के लिए महत्त्वपूर्ण भक्ति की आवश्यकता है। जिस प्रकार ज्ञान मार्ग का मुख्य आधार शक्ति और बुद्धि है,उसी प्रकार भक्ति मार्ग का मुख्य आधार श्रद्धा और विश्वास है।

ईश्वर के प्रति हमारे मन की अविच्छेद्य स्वाभाविक अनुरक्ति ही प्रेमभक्ति कहलाती है,इस प्रकार भक्ति के पाँच मार्ग हुए शान्त,दास्य,वात्सल्य और माधुर्य" वृन्दावन की गोपियों की श्री कृष्ण

---

1. The Nature of the physical world" By Sir A.D.Eddington.

के प्रति प्रेम इस प्रेम भक्ति का उत्कृष्ट उदाहरण है। गीता में जो ज्ञान योग और भक्ति योग का समन्वय कर्म योग में किया गया है, उसके दो पक्ष प्रतीत होते हैं- एक आन्तर भक्ति और दूसरी बर्हिभक्ति आन्तर भक्ति द्वारा व्यक्तिगत आध्यात्मिक विकास और बर्हिभक्ति द्वारा व्यक्तिगत विकास को समष्टि के विकास में जोड़ना होता है। इन दोनों प्रकार की भक्ति के समन्वय का नाम ही पराभक्ति या फलरूपा भक्ति है। आन्तरभक्ति में सगुणोपासना द्वारा चित्त शुद्धि एवं चित्त की एकाग्रता तथा ध्यान द्वारा पूर्णता का अनुभव प्राप्त करने का रहस्य गीता में समझाया गया है। साथ ही साथ जो ईश्वर मेरा पालनकर्ता और पिता है, उसका यह जगत है, इसीलिए इस जगत को सुधारने का प्रयत्न करना मेरा परम कर्तव्य है - यह समझ कर अध्ययन मनन, चिन्तन, एवं निदिध्यासन द्वारा प्रभु के सामान्य, प्रेममय स्वरूप की भक्ति करने का मार्गदर्शन जगत को देने के कार्य योगदान करना ही गीता की बर्हिभक्ति है। विश्वम्भर और विश्व रूप परमेश्वर दोनों की उपासना एक साथ चलनी चाहिए। जो लोग ऐसा नहीं करते केवल मनोरंजन मात्र जीवन का ध्येय मानते हैं, उनके लिए भगवान स्वयं कहते हैं-

> मोघाशा मोघ कर्माणो मोघ ज्ञाना विचेतसः।
> राक्षसीमासुरी चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः।।[1]

अर्थात ऐसे वृथा आशा, वृथा कर्म और वृथा ज्ञान वाले अज्ञानी जनराक्षसी, आसुरी एवं मोहिनी प्रकृति को ही धारण किये रहते हैं, अन्त में

1- सूर और उनका साहित्य-डॉ हरवंश लाल शर्मा

सभी को कहती है-

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायण।।[1]

अतैव जगत् के समस्त प्राणियों को आन्तर एवं बहिर्भक्ति द्वारा ही भक्ति समीचीन अर्थों में प्रमाणिक सिद्ध होगी। यही श्रीमद्भगवद्गीता के भक्ति का मूल तथ्य है।।

पुराणों में भक्ति-

भक्ति के चरम विकास के लिए मुख्य रूप से पुराणों को ही श्रेय दिया जाता है। वैष्णव भक्ति के विकास का मूल श्रीमदभागवत में विद्यमान है। इस आधार स्तम्भ पर ही कृष्ण भक्ति का सम्पूर्ण साहित्य आधारित है। भगवद्भक्ति के क्षेत्र में श्रीमदभागवत पुराण को वेदों के समान महत्ता उपलब्ध है। वैष्णव भक्ति की व्यापक व्याख्या करना पुराणों का उद्देश्य था। महाभारत में वर्णित ऐश्वर्य प्रधान कृष्ण को माधुर्य भक्ति का कान्त आलंबन बनाने का श्रेय पुराणों को ही उपलब्ध है। नवधा भक्ति के स्वरूप की व्याख्या करके पुराणों ने साधारण जन सुलभ स्वरूप प्रदान करने का अद्भुत कार्य किया। रसराज श्रृंगार को सर्वप्रथम भागवत पुराण में ही श्री कृष्ण के चरित्र के साथ जोड़ा गया। यहाँ पर श्रृंगार का उन्नयन कर भागवत कार ने उनको वासना की मलिनता से शून्य कर अत्यन्त मधुर रूप प्रदान किया। अठारह पुराणों

में से विष्णु ब्रह्मवैवर्त,हरिवंश तथा भागवत पुराण को ही भक्ति के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान उपलब्ध है। इन तीन ग्रन्थों में भक्ति के विविध स्वरूप, लक्ष्य एवं अंगों को व्याख्या विशेष रूप से दृष्टिगत होती है। इनमें से भी भागवत पुराण भक्ति का सर्वाधिक गहन सागर है। श्रीमदभागवत पुराण भागवत सम्प्रदाय का मेरुदण्ड माना जाता है। गीता में भक्ति के जिस स्वरूप को प्रतिष्ठा की गयी है,वह कर्म और ज्ञान से युक्त है,किन्तु भागवत में कर्म और ज्ञान से विलग भक्ति की स्थापना हुई है।[1]

प्रस्तुत ग्रन्थ में भक्ति की विशद व्याख्या मिलती है,यहाँ भक्ति के दो रूप माने गये हैं:-

1- साध्य

2- साधन

भागवतकार के अनुसार मर्यादानुवदा तथा वैधी भक्ति साधन भक्ति के पर्याय हैं,तथा प्रेमाभक्ति,रागानुगा तथा रागात्मिका भक्ति साध्य भक्ति के ही अन्य नाम है।[2] भक्ति को प्रधानता प्रदान करते हुए श्री भागवत कार ने स्थान-स्थान पर ज्ञान तथा भक्ति का सामंजस्य स्थापित किया है। श्रीमदभागवत में भक्ति की परिभाषा से लेकर उसके रूप प्रकार,अंग, भेद आदि सभी पर प्रकाश डाला गया है । गुण की दृष्टि से भक्ति तीन प्रकार

1- सूर और उनका साहित्य- डॉ0 हरवंश लाल शर्मा

2- श्रीमदभगवत गीता, 1-2-11

की बतायी गयी है:

सात्विकी, राजसी तथा तामसी और साथ ही चौथी प्रकार की निर्गुण भक्ति का उल्लेख भी किया गया है।[1]

भक्ति की दार्शनिक पृष्ठभूमि के रूप में जीव ब्रह्म और माया की व्याख्या करते हुए पुराणों में जहाँ एक ओर जीवात्मा और परमात्मा के मध्य रागात्मक सूत्र स्थापित किया गया है, वहाँ भगवान के तीनों रूपों का उल्लेख भी किया गया है। मूलत: वह परम पुरुष है, उद्भावन, पालन और संहार धर्मों का निर्वाह करते हुए ब्रह्मा, विष्णु और महेश नाम से विख्यात तीन रूप धारण करता है।

पुराणों में भक्ति के विभिन्न रूपों का वर्णन करते हुए सर्वश्रेष्ठ प्रेमाभक्ति को स्वीकार किया गया है। यहाँ तक कि उच्च कोटि का भक्त कदापि मुक्ति की कामना नहीं करता, भक्ति का आनन्द मुक्ति के आनन्द से कई गुना अधिक है।[2] बार-बार जन्म लेकर भक्ति में लीन रहना ही भक्त की सबसे बड़ी आकांक्षा रहती है।

पौराणिक युग तक भक्ति का स्वरूप लगभग निश्चित हो चुका था, पुराणों को मुख्यत: पंचम वेद के नाम से जाना जाता है, इतना

1- श्रीमद् भगवत गीता- 3/29/7-14

2- न किंचित साधवोधीरा भक्ता ह्येकान्तिनोमम।
   वांछन्त्यपि मयादत्तं कैवल्यम पुनर्भवम्।। भागवतपुराण, 11/20/34

हो नहीं इसके सम्बन्ध में यहाँ तक कहा गया कि वेदों के निगूढ़ अर्थ को समझने के लिए पुराणों के अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं[1] वायु पुराण में भी स्पष्टतः निर्धारित किया गयाहै:-

यो विद्याधा-तुरो वेदान् सांगोपनिषदो द्विजः
न वेद पुराणं संविद्यान्नैव सस्याद विचक्षणः।।
इतिहास पुराणाभ्यां वेद समुप बृंहयेत।
बिभेत्यल्प श्रुताद वेदों मामयं प्रहरिष्यति।।[2]

पुराणों में ज्ञान एवं कर्म योग की अपेक्षा भक्ति योग की ही अधिक महत्ता सिद्ध की गयी है। बृहन्नारदीय पुराण की यह स्पष्ट घोषणा है कि ईश्वर के प्रति एकान्तिक भक्ति में ही वह शक्ति है, जो चाण्डाल को ब्राह्मण से ऊँचा बना सकती है- चाण्डालोऽपि मुनिश्रेष्ठ विष्णु भक्तो द्विजाधिक।[3]

पुराण वर्णित भगवान वेद ब्रह्म या निर्गुण निर्विकार, जगत के मूल कारण नहीं वरन् वे प्रत्यक्ष उपास्य और भक्त के आराध्य है, जिनकी कृपा से चर्तुवर्ग रूप फल की प्राप्ति होती है।

यहाँ भगवान भक्तों के प्रति अनुग्रह प्रकट करने के लिए मनुष्य रूप में अवतीर्ण होते हैं, और नाना लीलाएं करते हैं, और यही लीला रस, आस्वादन ही भक्ति का प्रकृष्ट साधन है-

---

1- पुराणों में भक्ति- रासमोहन चक्रवर्ती- कल्याण का भक्ति अंक पृ053, पृ055
2- पुराणों में भक्ति-
3- बृहन्नारदीय पुराण- 32/39

अनुग्रहाय भक्तानां मानुषं देहमास्थित:।
भजते ता दृशो: क्रीडा या: श्रुत्वा तत्परो भवेत।।[1]

पुराणों में यद्यपि विभिन्न देवताओं की महिमा का वर्णन है तथापि पुन: यह घोषित किया गया है कि वे सभी देवता वस्तुत: एक ही परमतत्व के प्रकाश स्वरूप हैं,अर्थात् स्वरूपत: अभिन्न हैं,आशय यह कि उनमें एकेश्वर वाद की प्रतिष्ठापना की गई है। इसके साथ ही वहाँ भी भक्ति के साधन,मुक्ति के साधन,उसके भेदशरणागति आदि की विशद विवेचना मिलती है जो निर्विवाद पुराणों में आधार पर भक्ति के तत्कालीन विकास को किसी सन् सम्वत के अन्तर्गत नहीं रख सकते,क्योंकि पुराण एक व्यक्ति के लिखे न होकर अनेक कर कमलों की रचनाएं हैं। काल क्रम का संकेत न देने पर भी पुराण युगीन भक्ति का विकास अत्यन्त महत्वपूर्ण है।।

रामायण में भक्ति-

वाल्मीकि रामायण के युग तक विष्णु के मानवीय अवतार के रूप में दाशरथी राम की प्रतिष्ठा हो चुकी थी। उनका अवतरण असुरों के संहार के कारण हुआ था।[2] रामायण में उल्लेख मिलता है कि ब्रह्मा ने रामचन्द्र से कहा-

वैष्णवो तां महातेजो यद्वाडवाग्नि सनातनम।
त्वं हि लोको गति देवों नत्वां केचित् प्रजानने।।
x x x x x
त्वामचिन्त्य महद् भूतमक्षयं चाजरं तथा।[3]

1- श्री मद्भागवत, 10/33/37
2- नष्टं धर्मं व्यवस्थानां काले काले....वाल्मीकि रामायण 7/8/27
3- वाल्मीकि रामायण, 110/8/13

रामायण काल तक सीता को लक्ष्मी का ही एक रूप मान लिया गया था[1] हिन्दुओं में संस्कृत-प्रेमी एवं धार्मिक वर्गों की यह एक विख्यात मान्यता है कि सर्वश्रेष्ठ एवं सर्वाधिक जनप्रिय हिन्दू महाकाव्य एवं शास्त्र वाल्मीकीय रामायण का प्रधान विषय है भक्ति प्रपत्ति अथवा शरणागति। यद्यपि भक्ति, प्रपत्ति अथवा शरणागति इन तीन शब्दों के भाव में सूक्ष्म अन्तर दिखाने का हठधर्मों के साथ प्रयास किया गया है, वास्तव में वे एकार्थक ही है, और उनका अभिप्राय है, जीव की ईश्वर परायणता। भगवान के प्रति अनुरक्ति/जनित सुख का ही नाम "भक्ति" है। वैष्णव-सिद्धान्त के अनुसार रामायण शरणागति परक शास्त्र है शरणागति की भावना सम्पूर्ण ग्रन्थ में व्याप्त है, इसलिए यह वास्तव में ऐसा शास्त्र है, परन्तु साथ ही साथ यह धर्मशास्त्र नीतिशास्त्र और भक्तिशास्त्र भी है।

शरणागति शब्द को निम्नलिखित श्लोकों में स्पष्ट प्रयोग हुआ है:-

वधार्थं वयमातास्तस्य वै मुनिभि: सह।
सिद्धगन्धर्वयक्षाश्च ततस्त्वां शरणं गता:।।[2]
ततस्त्वां शरणार्थं चशरण्यं समुपस्थिता:।[3]
परिपालय नो राम वध्यमानान्‌ निशाचरै:।।

1- वही, 6/117/29
2- वाल्मीकि रामायण-बालकाण्ड-15/24-25
3- वही अरण्यकाण्ड - 6/19

शरणागति (शरणापेक्षा तथा शरणदान) का सर्वाधिक पूर्ण उदाहरण वास्तव में विभीषण की शरणागति में ही मिलता है, वे एक श्लोक ऐसा कहते है, जिसमें शरणागति के पूर्वोक्त छहों अवयवों का समावेश हो गया है-

निवेदयत मां क्षिप्रं राघवाय महात्मने ।
सर्वलोक शरण्याय विभीषण मुपस्थितम्।।[1]

श्री राम द्वारा शरणागत वत्सलता के व्रत का निश्चय निम्न श्लोकों में हुआ है, जो उतने ही प्रसिद्ध है-

मित्र भावेन सम्प्राप्तं न त्यजेयं कथंचन।
दोषो यद्यपि तस्य स्यात् सतामेतदगर्हितम।।

x x x x x

आनयैनं हरिश्रेष्ठ दत्तम स्याभयं मया।
विभीषणो वा सुग्रीव यदि वा रावणः स्वयम्।।[2]

इसी उदात्त औरउदार भावना से श्री सीता राक्षसियों को अभय प्रदान करती हैं, यद्यपि राक्षसियां उनसे रक्षा चाहती भी नहीं। रामायण में आदि से अन्त तक सभी ने यहां तक कि रावण ने भी भगवान विष्णु के रूप में श्री राम की भगवत्ता का प्रतिपादन किया, यद्यपि श्री राम अपने को मानव ही बतलाते हैं

आत्मानं मानुषं मन्ये रामं दशरथात्मजम्।[3]

1- वाल्मीकि रामायण- युद्ध काण्ड 17/17
2- वही 18-3-33,34
3- वही 117/11

ब्रह्मा के नेतृत्व में सभी देवताओं ने रामभक्ति की श्रेष्ठता का प्रतिपादन किया है-

अमोघास्ते भविष्यन्ति भक्तिमन्तो नरा भुवि।।[1]

बाल्मीकि जी विशेष करके अरण्यकाण्ड में यह दिखलाते हैं कि ऋषि शरभंग से लेकर शबरी तक सबके लिए भगवान की कृपा का द्वार खुला है,और भगवद्भक्ति सभी को मुक्ति का अधिकारी बना देती है।

शिलालेखों में भक्ति-

भारतीय शिला लेखों में भी भक्ति का स्वरूप प्राप्त होता है। ऐतिहासिक शिलालेखों में संकर्षण व वासुदेव का नाम समान रूप से लिया हुआ उपलब्ध है। साथ ही अनेक देवी देवताओं का उल्लेख भी मिलता है।[2] विभिन्न शिलालेखों से स्पष्ट हो जाता है कि तत्कालीन भक्त वासुदेव को सर्वेश्वर मानते थे,उनका धर्म भागवत धर्म के नाम से अभिहित था। उसका प्रसार यूनानी लोगों तक था। भक्ति सलिला का जो प्रवाह वैदिक युग से निरन्तर विकासशील था। जैन तथा बौद्धधर्म के आविर्भाव ने कुछ समय के लिए ई0पू0 चौथी शताब्दी में उसे अवरुद्ध कर दिया। कालांतर में बौद्ध तथा जैन धर्मों में भ्रष्टाचार के प्रसार के साथ भागवत धर्म की पुनः प्रतिष्ठा तथाविकास हुआ,इसके साक्षी ये शिलालेख ही हैं।

1- वही युद्धकाण्ड 117/30
2- घोसुंडी का शिलालेख- समय लगभग ई0पू0 200 वर्ष
2-नानाघाट की गुफा का शिलालेख-समय लगभग ई0पू0100 वर्ष
3-बेसनगर का शिलालेख- Callected works of Sir, R.B.Bhandarkar, Vol.IV.P.4-51

तुलसी साहित्य में भक्ति-

हिन्दी-साहित्य के मध्य युग में भक्ति भागीरथी की जो अनेक धाराएं प्रवाहित होकर जनमन की क्लान्ति को मिटाकर शान्ति में अवगाहन करा रही थी, उनमें सबसे गहन गंभीर धारा भक्त कवि तुलसी की थी। इन्होने 'सर्वव्यापक, निरंजन, निर्गुण, विगत-विनोद एवं अज ब्रह्म'[1] को जो भक्ति-प्रेम-वश दशरथ जाया कौशल्या के गर्भ से अवतरित हुआ था, अपना आराध्य चुना। उन्होने लोक-संग्रह एवम् जनमंगल-विधायन के लिए सौन्दर्य शील-शक्ति समन्वित घनश्याम के रूप में अवतरित ब्रह्म के चरणों में चातक सदृश अपने हृदय को समर्पित कर दिया था-

एक भरोसो एक बल एक आसविश्वास।
एक राम घनस्यामहित चातक तुलसीदास।।[2]

जिस प्रकार चातक का आराध्य घनस्याम जीवनदान द्वारा जग को जीवन प्रदान करताहै, उसी प्रकार भगवान राम भी त्रसित पीड़ित जन को कष्टों से मुक्त कर देते हैं। उनका कोटि-कोटि शतकाम विमर्दित रूप जन मन को आकर्षित करता है और उनकी अमित अरिमर्दन करने वाली शक्ति हृदय को विश्वास से आपूरित कर देती है। इसी से तुलसी ने आराध्य के रूप में राम का वरण किया है। अपने सभी काव्य-ग्रन्थों में उन्होने

1- राम चरित मानस-1/198/0/
2- दोहावली, 227

राम को इन तीनों विभूतियों का विस्तार से वर्णन किया है। अपने सेवक हनुमान के प्रति भी कृतज्ञता व्यक्त करते हुए पत्र लिखवाने का अनुरोध करने वाले, अनुज के रणशय्या पर पड़े रहते समय शरणागत विभीषण की चिन्ता करने वाले, अपने गुणगान के संकुचित तथा भक्त के गुणगान के समय प्रसन्न होने वाले राम के प्रति अनन्य भक्ति होना तुलसी जैसे भक्त के लिए स्वाभाविक था। उन्होने राम के प्रति ही अपनी एक मात्र भक्ति व्यक्त करते हुए कहा-

जौ जगदीस तौ अति भलो जौ महीस तौ भाग।
तुलसी चाहत जनम भरि राम चरण अनुराग ।।[1]

राम चाहे ब्रह्म है, चाहे मानव, प्रत्येक दशा में तुलसी के वे ही आराध्य है।

गोस्वामी तुलसीदास जी राम की भक्ति चाहते हैं। उसके अतिरिक्त उन्हें कोई कामना नहीं है, क्योंकि भक्ति के बदले उत्तम गति मिलेगी, इस भावना को लेकर भक्ति हो ही नहीं सकती, भक्त के लिए भक्ति का आनन्द ही उसका फल है।[2]

इसी कारण भरत मुखेन तुलसी स्वयं कहते है-

अरथ न धरम न काम रुचि, गति न चहउँ निर्वान।
जनम जनम रति राम पद, यह बरदानु न आन।।[3]

1- दोहावली-91
2- गोस्वामी तुलसीदास, आ0राम चन्द्र शुक्ल, पृ011-12
3- राम चरित मानस, 2/203/0/

वे दास्य भावना की "भक्ति" को ही भवसागर तरने के लिए आवश्यक समझते हैं।

अन्य प्रकार की भक्ति में "अहम्" के उदय की आशंका रहती है और जहाँ "अहम्" आया कि भक्त अपने स्थान से च्युत हुआ। अतएव दास्य-भक्ति ही स्पृहणीय है- सेवक सेव्य भाव बिनु-भवन तरिय उरगारि[1] दास्य भक्ति में इष्टदेव की महत्ता ,उदारता,दयालुता,भक्त शरणागत वत्सलता तथा दीन बन्धुता और अपनी दीनता,हीनता,असमर्थता,पापपीनता तथा कारुणिक अवस्था का सदैव ध्यान रखता है,जिससे हृदय का कल्मष धुलता है,मन का ताप मिटता है और आत्मा को पावन भास्वरता प्राप्त होती है। इसीकारण तुलसी ने दास्य भाव की भक्ति को ही स्वीकार किया है।

यों तो उनके समस्त ग्रन्थों की प्रेरणा के मूल में भक्ति भावना ही है,राम चरित का गान तो भक्ति का माध्यम मात्र है,किन्तु उनके हृदयोंद्गार "विनय पत्रिका" में व्यक्त हुए हैं,उन्होंने अपने अघ-अवगुणों के कोष को गणनातीत बताते हुए कहा है-

तउ न मेरे अघ अवगुन गनि हैं।
जौ जमराज काज सब परिहरि इहै ख्याल उरआनि हैं।।[2]

भक्त की आत्म स्वीकृति और अपनी हीनता की यह अनुभूति उसके हृदय की निश्छलता एवंम् पवित्रता की द्योतक है,जब तुलसी कहते हैं:-

---

1- मानस,7/119/11/
2- विनय पत्रिका,95/

है प्रभु मेरोई सब दोसु।
सील-सिंधु ,कृपालु,नाथ,अनाथ-आरत-पोसु।
हेय बचन,विराग,मन,अघ अव गुनगु को कोसु।
राम प्रीति-प्रतीति पोलो,कपट कर तल ठोसु।।[1]

तब से जैसे अपने हृदय को खोल कर रख देते हैं,अपनी इस अनुभूति से प्रेरित होकर वे अपने मन को अनेक भाँति प्रताड़ना करते हुए उसे भक्ति की ओर उन्मुख करते हैं। संसार की नश्वरता,असत्यता,भ्रामकता, क्षणिकता,स्वार्थपरता एवं माया जनित अज्ञानता से मन को अवगत कराकर उसका उदबोधन करते हुए वे कहते हैं:-

ऐसी मूढ़ता या मन की।
परिहरि राम भगति सुरसरिता आस करत ओसकन की।[2]
मन की इस प्रवृत्ति की भर्त्सना करते हुए वे उसे प्रेरणा देते हैं-
सुनु मन मूढ़,सिखावन मेरो।
हरपद विमुख लहयो न काहु सुख,सठ यह समुझि सबेरो।[3]

चिंतन की प्रक्रिया मन को भक्ति की दृढ़ आधार शिला पर खड़ा कर देती है। वह विशुद्ध,निर्मल एवं विकारहीन होकर भगवान की ओर उन्मुख हो जाता है,बस आत्मा निवेदन की भूमिका प्रस्तुत हो जाती है।

1- विनय पत्रिका, 95
2- विनय पत्रिका, 87
3- शाण्डिल्य भक्ति सूत्र,1/1/2/

तुलसी का आत्म विश्वास उन्हें भक्ति को उस भूमिका पर पहुंचा देता है,जहाँ भक्त भगवान् के साक्षात्कार की अनुभूति करने लगता है। यह तुलसी की भक्ति का व्यावहारिक स्वरूप है,जिसमें वे पूर्ण सफल होकर आनन्द सागर में मग्न हो जाते हैं। अब सैद्धान्तिक दृष्टि से तुलसी की भक्ति पर दृष्टिपात करना आवश्यक है,शाण्डिल्य ने अपने भक्ति सूत्र में लिखा है- "सा परानुरक्ति रीश्वरे"[1] तथा नारद भी कहते है "सात्वस्मिन् परम प्रेमरूपा,"[2] जिसका तात्पर्य है कि ईश्वर के प्रति परम अनुरक्ति भक्ति है। गोस्वामी जी ने राम विषयक प्रीति के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए भक्ति का निरूपण इस प्रकार किया है-

प्रीति राम सों नीतिपथ चलिय राग रिस जीति।
तुलसी संतन के मते इहै भगति की रीति।।[3]

राम के प्रति प्रीति को ही तुलसी भक्ति कहते है,लेकिन, वह नीति समर्थित एवम् राग-रिस-रहित होनी चाहिए। नीति समर्थित प्रीति को ही उन्होंने "श्रुति संमत" एवम् "संजुत विरति विवेक" कहा है।[4] प्रीति की विशेषता दास्य भक्ति में ही संभव है। इसीलिए तुलसी ने सेवक-सेव्य-भाव की भक्ति को अपनाया है। सेवक सेव्य भाव में प्रीति की अतिशयता तथा तल्लीनता की कामना करते हुए वे प्रार्थना करते हैं-

---

1- शाण्डिल्य भक्ति सूत्र,1/1/2
2- नारद भक्ति सूत्र 2/
3- दोहावली ,86
4- राम चरित मानस,7/100/13

कामिहि नारि पिआरि जिमि,लोभिहि प्रिय जिमिदाम।

तिमि रघुनाथ निरन्तर प्रिय लाग हु मोहि राम।।[1]

लेकिन यह प्रीति राम-रस रहित अर्थात् सात्विक होनी चाहिए। यही तुलसी की भक्ति का स्वरूप है भक्ति के भेदों का निरूपण विविध दृष्टिकोणों से किया गया है। आराध्य के स्वरूप भेद से भक्ति दो प्रकार की है- निर्गुण भक्ति तथा सगुण भक्ति। तुलसी ने जिस प्रकार अपने आराध्य में निर्गुण सगुण का समन्वय किया है,उसी प्रकार उन्हें दोनों भक्ति स्वीकार्य है। वे दोनों का समन्वय इस प्रकार स्थापित करते हैं।

हिय निर्गुन,नयनन्हि सगुन,रसना राम सुनाम।

मनहुँ पुरट,संपुट लसत,तुलसी ललित ललाम।।[2]

भक्ति का आनन्द ही भक्त का लक्ष्य है,तुलसी की भक्ति वास्तव में इसी प्रकार की है। उन्होने स्पष्ट कहा है -

चहौ न सुगति,सुमति संपति,कछु रिधि सिधि विपुल बड़ाई।

हेतु रहित अनुराग रामपद बढ़ै अनुदिन अधिकाई।।[3]

केवल भगवान के चरणों में निःस्वार्थ प्रेम की अभिवृद्धि तुलसी की कामना है,इस प्रेम को प्राप्त करने के लिए वे सर्वतो-भावेन भगवान् की शरण में चले जाते हैं,भगवान की शरण में जाना ही प्रपत्ति कहलाती है।

1- राम चरित मानस 7/130/23-24

2- दोहावली- 7

3- विनय पत्रिका- 103

"अनन्य साध्य भगवत्प्राप्ति में महाविश्वास पूर्वक भगवान को ही एक मात्र उपाय समझकर प्रार्थना करते हुए रहना ही "प्रपत्ति" है और इसी को शरणागति कहते हैं"[1] तुलसी की भक्ति प्रपत्ति ही है। प्रपत्ति के छः रूप होते हैं-

आनुकूलस्य संकल्पः प्रातिकूलस्य वर्जनम्।
रक्षिष्यतीति विश्वासो गोप्तृत्व व रणं तथा
आत्म निक्षेप कार्पण्ये षड्विधाशरणागतिः।।[2]
तुलसी के भक्ति में इन सभी रूपों के दर्शन होते हैं।

1- आनुकूलस्य संकल्प-

भगवान के प्रति अनुकूल रहने की निश्चयात्मक अभिव्यक्ति प्रपत्ति का प्रथम रूप है, जहां भक्त अपने को सब ओर से खींचकर भगवान के चरणों में केन्द्रित कर देता है। तुलसी भी संकल्प करते हैं-

अब लौं नसानी, अब न नसैहौं।
राम कृपा भवनिसा सिरानी जागे फिर न डसैहौं।।[3]

2- प्रातिकूलस्य वर्जनम्-

भगवान की भक्ति में बाधक अथवा उनके प्रतिकूल प्रेरणा देने वाले भावों, विचारों, व्यक्तियों, प्राणियों एवम् पदार्थों का पूर्ण परित्याग करना प्रपत्ति का दूसरा रूप है। तुलसी भी उपदेश देते हैं:-

---

1- पांचरात्र विष्वक्सेन संहिता- कल्याण साधनांक, पृ063
2- अहिर्बुध्न्यसंहिता 37/27/29
3- विनय पत्रिका- 104

जाके प्रिय न राम बैदेही।

सो छाँडिए कोटि वैरी सम जद्यपि परम सनेही।।[1]

3- रक्षयिष्यतीति विश्वास-

भक्त को पूर्ण विश्वास होता है कि भगवान भक्तों के परम रक्षक है,तुलसी को भी अपने राम के प्रति यही विश्वास है- कौन को त्रास करै तुलसी,जो पै राखि है राम तो मारि है को रे।।[2]

4- गोप्तृत्व वरण-

भगवान को रक्षक के रूप में भक्त वरण कर लेता है। तुलसी भी भगवान को अपने रक्षक के रूप में वरण करते हैं-

तुम तजि हौं कासौं कहौं,और कोहितु मेरे

दीन बन्धु,सेवक सखा,आरत अनाथ पर सहज छोह केहि केरे।[3]

5- आत्म निक्षेप-

जब भक्त मन-वचन कर्म से स्वयं को तथा अपने सर्वस्व को भगवान के चरणों में न्यस्त कर देता है तब निक्षेप की स्थिति आती है, तुलसी कहते है-

ना तो नेह नाथ सौं कीर सब नातो नेह बहैहौं।

यह छरभार ताहि तुलसी जग जाको दास कहैहौं।।[4]

1- विनय पत्रिका 174
2- कवितावली-7-48
3- विनय पत्रिका-273
4- वही -104

6- कार्पण्य-

भक्त भगवान के समक्ष महान दीनता हीनता का जो निवेदन करता है उसे कार्पण्य कहते हैं। तुलसी की विनय पत्रिका कार्पण्य से ही भरी हुई है। उसमें सर्वत्र भगवान का महत्ता और अपनी हीनता का ही निवेदन किया गया है। तुलसी की भक्ति में प्रपत्ति का पूर्ण रूप दृष्टिगत होता है। दास्य भाव की भक्ति ही वास्तव में प्रपत्ति होती है। भक्ति के इस रूप में आत्म-निवेदन एवम् विनय निरन्तर चलती रहती है। विनय की सात भूमिकाएं मानी जाती है- दीनता, मानमर्षता, भयदर्शना, आश्वासन, मनोराज्य और विचारणा।। भक्ति की अन्तिम परिणति आत्मा परमात्मा, जीव जगत इत्यादि की वास्तविक स्थिति एवं मूल रहस्य की चिंतना है, विनय पत्रिका में ऐसे पदों का अभाव नहीं है, तुलसी कहते हैं-

केसव कहि न जाइ का कहिए

देखत तव रचना विचित्र अति समुझि मनहिं मन रहिए[1]

इस प्रकार विनय की समस्त भूमिकाएं तुलसी में मिलती है। विनय पत्रिका के स्तोत्रों तथा राम चरित मानस के प्रत्येक सोपान के आरम्भ में वन्दना की गयी है। दास्य भाव की भक्ति तो सर्वत्र दृष्टिगत होती है, जिसका विवेचन किया जा चुका है। तुलसी ने सुग्रीव, विभीषण, तथा निषाद की भक्ति में सख्यभाव का स्वरूप देखा है, क्योंकि राम ने इन्ही तीनों को सखा का गौरव प्रदान किया है।

1- विनय पत्रिका- 114

तुलसी साहित्य में भक्ति की कतिपय महत्वपूर्ण पद्धतियों का उल्लेख मिलता है। इसी प्रकार तुलसी ने भक्ति के साधनों का भी सविस्तार विवेचन किया है। भक्ति के साधनों की चर्चा करते हुए तुलसी कहते हैं:-

भगति तात अनुपम सुख मूला। मिलइ जो संत होइ अनुकूला।।
भगति के साधन कहौं बखानी। सुगम पंथ मोहि पावहिं प्रानी।।
प्रथमहिं विप्र चरन अति प्रीती। निज निज कर्म निरत श्रुति रीती।।
एहि कर फल पुनि विषय बिरागा। तब मम धर्म उपज अनुरागा।।

× × × × ×

श्रवनादिक नव भगति दृढ़ाहीं। मम लीला रति अति मन माहीं।।
संत चरन पंकज अति प्रेमा। मन क्रम बचन भजन दृढ़ नेमा।।
गुरु पितु मातु बंधु पति देवा। सब मोहि कहँ जानै दृढ़ सेवा।।
मम गुन गावत पुलक शरीरा। गद्गद गिरा नयन बह नीरा।।
काम आदि मद दम्भ न जाके। तात निरंतर बस मैं ताके।।
बचन कर्म मन मोरि गति, भजन करहिं निः काम।
तिन्ह के हृदय कमल महँ, करउँ सदा विश्राम।।[1]

इसके अतिरिक्त गोस्वामी तुलसी दास जी ने अध्यात्म रामायण की नवधाभक्ति[2] को क्रम विपर्यय तथा किंचित संशोधन के साथ स्वीकार करते हुए राम के मुख से शबरी के प्रति इस प्रकार कहलाया है-

---

1- राम चरित मानस- अरण्य काण्ड- 16-709
2- वही 3/35/1-3/36/5

प्रथम भगति संतन्ह कर संगा। दूसरि रति मम कथा प्रसंगा।।
गुरु पद पंकज सेवा ,तीसरि भगति अमान।
चौथि भगति मम गुन गन,करइ कपट तजि गान।
x x x x
नवम सरल सब सन छल होना। मम भरोस हियँ हरष न दीना।।

वस्तुत: ये भक्ति के साधन है,जिन्हे महत्व देने के लिए तुलसी ने भक्ति को स्वतंत्र महत्ता प्रदान की है।

तुलसी साहित्य में यह वर्णन प्राप्त होता है-

1- सत्संग-

पुन्य पुंज बिनु मिलहि न संता।
सत्संगति संसृति कर अंता।।[1]

2- राम कथा में रति-

राम चरित जे सुनत अघाहीं।
रस विशेष जाना तिन्ह नाहीं।।[2]

3- गुरु सेवा-

बंदौ गुरु पद कंज कृपासिन्धु नर रूप हरि।
महा मोह तम पुंज जासु बचन रवि कर निकर।।[3]

1- राम चरित मानस,7/55/6
2- वही । /म0सो05/
3- वही 7/102/13-14

4- निष्कपट भाव से राम गुणगान-

यह भगवदीय नवधा भक्ति का कीर्तन ही है।

वेद विहित राम मन्त्र का दृढ़ विश्वास के साथ जप-

कृत युग त्रेता द्वापर पूजा मख अरु जोग।

जो गति होइ सो कलि हरिनाम ते पावहिं लोग।।[1]

इन्द्रिय दमन, बहु कर्मों से विरति और सज्जन धर्म का निरन्तर

पालन-परवस जानि हँस्यो, इन इंद्रिन निज बस है न हसैहैं।

समस्त जग को राम मय देखना-

उमा जे राम चरन रत बिगत काम मद क्रोध।

निज प्रभु देखहिं जगत केहि सन करहिं विरोध।।[2]

यथा लाभ संतोष तथा पर दोष न देखना :-

यथा लाभ संतोष सदा, काहू सो कुछ न चहौगों।[3]

विगत मान, समसीतल मन, पर-गुन नहिं दोष कहौगों।

सरल एवम् निश्छल हृदय से राम का विश्वास-

भरोसो जाहि दूसरो सो करो।

मो को तो राम को नाम कलपतरू कलि कल्यान करो।[4]

1- विनय पत्रिका, 105
2- मानस 7/112/19-20
3- विनय पत्रिका, 172
4- वही 226

इस प्रकार व्यावहारिक एवम् तात्त्विक दोनों ही दृष्टियों से हम तुलसी की भक्ति को उस सोपान तक पहुँचा हुआ पाते हैं, जिस तक पहुँचे हुए भक्त के लिए यही कहना पड़ता है-

राम तें अधिक राम कर दासा।।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने प्रभु की भक्ति को शारदीय पूर्णिमा की रात्रि बताया है, यथा-

"राका रजनी भगति तव राम नाम सोइ सोम।
अपर नाम उडगन विमल बसहुँ भगत उर व्योम।।[1]

तुलसी की स्थापना है कि राम की कृपा के बिना राम की प्रभुता, महानता का ज्ञान नहीं हो सकता और निश्चय ही जब तक यह ज्ञान नहीं हो जाता तब तक प्रतीति नहीं हो पाती और प्रतीति के अभाव में प्रीति नहीं हो सकती निसन्देह प्रीति के अभाव में दृढ़ भक्ति की कल्पना निराधार रहती है। तुलसी ने इस स्थिति का विश्लेषण इस प्रकार किया है-

राम कृपा बिनु सुनु खगराई। जानि न जाई राम प्रभुताई।।
जानें बिनु न होई परतीती, बिनु प्रतीति होइ न प्रीती।।
प्रीति बिना नहीं भगति दृढ़ाई। जिमि खगपति जल कै चिकनाई।।[2]

इसी राम कृपा से मनुष्य को मानव शरीर प्राप्त होता है, जो कि भक्ति का अनिवार्य साधन है।

1- राम चरित मानस-3,42क-748
2- वही 7,89,1117

तुलसी की भक्ति पद्धति में नवधा भक्ति का प्राबल्य है। नवधा भक्ति में भागवत कार ने भक्ति की नौ विधियों का उल्लेख किया है, जिन्हें तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है- 1- श्रवण, कीर्तन, स्मरण, 2- पाद सेवन, अर्चन वन्दन, 3- दास्य, सख्य आत्म निवेदन।

1- श्रवण-

तुलसी ने श्रवण को बहुत महत्त्व दिया है तुलसी के शब्दों में -

जिन्ह हरि कथा सुनी नहिं काना। श्रवनरन्ध्र अहि भवन समाना।

2- कीर्तन-

जो न करै राम गुन गाना। जीहसो दादुर जीह समाना।।

3-स्मरण-

जिन्ह हरि भक्ति हृदय नहिं आनी।

जीवत सब समान तेई प्रानी।।

4- पाद सेवन-

सबु कर मांगहि एक फलु राम चरन रति होउ।

तिन्ह के मन मन्दिर बसहुँ सिय रघुनन्दन दोउ।।

अरथ धरम न काम रुचि गति न चहऊँ निरबान।

जनम जनम रति राम पद यह बरदानु न आन।।

5- अर्चन

तुलसी ने आराध्य राम की आरती, पूजन आदि किया है। इसीप्रकार मानस में अगस्त्य और भारद्वाज से राम का विधिवत पूजन कराया गया है।

6- वंदन-

मानस और विनय पत्रिका में निहित स्तुतियाँ मूलतः वन्दन ही है।

7- दास्य-

मानस में एक स्थान पर हनुमान कहते हैं-

सो अनन्य जाके असि मति न टरइ हनुमन्त।

मैं सेवक सचराचर, रूपस्वामि भगवन्त।।

8- सख्य-

परम पुनीत सन्त कोमलचित तिनहि तुम्हहिं बनि आई

तजि विप्र व्याध गनि कहि वारेहु कहु रहो सगाई।।

9- आत्म निवेदन-

जो करि सोचु मरे तुलसी,

हम जानकी नाथ के हाथ बिकाने।।

जग में गति जाहि जगत पति की,

परवाह है ताहि कहा नर की।।

यद्यपि तुलसी के भक्ति का विवेचन विशद है फिर भी उनके भक्ति का तत्त्व यथासंभव प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि तुलसी ने अपने साहित्य में भक्ति की श्रेष्ठता का प्रतिपादन किया है। यद्यपि मोक्ष की प्राप्ति के लिए उन्होंने ज्ञान और भक्ति दोनों की चर्चा की है फिर भी वे प्रेमरूपा भक्ति को श्रेयस्कर मानते है।

भक्ति श्रेष्ठता के अनेक कारण हैं, और इनमें सबसे बड़ा कारण उनका प्रेमरूपा स्वरूप है। प्रेमरूपा होने के कारण भक्ति का अधिकार क्षेत्र विस्तृत है। तुलसी की दृढ़ धारणा है कि भक्ति ही एक मात्र ऐसा राजमार्ग है,जो सबके लिए खुला है और जो निश्चय ही परमाराध्य राम तक पहुँचाने में सक्षम है।

महाभारत में भक्ति-

जब से साहित्य में अवतार वाद की स्वीकृति हुई,उसके पूर्व ही भक्ति का उदय हो चुका होगा। अवतार की प्रतिष्ठा महाभारत के युग से पूर्व अवश्य हो चुकी थी। महाभारत अनुमानतः पाँच हजार वर्ष पूर्व का ग्रन्थ है,जबकि ईसाई धर्म ने दूसरी तीसरी शताब्दी में ही भारत में प्रवेश किया। अतः भारत में भक्ति काउदय हजारों वर्ष पूर्व हो चुका था। महाभारत से पूर्व यद्यपि भक्ति के किसी न किसी अंग की आंशिक झलक साहित्य में विद्यमान थी,तथापि इसकी इस रूप में प्रतिष्ठा विशेष रूप से महाभारत के युग में ही हुई। महाभारत काल तक पहुँचते -पहुँचते भगवद् भक्ति के पाँच सम्प्रदायों का विकास हो गया,महाभारत के शान्ति पर्व में नारायणियों प्राख्यान है। नारायणीयों प्राख्यान को वैष्णव भक्ति का मूल माना जाता है। पं0 राम चन्द्र शुक्ल ने वासुदेव भक्ति का तात्त्विक निरूपण महाभारत काल से ही स्वीकार किया है। इसका एक कारण यह भी है कि इस उपाख्यान में परमात्मा को वासुदेव,जीवात्मा को संकर्षन,मन को प्रद्युम्न तथा अहंकार को अनिरूद्ध कहा गया है। इससे ऐसा विदित होता है कि इस युग तक कृष्ण की भक्ति प्रचलित हो चुकी थी। भक्ति को अभारतीय तत्त्व सिद्ध करते समय पाश्चात्य

विद्वानों ने कहा था कि भारतीय उपासना उन्माद शून्य है किन्तु महाभारत में नारद का अपने एक भक्त के साथ मिलकर नृत्य करना वर्णित है। श्रीमद् भगवत गीता में भक्ति का सुन्दर विवेचन मिलता है।

गीता में भगवान श्री कृष्ण ने स्वयं कहा है कि जब कभी देश में धर्म का नाश होता है, विष्णु अवतरित होकर आसुरी शक्तियों का नाश तथा धर्म की प्रतिष्ठा करते हैं।[1] गीता में यह स्पष्ट किया गया है कि भगवत भजन से दुष्टतम व्यक्ति भी साधु बन जाता है।[2]

भक्ति सूत्रों में भक्ति-

भक्ति का वैज्ञानिक विवेचन करने वाले सर्वप्रथम मनीषी शांडिल्य थे। इन्होंने अपने भक्ति सूत्र में ज्ञान से अधिक महत्व भक्ति को प्रदान किया। सर्वप्रथम इन्होंने ही लिखा कि भक्ति मार्ग में वर्ग भेद के लिए स्थान नहीं है।[3] भक्ति के द्वारा मनुष्य सांसारिक चक्र से छुटकारा प्राप्त कर लेता है। शाण्डिल्य ने भक्ति को रागात्मिका वृत्ति माना, तथा इसके परा और अपरा दो रूप निर्धारित किये।[4] उन्होंने ज्ञान को भक्ति के अंग रूप में ग्रहण किया है किन्तु मात्र तात्त्विक ज्ञान से भक्ति प्राप्त करना असंभव माना है, उन्होंने माना कि

1- यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
   अभ्युत्थानम धर्मस्य तदात्मानम् सृजाम्यहम्।।
   -श्रीमद् भगवत गीता, 4-7

2- श्रीमद् भगवत गीता, 9/30-31

3- शाण्डिल्य भक्ति सूत्र, 2/82

4- सा परानरक्ति रीश्वरे- शाण्डिल्य भक्ति सूत्र, 1/2

अनुरक्ति से ही भक्त भगवान का आनन्दमय रूप प्राप्त कर सकता है। शाण्डिल्य ने भक्ति का फल मुक्ति माना है। शाण्डिल्य के अनुसार श्रद्धा और भक्ति में अन्तर है। श्रद्धा साधारण धर्म है- लौकिक व्यवहार में श्रद्धा की स्थिति पग-पग पर दृष्टिगत होती है किन्तु भक्ति का धरातल उच्चतर है। भगवान परक भाव लौकिक नहीं हो सकता।

नारदीय भक्ति सूत्र के लिए शाण्डिल्य पहले ही क्षेत्र तैयार कर गये थे, अतः नारद के भक्ति सूत्रों को शाण्डिल्य की अपेक्षा अधिक प्रसिद्ध उपलब्ध हुई। इनके भक्ति सूत्रों में भावना की प्रधानता स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। इनके 84 सूत्रों में भक्ति की शास्त्रीय व्याख्या, पूर्णस्पष्टता से विद्यमान है। इन्होंने प्रेमरूपा भक्ति को श्रेष्ठ बताते हुए दैन्य को आवश्यक माना है। इनके प्रेम के आख्यान पर ही उत्तरकालीन भक्ति का विकास आधारित रहा। इनकी भावनाओं में दक्षिण के आलवार भक्तों से इतनी समता है कि अनेक आलोचकों ने दक्षिण को ही भक्ति का मूल उत्स माना है।

"भक्ति" की विद्यमानता कर्म, ज्ञान और योग तीनों से उच्चतर धरातल पर है। उसमें अहंकार तथा द्वेष आदि का परित्याग करना आवश्यक है।[3] उन्होंने भक्ति का लक्ष्यार्थ फल मुक्ति को नहीं माना। यद्यपि उनके अनुसार भक्ति के माध्यम से अनेक प्रकार की मुक्ति उपलब्ध होती है।

1- क-आत्मरत्या विरोधेनेति-नारद भक्ति सूत्र, 18
ख-ओं नारदस्तु तदर्पिताखिलाचारिता तद्विस्मरणे परम व्याकुलतेति-नारद, भ·सू·19
ग-प्रातरुत्थाय सायाह्नं सायाह्नात प्रातरन्ततः। यत्करोमि ...न्मातः तदेव तव पूजनम्।। ,यथा व्रजगोपिकानाम्-नारदभक्ति सूत्र·32
घ-ओं सा तु कर्मज्ञान योगेभ्योऽप्यधिकतरा: नारदभक्ति सूत्र-25
ङ-ओं ईश्वरस्याप्यभिमान द्वेषित्वात दैन्य प्रियत्वाच्च-नारदभक्ति सूत्र 27

आलवार भक्त और भक्ति-

गुप्त साम्राज्य में राजाओं का आश्रय मिलने के कारण, भंविद भक्ति का प्रसारसम्पूर्ण भारत वर्ष में हो रहा था किन्तु गुप्त वंश के उपरांत बौद्ध, जैन तथा शैवमतों का प्रसाद का सुन्दर अवसर प्राप्त हुआ। उस युग में दक्षिण के आलवार भक्तों में उन्माद पूर्ण भक्ति का आधिपत्य विद्यमान था, उन्होने तमिल भाषा में भक्ति पूर्ण गीत गाये। दक्षिण में भक्ति के प्रसार का श्रेय आलवार भक्तों को अवश्य दिया जा सकता है किन्तु उत्तरभारत में दक्षिण से आये, आचार्य चतुष्टय ने पुनः भक्ति का उत्थान किया। उत्तर भारत भक्ति के उत्थान के लिए आलवार भक्तों का ऋणी है।

आचार्य कोटि के भक्त कवि-

हिन्दी साहित्य में भक्ति का चरम विकास, रामानुज, मध्वाचार्य, विष्णुस्वामी, बल्लभाचार्य, निम्बार्क, चैतन्य स्वामी हरिदास तथा श्री हित हरिवंश आदि आचार्य कोटि के भक्तों के प्रयत्न का परिणाम है। इन आचार्यों ने विभिन्न सम्प्रदायों की स्थापना की तथा अपनेदार्शनिक मतों का प्रसार किया। ये आचार्य विष्णु के भक्त थे। प्रियादास जी की टीका में नाभादास जी की कल्पनामयी मूर्तिमती भक्ति का वर्णन मिलता है। इन्होने भक्ति का मानवीकरण करके उसके स्वरूप को स्पष्ट करने का यत्न किया है। जिस प्रकार अंगों के ठीक नियोजन के बिना शरीर का निर्माण संभव नहीं, उसी प्रकार श्रद्धादया आदि लक्षणों के विद्यमानता के शून्यता में मनुष्य के हृदय मे भक्ति का अधिवास संभव

नहीं होता है। संत सुन्दरदास ने ज्ञान-समुद्र में भक्ति भाव का विशद वर्णन किया है। वे स्वयं निर्गुण पंथी है अतः उन्होंने पाद सेवन को महत्व प्रदान किया। नवधा भक्ति को निम्न कोटि को,प्रेमाभक्ति को मध्यम और पराभक्ति को उत्तम कोटि को माना है। .

श्री कुंज गोविन्द स्वामी ने लिखा है कि भक्ति का अभिप्राय भजन करने से अथवा आराधना करने से है,भगवत का अभिप्राय है,वह जिसकी आराधना की जाय अथवा आराध्यदेव,आराध्य के प्रति आराधना की भावनाओं को ही भक्ति की परिभाषा इस प्रकार दी जासकती है:

"परमतत्व ब्रह्म के प्रति राग की भावना "अनुरक्ति" कहलाती है। यही भक्ति का दूसरा नाम है,अनुरक्ति का अभिप्राय है,अनु+ रक्ति अर्थात रक्ति(राग) जो कि ब्रह्म के पूर्णज्ञान के अनु(उपरांत) उत्पन्न होता है।[1] आधुनिक काल में राम चन्द्र शुक्ल ने श्रद्धा तथा प्रेम के योग को भक्ति कहा है[2],उन्होंने माना कि वह धर्म की रसात्मक अनुभूति है।[3]

भक्ति विशेष आत्माओं का विशेष धर्म है,इसमें ब्रह्मपरक प्रवृत्ति होती है। पहला तो मूल कारण (ब्रह्म) में लीन होना सुषुप्ति की स्थिति के तुल्य है।[4]

1- चिन्तामणि-पृ040
2- वही पृष्ठ 207
3-
Anurakti itself is further defined as that particular affection(rakti) which arises after (Anu)a knowledge of the attributes of the adorable one.

4- A study of Vaishnuvism by Kunja Govinda Goswami (Ch.II)P.15

"Bhakti is the characteristic of the individual soals. it consists in a tendency to wards God and there are three stages in the Progress of this tendency,correspondings to those,there are three divisions of the Angasthala,or the subject of the individual soul. The first and thehighest division is called Yoganga,the second Bhoganga and the third Tyaganga. By the first a man obtains happiness by his union with shiva,by the second he enjoys along with shiva and the lost invalves the abandonment of the world as transient or illusory,the first corresponds to the resolution into the cause and to the condition of spound sleep. The second to the subtle body and to dreamy slup and thethird to the gross body and to the wakeful condition.[1]

ब्रह्म के आलंबन बनते ही भौतिक राग द्वेष मलिनता सभी तिरोहित हो जाते है- शेष रह जाता है,भावनाओं का विकसित रूप।विभिन्न परिभाषाओं का अवलोकन करने परसभी में प्रेम सेवा,श्रद्धा और विश्वास समान रूप से विद्यमान दृष्टिगत होता है।

जिस प्रकार संसार में क्षण भंगुर मानव समाज से सम्बन्ध एवं प्रेम स्थापित करके मनुष्य क्षणिक सुख का भोक्ता बनता है,उसी प्रकार उस चिरन्तन ब्रह्म से राग स्थापित करके अखंडानन्द की उपलब्धि होती है।

1- Vaishnavism Shaivism and minor Religious system Sir R.G. Bhanddarkar.

भक्ति के भेद:

भगवत भक्ति का सांगोपांग विवेचन करने वाले मुख्य रूप से चार आचार्य दृष्टिगत होते हैं। इनके ग्रन्थो के आधार पर ही भक्ति विषयक विचार किया जा सकता है।

नारद का भक्ति सूत्र, शाण्डिल्य का भक्ति सूत्र, रूप गोस्वामी के उज्ज्वल नीलमणि तथा भक्ति रसामृत सिन्धु, मधुसूदन सरस्वती का भक्ति रसायन इन पांच मूल भूत स्तम्भों पर ही सम्पूर्ण वैष्णव भक्ति की लता लहलहा रही है। भक्ति सिद्धान्त विषयक सामग्री इन ग्रन्थों से ही एकत्र की जा सकती है। इनमें से अंतिम तीन सोलहवीं शताब्दी की रचनाएं हैं, तथा प्रथम दो सम्भवतः गुप्त साम्राज्य काल की।[1]

नारद के ग्रन्थों में शांडिल्य का उल्लेख मिलता है, अतः शाण्डिल्य नारद से पूर्व हुए। नारद के ग्रन्थ में पूर्ववर्ती शुक, सनकादि, व्यास, गर्ग, शांडिल्य इत्यादि अनेक विद्वानों का उल्लेख तथा भक्ति विषयक उनकी मान्यताओं के उद्धरण मिलते हैं। अतः भक्ति के सिद्धान्त पक्ष का विवेचन करते हुए तत्कालीन प्रामाणिक सामग्री इन ग्रन्थो से ग्रहण की जा सकती है।

भक्ति रसामृत सिन्धु में भक्ति दो प्रकार की मानी गयी है- गौणी और परा। पराभक्ति सर्वश्रेष्ठ भक्ति है, तथा वह सिद्धावस्था की भक्ति है। गौणी भक्ति साधनावस्था है- इसके दो भेद हैं-वैधी तथा रागानुगा। वैधी भक्ति शास्त्रों से अनुशासित होती है।[2]

1- भक्ति का विकास- मुंशी राम शर्मा, पृ068-69
2- शासनेनैव शास्त्रस्य सावैधी भक्ति रुच्यते-श्लोक सं06, लहरी 2-भक्ति रसामृत सिन्धु।

रागानुगाभक्ति प्रेम पर आधारित होती है, फलतः इसके भी दो भेद हैं- कामरूपा और सम्बन्धरूपा। गोपिकाओं की भक्ति कामरूपा थी। सम्बन्धरूपा भक्ति आराधक और आराध्य के सम्बन्ध के अनुसार चार प्रकार की मानी जाती है- दास्य, सख्य, वात्सल्य और दाम्पत्य। हनुमान, उद्धव, यशोदा और राधा क्रमशः इन चारों भेदों से सम्बद्ध आदर्शभक्त माने जाते हैं।

गौणी भक्ति के दोनों भेद साधनावस्था की भक्ति है। जब भक्त को भगवान के प्रेम का व्यसन हो जाता है तब उसकी अटूट तन्मयतापूर्ण भक्ति पराभक्ति कहलाने लगती है। नारद भक्ति-सूत्र में भी इसी मान्यता की पुष्ट किया गया है। भक्ति रसामृत सिन्धु में रागानुगा भक्ति को पराभक्ति की अन्तिम सोपान के रूप में ग्रहण किया गया है।

वैष्णव भक्तों ने भक्ति का फल मुक्ति स्वीकार नहीं किया। उनके अनुसार भक्ति का फल प्रेम है- वे मुक्ति के लिए प्रार्थना ही नहीं करते।

"उपायपूर्व भगवतिमनः स्थिरीकरणं भक्तिः"।

बल्लभाचार्य जी ने भक्ति का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार भक्त की तन्मयता तथा भगवान की अनुकम्पा की दृष्टि से भक्ति के अनेक भेद किये जा सकते हैं। भक्त जितना उन्नत होता जाता है, उतनी ही उच्च कोटि की भक्ति में उसकी तल्लीनता बढ़ती जाती है। विहिता और अविहिता के भेद से भक्ति दो प्रकार की होती है। विहिता भक्ति में अकारण ही सहज रूप में भक्त के मन में भगवान के प्रति सात्त्विक वृत्ति उत्पन्न होती है- यह प्राकृतिक देन है- इसमें किसी प्रकार के कारणार्थ यत्न पूर्वक भक्ति का

अर्जन नहीं किया जाता है। अविहितभक्ति में कोई न कोई कारण विद्यमान रहता है।

विहिता भक्ति के भी मिश्रा और शुद्धा दो भेद है- मिश्रा भक्ति वस्तुतः तीन प्रकार की मानी जाती है- 1- कर्म मिश्रा 2-कर्मज्ञान मिश्रा 3- ज्ञान मिश्रा। गुणों के अनुसार कर्म मिश्रा भक्ति के पुनः तीन भाग किये गये हैं- तामसी,राजसी,और सात्विकी। तामसी भक्ति को पुनः हिंसार्थी दम्भार्थी और मात्सर्यार्थादि भेदों में बांटा जा सकता है। हिंसामात्सर्य एवं दम्भ से प्रेरित होकर जो भक्ति करते है,वे तामसी भक्त कहलाते हैं। राजसी भक्ति के भी तीन रूप हैं- विषयार्थी,यशोऽर्थी,ऐश्वर्यार्थी,।राजसिक मनुष्य विषय वासना,यश की कामना,तथा ऐश्वर्य की भावना से भक्ति की ओर अग्रसर होते हैं- अतः उन्हे इन तीन कोटियों में रखा जा सकता है।

सात्विक भक्तों का स्थान सर्वश्रेष्ठ है,ये लोग तीन प्रकारके है। कर्म के क्षय के लिए,विष्णु की प्रीति के लिएशास्त्रों में लिखा है,इसलिए इनमें से किसी निमित्त से जो भक्ति करते हैं,वे सात्विक भक्त की कोटि में आते हैं।।

कर्मज्ञान मिश्रा-

कर्मज्ञान मिश्रा भक्ति भी तीन प्रकार की होती है-उत्तमा, मध्यमा और अधमा।

उत्तमा भक्ति-

उत्तमा भक्ति का अनुसरण करने वाले भक्त प्राणिमात्र में भगवान का आभास पाते है। साथ ही परमात्मा में तथा स्वात्मा में सब प्राणियों का

अधिवास अनुभव करते हैं- उनमें किसी प्रकार का अहंकार शेष नहीं रहता है और वे लोग उत्तम भक्तों की कोटि में माने जाते हैं। मध्यमा और अधमा भक्ति का स्थान क्रमशः नीचे की ओर है।

ज्ञान मिश्रा भक्ति-

ज्ञान मिश्रा भक्ति एक ही प्रकार की है। भगवान का गुण श्रवणकर जिसकी मति निर्मल हो जाती है तथा जो पुरुषोत्तम विष्णु के प्रति अकारण ही प्रेम का भाव रखता है- जिसको भगवान के सेवा के अतिरिक्त सालोक्यादि मुक्ति पाकर भी उसकी अभिलाषा नहीं रहती वही ज्ञान मिश्र भक्त है।

अविहिता भक्ति-

अविहिता भक्ति के चार भेद हैं,1- कामजा 2- द्वेषजा 3- भयजा और 4- स्नेहजा।

गोपिकाएं काम की भावना से भक्त बनी, कंस भय से, चैद्यादि राजा द्वेष से तथा वृष्णि नरपतिगण स्नेह से भक्त बने।

कर्ममिश्रा भक्ति के नौ भेदोप भेद हैं। गृहस्थगण इसी भक्ति के अधिकारी माने जाते है। कर्मज्ञान मिश्रा भक्ति तीन प्रकार की होती है, तथा इसके अधिकारी वनवासी है। ज्ञान मिश्रा के कई भेद उपभेद नहीं हैं। यह आचार्य बल्लभ की विहिता भक्ति,नारद और रूपगोस्वामी की पराभक्ति के समकक्ष रखी जा सकती है तथा अविहिता रागानुगा भक्ति के समान है।

शांडिल्य ने भक्ति के मुख्या और इतरा दो भेद किये है।[1] इतरा को भी गौणी भक्ति भी कहा है।[2]

नारद ने भक्ति भाव का विश्लेषण करते हुए उसके अनेक भेदों का वर्णन किया है। उन्होंने प्रेम को गूंगे के गुड़ की तरह अनिवर्चनीय आनन्ददायी बतलाते हुए कहा कि उसका वर्णना करना असंभव है। वह प्रतिक्षण बढ़ता ही रहता है। भक्ति के क्षेत्र में प्रेम अत्यन्त सूक्ष्म एवं मात्र अनुभव की वस्तु है। जिस प्रकार प्रेमी अपनी प्रेमिका के अतिरिक्त कुछ देखने सुनने की इच्छा नहीं होती, उसी प्रकार भगवान के अतिरिक्त भक्त का मन किसी अन्य की ओर नहीं झुकता।[3]

गुण भेद से गौणी भक्ति तीन प्रकार की है तामसिक से राजसिक और राजस से सात्त्विक गुण की भक्ति श्रेष्ठ है। इस प्रकार अर्थार्थी से जिज्ञासु और जिज्ञासु से आर्त्त भक्त श्रेष्ठ है। आर्त्त की उपासना से शुद्ध भक्ति के उद्भव की संभावना बनी रहती है। यह भक्ति 11 प्रकार की होती है। 1- गुण महात्म्यासक्ति 2- रूपासक्ति 3- पूजासक्ति 4- स्मरणासक्ति 5- दास्यासक्ति 6- सख्यासक्ति 7- कान्तासक्ति 8- वात्सल्यासक्ति 9- आत्मनिवेदनासक्ति 10- तन्मयासक्ति 11-विरहासक्ति।

1- शांडिल्य भक्ति सूत्र सं0-10

2- वही सं0 20

3- अनिवर्चनीयं प्रेमस्वरूपम्। मूकास्वादनवत्। प्रकाश्यते क्वापि पात्रे। गुण रहितं कामना रहितं प्रति क्षणवर्धमानमविच्छिन्नं सूक्ष्म तर मनुभव रूपम्

भक्त भगवान के रूप गुणवात्सल्य आदि में से किसी न किसी रूप पर मुग्ध रहता है। वह भाव विशेष तत्सम्बन्धित आसक्ति के अन्तर्गत रखा जा सकता है। भक्ति रसामृत सिन्धु में रूप गोस्वामी ने भक्ति को प्रतिष्ठा रस के रूप में करते हुए उसके पाँच विभाजन किये हैं- शांत,प्रीति,प्रेयो,वत्सल और मधुरा।

भागवत में नवधा भक्ति का वर्णन पाया जाता है।[1] अर्चन, पादसेवन के अतिरिक्त शेष सात निर्गुण भक्ति के भी अंग माने जाते हैं।

संत सुन्दर दास ने भागवत की नवधा भक्ति को कनिष्ठ कोटि की माना है स्वयं निर्गुण सम्प्रदायवादी होने के नाते उन्होंने "पादसेवन" इत्यादि को मानसिक रूप प्रदान किया है प्रेमाभक्ति को मध्यम और पराभक्ति को उत्तम स्वीकार किया गया है।[2]

हरि भक्ति विलास में प्रेमाभक्ति के लक्षणों का उल्लेख है,जब भक्त भगवान का नामो च्चारण कर अत्यन्त प्रेम पूर्वक आत्म विभोर हो उठता है,तब उर्ध्व कंठ से गीत रोदन हास्य इत्यादि के द्वारा ध्यान और वंदन करता है- वह प्रभु का नाम ले लज्जा कात्याग कर सब बन्धनों से मुक्त अज्ञान तथा वासना का त्याग कर भक्ति पथ पर अग्रसर होता है,तब निश्चय ही भगवान को प्राप्त करता है,औरयह प्रेमा भक्ति कहलाती है।[3] श्री कृष्ण सम्बन्धी अनुकूल

1- श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्।
अर्चनं वंदनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम्।।7/5/23-श्रीमदभागवत।

2- ज्ञान समुद्र -संतसुन्दरदास,छन्दसं0 4-56

3- हरभक्ति विलास{1।1}/

अनुशीलन को उत्तमा भक्ति कहते है। यह अनुशीलन कर्म और ज्ञान से आच्छादित नहीं होता है। जब भक्त को किसी वस्तु के साथ स्पृहा को भावना का लवलेश नहीं रहता तब उत्तमा भक्ति कहलाती है।[1]

भक्ति रसामृत सिन्धु में 64 प्रकार की वैधी भक्ति का उल्लेख मिलता है। प्रेमा भक्ति को सर्वश्रेष्ठ मानते हुए इन्होंने उत्कृष्ट भक्ति के तीन भेद माने हैं: 1-साधन भक्ति 2- भाव भक्ति और 3- प्रेमाभक्ति।

1- साधन भक्ति-

इसके अन्तर्गत साधनों का विवेचन रहता है, इसके दो उपभेद हैं- वैधी और रागानुगा। रागानुगा को पुन: दो भागों में विभाजित किया जा सकता है।

कामानुगा-

जिसमें भक्ति की कामना बनी रहती है, वह गोपीमय होने के लिए इच्छुक रहता है।

सम्बन्धानुगा-

इसमें भक्त इष्टदेव से किसी न किसी प्रकार का नाता जोड़ता है, यथा-यशोदा नंद, दशरथ, इत्यादि की भक्ति।

1- भक्ति रसामृत सिन्धु।

2- भाव भक्ति-

भाव भक्ति भगवान कृष्ण की कृपा से ही प्राप्त होती है अथवा कृष्ण भक्त के प्रसाद से उपलब्ध होती है। इसकी परिधि रस कोटि तक विस्तृत नहीं है,जब रस की स्थिति में पहुँच जाती है,तो यह प्रेमाभक्ति में परिणत हो जाती है,भाव भक्ति नहीं रहती।[1]

3- प्रेमाभक्ति-

प्रेमा भक्ति को पराभक्ति अथवा भूमानन्द भी कहते हैं भक्त और भगवान का एकीकरण हो जाता है। इसी को श्रीमद्भागवत में निष्काम निर्गुण भक्ति कहा गया है। भक्त की सम्पूर्ण क्रियाओं का केन्द्र विन्दु भगवान बन जाता है,इष्ट के अतिरिक्त उसके सम्मुख कुछ नहीं होता है। हिन्दी साहित्य के मध्य युग में आचार्य चतुष्टय का भक्ति परक विश्लेषण ही मान्य रहा है। गौणी और पराभक्ति के भेदों को स्पष्ट करते हुए उन्होंने यह भी मानाकि भक्त की भावना के अनुसार उसके आलम्बन के स्वरूप में भी अन्तर आ जाता है। परमात्मा के दो रूप माने गये हैं-

ऐश्वर्य: ऐश्वर्य जो सृष्टि का निर्माण और पालन करता है।

माधुर्य: माधुर्य रूप में वह केवल लीलाओं का प्रसार करके अपने भक्तों को आह्लाद प्रदान करता है।

1- भक्ति रसामृतसिन्धु- पूर्वभाग चतुर्थलहरी।

वैष्णव सम्प्रदायों में एक शब्द और प्रचलित है- वह है स्मार्त वैष्णव। ये लोग स्मृति की मर्यादाओं का पालन करने वाले अथवा मर्यादावादी भक्त कहलाते हैं। तुलसीदास इसी कोटि के भक्त थे। सूरदास की भक्ति अमर्यादित थी तुलसी ने मुख्य रूप से ऐश्वर्य का ही वर्णन किया है। रामानंद और तुलसी को एक ही परम्परा की दो कड़ियाँ कहा जा सकता है। इसी का नाम श्री सम्प्रदाय भी पड़ा।

वैष्णव भक्ति के चार प्रमुख सम्प्रदाय माने जाते है,उन्हीं के अन्तर्गत इनकी सम्पूर्ण 5। गद्दियाँ आ जाती है। इन चारों सम्प्रदायों में रामानुगा भक्ति ही प्रमुख है। भक्त का स्वभाव और राग ही सब कुछ माना जाता है। इसी के युक्त भक्ति को रागात्मिका भक्ति तथा अनुसरण करने वाले भक्तों को रामानुगी कहा जाता है।

परमात्मा के माधुर्य रूप के दो रूप हैं- 1- निर्गुण निर्विशेष 2- सगुण सविशेष।

निर्गुण के साथ प्रेम का नाता जोड़ने वालों की भक्ति निर्गुण निर्विशेष भक्ति कहलाती है,तथा सगुण से नाता जोड़ने वालों की सगुण सविशेष भक्ति के नाम से प्रख्यात है।

वैष्णव सम्प्रदायों में पाँच प्रकार की भक्ति मानी गयी है- शान्त,दास्य,सख्य,वात्सल्य और कान्त। भक्ति के यही भेद सर्वाधिक मान्य है।

शान्त भक्ति-

शांत भक्ति में परमात्मा के रूप के प्रति आसक्ति एवं प्रेम के लिए स्थान नहीं है। इसी कारण से इसे सबसे निकृष्ट कोटि की भक्ति माना गया है।

दास्य भक्ति-

सनकादि दास्यकोटि के भक्त थे, इसी का पालन तुलसी ने भी किया है। दास्य भक्ति में भगवान और भक्त के मध्य व्यक्तिगत सम्बन्ध रहता है। भगवान अनुग्रह करता है और सेवक उसका अनुग्राह्य होता है। इसमें सम्भ्रम प्रीति या गौरव प्रीति होती है। इसको मर्यादा भक्ति भी कहते हैं। हनुमान इसी कोटि के भक्त थे।

सख्य-

सख्य भक्ति में मर्यादा और संकोच के लिए स्थान नहीं है। सखा का नाता जोड़ने की प्रवृत्ति के कारण से इष्टदेव के प्रति न तो आदर का भाव रहता है, न संभ्रम। प्रगाढ़ विश्वास मात्र की विद्यमानता रहती है। सखी भाव होने के कारण उपास्य और उपासक में परस्पर परिहास का अधिकार भी रहता है। उलाहने देने तथा गूढ़ से गुह्य रहस्यों का उद्घाटन करने के अवसर पर भक्त न हो चूकता है।

वात्सल्य-

वात्सल्य भक्ति सख्य से भी एक पग आगे है, इसमें भगवान भक्त की अपेक्षा छोटा रूप धारण कर लेता है, संभ्रम और विश्वास की बात

भी पीछे रह जाती है। भक्त अपने आश्रित भगवान के प्रति वात्सल्य भाव बनाये रखता है। भगवान सहज रूप में भक्त पर अनुकम्पा करता है।

मधुरा भक्ति-

मधुरा भक्ति को सर्वश्रेष्ठ माना गया है।जीवात्मा और परमात्मा के मध्य दाम्पत्य भाव की स्थिति होती है। इसका मुख्य भाव "लीन होना" है। जीवात्मा और परमात्मा के मध्य दाम्पत्य रति का भाव रहता है। रति का भाव मधुर माना गया है,अत: यह मधुरा भक्ति कही गयी।

शांडिल्य ने कान्ता भक्ति को स्वीकीया कान्ता भक्ति से श्रेष्ठ माना है,क्योंकि जार का सा उद्दाम भावनाओं का वेग स्वीकीया के प्रति नहीं हो सकता।

हिन्दी साहित्य में पूर्व मध्य युग में भक्ति के आलंबन के अनुसार किये गये पाँच विभागों को ही अधिक मुख्यता प्रदान की गई है। दाम्पत्य और माधुर्य के अन्तर्गत स्वकीया और परकीया का वर्णन भी प्रचुरता से मिलता है।

भक्ति के लक्षण- (अंग और साधन)

भक्ति मार्ग में यम,नियम,आसन,प्राणायाम,प्रत्याहार,धारणा, ध्यान,समाधि,योग के आठ अंगों में से यम नियम के अतिरिक्त शेष छह की स्वीकृति नहीं है। इस मार्ग में जप,तप अथवा व्रत की आवश्यकता नहीं है। सरल स्वभाव,मन में कुटिल भाव न रखना,प्राप्त में सन्तोष की स्थिति आदि भक्ति के मुख्य लक्षण हैं। भक्त न किसी से बैर विरोध करता है,न किसी से भय

और आशा करता है। उसके लिए स्वर्ग,नरक और अपवर्ग समान होते हैं। जो व्यक्ति कर्म और ज्ञान का आग्रह छोड़कर भक्ति के मार्ग पर अहंकार,संकल्प विकल्प त्याग कर एक सन्यासी के रूप में व्यवहार करता है वहीं सच्चा भक्त है,और वास्तविक परमानन्द को उपलब्धि करता है।

भक्ति के अंग-

उद्भव और लय प्रकृति के प्रत्येक अवयव के साथ सम्बद्ध है। लौकिक जीवन में उद्भव और लय कर्म चक्र के फलस्वरूप माने जाते हैं,किन्तु मानव के अन्तश्चेतना के जगत में ये शुचिता और अशुचिता के परिणाम मात्र हैं। इन सब सांसारिक विधानों से ऊपर एक शक्ति है- परमात्मा जो सर्वशक्तिमान है। उस तक पहुँचना ही भक्ति का लक्ष्य है। भक्ति मार्ग का अनुसरण करने के लिए उसके अंगों की सम्पन्नता परमावश्यक है। मानव जीवन का विस्तार विभिन्न दिशाओं में होता है। उसका निजी अस्तित्व सीमित रहता है- पारिवारिक जीवन का क्षेत्र अपेक्षाकृत विस्तृत है। इस क्षेत्र में उसके सम्बन्धी आ जाते हैं। सामाजिक जीवन की सीमायें और भी अधिक विस्तृत है। भक्ति इन सभी क्षेत्रों में व्याप्त है,अतः उसके अंगों का विस्तार मानव जीवन के प्रत्येक अंश तक पहुँचा हुआ है।

भक्ति का सर्वप्रथम अंग श्रद्धाभाव है, यह मानव के व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित है। एकांत साधना करते हुए मानव के लिए भी परमात्मा के प्रति श्रद्धा अथवा पूज्य बुद्धि का अनुभव परमावश्यक है।

मानव को इन्द्रियाँ उसका संसार से सम्बन्ध स्थापित करती है। इन इन्द्रियों के दो द्वार है- एक शरीर के अन्दर खुलता है, दूसरा बाहर की ओर। जब तक मानव इन्द्रियों के बाह्य द्वार से बाह्य वातावरण के दुःख सुख का अनुभव करता है, तब तक उसकी प्रवृत्ति बहिर्मुखी रहती है। उसकी इन्द्रियों का तेज नष्ट हो जाता है। वे तृप्त होने के स्थान पर और अधिक दीप्त हो जाती हैं। दूसरी ओर ज्यों ही वह संयम का ध्यान रखता है और विषय वासनाओं में लिप्त रहता है, उसकी प्रवृत्ति अन्तर्मुखी कहलाती है, तथा वह कमल पत्र की भाँति सांसारिक भावना से दूर रहता हुआ घट-घटवासी ब्रह्म के अधिक निकट पहुँच जाता है, यह भक्ति का दूसरा अंग है। यज्ञ का अनुष्ठान भक्ति का तीसरा मुख्य अंग है, वह योगोत्पादक साधनों में प्रधान स्थान पर प्रतिष्ठित है।

सामाजिक जीवन-यापन करते समय मानव समाज का परिचय मित्र और शत्रु सभी प्रकार के व्यक्तियों से होता है। द्वेष, हिंसा, इत्यादि विकारों का परित्याग कर सहयोगियों से स्नेह, परिजनों के प्रति सम्मान तथा अनुजों के प्रति सहानुभूति की भावना रखना ही भक्ति का चतुर्थ अंग है।

नितान्त व्यक्ति जीवन व्यतीत करते हुए सद्व्यवहार, शुचिता तथा मानसिक पवित्रता मनुष्य का परम कर्तव्य है, क्योंकि मनुष्य में दो प्रकार की प्रवृत्ति होती है- आसुरी और दैवी।

आसुरी प्रवृत्ति की समाप्ति तभी संभव है, जब मानसिक, दैहिक तथा हार्दिक शुचिता की ओर ध्यान दिया जाय। मन पर विवेक की लगाम,

लगाना, तथा विषय वासनाओं में निर्लिप्त रहते हुए सब प्रकार की पुनीतता की ओर ध्यान देना भी भक्ति का अंग है। इसी के द्वारा समरसता की उपलब्धि की जा सकती है जो मनुष्य को निर्विकार तथा वास्तविक भक्त बनाने में सहयोगी है।

इस बुद्धि को शुद्ध एवं कर्तव्य परायण बनाये रखने से मानव विवेक शील तथा भगवान की ओर उन्मुख होते हैं। इस विवेकशीलता के द्वारा मानव भगवान को हृदयगम कर सकता है।

अहिंसा और ज्ञान समन्वित कार्य करते जाना ही भक्ति का सर्वप्रमुख कर्तव्य है, हरिभक्ति रसामृत सिन्धु में साधन रूप भक्ति के पाँच अंग माने गये हैं:- 1- उपासक 2- उपास्य 3- पूजाद्रव्य 4- पूजाविधि5- मंत्र जप।

भारतीय संस्कृति के प्रत्येक क्षेत्र में "सत्यं शिवं सुन्दरम् की स्थिति को मान्यता प्रदान की गई है। भक्ति के क्षेत्र में भी सभी अंगों का समाहार "सत्य शिवं सुन्दरम्" में हो जाता है। उस चिरन्तर सत्य ब्रह्म तक पहुँचने के मार्ग (भक्ति) का अनुसरण करते हुए असत् का त्याग और सत् को अपनाना ही परमावश्यक है। इसके लिए कल्याणकारी कार्यों का संपादन वांछनीय है। शिवं अथवा कल्याणकारी कार्यों के अन्तर्गत त्याग, तप अहिंसा दान और विवेक को ले सकते हैं। शेष रहा "सुन्दरं" इसके पूर्व मनुष्य के लिए सत्य और शिव का पालन करना धर्म है। फिर वह सुन्दर और असुन्दर को पृथक करने की मेधा को प्राप्त कर लेता है। जो कर्तव्य है उसे वही सुन्दर लगता है, जो अकर्तव्य वह असुन्दर। इसलिए इसे भक्ति का अंग कहा जा सकता है।

भक्ति के साधन-

भक्ति साधन है या साध्य? इस विषय में विद्वानों में काफी मतभेद है, एक ओर कहा जाता है कि भक्ति के द्वारा आत्मा परमात्मा तक पहुँच सकती है- अतः वह साधन है साध्य नहीं। दूसरी ओर अन्य भक्तों का कथन है कि भक्ति के सम्मुख मोक्ष का भी कोई महत्व नहीं । इन भक्तों ने कहा कि बार-बार मानव जन्म पाकर वे भक्ति कर सकें, बस यही उनकी आकांक्षा है। इस प्रकार के भक्तों ने मनुष्य का अभीष्ट साध्य भक्ति को ही माना है। भक्ति में एक अद्भुत रस एवं आनन्द है, जिसका आस्वादन एक बार करने के उपरान्त फिर संसार का सब कुछ फीका जान पड़ता है। परमास्वाददायिनी भक्ति में रम कर मानव फिर निष्काम कर्मयोगी बन जाता है- यदि कोई कामना शेष रहती है तो यही कि भक्ति के घेरे से वह कभी बाहर न निकले। भक्ति का आस्वादन अनिर्वचनीय है, वह गूँगे के गुड़ की भाँति आस्वादन की वस्तु है, विवेचन की नहीं।

भक्ति का साधन ज्ञान भी नहीं है। भक्ति और ज्ञान एक दूसरे से विलग नहीं है। भक्ति की पराकाष्ठा ज्ञान और ज्ञान की पराकाष्ठा भक्ति को मानने वालों ने कहा कि जब तक भगवान का ज्ञान नहीं होता है, भक्ति की स्थिति भी संभव नहीं होती। भगवान को जानने के सामान्यतः तीन मार्ग है-

देह बुद्ध्या दासोऽहं जीव बुद्ध्या त्वदंशकः।
आत्म बुद्ध्यात्वमेवाहमिति मेनिश्चिता मतिः।।[1]

1- अध्यात्म रामायण- 3/60

देहबुद्धि, जीवबुद्धि, और आत्म बुद्धि इन तीनों साधनों से भगवान का साक्षात्कार किया जा सकता है। प्रथम दृष्टि से देही (प्राणी) ऊँचा उठाने वाले किसी जीव के आदर्श की ओर आकृष्ट होता है। दूसरी दृष्टि जीव बुद्धि की है- इससे व्यक्ति अपने को देह से भिन्न एक चेतन व्यक्तित्व मानता है, और उस दृष्टि सेऐसे आदर्श की ओर प्रवृत्त होता है, जिसका कोई नाम या रूप नहीं कहा जा सकता है। श्रद्धा, सत्संग, मैत्री भाव उदारता, ब्रह्मचर्य और संयम इत्यादि नियमों को जिन्हे आज भक्ति का अंग माना जाता है- उनका विवेचन वेदों में भी उपलब्ध है। तत्कालीन साधना के भी वे मुख्य अंग माने जाते हैं।

श्रद्धा हृदय में रहकर आस्तिक और श्रद्धालु बनाती है।[1] मैत्री भाव प्राणिमात्र को कल्याणकारी भाव से देखना और उनसे व्यवहार करना सिखाता है।[2] उदारता मनुष्य जीवन का आवश्यक अंग मानी गयी है। वेद विहित है कि वह सौ हाथों से धन का संचय करके उदारता पूर्वक हजारों हाथों से उसका वितरण करें।[3] ब्रह्मचर्य अथवा संयमरूपी श्रेष्ठ तप द्वारा अनायास ही मानव अविद्या रूपी मृत्यु का संहार करता है।[4]

1- श्रद्धया सत्य माप्यते, यजु0 19/30
2- श्रद्धे श्रद्धापयेहन: ऋग 10/151/5
2- मित्रस्याहं चक्षु पासर्वाणि भूतानि समीक्षे। यजु036/18
3-शतहस्त समाहार सहस्त्र संकिर। अथर्व0 3/14/5
4- ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाहनत- अथर्व0 11/7/19

नारद के भक्ति सूत्र में भी सत्संग कीर्तन गुण श्रवण, वासना, त्याग, दानवृत्ति तथा भेद का अभाव ही साधन बतलाये गये हैं। इन साधनों को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। वाह्य-लोकाचार में जिन विशेष कर्तव्यों की ओर ध्यान दिया जाता है, उन्हे वाह्य तथा जो साधन हार्दिक साधना का निर्देश करते हैं। उन्हे आभ्यन्तर साधन कहा जाता है।

श्रीमद्भागवत तक पहुँचते-पहुँचते भक्ति का स्वरूप, भेद इत्यादि बहुत कुछ निश्चित से हो चुके थे। भागवत के सप्तम सकन्ध के पंचम अध्याय में, भक्ति के नौ लक्षणों तथा साधनों का उल्लेख है।[1] यद्यपि इन नौ लक्षणों को कतिपय विद्वानों ने नौ प्रकार की भक्ति माना है किन्तु भागवत में स्पष्ट रूप से "लक्षण" शब्द का उल्लेख है। भक्त के स्वभाव में भक्ति के उद्भव के समय जो लक्षण दृष्टिगत होते हैं- भक्ति के संपादन में उन्हे ही भक्ति के साधन माना जाता है, क्योंकि उनके द्वारा ही भक्ति उपलब्ध होती है। और भक्ति चरम विकास की स्थिति तक पहुँच जाता है। इन नौ साधनों को तीन कोटियों में विभक्त किया जा सकता है- श्रवण, कीर्तन, और स्मरण, जो श्रद्धा और विश्वास के वृत्ति के सहायक हैं। अर्चन, पाद, सेवा और वन्दन ये रूप सम्बन्धित साधन है, तथा दास्य सख्य और आत्म निवेदन भाव सम्बन्धी साधन कहे जा सकते हैं। भक्ति के साधन अंग तथा

1- श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पाद सेवनम्।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्य मात्मनि वेदनम्।।
इति पुंसार्पिता विष्णौ भक्तिश्चेन्न्व लक्षणा।
क्रियते भगवत्यद्धा तन्मन्येऽधीतमुत्तमम्।। भागवत 7/5/23-24

लक्षणों में बहुत अधिक भेद नहीं है। इस कारण से प्रायः एक ही प्रकार के भाव आंशिक रूप से तीनों में विद्यमान रहते हैं। इन भावों का चरम विकास एवं इनकी पूर्णता के दर्शन भक्ति के रूप में दृष्टिगत होते है।

भक्ति की भूमिकाएं-

भक्ति के क्षेत्र में प्रेम रूपा भक्ति को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। भक्ति के विकास में अनेक सिद्धान्त दृष्टिगत होते हैं। इन विकास चरणों को शास्त्रीय शब्दावली में भक्ति की भूमिकाएं कहा गया है, साधारणतः सात भूमिकाओं का उल्लेख मिलता है।

1- सर्वप्रथम भक्ति का सोपान अथवा भूमिका है दैन्य। भक्त के हृदय में गर्व का लेश भी नहीं रहता तथा वह अपनी दुर्दशा का दायित्व अपने ऊपर ही ले लेता है।

2- मान मर्दन में भक्त अभिमान का त्याग कर भगवान की शरण में जाता है।

3- भय दर्शना में मन को भय के द्वारा भगवान की ओर उन्मुख करने की स्थिति रहती है।

4- भर्त्सना में अन्य कोई उपाय न देख भक्त अपने मन पर खीझ उठता है, तथा मन को बार-बार फटकार कर ईश्वरोन्मुख करता है।

5- आश्वासन वह स्थिति है कि जब भक्त भगवान को अपना सर्वस्व मानकर सम्पूर्ण कार्य व्यापार प्रभु पर छोड़ देता है। भगवान पर पूर्णरूपेण निर्भर रहकर उन्ही के बल पर अपने मन को सान्त्वना देता हुआ उद्धार के मार्ग पर

अग्रसर होता है।

6- मनोराज्य नामक भूमिका में भक्त स्वकल्पित अभिलाषाओं की पूर्ति की आशा में निमग्न रहता है। उसके सम्मुख कतिपय कल्पित स्वप्न विद्यमान रहते है,और वह भगवद् भक्ति के उसी स्वप्नमय सुखद संसार में लीन होने की आशा में लगा रहता है।

7- विचारणा सातवी और अन्तिम भक्ति भूमिका है। इसस्थिति में पहुँचकर भक्त संसार की असारता को समझ लेता है और वह भगवतोन्मुख होने का प्रयत्न करता है।

मधुसूदन सरस्वती ने भक्ति की 11 भूमिकाएं मानी है- किन्तु उनमें पुनरावृत्ति होने के कारण भक्तों ने सात भूमिकाएं ही स्वीकार की है।

अवतारवाद-

भक्ति के क्षेत्र में अवतार वाद की स्थापना अत्यन्त प्राचीन है। यह भक्ति भावना का प्रमुख अंग है। भक्ति के साथ ही अवतारवाद की स्थापना हुई होगी यह निश्चित ही है।

वैदिक युग में ब्रह्म की अनेक शक्तियों की उपासना प्रचलित थी। इन्द्र,वरूण,मित्र और अग्नि आदि अनेक देवताओं का उल्लेख वेदों में मिलता है। भगवान की विभिन्न शक्तियों का देवता विशेष स्वीकार करना ही अवतारवाद का बीजारोपण था। आरम्भ में ब्रह्म के प्रत्येक शक्ति की पूजा की जाती थी- धीरे-धीरे प्रकृति के विभिन्न अवयव ब्रह्म की शक्तियों के प्रतीक माने गये,और

फिर इस प्रकार के मनुष्यों को जिन्होंने विराट कार्य सम्पन्न किये,भगवान का मनुष्यावतार मान लिया गया। बौद्धमत की जातक कथाओं के प्रभाव से अनेक योनियों में भगवान ने अवतार लिया। यह दृष्टिकोण भी भक्ति साहित्य में मिलने लगा। मत्स्यवराह इत्यादि इसी के प्रतीक हैं।

अवतारवाद का अभिप्राय भगवान का साधारण जीव के रूप में पृथ्वी पर अवतरण है। अवतरित व्यक्ति अनेक दैवी शक्तियों से युक्त रहता है। इसप्रकार की अनेक घटनाऐं अवतार विषयक साहित्य में उपलब्ध है।

वैदिक युग में जीव के रूप में ब्रह्म का अवतरण उल्लिखित नहीं था। उसकी अनेक शक्तियों की देव रूप में उपासना प्रचलित थी। यह मान्यता कि ब्रह्म अनेक रूपों में प्रकट होता है,उसके एकत्व का खंडन करती है।[1]

गीता के युग तक पहुँचते-पहुँचते भारत में अवतारवाद की स्थापना हो चुकी थी। इस धारा के विकास में कुछ अभारतीय तत्व भी था या नहीं कहना कठिन प्रतीत हो रहा है। गीता में कृष्ण ने स्पष्ट रूप से कहा है-

"यदा यदाहि धर्मस्य ग्लानि र्भवति भारत।
अ युत्थानम धर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम। "[2]

(जब पृथ्वी पर पाप प्रभूत मात्रा में एकत्रित होने लगता है,तब भगवान भक्तों के उद्धार और पापियों के नाश के लिए पृथ्वी पर जन्म लेते हैं)

1- वैष्णविज्म एंड शैविज्म,पृ03 -आर0पी0भंडारकर
2- श्रीमद्भगवत गीता- 4/7/72

भगवान का वह रूप अवतारी रूप कहलाता है,चौरासी लाख योनियों में से वे आवश्यकतानुसार किसी भी योनि में जन्म लेते हैं,और सज्जनों के कष्ट का निवारण करते हैं। अवतार लेने के भी दो मुख्य कारण है:-

1- पुराणों की अनेक कथायें सिद्ध करती हैं कि कभी-कभी किसी व्यक्ति को वरदान मिलता है कि उसके घर में भगवान जन्म लेंगे।

2- कभी-कभी भगवान को ही अनजाने में भूलोक पर जाने का शाप मिलता है- इन दोनों ही स्थितियों में भगवान का अवतरण आवश्यक हो जाता है। "महाभारत के नारायणीयों पाख्यान में वाराह,वामन,भार्गव,{परशुराम} राम और वासुदेव छः अवतारों का उल्लेख मिलता है। इसी पुस्तक के उत्तर भाग के एक अन्य स्थल पर हंस,कूर्म,मत्स्य और कल्कि को मिलाकर दस अवतारों की चर्चा की गई है। डॉ0 भंडारकर ने इस उल्लेख को प्रक्षिप्त घोषित किया गया है।[1]

हरिवंश पुराण में उपरिलिखित छः अवतारों का ही उल्लेख है। इसके उपरांत प्रायः सभी पुराणों में अवतारों की संख्या दस मान ली गई है।

वायु पुराण में दो स्थलों पर अवतारवाद का वर्णन है,एक स्थान पर बारह अवतार गिनाये गये हैं किन्तु उसमें से कुछ तो इन्द्र तथा शिव के विभिन्न नामों का ही उल्लेख है।[2] दूसरे स्थल पर दस अवतारों की मान्यता का उल्लेख है।[3] उपरोक्त अवतारों के साथ दत्तात्रेय पंचम अनामी,वेदव्यास,तथा

1- वैष्णविज्म ऐंड शैविज्म ,पृष्ठ -59
2- वायु पुराण-97/72
3- वही, 98/63

कल्कि की गणना की गई है। इसके उपरांत भी नृसिंह ,वामन,वराह,परशुराम, राम तथा वासुदेव की मान्यता तो ज्यों की त्यों बनी रही,जहाँ कहीं इन दस अवतारों का उल्लेख है,चारअवतारों को जोड़ दिया गया है। स्थान-स्थान पर इन चार देवताओं में अन्तर पाया गया किन्तु अवतार ज्यों के त्यों माने जाते रहे।

वराह पुराण में इस विषय पर अपेक्षाकृत अधिक विस्तार उपलब्ध है,यहाँ पर तीन स्थल हैं,जहाँ अवतार वाद का वर्णन है। एक स्थान पर बाईस अवतारों का वर्णन है। सातवी पुस्तक के दूसरे अध्याय में तेईस और ग्यारहवी पुस्तक के चतुर्थ अध्याय में सोलह अवतारों की गणना की गई है। इन अवतारों में नारद का नाम भी है जिन्होंने सात्वत धर्म का उपदेश दिया। आसुरी को सांख्य ज्ञान की शिक्षा देने वाले कपिल ऋषि भी हैं,आन्वीक्षिकी के शिक्षक दत्तात्रेय,ऋषभ,बुद्ध आदि विभिन्न मतों के प्रवर्तकों के नामोउल्लेख भी उपलब्ध है।

भागवत पुराण वैष्णवधर्म का मेरूदण्ड माना जाता है,इसके अनुसार वैकुण्ठ निवासी भगवान के तीन रूप हैं-.1- स्वयंरूप 2-एकदेशात्मरूप 3- आवेशरूप।

स्वयं रूप तो श्री कृष्ण है,एकदेशात्म रूप उन रूपों में अवतरित भगवान है,जो वास्तव में भगवान से अभिन्न अथवा उनके ही रूप होकर रूपाकार में परमात्मा से भिन्न है। उदाहरण स्वरूप मत्स्य,वराह,कूर्म,आदि लीलार्थ धारण किये हुए अवतारी रूपा आवेश अवतार दो प्रकार के होते हैं:1-स्वरूपावेश

जैसे राम चन्द्र ,परशुराम,2-आवेशावतार- ब्रह्मा,शिव आदि।

आवेशावतार श्रेष्ठ माने जाते हैं,वे अप्राकृत अर्थात् दिव्य गुणों से युक्त होते हैं। अवतारवाद के आरम्भिक युग में यद्यपि यह मान्यता थी कि भगवान दुष्टों के दमन के लिए ही अवतार धारण करते है,तथापि अवतारवाद के विकास के साथ-साथ इस मान्यता में भी पर्याप्त अन्तर आ गया। भागवत पुराण में प्राय: सम्पूर्ण प्राचीन मतमतांतरों एवं देवी देवताओं का सामंजस्य उपलब्ध है। महाभारत के नारायणीय पुराण में उल्लिखित एकान्तिक मत की व्याख्या अत्यन्त स्पष्ट एवं व्यवस्थित रूप से इसमें की गई है।

शान्ति पर्व में पाँच प्राचीन मतों का उल्लेख है- सांख्य योग, पाँच रात्र,वेद और पाशुमत। इनमें पाँच रात्र तथा पाशुमत मत सगुणोपासना उपायक मत है,इसमें भक्ति तत्व की प्रधानता है। इस मत का साधन मार्ग एकान्तिक भक्ति है।[1]

पाँचरात्र के मूलाधार नारायण हैं। चतुर्व्यूह की कल्पना इस मत की विशेषता है। इसके अनुसार निर्गुण ब्रह्म ही वासुदेव हैं। वे जब जीव के रूप में जन्म लेते हैं,तो संकर्षण कहलाते हैं। संकर्षण के द्वारा मन रूप में जो अवतार लिया जाता है,वहीं अहंकार अथवा अनिरुद्ध के नाम से पुकारा जाता है। यद्यपि भागवत पुराण में चतुर्व्यूह की कल्पना का उल्लेख नहीं मिलता किन्तु इसका पूर्ण सामंजस्य अवतारों में किया गया है। भागवत पुराण में भगवान के तीन अवतार माने गये हैं- पुरुषावतार,गुणावतार,लीलावतार।

1-मध्यकालीन धर्मसाधना- डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी,पृ0113-115

पुरूषावतार पुनः तीन प्रकार का माना गया, महत्व के सृष्टिकर्ता को प्रथम (संकर्षण) निखिल ब्रह्माण्ड के अन्तर्यामी द्वितीय पुरूष (प्रद्युम्न) और व्यष्टि जगत के अन्तर्यामी तृतीय पुरूष अहंकार अथवा अनिरूद्ध हैं।[1]

गुणावतार के भी तीन प्रकार बताये गये हैं- सत्वगुणी अवतार ब्रह्मा, रजोगुणी अवतार विष्णु, तमोगुणी अवतार-शिव। लीलावतार की संख्या चौबीस मानी गयी है। नारद, बराह, मत्स्य दक्ष, नर, नारायण, कपिलदत्ता त्रेय, हयशीर्ष, हंस, ध्रुवप्रिय, ऋषभ, पृथु, नृसिंह, कूर्म, धन्वन्तरि, मोहिनी, वामन, परशुराम रामचन्द्र, व्यास, बलराम, बुद्ध और कल्कि। इनमें श्री कृष्ण की गणना नहीं की गयी है, क्योंकि भागवत उन्हें स्वयं रूप मानता है। श्रीमदभागवत में नवधा भक्ति की विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत की गई है। इस प्रकार की विविध विधान पूर्वक की गयी भक्ति के लिए परमात्मा के मूर्तरूप की विद्यमानता अवश्यंभावी थी। मध्ययुगीन अधिकांश भक्ति सम्प्रदायों में साकार उपासना का विधान दृष्टिगत होता है, इसके लिए ब्रह्म के साकार रूप की आवश्यकता थी। जो कि भक्तों के कष्टों का नाश करके उन्हें सुख प्रदान करें। अतः उस युग में अवतारवाद सम्पूर्ण भक्ति साहित्य पर इतनी सघनता से छा गया कि भक्ति और अवतार एक दूसरे के बिना अधूरे से दिखलाई पड़ते हैं। शिव के भी अनेक अवतारों का उल्लेख पुराणों में उपलब्ध है। आरम्भ में नकुलीश (और) लकुलीश तक ही इनके अवतारों को सीमित माना गया-धीरे-धीरे गोरखनाथ और मत्स्येन्द्रनाथ को भी इसी कोटि का स्वीकार कर लिया गया।

1- मध्यकालीन धर्मसाधना- डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ० 113-115

भक्ति का विकास-

भक्ति का विकास क्रम अत्यन्त विवाद ग्रस्त है, फिर भी वैदिक तथा संस्कृत वाङ्मय के आलोड़न से ज्ञात होता है कि भक्ति भाव के अंकुर वैदिक साहित्य में भी विद्यमान थे। वेदों में यद्यपि "भक्ति" शब्द का उल्लेख इस अर्थ में नहीं मिलता जिसमें कि आज इसका प्रयोग किया जाता है, किन्तु ब्रह्म की अनेक शक्तियों से सम्बन्ध स्थापित करने की प्रवृत्ति तथा उनके प्रति अनुरागात्मक मन्त्रोच्चारण भक्ति के ही प्रारम्भिक अंकुर थे।

अनुराग सूचक भक्ति को परवर्ती कल्पना मानने वाले पाश्चात्य विद्वान भक्ति भाव को पश्चिम की देन मानते हैं। वेबर ने तो भगवान के प्रेममय साकार रूप की कल्पना का श्रेय ईसाई मत को प्रदान किया है। ग्रियर्सन के अनुसार भारत के दक्षिणी भाग मद्रास में कुछ ईसाई रहते थे। उनसे वहाँ के मद्रासियों ने भक्ति भाव ग्रहण किया, शनैः-शनैः वह उत्तर भारत तक फैल गया। वेबर ने तो कृष्ण जन्म और महाभारत की श्वेतद्वीप विषयक कथा को भी पश्चिम का प्रभाव माना। उन्होंने कहा कि श्वेतद्वीप का अभिप्राय-समुद्र के पारस्थित यूरोप से है। किन्तु ये सभी धारणाएं पूर्वाग्रह पर आधारित जान पड़ती हैं। भक्ति भारत की अपनी निधि है, तथा इसे पश्चिम की देन कहना भ्रामक है। गीता, ईसाई धर्म के बहुत पूर्व की रचना है उसमें कहा गया है कि "सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज। अहंत्वाम सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।

डॉ0 एच रे ने इन भ्रामक कथनों का खंडन अपने ग्रन्थ में किया है। भेलसा के शिलालेख द्वारा भी भक्ति का ईसा से दो सौ वर्ष पूर्व भारत में

होना सिद्ध होता है।[1]

"इस निर्मूल भ्रांत धारणा का कारण वैदिक साहित्य का एकांगी अध्ययन अथवा अज्ञान ही कहा जा सकता है। भारतीय विद्वान श्री बालगंगाधर तिलक तथा श्री कृष्ण स्वामी आयंगर ने उक्त मान्यता का सप्रमाण खंडन करते हुए भक्ति को वैदिक युग से ही बीज रूप में स्वीकार किया है।"[2]

उन्होंने कहा "वेबर नामक पश्चिमी संस्कृत पंडित ने इस कथा (नारायणीयोपाख्यान) का विपर्यास करके यह शंका की थी कि भागवत धर्म में वर्णित भक्ति तत्व श्वेत द्वीप से अर्थात् हिन्दुस्तान के बाहर के किसी अन्य देश से लाया गया है और भक्ति का यह तत्व उस समय ईसाई धर्म के अतिरिक्त और कहीं प्रचलित नहीं था। अब पश्चिमी पंडितों ने यह भी निश्चित किया कि वेबर साहब की उपर्युक्त शंका निराधार है।[3]

हम इस विवाद में नहीं जाना चाहते, क्योंकि अनेक विद्वान इस प्रश्न पर प्रामाणिक रूप से अपने विचार व्यक्त कर चुके हैं। यहाँ भक्ति की विकासात्मक स्थिति प्रस्तुत करना विवेच्य है।

1- ओझा निबन्ध संग्रह-भाग 1, पृ0 229-232, गौरीशंकर ओझा
2- राधा बल्लभ सम्प्रदाय सिद्धान्त और साहित्य-डॉ0 विजयेन्द्र स्नातक, पृ0-3
3- गीता रहस्य एवं कर्मयोग शास्त्र- बाल गंगाधर तिलक पृ0-3

हिन्दी साहित्य का भक्ति काल और भक्ति भावना-

भक्ति युग का काल निर्धारण शुक्ल जी ने सं0 1375 सं0 1700 तक किया है, विद्वानों में मतभेद होने पर भी शुक्ल जी की निश्चित सीमा ही सर्वमान्य है। हिन्दी साहित्य का भक्ति युग स्वर्ण युग के नाम से प्रख्यात है। इस युग में उदात्त भावना का प्रचार लगभग सम्पूर्ण भारत में हो चुका था। उत्तर भारत में एक ओर सगुण भक्ति की धारा प्रवाहित थी, दूसरी ओर निर्गुण की। आलंबन के अनुसार सगुण भक्ति का विकास शैव और वैष्णव दो प्रकार की भक्ति के रूप में हुआ। निर्गुणधारा में कुछ भक्त ज्ञान को महत्व प्रदान करते थे, कुछ प्रेम को। इस प्रकार निराकार परक भक्ति भी प्रेमाश्रयी तथा ज्ञानाश्रयी नामक दो शाखाओं में विभक्त हो गयी। भक्ति का विकास मुख्य रूप से उक्त चार धाराओं में हो रहा था। मुसलमानों का एकेश्वरवाद, बौद्ध धर्म तथा जैन धर्म भी तत्कालीन भक्ति से प्रभावित हुए बिना न रह पाये। तत्कालीन सम्पूर्ण साहित्य में भक्ति की अमिट छाप विद्यमान है।

पूर्व मध्ययुगीन सगुण भक्ति-

क- सगुण शैव भक्ति-

शैव-भक्ति काउद्गम स्थल संस्कृत वाङ्मय है। श्वेताश्वतर उपनिषद में रुद्र की उपासना का दार्शनिक रूप वर्णित है। ऐसा प्रतीत होता है कि जिस समय उपनिषदों के दार्शनिक सिद्धान्तों का विकास हो रहा था, उसी समय

1- Vaishnavism, Shaivism and minor religion system-

Sir R.G. Bhandarkar, P. 194

जनसाधारण के धार्मिक आचार विचार में भी एक नवीन पद्धति का आरम्भ हुआ- वह थी भक्तिवाद की पद्धति।

भक्ति युग में संत और सूफी संप्रदाय के प्रभाव से भी यह मान्यता बढ़ी जा रही थी कि भगवान एक है। रूद्र और विष्णु के उपासक भी इस मान्यता को स्वीकार करते हुए अपने-अपने आराध्य को ही भगवान मानते थे। संस्कृत साहित्य में शैव भक्ति की पृष्ठभूमि पहले ही तैयार थी, उसी के प्रभाव से हिन्दी साहित्य में भी भक्ति की धारा ने प्रवेश किया। शिव के अवतारी रूप प्रतिष्ठित करके पाँच सम्प्रदायों का प्रसार हुआ।

1- नाकुलीश सम्प्रदाय-

इसको पाशुपत सम्प्रदाय भी कहते हैं। इसका जन्म स्थान सूरत में बतलाया जाता है। इस सम्प्रदाय के विषय में कुछ अधिक तो ज्ञान नहीं है, किन्तु बम्बई के निकट योगेश्वरी की गुफा की भित्तियों पर अंकित है कि शिव का अंधासुर बध लीलाओं को तथा पार्वती परिणय को ये लोग बहुत मुख्यता प्रदान करते हैं।[1]

2- काल मुख सम्प्रदाय-

यह सम्प्रदाय मद्रास प्रदेश के अधिकांश भागों में प्रचलित था।

3-कापालिक सम्प्रदाय-

इस का प्रचार महाराष्ट्र में अधिक हुआ। यहाँ अभी तक शैव पूजा ही की जाती है, तथा काल भैरव के मन्दिर विद्यमान हैं। इस संप्रदाय में

1- कल्याण- भक्ति विशेषांक-शिव के विविध रूप-डॉ० भगवती प्रसाद सिंह, पृ० 509

मद्यपान का आदेश भी है।

4- अघोर उपासना अधिक प्रचलित नहीं हो पायी।

5- वीर शैव नामक एक संप्रदाय का उल्लेख भी प्रस्तुत साधना के अन्तर्गत किया जाता है। यद्यपि शैवोपासना के इतने सम्प्रदाय प्रचलित रहे, किन्तु वे अधिक समय तक टिक न सके। इसका मुख्य कारण "शिव भक्ति" के तामसिक आलंबन माने जाते हैं।

ख- सगुण-वैष्णव भक्ति-

हिन्दी साहित्य में सं0 1375 से सं0 1700 तक वैष्णव भक्ति का विपुल विकास हुआ। वैष्ण भक्ति धारा अनेक शाखाओं में विभक्त थी। वैष्णव भक्ति के क्षेत्र में विकसित विविध दार्शनिक सिद्धान्तों को यहाँ संक्षिप्त रूप मे प्रस्तुत किया जा रहा है, तत्कालीन दार्शनिक आचार्यों निम्नलिखित दार्शनिक मत है:-

रामानुज की आस्था सगुण सविशेष ब्रह्म में थी। ये विष्णु के अवतार राम के भक्त थे। इन्होंने भक्ति को ज्ञान से अधिक महत्ता प्रदान की। उन्होंने आत्मा और परमात्मा (भक्त और भगवान) के मध्य दास्य भक्ति की स्थापना की। उनका सिद्धान्त विशिष्टा द्वैत कहलाता है, तथा यह श्री संप्रदाय के नाम से प्रख्यात है।

मध्वाचार्य भक्ति को मुक्ति का साधन मानते हैं। इन्होंने जीव और ब्रह्म के मध्य दासत्व की स्थापना की। इनका सिद्धान्त द्वैतवाद है।

विष्णुस्वामी ईश्वर को सच्चिदानन्द स्वरूप मानकर चले। उन्होंने माया को ब्रह्म के अधीन, उसकी दासी माना है। वे नृसिंह तथा गोपाल दोनों के उपासक थे, उनके मत का प्रचार श्री बल्लभाचार्य ने किया, बल्लभाचार्य अद्वैत मत को मानते हैं, इन्होंने ब्रह्म के तीन रूप माने हैं- परब्रह्म अक्षर, ब्रह्म और जगत् ब्रह्म।

श्री बल्लभाचार्य के अनुसार भक्ति के क्षेत्र में भगवान की कृपा ही सबसे बड़ा तत्व है।

निम्बार्क ने भक्ति के क्षेत्र में युगलोपासना की प्रतिष्ठा की। राधाकृष्ण की भक्ति ही सर्वाधिक आनन्द प्रदायिनी है। दशश्लोकी में भक्ति की दार्शनिक व्याख्या की गयी। भक्ति, शांत के दास्य, सख्य, वात्सल्य और मधुर पांच रूप हैं।

चैतन्य बंगाल निवासी थे, इन्होंने भागवत पुराण को ही वेदांत का भाष्य माना है। "उज्ज्वल-नीलमणि" और भक्ति रसामृतसिन्धु में रूपगोस्वामी और सनातन गोस्वामी ने भक्ति की जो विस्तृत व्याख्या की है, उस पर चैतन्य सम्प्रदाय का प्रभाव है। इनके अनुसार ब्रह्म की प्राप्ति ज्ञान से, परमात्मा के योग से और भगवान की प्राप्ति भक्ति के द्वारा होती है।

स्वामी हरिदास का सखी सम्प्रदाय भ्रमवश बहुत काल तक निम्बार्क सम्प्रदाय की शाखा के रूप में स्वीकृत हो रहा है। स्वामी हरिदास ने "केलिमाल" नामक ग्रन्थ में स्पष्ट किया है कि उनके मत का मेरुदण्ड प्रेम तथा सखी भाव है। वे दार्शनिक आधार लेकर नहीं चले। उन्होंने कृष्ण को प्रेम

का अवतार माना है।

राधा वल्लभ-सम्प्रदाय के प्रवर्तक श्री हित हरिवंशथे, इस सम्प्रदाय का हरिदासी सम्प्रदाय से बहुत साम्य है,यह युगल उपासना का दूसरा महत्वपूर्णसम्प्रदाय माना जाताहै। राधाबल्लभ सम्प्रदाय की इष्ट देवी राधा है,कृष्ण नहीं। इस सम्प्रदाय की पृष्ठभूमि किसीसूक्ष्म आध्यात्म दर्शन पर आधारित नहीं है। इन्होने स्वकीया और परकीया दोनों ही भावों को अपूर्ण मानकर विरह भाव को स्वीकृति दी है। विरह से युक्त प्रेम ही राधाबल्लभीय पद्धति का सार है।

निर्गुण भक्ति मार्ग-

निर्गुण सम्प्रदाय के अन्तर्गत उन सभी बातों का सुन्दर समावेश पाया जाता है जो भारतीय आध्यात्मिक विचारों में मूल्यवान समझी गयी।[1] इन निर्गुण भक्तों ने संसार के प्रत्येक अवयव का संचालन करने वाली परमशक्ति को ही अपनी भक्ति का आलंबन माना है। मुख्यरूप से इनकी भक्ति भावना दो रूपों में दृष्टिगत होती है,एक समुदाय ऐसा था,जो भगवान की भक्ति में ज्ञान को अत्यधिक महत्व प्रदान करता था। दूसरा वर्ग प्रेम के अतिरिक्त किसी अन्य तत्व को स्वीकृति प्रदान करने के लिए तैयार न था। इसप्रकार निर्गुण भक्ति धारा का विकास दो रूपों में हुआ।

1- हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय- डॉ0 पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल,पृ0-1।

1- निर्गुण भक्तों की ज्ञानाश्रयी धारा-

इसके अन्तर्गत कबीर, नानक, दादू आदि की गणना की जाती है। ये लोग संत कहलाए। इनकी रचनाओं पर अनेक धर्मों का प्रभाव दृष्टिगत होता है। इनकी भाषा भी "सधुक्कड़ी" के नाम से प्रख्यात है।

2- निर्गुण भक्तों की प्रेमाश्रयी भक्ति धारा-

दूसरी प्रमुखधारा प्रेमाश्रयी नाम से विख्यात है। इसमें निराकार भगवान के प्रति प्रेमपूर्ण गाथाओं की रचनाएं की गयी हैं। इस प्रकार की रचना का श्रेय सूफी सम्प्रदाय को ~~ओर~~ जाता है।

मध्ययुगीन भक्तों के सामान्य विश्वास-

भक्ति काल के सुदीर्घ कलेवर में यद्यपि साधना पद्धति एवं आचार विचार सम्बन्धी अनेक मतभेद विद्यमान थे फिर भी कतिपय दृष्टियों से उनमें अद्भुत प्रकार का साम्य भी दर्शनीय है।

सर्वप्रथम दर्शनीय वस्तु यह है कि सभी धाराओं के भक्तों एवं साधकों नेभगवान के साथ एक व्यक्तिगत रागात्मक सम्बन्ध स्थापित किया है। भागवत में कहा गया है कि अखंडानन्द ब्रह्म के तीन स्वरूप हैं- ब्रह्म, परमात्मा और भगवान। जो ज्ञानावलंबित भक्त भगवान के मात्र चिन्मय रूप का चिंतन करते हैं, वे उस परम शक्ति के अंशमात्र से परिचित होते है। वे ज्ञान के द्वारा ही भगवान में लीन होने के लिए प्रयत्नरत रहते हैं। भक्तों के लिए भगवान का स्वरूप ही सर्वश्रेष्ठ है। भक्ति में ही भक्त अद्भुत आनन्द की उपलब्धि करता है। मोक्ष प्राप्ति अर्थात् भगवान में लीन होना उसे तनिक भी प्रिय नहीं है। प्रेम ही

पुरुषार्थ है प्रेम के विविध रूपों की व्यंजना उनके साहित्य में मिलती है। निराकार और साकार भक्ति धाराओं के अनुयायियों ने ब्रह्म से किसी न किसी प्रकार का सम्बन्ध स्थापित किया, अतः यह कहना असंगत न होगा कि भगवान के लीलामय रूप की स्वीकृति समस्त भक्ति सम्प्रदायों में समान रूप से विद्यमान है।

ईश्वर विषयक रति में दृढ़ आस्था हो जाने पर भक्त और भगवान के बीच इतनी प्रगाढ़ता उत्पन्न हो जाती है कि कौन छोटा है, कौन बड़ा है, इसका प्रश्न ही नहीं रहता।

भक्ति साहित्य में गुरु को विशेष महत्ता प्रदान की गयी है, तन्त्र साधना में गुरु को शिव का स्थान दिया जाता है। कुछ विद्वानों का मत है कि गुरु महिमा मध्ययुग के साधकों को अपने पूर्ववर्ती तन्त्रों तथा साधकों के उत्तराधिकार में मिली थी।

इसप्रकार भक्ति-युग का साहित्य, भक्ति, भक्त और भगवान गुरु की महिमा से भरा पड़ा है।

मध्य युग के संतों और भक्तों में समान रूप से पायी जाने वाली एक और वस्तु है वह है राम-नाम। अपने आराध्य को भक्तों ने अनेक नामों से स्मरण किया है "नाम माहात्म्य" भागवत इत्यादि सभी पुराणों में समान रूप से पाया जाता है, किन्तु पूर्व मध्ययुग में इसका चरम विकास हो चुका था।

निष्कर्ष-

हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रन्थों में यह मान्यता स्वीकार नहीं है कि हिन्दी साहित्य में भक्ति का विकास तथा तद्विषयक साहित्य सृजन पूर्व मध्यकाल में ही हुआ। उत्तरमध्य काल तक पहुँचते-पहुँचते भक्ति भावना का विकास प्रायः अवरुद्ध हो चुका था तथा भक्ति के बाह्य उपकरणों को ही महत्व प्रदान किया जाता रहा था। भक्ति के पर्याय रूप में सेवा, अर्चा आदि अर्थ ग्रहण किये जा रहे थे, दूसरे शब्दों में भक्ति हार्दिक अनुभूति न रहकर कर्मकाण्ड के आवर्त्त में पुनः फँस गयी थी। राधाकृष्ण और सीताराम साहित्य के साधारण नायक-नायिका बन गये थे। उक्त अध्याय में हमने समस्त धारणाओं को निर्मूल सिद्ध करते हुए यह स्पष्ट करना चाहा है कि भक्ति की गतिशीलता वैदिक युग से प्रारम्भ होकर हिन्दी वाङ्मय की गरिमा को द्विगुणित करती है। भक्ति की समस्त स्वरूपों का विवेचन प्रस्तुत किया गया है, तथा उनकी व्युत्पत्तियों पर संक्षिप्त प्रकाश डालने का भी प्रयास किया गया है। भक्ति के विकासात्मक प्रक्रिया पर विचार करने के उपरान्त इसी शृंखला में सम्प्रदायबद्ध साहित्य में भक्ति के स्वरूप को उद्घाटित करना अनिवार्य कहा जा सकता है। भक्ति के संदर्भ में निर्गुण एवं सगुण की भक्ति के तात्विकता को भी विस्मृत नहीं किया जा सकता।

द्वितीय अध्याय

सम्प्रदाय-बद्ध साहित्य में भक्ति का स्वरूप

(अ) समन्वय की प्रक्रिया-

भारतीय भक्तिकालीन धर्म साधना मुख्यत: सम्प्रदाय-बद्ध रही है। उसमें परम्परागत श्रौत स्मार्त तथा तन्त्र दिशाओं का समन्वित रूप प्राप्त होता है। इसीलिए भक्ति कालीन साहित्य की विशेषता समन्वय की प्रक्रिया कही जा सकती है। प्राचीन भारतीय धर्मशास्त्रों के अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उपर्युक्त तीनों परम्पराओं में निरन्तर परिवर्तनहोते रहे हैं। भक्ति आन्दोलन की जो स्थिति भक्तिकाल में निर्मित हुई थी उसके आदि में श्रौतस्मार्त परम्परा का आगमपरम्परा में समन्वय खोजने का प्रयत्न अन्तर्निहित है। पांच रात्र वैखानस आदि आगम मूलक धाराएं वैदिक अध्यात्म की परिधि में समाहित कर ली गई,पुराणों की धारा का यहीं से विकास होता है। उप निषदों का निराकार निर्गुण ब्रह्म यहीं पर सगुण साकार हो जाता है,तथा दर्शन शास्त्रों में सांख्य,योग और वेदान्त का समन्वित रूप भी यहीं उपलब्ध होता है। भक्ति कालीन भक्ति चेतना उक्त तीनों दर्शनों की समन्वित प्रक्रिया का फल है।

भक्ति के स्वरूप में विकासात्मक अन्तर-

वैदिक युग-

श्रौत धारा मध्यकाल तक आकर पौराणिक प्रभाव के कारण अपना वह रूप तो खो बैठी थी,जो उपनिषद युग के पूर्व विद्यमान था। मूर्तिपूजा,

पांचरात्रित रूप वैदिक युगीन भक्ति साहित्य में अप्राप्य है ,वहाँ कर्मकाण्ड की प्रधानता है,उपनिषदों तक आकार कर्म की महत्ता ज्ञान लेली और भक्ति-क्षेत्र की रागात्मकता की प्रतिष्ठा जब पुराणों द्वारा हुई तो भक्ति सर्वोपरि हो गई,ब्राह्मणों ने यज्ञ अथवा कर्म की महत्ता ही[1] निरूपित की गई है।

अयं महावीर्यो यो यज्ञे प्रापद,ब्राह्मण अस्य यज्ञस्य प्रावितार:[2]

आर्षेय ब्राह्मणों में वेदत्रयी के सार भाग का कथन हुआ है। आर्षेय ब्राह्मण सामवेद के आठ ब्राह्मणों में से हैं। आर्षेय ब्राह्मण के प्रथम प्रपाठक में प्रणव की महिमा निरूपित है। अत: नाम चर्चा के मूल बीज यहाँ उपलब्ध हो जाते हैं। गोपथ ब्राह्मण के मौदगल्य और मैत्रेय संवाद से श्रीमद-भागवत का नाम स्मरण तथा भक्तिगत प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। गोपथ की रचना श्रीमद्भागवत के रचना काल के निकट स्वीकार की जाती है।[3]

उपनिषदकाल-ज्ञानमूलाभक्ति-

उपनिषद काल में ज्ञानमूला भक्ति की प्रतिष्ठा दिखाई देती है। श्रद्धा को भक्ति का अनिवार्य अंग माना गया है। मुण्डकोपनिषद में तप: श्रद्धे ये त पवसन्त्यरण्ये शान्ता विद्वान्स भैक्ष्य चर्या चरन्त: । सूर्य द्वारेण ते विरजा प्रयान्ति यत्रामृत,सत्पुरुषों ह्यव्ययात्मा"।[4] कहकर श्रद्धा को महत्व दिया गया है। श्रद्धा के उपरान्त ज्ञानोपदेश के लिए गुरु का महत्व निरूपित किया है-

---

1- शतपथ- 1/4/2-12
2- गोपथ ब्राह्मण-पूर्वभाग प्रपाठक-1,कण्डिका 3।
3- भक्ति का विकास-पृ0 215
4- मुण्डकोपनिषद-1/2/11

यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ,

तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः।[1]

भक्ति के अन्य अंगो- ज्ञान तप तथा त्याग की चर्चा ईशोपनिशद, प्रश्नोपनिषद,तैत्तरीय उपनिषद् तथा मुण्डकोपनिषद में व्यापक रूप से हुई है। वेदों से लेकर उपनिषद भाग तक भक्ति में परमात्मा के अनुग्रह पर जितना बल दिया गया है,उसी की प्रेरणा से पौराणिक भक्ति आचार्यों ने ईश्वरीय कृपा को भक्ति का मूलाधार स्वीकार कर लिया गया। पांचरात्रिकों की पुष्टि अनुग्रह या शाक्तों के शक्तिपात की धारणा अवैदिक नहीं है। पांच रात्रों के समक्ष क्योंकि भक्ति के ज्ञान तथा कर्म भाव परक दोपक्ष पहले से ही सविस्तार रूप में विद्यमान थे,अतः उन्होने अपनी शरणपरता को ज्ञान और कर्म से संपुष्टकर भक्ति चेतना को अखण्ड और पारस्परिक सिद्ध करते हुए प्रामाणिक बताया वेद की प्रमाणिकता उनके लिए अनिवार्य थी।

श्रमण संस्कृति और उसमें भक्ति के तत्व-

वैदिक संस्कृति की कर्म-ज्ञान-प्रधानधारा के समानान्तर श्रमण संस्कृति की निवृत्तिपरक विचारधारा भी चली आती रही है। इस धारा में तपस्याऔर योग चर्या को प्रमुख स्थान मिला है। इस धारा का व्यवस्थित रूप हमे जैन दर्शन से प्राप्त होता है। श्रीमदभागवत में इस धारा के आदि-प्रवर्तक तीर्थंकर ऋषभदेव का उदात्त चरित्र वर्णित है। जैन धर्म का मुख्य प्रतिपाद्य विषय है- आचार मीमांसा जिसमें सम्यक-दर्शन,सम्यक ज्ञान और सम्यक चरित्र

1- कठोपनिषद-प्रथम अध्यायद्वितीय बल्ली तथा श्वेताश्वतर निषद,6/23

के पालन से श्रावक तथा यति अशोभन कार्यों से पृथक् रहकर देवत्व की ओर अभिमुख होते हैं। देवमण्डल, प्रवण्जप तथा सारस्वत कल्प का षोड्श विद्यादव्यूह जैन धर्म के भक्ति विषयक दृष्टिकोण को स्पष्ट कर देते हैं। बौद्ध धर्म में भी तत्वप्रधान आचार-मीमांसा की प्रतिष्ठा की गयी है। तथागत द्वारा उन्मीलित अष्टपदों की शिक्षा में पापों से पराड़्मुखता, पुण्यों का संचय तथा चित्त की शुद्धि को आवश्यक बताया गयाहै।[1]

हीनयान ज्ञानप्रधान उपासना को वरीयता देता है तो महायान भक्ति को उपादेय मानता है। मुदिता, विमला, प्रभाकरी, आदि दस भूमियों की कल्पना भक्ति के सन्दर्भ में विशेष महत्व रखती है। माध्यमिक आचार्य नागार्जुन ने भावरूप शून्य की सत्ता स्वीकार कर प्रवृत्ति प्रधान भक्ति मार्ग की स्थापना की। वेद बाह्य इन तन्त्रों में साधना और साध्य की दृष्टि से भक्त के राग तथ्य की प्रधानता उल्लेखनीय तत्व है।

आगम साहित्य में भक्ति-

भारतीय धर्म साधना में द्वैत, द्वैताद्वैत तथा अद्वैत दर्शन के भेद से क्रमशः वैष्णवागम, शैवागम और शाक्तागमों का विकास हुआ। वेदान्त सूत्र के भाष्यकार श्री कंठाचार्य ने इन तन्त्रों को वेद तुल्य मानते हुए अक्षुण्ण तथा प्रामाणिक माना है। कुल्लूक भट्ट ने हारीत के "श्रुतिश्च द्विविधा वैदिकी तान्त्रिकी च" वाक्य को उद्धृत करते हुए मनुस्मृति की व्याख्या में तन्त्र को वैदिक माना है।[2] वैदिक तन्त्रों में सर्व प्रथम पांचरात्र आगम आते हैं।

1- सत्व पापस्य अकरणं कुसलस्य उपसम्पदा।
सचित्त परियोदपनं एवं बुद्धान सासनं।।- धम्मचर्या

2- मनुस्मृति- 2:1

पतंजलि ने अपने महाभाष्य में शैव-भागवत सम्प्रदाय काउल्लेख कियाहै।

पाणिनि ने वासुदेवार्जुनाभ्याम् वुन् (4/3/98) सूत्र से वासुदेव की भक्ति करने वाले व्यक्ति के अर्थ में वुन प्रत्यय का विधान किया है। विष्णु पुराण की "सर्वाणि तत्र भूतानि,वसन्ति परमात्मा भूतेषु वस सर्वात्मा,वासुदेव स्ततः स्मृतः" उक्ति से वासुदेव ही भागवतों के एक मात्र उपास्यसिद्ध होते हैं।[1] पांचरात्रों के साथ वैखानस भी भागवतों में प्राचीन सम्प्रदाय के रूप में चला आ रहा है। महाभारत,श्रीमद्भागवत तथा विष्णुपुराण इन्हें वेद मूलक सिद्ध करते हैं। महाभारत में राजा उपरिचर को बृहस्पति द्वारा इस शास्त्र के उपदिष्ट होने का उल्लेख मिलता है।[2] महाभारत के अनुसार चारों वेदों तथा सांख्य योग का समावेश होने के कारण और पाद्म तन्त्रानुसार शांडिल्य, औपगायन ,मौंजायन,कौशिक एवं भारद्वाज नामक पंच ऋषियों से उपदिष्ट होने के कारण इस आगम को पांच रात्र कहते हैं। शतपथ ब्राह्मण के उल्लेखानुसार[3] इस अनुष्ठान से समस्त प्राणियों से श्रेष्ठ बनने की बात सिद्ध होती है।

भक्ति मार्ग ने इस पांचरात्रिक अनुष्ठान को एकान्त निष्ठा के कारण एकायन कहा गया है। इस सिद्धान्त का समर्थन करने के कारण एकायन कहा गया है। ईश्वर संहिता में[4] मोक्षायनाय वैपन्था एतदन्यौन विद्यते, तस्मादेकायनं नाम प्रवदन्ति मनीषिणः कहकर भगवान में एकान्तनिष्ठा तथा अहैतुकी भक्ति के द्वारा ही मुक्ति को संभव कहा गया है।

1- विष्णुपुराण- 6/5/80
2- शान्तिपर्व- 336 अध्याय।
3- शतपथ ब्राह्मण- 13,5-1/
4- ईश्वर संहिता- 1/18

इस सिद्धान्त का समर्थन करने के कारण इसे एकान्तिक भी कहते हैं, छान्दोग्य उपनिषद में भूमाविद्या के प्रसंग में नारद द्वारा अधीत विद्याओं के अन्तर्गत एकायन विद्या का उल्लेख है।[1]

पांच रात्र साहित्य परिमाण में पृथुल है तथा परवर्ती वैष्णव भक्ति-साहित्य पर इसका यथेष्ट प्रभाव पड़ता है।

पांच रात्र साहित्य को पुराण सम्मत धारा में कृष्ण तथा राम को लक्षित कर कृष्णतापिनी तथा राम तापिनी उपनिषदें लिखी गयी। तान्त्रिक प्रभावान्तर्गत नृसिंहतापिनी तथा गोपाल तापिनी का उल्लेख किया जा सकता है। मध्यकालीन भागवत भक्ति की प्रेरणा इसी विचारधारा का परिणाम है। श्रीमदभागवत में भक्ति के जिन तत्वों का उल्लेख है? वह पंचरात्रागम सम्पुष्ट है। परवर्ती वैष्णवाचार्यों ने उनका समर्थन किया है। वैष्णवसम्प्रदाय चिंतना के अनिवार्य अंग -अर्चा परम्परा तथा अवतार परम्परा का भी यही स्रोत है। जयारण्य संहिता ईश्वराभिमान, पूजा सामग्री संचयन, इज्या, वैष्णव ग्रन्थों का अध्ययन, अष्टांग योग तथा शरणागति को प्रमुख साधन बताती है[2] उत्तर मध्ययुगीन सम्प्रदायबद्ध साहित्य में इन्हीं पंचकालिक उपासना प्रणालियों को स्वीकार कियागया है।

पुराणों में भक्ति- पंचदेवोपासना और दशावतार-

मध्ययुगीन वैष्णव सम्प्रदायबद्ध भक्ति पांच-रात्रागमों से पुष्ट पौराणिक परम्पराओं द्वारा निर्धारित हुई है। पौराणिक मान्यताओं में पंच

1- छान्दोग्य उपनिषद 7/1/2
2- श्रीमदभागवत, तृतीय स्कन्ध, अध्याय 29

देवोपासना का महत्त्व अपरिहार्य है। यही नहीं, सत्त्वनिधिहरि की दशावतार परम्परा भी पुराणों की ही देन है। जीव को पूज्य ईश्वर भाव तक पहुँचाने की भावना का समर्थन उक्त प्रक्रिया से होता है। श्रीमद्भागवत अवतारों का वर्णन उपलब्ध है।[2] जिसे भागवत धर्म या पांचरात्र मत की देन कहा जा सकता है। भक्तियुगीन-साहित्य में पंचदेवोपासना विषयक तथा दशावतार विषयक विपुल साहित्य के निर्माण के लिए भागवत धर्म की पौराणिक परम्परा ही उत्तरदायिनी है। वृहन्नारदीय पुराण इसी परम्परा का पोषक पुराण है। पूजा पद्धति, मूर्ति निर्माण तथा प्रतिष्ठा, तीर्थयात्रा आदि प्रणालियाँ भागवत, विष्णुपुराण, गरुड़पुराण, ब्रह्मवैवर्त, विष्णु धर्मोत्तर एवं अग्निपुराण द्वारा उद्भूत हुई। ये सभी पुराण आगम परम्परा से निःसृत हैं और मध्ययुगीन भक्ति साहित्य के अध्ययन में उपयोगी है। महाभारत से लेकर अध्यात्म रामायण तक सामूहिक अवतारों के निरूपण की प्रवृत्ति प्रचलित रही एवं आठवीं शती से सत्तरहवी शती समाप्ति तक दशावतार निरूपण की साहित्यिक परम्परा अपने उत्कर्षरूप में रही। हिन्दी का भक्ति-साहित्य इस दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध है। हरिवंश पुराण, विष्णुपुराण और श्रीमद्भागवत इस परम्परा के प्रमुख स्रोत ग्रन्थ हैं।

<u>भक्ति में वैखानस का प्रभाव-</u>

सम्प्रदायबद्ध साहित्य में सगुणमार्गी वैष्णवागमों के अतिरिक्त योग, निवृत्ति, निर्गुणमार्गी वैखानस आगमों का प्रभाव भी विस्मृत नहीं किया जा सकता। वैखानस आगम मरीचिप्रोक्त है। वैखानस आगम के अधिक्रम का उल्लेख प्रतिष्ठाविधि दर्पण में इस प्रकार किया गया है-

---

1- जयाख्यसंहिता, 20 /65-75

2- श्रीमद्भागवत, 2/7, 11/26

नारायणो ब्रह्मण आह सर्व ,वैखानसं वैदिक मंत्र युक्तम।
सोऽयं विराजो विखना मुनीन्द्र:स काश्यपादेव तद तदेयत।।[1]

वैखानस सम्प्रदाय वैदिकों के अधिक निकट है तथा उसका शुद्ध वैष्णवत्व सुरक्षित है। वैखानसों में श्रौत,गृह्यसूत्र,तथा संहिताओं की व्यवस्था है।

वैखानस आगम ब्रह्म का अन्तर्यामी रूप मानता है,संतसाहित्य में भी इस धारणा का दृढ़ता से पालन किया गया है।[2]

सम्प्रदाय बद्ध वैष्णवों की सगुणोपासना,निर्गुणोपासना, तथा सूफियों की भक्ति चेतना उत्तर मध्ययुग में पांचरात्र,वैखानस तथा पौराणिक परम्पराओं से प्रभावित रही है।

शैव-शाक्त आगमों का प्रभाव-

वैष्णवाचार्यों के अतिरिक्त शैव और शाक्त आगमों का प्रभाव उत्तर मध्ययुगीन भक्ति साहित्य पर देखा जा सकता है। पुराणों में लिंग पुराण, मार्कण्डेय पुराण कल्कि पुराण,कूर्म पुराण,तथा अग्नि पुराण इसका समर्थन करते हैं। प्रतिभिज्ञादर्शन में अद्वैत ज्ञानोदय पर ही निर्व्याज अहैतुकी भक्ति का आविर्भाव माना गया है। इनका मुख्य पुराण है शिव पुराण। उत्तर मध्ययुगीन भक्त कवियों ने इसी पुराण को उपजीव्य बनाया।

1- प्रतिष्ठाविधि दर्पण- 1/2
2- ऐसो रामराइ अन्तरजामी- नामदेव।

भक्त कवियों ने नाथ दर्शन तथा रसेश्वर दर्शन के माध्यम से शैवों का अवधूत मार्ग और शाक्तों का चक्रकार मार्ग मध्यकालीन धर्मसाधना में विकसित हुए हैं। अतः वैष्णवेतर हिन्दी साहित्य के भक्ति साहित्य पर उक्त दो दर्शनों का प्रभाव स्पष्ट रूप से अंकित है। भक्ति युगीन नैराश्यवादी वृत्ति ने आत्मविश्वास हीनता और परलोक प्रवणता को जन्म दिया था। इन प्रवृत्तियों के कारण भक्ति परक आगमधारा का विकास तथा कर्मपरक निगमधारा का ह्रास हुआ। यथार्थतः आगमधारा ही स्मार्तपरम्परा में निगम के नाम पर समाज में समादृत हुई।[1]

भावसाधना और उसका प्रभाव-

भारतीय भक्ति साधना का मुख्य तात्पर्य साधनों से रहा है,अतः आचरण प्रधानता के कारण व्यावहारिक अधिक रहा है। नाम-साधना और मन्त्र साधना इसके अनिवार्य अंग है। नामसाधना सिद्धावस्था की प्रथम किन्तु अनिवार्य भूमिका है। अभीष्ट भाव के अनुसार साधक इसमें प्रवृत्त होता है। भावभक्ति का पोषण अर्चा आदि बहिरंग साधनों से होता है,पर अंतरंग साधना बहिरंग साधना के फलस्वरूप उदय होती है। रामानुजाचार्य की ध्रुवस्मृति एवंवेदान्त का निदिध्यासन इसी के अन्तर्गत आते हैं।

1- हिन्दी सगुण काव्य की सांस्कृतिक भूमिका,पृ063

उत्तर मध्यकालीन भक्ति साहित्य, मुख्यतः ज्ञान प्रधान तथा भाव प्रधान रहा है। निर्गुण मार्गी साधना ज्ञानोन्मुख भावोपासना को प्रधान मानकर चली तो सगुण मार्गी साधना भावोन्मुख ज्ञान को लक्ष्य मानकर चली तात्पर्य यह है कि एकान्त अनन्य भाव प्रकाशन ही सम्प्रदाय बद्ध भक्ति-साहित्य का आधार रहा है। इस प्रकार सगुण निर्गुण सूफी आदि सभी राग प्रधान भक्ति के आक्रोड में विकसित हुई।

हिन्दी सगुण भक्ति काव्य के आलंबन प्रमुख रूप से राम और कृष्ण रहते हैं। पांच रात्रीय सिद्धान्तों के प्रतिष्ठित हो जाने पर विष्णु को देवाधि देव स्वीकार कर लिया गया। सम्पूर्ण भक्ति साहित्य के आलंबन प्रमुख रूप से यद्यपि राम और कृष्ण ही हैं तथापि समन्वयवादी स्मार्त विचार धारा के कारण शिव, हनुमान, गणेश, सूर्य गंगा आदि को भी एक व्यापक भावबोध के भीतर समाविष्ट किया गया।

रामकृष्णेत्तर हिन्दी की सगुण भक्ति काव्य स्मार्त, स्मार्तेतर परम्परा मुक्त रूप से दिखाई देती है। स्मार्त भक्ति काव्य में शिव भक्ति काव्य, शक्ति भक्ति काव्य, हनुमद भक्ति काव्य में पंचदेवों पासना तथा परम्परा मुक्त रूप में भक्त चरित तथा नीति काव्य आते हैं। स्मार्तेतर भक्ति काव्य में जिन भक्ति काव्य और बुद्ध भक्ति काव्यों का समावेश किया जा सकता है। उत्तर मध्य कालीन हिन्दी का भक्ति साहित्य उक्त वर्गों को विविध साधना पद्धतियों से आपूर्ण है। निर्गुण-सगुण धारा के अनेक कवियों द्वारा भक्त महात्म्य तथा सिख गुरुओं को लक्ष्य मानकर ब्रजभाषा में रचना की गई।

राम भक्ति विषयक रचनाओं में शिव, पार्वती, हनुमान आदि की परिचर्या के समावेश के कारण भी देवताओं से सम्बन्धित स्वतन्त्र सरस साहित्य का निर्माण वैसा न हो सका।

इस प्रकार सम्प्रदाय बद्ध साहित्य में सगुण निर्गुण तथा सम्प्रदायेत्तर साहित्य में स्मार्त, स्मार्तेत्तर और परम्परामुक्त भक्ति-साहित्य का निर्माण हुआ। भक्ति के चेतना-स्वतन्त्र अध्ययन की दृष्टि से यह विभाजन समुचित जान पड़ता है। भक्ति के वैधी तथा रागानुगा भेदों में प्रथम प्रायः श्रौतस्मार्त, विचारधाराओं के अनुकूल है। दूसरी और कामजा होने से स्वच्छन्द है। लोकायत तथा बौद्ध सम्प्रदायों के प्रति भागवतों की सहिष्णुता भी इस बात की पुष्टि करती है कि निगम मूलक चिन्तनाओं के विरुद्ध आगम समर्थित विचार धाराएँ भक्ति चेतना के अधिक निकट हैं। पाँच रात्रों, चतुर्व्यूह, अर्चा सेवा तथा हरि लीला गान की त्रिवेणी प्रवाहित की। पुराणों ने इस त्रिधारा को विकसित किया। समस्त भक्ति साहित्य का उक्त तीनों तत्वों से प्रभावित होना ही इस बात का द्योतक है कि उत्तर मध्यकालीन भक्ति साहित्य पौराणिक परम्परा का साहित्य है जो निगम मूलक न होकर आगम मूलक है।

(आ) भक्तिकालीन सन्तों का दृष्टिकोण-

निर्गुण रूप-

ईसा की 14वीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही हिन्दी प्रदेश में भक्ति की दो धाराएँ प्रवाहित हुईं- 1- निर्गुण 2- सगुण। ये भक्ति धाराएँ

परम्परागत विचार धाराओं का पोषण करने वाली हैं। भारत में ऋग्वेदकाल से ही चिन्तन के दो पक्ष प्रचलित थे। लेकिन दोनों का स्वरूपगत भेद आगे चलकर उपनिषत्‌काल में स्पष्ट हुआ। यहाँ आते-आते भारतीय चिन्तन धारा ज्ञान और कर्म दो धाराओं में बँट गयी।

उपनिषदों की ज्ञानपरक धारा में आकर गुण और विशेषता रहित,प्रकृति की अधिष्ठात्री शक्ति का ही चिन्तन किया जाता रहा।

सुविधा के लिए इस परमशक्ति को ब्रह्म की संज्ञा दी गयी है। आगे चलकर इस परम्परा में विकसित होने वाली चिन्तनधारा निर्गुण नाम से अभिहित की गयी। इन दोनों चिन्तन धाराओं विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है।

निर्गुण शब्द सत्व,रजस और तमस, इन तीनों गुणों से परे समझी जाने वाली अनिर्वचनीय सत्ता का बोधक है। इसे ही ब्रह्म परमात्मा परमतत्व,अलखनिरंजन आदि नामों से भी अभिहित किया गया है। उपनिषदों में इसी निर्गुण या ब्रह्म की सत्ता का विस्तृत विवेचन किया गया है। इसी निर्गुणतत्व की आराधना करने के कारणपरवर्तीकाल में जो सम्प्रदाय विकसित हुए उन्हें निर्गुण सम्प्रदाय कहा जाता है।

निर्गुण शब्द के उद्भव और उसके विकास के विविध आयामों का विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है। "निर्गुण" शब्द सबसे पहले श्वेताश्वतर उपनिषद[1] में ब्रह्म कही जाने वाली परमसत्ता के विशेषण के रूप में व्यवहृत

1- श्वेताश्वतर उपनिषद 6/11।

हुआ है। उपनिषद के अनुसार जो सभी भूतों प्राणियों में अन्तर्हित है, सर्वव्यापी है, सभी कर्मों का अधिष्ठाता है, उसका साक्षी है, सबको चैतन्य प्रदान करने वाला है, तथा जो निरुपाधि है, वह निर्गुण विशेषण धारी ब्रह्म है।

श्रीमद्भागवद् गीता में श्री ब्रह्म[1] का विवेचन करते हुए कहा गया है- "उसमें सब इन्द्रियों के गुणों का आभास है, पर उसके कोई भी इन्द्रिय नहीं है, वह सबसे असक्त रहकर अर्थात् अलग रहकर भी सबका पालन करता है, और निर्गुण होने पर भी गुणों का उपयोग किया करता है।" गीता में ही एक अन्य स्थान पर भगवान श्री कृष्ण कहते हैं- "यह समझ लो कि जो कुछ सात्विक, राजस, तामस, भाव अर्थात् पदार्थ है वे सब मुझसे ही हुए हैं, किन्तु वे मुझमें हैं मैं उनमे नहीं हूं। इन तीन गुणात्मक भावों से अर्थात् पदार्थों से मोहित होकर यह संसार इनके परे के {अर्थात्* निर्गुण} मुझ अव्यय को नहीं जानता है।"[2]

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि जो भी पदार्थ त्रिगुणात्मक रूप में देख पड़ता है, वह ब्रह्म का अंश होकर शक्ति में निहित गुण युक्त माया का अंश है। "ब्रह्म" जो त्रिगुणातीत है। इसी त्रिगुणातीत विशेषता के आधार पर उसे निर्गुण कहा गया है। ऋग्वेद के नारदीय सूत्र में भी ऐसी गुणातीत शक्ति की ओर संकेत किया गया है- "जब सृष्टि का आविर्भाव नहीं था तब न सत था न असत् और न रजस ही था।" इसके आगे जिस हिरण्यगर्भ नाम धारी तत्व की चर्चा की गई है। वह इस त्रिगुणातीत ब्रह्म का ही पर्याय है।

उपनिषदों और गीता द्वारा प्रतिपादित "ब्रह्म" के इसी निर्गुण रूप की उपासना का विकास हिन्दी प्रदेश में सन्तों की विचारधारा के रूप में हुआ। इसी कारण सन्तों के सम्प्रदाय का "निर्गुण" सम्प्रदाय और स्वयं उन्हे निर्गुनिया या अगुन इत्यादि नाम दिये हैं।

हिन्दी वाङ्‌मय में यह परम्परा रामानंद की ही प्रेरणा से विकसित हुई। स्वयं उनके एवं उनके गुरु राघवानन्द की रचनाओं में ऐसी अनेक बातें मिलती हैं जिन्हे निर्गुण सम्प्रदाय के विकास के बीजरूप में देखा जा सकता है,परन्तु यदि परम्परा की दृष्टि से देखा जाये तो इनसे भी पहले नामदेव द्वारा स्थापित सिद्धान्तों में "निर्गुण"साधना के अनेकों तत्व मिल जाते हैं। आगे विकसित होने वाली सन्तों की निर्गुण परम्परा ने नामदेव और रामानन्द दोनों ही को आधार रूप में मान्यता दी। निर्गुण को लेकर कबीर द्वारा व्यक्त विचारों को प्रस्तुत किया जा रहा है।

कबीर-

कबीर ने अपने उपास्य तत्व को "निर्गुण" ,अगुन,गुन अतीत निर्गुण ब्रह्म तथा निर्गुण राम आदि अभिधानों से संकेतित किया है। एक पद कबीर संग्रह[1] में वे अपने ब्रह्म का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत करते हुए कहते हैं- राजस्व,तामस और सात्त्विक ये तीनों ही उसकी माया है,तथा वह इन तीनों से परे का चौथा पद है। वह गुणातीत होने के कारण निर्गुण कहलाता है। गुण में ही वह निर्गुण है और निर्गुण में गुण ही है,यह बात बहुत ही सरल है,ऐसा

1- कबीर संग्रह-180

न कहना सच्चे मार्ग को छोड़कर बहकना है। प्राय: ऐसा देखा जाता है कि लोक पिण्ड और ब्रह्माण्ड की बातें करते हैं परन्तु चाहे पिण्ड हो चाहे ब्रह्माण्ड हो, ये सभी देश और काल तक सीमित हैं किन्तु उसका न तो आदि है और न अन्त है। कबीर के हरि इन सबसे विलक्षण हैं। इस विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि कुछ युगीन प्रभावों को छोड़कर कबीर ने जिस ब्रह्म की उपासना का प्रचार किया, वह परम्परा से ही प्राप्त है। कबीर की सारी साधना पद्धति पारम्परिक है। कुछ वरिष्ठ समीक्षकों ने कबीर की साधना पर इस्लाम का प्रभाव देखने का प्रयास किया है, परन्तु ऐसा स्पष्टतः होता है कि कबीर किसी भी स्थिति में इस्लाम धर्म से प्रभावित नहीं हैं। हिन्दी भक्ति वाङ्मय में निर्गुण को आश्रय बनाकर दो भक्ति धाराओं का विकास हुआ- 1- संत सम्प्रदाय 2- सूफी सम्प्रदाय। इन दोनों ने ही निर्गुण ब्रह्म को आश्रय मानकर अपनी साधना पद्धतियाँ विकसित की। संत सम्प्रदाय तो विशुद्ध रूप से भारतीय भक्ति परम्परा का अनुसरण करने वाला सम्प्रदाय है।

मध्ययुग की साधारण धर्म प्राण जनता को सिद्धादि की विविध वीभत्स साधनाओं के दल दल से तथा नाथों की नीरस यौगिक प्रक्रियाओं के पंकिलगर्त से बाहर निकाल कर भाव भक्ति की अलौकिक एवं पावन पयस्विनी में अवगाहन कराने का पूर्ण श्रेय भक्त प्रवर कबीर को है। यह भाव भक्ति उनके अन्तर्जगत की अन्यतम विभूति थी, उनके गुरु की दिव्य देन थी। इसी को पाकर कबीर हुए। आज भी उनकी भाव-भक्ति भरित भारती भारत के हृदय का हार है।

भारत में भक्ति की अलौकिक धारा अनादि काल से बह रही है। मध्य युग में तो वह मानों उच्छृंखल होकर उमड़ चली थी। सम्भवतः उसको मर्यादित करने के लिए ही अनेक आचार्यों ने विविध दार्शनिक वादों की प्रतिष्ठा की थी ऐसे आचार्यों में स्वामी रामानुजाचार्य प्रमुख हैं, उन्होंने भरत में भक्तिलता का बीजारोपण किया था। उसे परिवर्द्धित करने का श्रेय स्वामी रामानन्द और उनके शिष्य कबीर को हैं। किसी की यह युक्ति इसी बात का समर्थन कर रही है-

भक्ति द्राविड़ उपजी लाए रामानन्द।
परगट किया कबीर ने सप्त दीप नवखण्ड।।

नारद भक्ति सूत्र तथा नारद पाँच रात्र के प्रकाश में कबीर का भक्ति सम्बन्धी दृष्टिकोण स्पष्ट हो जाता है। क्योंकि वे उनसे बहुत अधिक प्रभावित थे। नारदीय ग्रन्थों के अतिरिक्त श्रीमद्भागवत और श्रीमद्भगवद् गीता में भी भक्ति सम्बन्धी अच्छा विवेचन हुआ है। कबीर के समय में इन दोनों ग्रन्थों का अच्छा प्रचार था। अतः वे कुछ इनसे भी अवश्य प्रभावित हुए होंगे।

नारद -भक्ति-सूत्र में सा तु कर्म ज्ञान योगेभ्यो-अधिकतरा[1] कहकर भक्ति को कर्म, ज्ञान और योग इन तीनों से श्रेष्ठ कहा गया है।

1- नारद भक्ति-सूत्र 25

भागवत में भी कहा है कि विश्व के कल्याण का सुधार भक्ति मार्ग पर ही निर्भर रहता है।[1] नारद के समान कबीर ने भी भक्ति को कर्म, ज्ञान और योग से श्रेष्ठ कहा है, वे उसे मुक्ति का एक मात्र उपाय मानते हुए भक्ति सम्बन्धी दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है-

"भाव भगति विसवास, बिन कटै न संसै सूल।
कहै कबीर हरि भगति बिन, मुक्ति नहीं रे मूल।।[2]

और भी

जब लग भावभगति नहीं करिहौ,
तब लग, भवसागर क्यों तरिहौ।।[3]

योग मार्ग इसी भक्ति मार्ग के ही आश्रित है यदि भक्ति नही है तो योग मार्ग वृथा ही है।

जायसी -

सूफियों की साधना पद्धति गुप्त साधना पर अधिक बल देती है। उनका विश्वास है कि प्रकट कर देने से सब कुछ उपलब्ध नहीं हो पाता इस प्रतिकूल यदि साधना का प्रदर्शन न किया जाय तो वह गन्तव्य तक अवश्य पहुँचा देती है। यह विश्वास सूफियों का उस परम सत्ता के प्रति है जो अचिन्त्य है, निराकार है, निर्गुण है- जहाँ वाह्य साधन अथवा आडम्बर की कोई आवश्यकता नही रह जाती है वहाँ पहुँचकर साधक स्वयं में भक्ति का अनुभव करने लगता है,

---

1- श्रीमद्भागवत 7/9/9
2- कबीर ग्रन्थावली, पृ0 246
3- कबीर ग्रन्थावली, पृ0 245

जिससे उस अचिन्त्य शक्ति या प्रकाश का तादात्म्य होजाता है। इसी प्रकार की भक्ति पर जायसी ने जोर दिया है उनका कथन है कि साधक सांसारिक कार्य करता रहे, किन्तु साथ ही साथ मानसिक रूप से आराध्य का सतत चिन्तन करता जाये-

परगट लोक चार कहु बाता।
गुपुत लाउमन जासों राता।।

जायसी

गुप्त रूप से किसी अदृश्य की साधना की ओर इंगित करके जायसी ने उस शक्ति को स्वीकार किया है जो निराकार होते हुए भी समस्त को संचालित करती है। जायसी ने इस पूर्णत्व की प्राप्ति हेतु प्रेम को माध्यम माना है। एकान्त चिन्तन के द्वारा ही इस अतीन्द्रिय सौन्दर्य का दर्शन किया जा सकता है। उस सौन्दर्य में ही समत्व एवं पूर्णत्व की भावना निहित होती है। साधक की समस्त साधना का लक्ष्य इसी परम सौन्दर्य की उपलब्धि ही है। उस अखण्ड सौन्दर्य के प्रति साधक की विचार धाराओं में भले ही परिवर्तन हो, किन्तु लक्ष्य प्राय: सभी का एक ही होता है, वह चाहे भक्ति के स्तर पर हो, अथवा ज्ञान बुद्धि के स्तर पर। किन्तु उस अचिन्त्य का साक्षात्कार कैसे किया जाये। उसे समझने के लिए, उसके साथ भावात्मक, भावनात्मक अथवा रागात्मक नहीं तो बौद्धिक स्तर पर किसी न किसी प्रकार का सम्बन्ध जोड़ना ही पड़ता है। इस स्थिति पर पहुँच कर भक्त समस्त व्यक्त प्रकृति की अव्यक्त और रहस्यमयी सत्ता के प्रेम में व्याकुल और मिलन के लिए उत्सुक रहता है। वह उस अचिन्त्य की रहस्यमयी सत्ता के दर्शन हेतु आकुलता

का आभास करता है। यही व्याकुलता प्रेम की चरम परिणति होती है। जायसी ने इसी प्रेम की चरम परिणति से हृदय की परिशुद्धता की बात कही है। सगुण मार्गी भक्तों में इनमें निर्गुण मार्गी भक्तों ने जब प्रेमावेश में आकर अपने आराध्य के प्रति भक्ति भाव के पदों का गायन किया है। उनकी भक्ति का प्रधान और प्रथम वक्तव्य यही नहीं है, कबीर, दादू, आदि भक्तों ने और बातों के बीच इस मधुर भक्ति प्रेम सम्बन्ध की चर्चा की है। कबीर के दोहों में भी इस कान्तारति का बहुत ही सुन्दर परिपाक हुआ है, विशेष करके विरहावस्था की उक्तियों में-

यह तन जारौं मसि करौ, ज्यौं धुआँ जाइ सरग्गि।[1]
मति वै राम दया करै, बरसि बुझावै अग्गि।।

× × × ×

नैना भीतरि आव तूं, ज्यो ही नैन झपेऊँ।[2]
ना हम देखौ और कूं, नां तुझ देखन देऊँ।।

इसप्रकार सूफी साधकों के अनेक पदों में भी प्रिय से मिलने की अपार व्याकुलता का परिचय प्राप्त होता है।

सूफी साधकों की भक्ति भावना इनकी लिखी प्रेम गाथाओं में अभिव्यक्त हुई हैं। इन प्रेम गाथाओं में सर्वश्रेष्ठ "पदमावत" ही है जिसकी रचना संत भक्त कवि जायसी ने किया है।

1- कबीर ग्रन्थावली पद संख्या- 11
कबीरवाणी पीयूष- विरह के अंग पृष्ठ संख्या- 19
संपादक- डॉ जयदेव सिंह, डॉ0 वासुदेव सिंह

2- वही पद संख्या- 33
पृ0 संख्या- 31

कवि ने "पद्मावती" के जिस अपूर्व पारस रूप का वर्णन किया है। वह अपना उपमान आप ही है। कवि जब "पद्मावती" के रूप का वर्णन करने लगता है तब उसका सम्पूर्ण अन्तर तरल होकर ढरक पड़ता है। पारस रूप वह रूप है, जिसके स्पर्श से यह सारा संसार रूप ग्रहण कर रहा है। "पद्मावती" में वही पारस रूप है। "पद्मावती" के रूप वर्णन के बहाने भक्त कवि ने वस्तुतः भगवान के प्रभाव का वर्णन किया है। वास्तव में, आराधक अपने आराध्य की भक्ति ही किसी न किसी बहाने उसी को करता है। यह भक्ति की अपनी अपूर्व विलक्षणता है।

लौकिक जैसी दिखने वाली कहानी का आश्रय लेकर सूफी कवियों ने आध्यात्मिक मधुर भाव की साधना का संकेत किया है।

"जायसी" ने "पद्मावत" में जिस जिस उद्दाम प्रेम का वर्णन किया है, वह एक आदर्श और एकान्तिक प्रेम है।"[1]

लौकिक अनुराग के बहाने कवि सदा अलौकिक सत्ता की ओर इशारा करता रहता है। जहाँ दूसरे कविभक्तों की अन्तःवृत्तियों के चित्रण द्वारा पात्र के विशिष्ट व्यक्ति को चमकाने का प्रयत्न करते हैं वहाँ भी जायसी अलौकिक पारमार्थिक सत्ता की व्यंजना करना अपना प्रधान लक्ष्य समझते हैं।

(ड) सगुण भक्ति का रूप-

छः अप्राकृत गुणों, ज्ञान, शक्ति, ऐश्वर्य, बल, वीर्य तथा तेज से युक्त अद्वैत, अनादि अनन्त निर्विकार तथा आनन्द स्वरूप कहा जाने वाला "ब्रह्म"

1- मध्यकालीन धर्मसाधना- सूफी साधकों की मधुर उपासना-पृ0 255-
आ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी

ही "सगुण" कहलाता है। भागवत के अनुसार गुण दो प्रकार के होते हैं-

1-प्राकृत- इसकेअन्तर्गत सत्त्व, रजस् और तमस् गुण आते हैं।

2-अप्राकृत- इसके अन्तर्गत उपर्युक्त छः गुणायें आते हैं, इन्ही छः गुणों से युक्त होकर "ब्रह्म" को सगुण उपाधि धारण करता है। मध्ययुगीन सगुण भक्ति में उपलब्ध अनुराग सूचक भक्ति की अभिव्यक्तियों को पाश्चात्य विद्वानों ने अभारतीय मानकर विदेशी प्रभाव सिद्ध करने का प्रयास किया है। वेबर महोदय ने तो कृष्ण जन्माष्टमी पर्व और महाभारत में वर्णित श्वेतद्वीप को भी ईसाई धर्म की देन बतायाहै, किन्तु जिन कल्पित तत्वों के आधार पर सगुण भक्ति को अभारतीय सिद्ध करने का प्र यास किया गया, उन सभी तथ्यों को अनुसंधान द्वारा अनेक समीक्षकों ने निर्मूल एवं भ्रामक ठहरा दिया है। सगुण भक्ति को रामतत्व की प्रधानता देखकर जिन पाश्चात्य विद्वानों को इनके उद्भव के सम्बन्ध में भ्रम हुआ, निश्चयतः न उन्होने वैदिक वाङ्मय का अध्ययन किया था और न उन्होने भारतीय उपासना मार्ग की परम्परा को समझा था। भारतीय भक्ति-साधना का जितना व्यापक विस्तार वैदिक काल में मध्ययुग में हुआ, यदि उसका शतांश भी इन विद्वानों को विदित होता तो सगुण भक्ति को अभारतीय कहने का प्रयास न करते।

सगुण भक्ति के मुख्य अवयवों का विवेचन निम्नवत् है-

<u>1-ज्ञान-</u>

अजड़, स्वप्रकाश, नित्य और सर्वस्व का अवगाहन कर लेने वाला गुण "ज्ञान" की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। उपनिषदों में जिस ज्ञान प्राप्ति के विभिन्न साधन ही "ब्रह्म" की अपूर्व सत्ता है।

2- शक्ति-

जगत का उपादान कारण भूत गुण शक्ति है, उपादान शक्ति का अभिप्राय एक उदाहरण से अभिव्यक्त किया जा सकता है- "जिसप्रकार मिट्टी घड़े के निर्माण में उपादान कारण है, उसी प्रकार "ब्रह्म" का गुण शक्ति की सृष्टि का उपादान कारण है।"[1]

3- ऐश्वर्य-

जगत को सृष्टि में स्वतन्त्रता का गुण "ऐश्वर्य कहलाता है, इसी ऐश्वर्य गुण के कारण वह अदृश्य अपूर्ण शक्ति जिसे "ब्रह्म" को संज्ञा से अभिहित किया जाता है, स्वेच्छया सृष्टि में प्रवृत्त होता है।

4- बल-

सृष्टि के निर्माण में "ब्रह्म" कोई श्रम नहीं करता। वह इसे सहज ही निर्मित करता है। श्रमाभाव के गुण को ही बल की संज्ञा से अभिहित किया गया है।

5- वीर्य-

जगत् के निर्माण में प्रवृत्त होते हुए भी अर्थात् उसका उपादान कारण होते हुए भी "ब्रह्म" स्वयं विकार रहित होता है। इस विकार रहित होने के गुण को ही वीर्यकहा गया है।

1- हिन्दी साहित्य का प्रवृत्यात्मक इतिहास- पृ0 148-डॉ0 शिवमूर्ति

6- तेज-

यह अद्वय परम शक्ति अखिल सृष्टि का निर्माण अकेली ही करती है। इसके लिए उसे किसी अन्य सहायक की आवश्यकता नहीं होती। इसे तेज की संज्ञा से अभिहित किया जाता है।

उपर्युक्त वर्णित छः गुणों को धारण करने वाला "परब्रह्म" ही "भगवान" की संज्ञा से अभिहित होता है। भागवत में बताया गया है कि जगत के कल्याण के लिए भगवान अपने आप ही व्यूह, विभव, अर्चावतार और अन्तर्यामी चार रूपों की सृष्टि करते हैं। वैदिक विष्णु देवता को यदि सगुण भक्ति का अवतारी देवता माना जाये, तो इसका क्रमिक विकास सहज ही स्थिर हो जाता है, किन्तु वैदिक विष्णु और भागवत धर्म के स्वीकृत विष्णु में भेद माना गया है।

भागवत धर्म का उदय ईसा से चार पाँच शती पूर्व हो गया था, अतः मध्ययुगीन भक्ति के मूलाधार विष्णु (राम और कृष्ण) देवता न तो पाश्चात्य प्रभाव की उपज है और न रागानुगा प्रेमा भक्ति किसी अभारतीय तत्व से प्रभावित है।

सगुण भक्ति साहित्य में अनुराग परक माधुर्य भाव मण्डित अभिव्यक्तियों को देखकर एक दूसरे का भ्रम फैला है। प्रेम राग और श्रृंगार के साथ दैन्य और कार्पण्य की उक्तियाँ भ्रम उत्पन्न करने में सहायक हुई हैं, कि निर्गुण निराकार ब्रह्म की उपासना से दूर होकर भगवान की शरण में जाने

को लालायित हुए थे।

सगुण भक्ति को परम्परा का अनुसंधान करने से यह विदित होता है कि हिन्दो के भक्त कवियों को सगुण भक्ति साधना समग्रत: या अंशत: राजनीतिक परिस्थित या परिवेश का परिणाम न होकर वैदिक काल से प्रवहमान "भक्ति" का ही एक रूप था। अवतार वाद को कल्पना के साथ-साथ इस देश में सगुण भक्ति के इस व्यापक भक्ति भाव को स्थान मिल गया था और इसके विभिन्न रूप औरप्रकार भी विकसित होने लगे थे। यदि राजनीतिक दासत्व का दु:खद प्रसंग न आता तब भो सगुण भक्ति अपने स्वाभाविक रूप से विकसित होती।

सगुण भक्ति के प्रबल प्रवाह का एक अन्य कारण और भी निर्दिष्ट किया जाता है,कुछ विद्वानों का मत है कि बौद्ध और जैन धर्म को नास्तिक ठहरा देने के बाद अद्वैतवाद का प्रचार हुआ और शंकराचार्य इस सिद्धान्त के प्रबल पोषक बने।

अहं ब्रह्मास्मि" और "सर्वखल्विदं ब्रह्म" के आधार पर संसार को मिथ्या और क्षण भंगुर मानने वाले ब्रह्म ज्ञानो आचार्यों के साथ कुछ अज्ञानी और निरक्षर ब्रह्मवादो भी पैदा हो गये। सगुण भक्ति के प्रमुख आलंबन राम और कृष्ण रहे हैं,ये दोनों ही पौराणिक मान्यताओं के अनुसार परात्पर ब्रह्म के अवतार हैं। पूर्व मध्य काल में सगुण भक्ति में वैधी भक्ति के तत्वों की प्रचुरता रही है। इसलिए उसमें विराटता और ऐश्वर्य बोध का आधिक्य रहा है,पर उत्तर मध्यकाल के दरबारी परिवेश में पहुँचकर राम और कृष्ण दोनों ही साम्प्रदायिक परिकरों में ललित विलासमयी माधुरी के साथ प्रकट हुए हैं।[1]

1- हिन्दी काव्य में भक्ति का स्वरूप- डॉ0 नित्यानन्द शर्मा पृ0 152

ज्ञान मार्गी निर्गुण पंथों तथा प्रेममार्गी सूफी सन्तो के उपासना के समानान्तर सांस्कृतिक मूल्यों तथा दार्शनिक चेतना के संरक्षा के कारण सगुण भक्ति जहाँ पृथुल भाव ग्रहण कर सकी, वहाँ उसकी कलात्मक चेतना ने तद्युगीन मनोवृत्ति के अनुरूप साम्प्रदायिक मंडलों के विकास में भी योग दिया। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि उत्तर मध्यकालीन सगुण साधना, शाक्त, शैव और सूर्योपासकों की आगममूला साधना से भी प्रभावित रही है। प्रेमाभक्ति की आनन्दमयी आसक्ति का स्रोत यही साधना है। आगमों के प्रति विशेष आग्रह का भाव दक्षिण की देन है। इस प्रकार उत्तर भारत की स्मार्त्त देवालयीय परम्परा तन्त्राश्रित पंथों के साथ घुल मिल गयी थी। दक्षिण की देवालयीय परम्परा में रामतत्व पूर्वानुवर्ती था तथा उत्तर की देवालयीय परम्परा में अर्चा तथा प्रपन्नता की मात्रा का आधिक्य था। उत्तर भारत की श्रौत-स्मार्त परम्परा में कर्मकाण्ड पूर्ण प्रवृत्ति परकता थी, तथा दक्षिण की आगम परम्परा के अन्तर्गत प्रपत्ति और समर्पण की महत्ता थी। यही कारण है कि दक्षिण के भक्तिवादी आचार्यों का जब उत्तरापथ में आगमन हुआ तो साधना का प्रमुख स्थान प्रपत्ति और प्रेममूला भक्ति ने ले लिया।

डॉ० राम नरेश वर्मा के अनुसार " सामाजिक चेतना के ईश्वरोन्मुख और परलोक परायण होने के दो कारण थे {1} कर्ममय श्रौत परम्परा का अपकर्ष तथा {2} प्रपत्तिमूलक आगम परम्परा का उत्कर्ष। निश्चय ही उत्तर मध्य युग की यह प्रवृत्ति पूर्व मध्यकालीन प्रवृत्ति का विस्तार है।[1]

1- हिन्दी सगुण काव्य की सांस्कृतिक भूमिका- पृ0 44

मध्यकालीन सगुण भक्ति साहित्य का निर्गुण भक्ति साहित्य भक्ति से एक मूल भूत भेद अवतार वाद है। अवतार वादी इस भावना ने हमारे समग्त दार्शनिक चिन्तन को प्रभावित किया है। स्वयं अद्वैतवादी शंकर ने सिद्धान्त की दृष्टि से पंचायतन की पूजा का प्रवर्तन करते हुए माण्डूक्योपनिषद् के अंत में अवतरित ब्रह्म की वन्दना की है।[1]

मध्यकाल में एक आराध्य के दश मुख्य अवतारों की उपासना की प्रतिष्ठा रही है। श्रौत एवं आगम दोनों सिद्धान्तों में दश शब्द की महिमा है। एक ही पुरुष की दशधा विभाजित शक्तियाँ आगम में दश महा विद्याएँ हैं। वैष्णव दशावतार इसी प्रक्रिया की उपज है।[2]

मध्य काल के राम भक्त अध्यात्म रामायण के प्रशंसक रहे हैं, अत: उन्होंने सामूहिक देवावतार की परम्परा का समर्थन किया और इसीलिए दशावतार की परम्परा यहाँ उपलब्ध नहीं होती। बाल्मीकि रामयण में उल्लेख है-

देवाश्च सर्वे रूप धारिणः स्थिताः सहायार्थं मि स्तेता हरे।।[3]

डॉ० कपिलदेव पाण्डेय का यह कथन सत्य प्रमाणित होता है कि हिन्दी मेंदशावतारों की परम्परा रीतिकालीन युग तक मिलती है। हिन्दी की दशावतार परम्परा में निर्गुण सगुण भक्त कवियों तथा रीतिकालीन कवियों

1- हिन्दी सगुण काव्य की सांस्कृतिक भूमिका- पृ0 44
2- आ0 कुलपति मिश्र- व्यक्तित्व और कृतित्व -विष्णुदत्त राकेश,पृ029।
3- श्रृंगार निर्णय- छन्द-2

का विशिष्ट योग दीख पड़ता है। चाहे पक्ष या विपक्ष में सगुण या निर्गुण दोनों शाखा के भक्त कवि दशावतारों की चर्चा किसी न किसी रूप में अवश्य करते हैं।[1]

सगुण भक्ति के उद्भव और विकास के सम्बन्ध में पर्याप्त मतभेद होने पर भी यह प्रमाणिक रूप से कहा जा सकता है कि आस्तिक भाव से ईश्वरोपासना करने वाले आर्यों में भक्ति के मूल बीज विद्यमान थे, और भक्ति के विविध प्रकारों को उन्होंने वैदिक काल में ही किसी न किसी रूप में ग्रहण कर लिया था।

सगुण भक्ति में मुख्य रूप से भगवान विष्णु की परमाराध्य के रूप में आराधना होती थी। विष्णु की भक्ति वैष्णव धर्म से सन्दर्भित प्रतीत होती है। वैष्णव भक्ति का रूप जिस प्रकार वर्णित है, उसका यह रूप ही भक्ति भावित भक्तों के लिए पर्याप्त सी सिद्ध होने लगी थी।

वैष्णव भक्ति का परिष्कृत रूप हमें विष्णु पूजा के रूप में भागवत धर्म के प्रतिपादक पांचरात्र, सात्वत, एवं नारायणी धर्म की शाखाओं में दृष्टिगत होता है। इन सम्प्रदायों में भक्ति मार्ग का स्पष्ट उल्लेख होने से वैष्णव भक्ति का इन्हीं से प्रवर्तित मानना चाहिए।

काल निर्धारण के लिए हम प्रसिद्ध पुरातत्व वेत्ता डॉ0 बुलर का अभिमत स्वीकार कर सकते हैं, जिसमें उन्होंने भागवत, सात्वत और पांच रात्र

1- मध्यकालीन साहित्य में अवतार वाद- डॉ0 कपिल देव पाण्डेय, पृ0 158

सम्प्रदायों को नारायण-उपासना या देवकी पुत्र कृष्ण की उपासना के सम्प्रदाय कहा है और जिनका समय जैन धर्म के प्रादुर्भाव से बहुत पहले ईसा-पूर्व आठवीं शताब्दी ठहराया है।[1]

पालि वाङ्मय के प्रख्यात मनीषी सेनार्ट ने भी यह मत प्रकट किया है, कि विष्णु भक्ति के तत्वों तथा कथानकों बौद्ध साहित्य में ग्रहण किया गया है, भागवत धर्म की स्थापना बुद्ध जन्म के बहुत पूर्व हो चुकी थी।[2]

विष्णु पूजा के सन्दर्भ में अंग्रेज-मनीषी वार्थ का भी मत है कि यह बहुत ही प्राचीन है।[3]

वृक्ष, सर्प, पत्थर आदि की पूजा से पूर्व विष्णु भक्ति प्रचलित हो चुकी थी, एतदर्थ विष्णु पूजा का कोई विदेशी या सीथियन मूल उद्भव स्वीकार करना सर्वथा भ्रम मूलक है। पाँच रात्र, सात्वत, आदि मतों के साथ वैष्णव भक्ति मार्ग वर्णन हमें महाभारत, गीता और पुराण ग्रन्थों में प्राप्त होता है। महाभारत के अनेक प्रकरण वैष्णव धर्म में स्वीकृत भक्ति का स्वरूप प्रस्तुत करते हैं। गीता महाभारत का एक अंश है, किन्तु भक्ति के क्षेत्र में उसका स्वतंत्र स्थान बन गया है। साम्प्रदायिक भक्ति मार्गों के प्रवर्तन से पूर्व गीता औरपुराण साहित्य को ही कृष्ण भक्ति का आधार समझा जाता था।

1- Indian Antiqury: Vol XXII, 1894, Page 248

2- Indian Interpreter, Oct 1909- Jan 1910, Pages 117-178

3- The Religion of India, A barth, Page 290

डॉ0 बरुआ ने गीता को विश्वास तत्व को प्रमुखता की दृष्टि से भक्ति ग्रन्थ स्वीकार किया है।[1]

गीता को कर्मयोग की संज्ञा से अभिहित करने वाले लोक मान्य बाल गंगाधर तिलक भी उसे भक्ति तत्व से परिपूर्ण मानते हैं। गीता रहस्य में उन्होंने स्पष्ट लिखा है,यह नहीं समझना चाहिए कि श्रवणं कीर्तनं विष्णोः आदि नवधा भक्ति गीता को मान्य नहीं है।

वैष्णव भक्तिके स्वरूप को स्पष्ट एवं स्वच्छ रूप से अभिव्यक्ति करने में मुनिप्रवर शाण्डिल्य और देवर्षि नारद के भक्ति सूत्रों का प्रमुख स्थान है। भक्ति मार्ग में शाण्डिल्य ने जब भक्ति सूत्रों का निर्माण किया तब भक्ति का व्याख्यात्मक स्तर पर प्रतिपादन अवश्य हो चुका था। महाभारत,गीता, आदि इसके ज्वलन्त उदाहरण है।

शाण्डिल्य के अनुसार भक्ति शुद्ध रागात्मिका वृत्ति है परा और अपरा नाम के दो भेद भी शाण्डिल्य सूत्रों से मिलते हैं।

इनके अतिरिक्त नारद ने भी अपने भक्ति सूत्र में भक्ति की सर्वोत्कृष्टता बड़े ही उदात्तता के साथ स्थापित किया है। हृदय पक्ष की प्रधानता होते हुए प्रेमाश्रित होने से इस भक्ति को प्रेमा भक्ति की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। दक्षिण भारतीय आलवार भक्तों की भक्ति पद्धति से नारद की भक्ति में बहुत कुछ समानता दृष्टिगत होती हैं। एतदर्थ कुछ मनीषियों ने रामानुजा

1- The Bhakti Doetrine is Shandilya Sutra,B.M.Barua,Page 437

भक्ति का उद्भव दक्षिण में ही स्वीकारने के पक्ष में है।

नारद-

ईश्वर विषयक प्रेमानुराग को ही भक्ति की संज्ञा से अभिहित करते हैं। इस प्रेम स्वरूपा भक्ति देवो की प्राप्ति कर भक्त सिद्ध हो जाता है, अमरता की कोटि में आ जाता है।[1] अन्ततः यह कहा जा सकता है कि भक्ति सूत्रों ने वैष्णवी भक्ति भावना को ऐसा धरातल दिया जिसे शास्त्रीय एवं व्यवहारिक साधना के लिए उपयुक्त समझा जा सकता है।

वैष्णव भक्ति के लिए उक्त ग्रन्थों का आधार मिल जाने पर यदि उसे लोक मानस ने बड़े आह्लाद के साथ ग्रहण किया, तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं। इसके पश्चात् पुराणों ने वैष्णव भक्ति के लिए अवतारी राम और कृष्ण के चरित्र एवं लीलाओं का विस्तार प्रस्तुत कर एक नये आयाम के लिए अवसर प्रदान किया।

पुराणों में भी "भागवत पुराण" ने कृष्णावतार को जिस विस्तार के साथ ग्रहण किया है, वह मध्य युगीन भक्तों के लिए उपजीव्य बन गया, और भागवत के आधार पर कृष्ण भक्ति कवियों ने ब्रजभाषा में उपन्यस्त किया।

पुराणों के व्यापक प्रभाव का परिणाम यह हुआ कि प्रस्थानत्रयी के बाद प्रस्थान चतुष्टयी की कल्पना की गयी और भागवत पुराण को उसमें समाविष्ट किया गया।

1- हिन्दी साहित्य का इतिहास- डॉ0 नगेन्द्र पृ0 192

वैष्णव धर्म के प्रवर्तक श्री ब्रह्म, रुद्र, सनकादि सम्प्रदायों के अनुयायी आचार्यों ने भागवत पुराण पर टीका, भाष्य, टिप्पणी आदि लेखन के द्वारा अपनी पुराण निष्ठा का परिचय दिया।

(ई) विविध सम्प्रदाय और सिद्धान्त-

ब्रह्म की सगुण या भगवान रूप में कल्पना हो जाने के बाद उसके द्वारा धारण किये जाने वाले विविध अवतारों की उपासना पद्धति का प्रचलन हुआ। इस क्षेत्र में सबसे पहला कदम रामानुजाचार्य ने रखा। जिस सगुण ब्रह्म की चर्चा की गयी उसे शांकर अवैदिक बताता है। परन्तु रामानुज ने प्रस्थानत्रयी (उपनिषद, ब्रह्मसूत्र और गीता) के आधार पर प्रामाणिक बताकर उसी का आधार लेकर भगवान की सगुण भक्ति की उपासना की नींव डाली इसके बाद अन्य आचार्यों ने भी शांकर अद्वैत को आधार बनाकर अपने भक्ति सिद्धान्तों की स्थापना किया।

भक्ति को विविध रूपों में स्थापित करने वाले आचार्यों का युग ग्यारहवी शताब्दी से सोलहवी शताब्दी तक स्वीकार किया जाता है। श्री रामानुजाचार्य (1017-1127) से यदि आचार्य युग का प्रारम्भ माना जाए तो इसमें निम्बार्काचार्य, विष्णु स्वामी, मध्वाचार्य और बल्लभाचार्य तक का समय आ जाता है।

इन आचार्यों के अतिरिक्त विष्णु (राम और कृष्ण) के सगुणोपासक अन्य आचार्य एवं महात्मा भी इसमें समाविष्ट हो जाते हैं, जिनमें कृष्ण चैतन्य, गोस्वामी तुलसीदास, सूरदास और अष्ट छाप के कवि, गोस्वामी

हित हरिवंश तथा उनके सम्प्रदाय के कवि, स्वामी हरिदास और उनके सम्प्रदाय के कवि आते हैं। भक्ति तत्व के विवेचन के लिए प्रमुख आचार्यों की चर्चा एवं उनके सिद्धान्तों का प्रतिपादन संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है-

उपर्युक्त आचार्यों ने अपने सिद्धान्तों का प्रतिपादन संस्कृत भाषा के माध्यम से प्रस्तुत किया है, इनके द्वारा स्वरचित ग्रन्थ भी प्राप्त होते है, किन्तु उनसे भी अधिक महत्व इनके भाष्यों, टीकाओं और वृत्तियों पर आधारित है।

वस्तुतः इनके भाष्यों या टीकाओं के माध्यम से गूढ़ तथ्यों का ज्ञान प्राप्त होता है। शंकराचार्य ने भी प्रस्थानत्रयी पर भाष्य लिखकर अपने अद्वैतवाद का प्रतिपादन किया था अतः परवर्ती आचार्यों को भी इस पथ का अनुगमन करना आवश्यक प्रतीत हुआ।

श्री रामानुजाचार्य- विशिष्टाद्वैतवाद (1017-1137)-

आचार्य रामानुज ने अवतारी राम को अपनी विष्णु भक्ति का उपास्य देव स्वीकार कर विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त की स्थापना की। उनके मतानुसार पुरुषोत्तम ब्रह्म सगुण और सविशेष हैं। भक्तों पर अनुग्रह करने के लिए वे पाँच रूप धारण करते हैं। इन्ही में अर्चावतार राम की गणना होती है। भक्ति ही मुक्ति का साधन है। आचार्य रामानुज ने शंकराचार्य की भाँति अखण्ड ब्रह्माण्ड में केवल एक शक्ति "ब्रह्म" को न मानकर उसे दो प्रकार का माना- 1- कारण ब्रह्म - यह सूक्ष्म चित और अचित से विशिष्ट ब्रह्म है।

2-कार्य ब्रह्म-

जीवों सहित समस्त जगत या स्थूल चित् और अचित से विशिष्ट ब्रह्म। [1] इन दोनों की एकता ही विशिष्टाद्वैत है, अर्थात् इन में अद्वैत भावना तो है, परन्तु विशिष्ट रूप में। शंकर का ब्रह्म कार्य और कारण दोनों ही है, परन्तु रामानुज ने कार्य "ब्रह्म" और कारण "ब्रह्म" दोनों को अलग सत्ता बताते हुए भी उनके अद्वैत भाव की स्थापना की । यह उनके अद्वैत की विशिष्टता है।

शंकर अद्वैत केवल "ब्रह्म" को ही नित्य और स्वतन्त्र मानता है पर विशिष्टाद्वैत में तीन नित्य तथा स्वतन्त्र पदार्थ माने गए-

1- परमात्मा जिसे रामानुज ने ईश्वर की संज्ञा दी

2- चित्त अर्थात् जीव

3- अचित् अर्थात प्रकृति

इस चिदचित् विशिष्टता के कारण ही यह सिद्धान्त विशिष्टाद्वैत कहलाया।

विशिष्टाद्वैतवादियों ने सृष्टि को सत्य माना है क्योंकि वह "ब्रह्म" से ही निर्मित होती है। शंकर की भाँति वे सृष्टि को मिथ्या नहीं मानते। सृष्टि के कण कण में विद्यमान उस परमसत्ता जिसके विशिष्टाद्वैत वाद में ईश्वर कहा गया है के सगुण रूप की भक्ति ही इस सिद्धान्त के अनुयायियों की उपलेक्ष्य है। षडगुणों से युक्त सृष्टि के उपादान और निमित्त कारण भूत "ब्रह्म" की भक्ति ही इस सम्प्रदाय के अनुयायियों को अभीष्ट है।

1- हिन्दी साहित्य का प्रवृत्यात्मक इतिहास- डॉ0 शिवमूर्ति शर्मा

विशिष्टाद्वैत वाद के अन्तर्गत आलवार सन्तों के भक्ति मार्ग तथा वेदोपनिषद प्रतिपादित ज्ञानमार्ग और उपासना मार्ग का एकत्र समन्वय उपस्थित किया गया। इसी के साथ-साथ प्रपत्तिमार्ग (शरणागति) की भावना की प्रतिष्ठा भी इस सम्प्रदाय की अपनी विशिष्टता है। इन सबके समन्वित रूप को लेकर आचार्य रामानुज ने सगुण "ब्रह्म" के रूप विष्णु और लक्ष्मी की उपासना प्रारम्भ की। सगुणमार्गी भक्तों द्वारा ईश्वर के विविध रूपों की उपासना का प्रमुख उद्देश्य मुक्ति ही है। सगुण मार्गी भक्तों की यह धारणा थी कि भगवान के शरण में कैंकर्य भाव से प्रस्तुत होकर ही जीवात्मा अपना कल्याण कर सकती है। दार्शनिक स्तर पर यह सिद्धान्त विशिष्टाद्वैत कहलाता है, और इस सम्प्रदाय को श्री सम्प्रदाय कहते हैं। इस सम्प्रदाय का प्रभाव रामानन्द स्वामी पर भी देखा जा सकता है।

विशिष्टाद्वैतवाद की स्थापना सर्वप्रथम नाथ मुनि (रघुनाथाचार्य) 824-924 ई0 की थी। परन्तु तब उसकी एक शुद्ध दार्शनिक सिद्धान्त के ही रूप में प्रतिष्ठा थी। इसमें ज्ञान के साथ-साथ भक्ति का भी पुट रामानुजाचार्य ने दिया। रामानन्द ने रामानुज के विशिष्टाद्वैतवाद के दार्शनिक आधारों को मानते हुए भी उपासना के क्षेत्र में विष्णु और लक्ष्मी की उपासना का प्रचार न कर इन्ही सिद्धान्तों के आधार पर "रामोपासना" का प्रचार किया। कबीर और तुलसी रामानंद के ही अनुयायी हुए।

2- द्वैताद्वैत- श्री निम्बार्काचार्य- (11वीं शताब्दी उत्तरार्द्ध)

निम्बार्क सम्प्रदाय में इनको सृष्टि के आदि में उत्पन्न माना जाता है, किन्तु डॉ0 भंडारकर ने इनका समय 1162 ई0 के सम्भवतः माना है।

कुछ मनीषी इस सम्प्रदाय को वैष्णव भक्ति का प्राचीनतम सम्प्रदाय मानते हैं। श्री निम्बार्क का सम्प्रदाय सनकादि सम्प्रदाय के अन्तर्गत आता है। इस सम्प्रदाय का दार्शनिक सिद्धान्त भेदाभेद वाद या द्वैताद्वैतवाद है।[1]

आचार्य रामानुज ने विशिष्टाद्वैत "ब्रह्म" की स्थापना की थी। आचार्य निम्बार्क ने एक रूप तथा दो नाम के सिद्धान्त को प्रतिपादित करते हुए "ब्रह्म" को द्वैत और अद्वैत दोनों माना है। वस्तुतः ये सिद्धान्त कुछ विपरीत प्रतीत होते हैं। वास्तव में जगत में यही सत्य प्रतीति होता है। आचार्य रामानुज ने "ब्रह्म" को सृष्टि का उपादान कारण और सृष्टि को कार्य माना था और दोनों में एक विशिष्ट अंश अंशी भाव बताकर अद्वैतता-प्रतिपादित की थी।[2] रामानुज की तरह ही निम्बार्क ने भी तीन नित्य तत्व माने हैं "ब्रह्म" (ईश्वर) जीव और प्रकृति। परन्तु रामानुज ने जीव और प्रकृति को ईश्वर का ही अंश बताने का प्रयास किया है।

आचार्य निम्बार्क ने इन्हे ईश्वर की शक्ति के रूप में कल्पित किया है। ईश्वर में ही अनन्त वस्तुओं को उत्पन्न करने की शक्ति है। इस शक्ति का अनुभव कर (वह) संसार का रूप धारण करता है।

निम्बार्क का ईश्वर सगुण है। निर्दोष होने के साथ ही वह चराचर, गम्य-अगम्य, सर्वज्ञ एवं अन्तर्यामी है। यही ईश्वर परब्रह्म नारायण भगवान कृष्ण पुरुषोत्तम आदि नाम धारण करता है। निम्बार्क ने अपने उपास्य

1- हिन्दी साहित्य का इतिहास-डॉ नगेन्द्र पृ0 194
2- हिन्दी साहित्य का प्रवृत्यात्मक इतिहास- डॉ0 शिवमूर्ति पृ0 151

देव की कल्पना कृष्ण रूप में की। सहस्त्र सखियों से घिरी हुई राधा और परम बल्लभ कृष्ण ही निम्बार्क के परमाराध्य है। यह लीला ही अखिल दृष्टि का रहस्य है। वस्तुतः निम्बार्क सम्प्रदाय ब्रज का सुप्रसिद्ध कृष्ण भक्ति सम्प्रदाय है। पुरातनता की दृष्टि में इसका विशेष महत्व है। कतिपय मनीषियों के अनुसार तो यह प्राचीनतम सम्प्रदाय है। इसके दर्शन सम्बन्धी गहन विचारों का अवलोकन करके कतिपय मनीषियों ने निम्बार्काचार्य को भक्ति सम्प्रदायों का सर्वाधिक मननशील आचार्य माना है। कुछ मनीषी नवीनतम अनुसंधान के आधार पर इसका उद्भवकाल 12वीं शताब्दी का अन्त या 13वीं शताब्दी का आरम्भ मानने के पक्ष में हैं।

इस मत के सर्वप्रथम उपदेष्टा भगवान हंस माने जाते हैं कहा जाता है कि सनकादिकों के योग सम्बन्धी प्रश्नों के समाधानार्थ भगवान हंस के रूप में अवतरित हुए। उनकी शिष्य परम्परा के अन्तर्गत क्रमशः सनकादिक देवर्षि नारद तथा निम्बार्क आते हैं। इस परम्परा के आधार पर उक्त सम्प्रदाय, हंस सनकादि देवर्षि तथा निम्बार्क आदि नामों से विभूषित हैं। इसका सर्वाधिक प्रचलित नाम निम्बार्क सम्प्रदाय है।

आचार्य निम्बार्क का प्रारम्भिक नाम नियमानन्द था, किन्तु एक चमत्कारी घटना के कारण इनको निम्बार्क नाम से पुकारने लगे। किंवदन्ती है कि एक बार इनके यहाँ कोई दंडी साधु अतिथि रूप में आये। जब वे इनके आश्रम पहुँचे, सन्ध्या की बेला थी, किन्तु भोजन तैयार होने में कुछ विलम्ब था वे दोनों महात्मा वार्तालाप में लीन हो गये और इसी बीच सूर्यास्त हो गया।

दण्डी साधु सूर्यास्त से पूर्व ही भोजन कर लेते थे,अत: विचित्र स्थिति उत्पन्न हो गई। कहा जाता है कि श्री नियमानन्द ने अपने योग बल से नीम के एक वृक्ष पर संकेत करसूर्य के दर्शन करवाकर दंडी साधु को भोजन कराया। उन्होंने भोजन तो कर लिया किन्तु श्री नियमानन्द का प्रभाव उनसे छिपा न रहा। तभी से नीम{निम्ब} पर सूर्य {अर्क} के दर्शन करवाने के कारण उनका नाम निम्बादित्य तथा निम्बार्क पड़ गया।[1]

निम्बार्क सम्प्रदाय में "ब्रह्म" चिदानंद स्वरूप माना गया है, उसमें चिदतत्व भी है,और आनन्द तत्व भी। जीव और जगत "ब्रह्म" के अंश हैं, "ब्रह्म" उनका अंशी तथा नियन्ता है।

जीव-

जीव ब्रह्म का एक अत्यन्त लघु अंश है,अत: वह अणु का द्रष्टा है। "ब्रह्म" सर्वज्ञ अथवा पूर्णज्ञ है,जीव अल्पज्ञ है, तथा अल्पशक्ति मान है, "ब्रह्म" और जीव दोनों ही अधिकारी हैं।

मोक्ष अथवा मुक्ति-

निम्बार्क सम्प्रदाय में मुक्ति का अभिप्राय जीव और "ब्रह्म" का एकत्व नहीं माना गया है। मुक्ति के उपरान्त भी जीव का "ब्रह्म" से विलग अस्तित्व बना रहता है। वह जीव रहते हुए भी दृश्यमान जगत के "ब्रह्म" तत्व को देखने में समर्थ हो जाता है,तथा स्वातंत्रिक आनन्दांश का भोक्ता बन जाता है।

1- द्रष्टव्य,प्रियादास कृत भक्तमाल की रसबोधिनी टीका,छप्पय-28

जगत-

जगत अचित है तथा तीन प्रकार का है-

1- प्राकृत जगत,अर्थात् लौकिक दृश्यमान जगत।

2- अप्राकृत जगत्,जो कि परमात्मा का निवास स्थल है।

3- काल जगत- यह स्वरूप जगत का नियामक है।

उपास्यतत्व परमात्मा है-

भगवान हंस ने परमात्मा को ही भक्ति का रूप माना है। मध्ययुगीन प्रभाव से शनैःशनैः राधाकृष्ण की माधुर्य भक्ति ने इस सम्प्रदाय में प्रवेश किया। दशश्लोकी में उल्लिखित है कि उपास्य देव परमात्मा ही कृष्ण हैं।[1] वामागस्थिता श्री राधा है,समग्र सखियों की आकांक्षाओं को पूर्ण करने वाली भी वही हैं।[2] कृष्ण के चरण कमलों के स्मरण के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार से भक्ति संभव नहीं है।[3]

निम्बार्क सम्प्रदाय की मान्यता है किराधाकृष्ण अभिन्न हैं। दोनों की विद्यमानता अन्योन्याश्रित है। राधाकृष्ण को अंकन नित्यकुंज विहारी युगल के रूप में प्रस्तुत किया गयाहै।

निम्बार्क सम्प्रदाय में भक्ति के निर्गुण और सगुण दोनों ही रूप प्रचलित हैं। अधिकांश वर्गों में राधा कृष्ण की भक्ति को विशिष्ट रूप से

1- स्वभाव तो पास्त समस्त दोष मशेष कल्याण गुणैक राशिम।
व्यूहांगिन ब्रह्म परं वरेण्यम् ध्यायेम कृष्णं कमलेक्षणं हरिम् ।।-दशश्लोकी 4

2- अंगे तु वामे वृष भानुजां मुदा,विराजमाना मनुरूप सौभगाम।
सखी सहस्त्रैः परिसेवितां सदा स्मरेम् देवी सकलेष्ट का मदाम।।
- दशश्लोकी-

3- नान्याःगति: कृष्णपदार विन्दोन सं दृश्यते ब्रह्म शिवादिवंदितात।
भक्तेच्छयोपान्त सुचिन्त्य विग्रहाद चिन्त्यराक्तेर विचिन्त्य साशयात।।
-दशश्लोकी-8

मान्यता है। सत्संग का भक्ति का मूलभूत आधार माना गया है। भक्ति के अतिरिक्त अन्य सभी कार्य तृणवत महत्व हीन हैं। अपने समस्त भार को भगवान पर छोड़ देना सर्वोत्तम है। प्रस्तुत सम्प्रदाय युगलोपासना पर आधारित है। डॉ० गोस्वामी ने निम्बार्क सम्प्रदाय में माधुर्य भक्ति का स्वरूप परवर्ती माना है।[1] निम्बार्क स्वामी की उपासना पद्धति मध्व की उपासना पद्धति के समतुल्य प्रतीत होती है। बल्देव उपाध्याय ने इनकी चर्चा करते हुए लिखा है, कि निम्बार्क के उपनयन संस्कार के समय देवर्षिनारद ने उपस्थित होकर इन्हें गोपाल मन्त्र की दीक्षा दी और श्री भूलीला सहित श्री कृष्णोपासना का उपदेश दिया। श्री पुरुषोत्तम रचित अविरादि पद्धति में श्री लीला और भूमि के रूप में श्री कृष्ण की प्रतिष्ठा हुई।[2]

अतः निम्बार्क सम्प्रदाय में राधाभाव की प्राप्ति वृन्दावन भाव की प्रतिष्ठा होने के साथ हुई।

द्वैतवाद-मध्वाचार्य- 1199 ई०-

मध्वाचार्य शंकराचार्य के अद्वैतवाद का विशुद्ध रूप से खण्डन है, ऐसा प्रतीत होता है। मध्व ने शंकर स्थापित अद्वैत के सिद्धान्तों का युक्तियुक्त ढंग से खण्डन उपस्थित किया है। शंकर की यह स्थापना कि "ब्रह्म" सत्य है और सभी वस्तुएं उसका आभासमात्र हैं, आचार्य मध्व को स्वीकार्य नहीं है, वे न तो

1- कृष्ण भक्ति काव्य में सखी भाव- शरण बिहारी गोस्वामी, पृ० 84
2- हिन्दी काव्य में भक्ति का स्वरूप- डॉ० नित्यानन्द शर्मा पृ० 178

संसार को मिथ्या मानते हैं और न जीव को "ब्रह्म" का एक मात्र आभास ही। इनका दार्शनिक सिद्धान्त द्वैतवाद है। इनके मतानुसार भगवान विष्णु आठ गुणों से उपेत और सर्वोच्च तत्व है। जगत सत्य है, ईश्वर और जीव का भेद जीव का जीव से भेद जड़ का जीव से भेद वास्तविक है। समस्त जीव हरि के अनुचर हैं। जीव स्वभावतः अल्पशक्ति और अल्पज्ञान सम्पन्न है। अल्पज्ञ जीव सर्वज्ञ विष्णु के अधीन रहकर ही कार्य करता है। जीवों में तारतम्य रहता है। अपने वास्तविक सुख की अनुभूति ही मुक्ति है। मुक्ति का सर्वश्रेष्ठ साधन अमला भक्ति है। वेद का समस्त तात्पर्य विष्णु ही है। मध्वाचार्य का सम्प्रदाय "ब्रह्म" सम्प्रदाय के नाम से प्रख्यात है।

शुद्धाद्वैत- विष्णु स्वामी वल्लभाचार्य- 1479 ई-

इसके मूल संस्थापक विष्णु स्वामी बताये जाते हैं। दार्शनिक दृष्टि से इस सम्प्रदाय का सिद्धान्त शुद्धाद्वैत कहलाता है। "ब्रह्म" माया से सर्वथा अलिप्त अर्थात शुद्ध है -जिस प्रकार स्वर्ण अनेक रूपों में परिवर्तित होने पर भी शुद्ध स्वर्ण रहता है, इसी प्रकार "ब्रह्म" शुद्ध ही है। "ब्रह्म" अपनी सन्धिनी शक्ति द्वारा सत का संवित शक्ति द्वारा चित का और ह्लादनी शक्ति द्वारा आनन्द का आविर्भाव करता है। जीव सत्य और नित्य है। उसकी उत्पत्ति नहीं होती है। जीव अणु है। वह तीन प्रकार का है- शुद्ध जीव, संसारी जीव और मुक्त जीव। जड़ जगत न तो उत्पन्न हो और न नष्ट, वरन इसका आविर्भाव और तिरोभाव-मात्र होता है। भगवत प्राप्ति

का साधन भक्ति है। भगवान के पोषण {अनुग्रह} को ही भक्ति का संबल मानना चाहिए, इसीलिए इनके मत को पुष्टि मार्ग का विधान किया जाता है।

भक्ति का विवेचन करते हुए वल्लभाचार्य ने मर्यादा भक्ति और पुष्टि भक्ति का विधान किया। साधन सापेक्ष भक्ति को मर्यादा भक्ति के अन्तर्गत रखते हुए निम्न स्थान दिया गया और भगवान के अनुग्रह मात्र पर निर्भर भक्ति को साधन निरपेक्ष पुष्टि भक्ति कहकर श्रेष्ठ समझा गया। इस पुष्टि भक्ति को मानने वाले भक्त "पुष्टिमार्गी" कहकर मानते हैं। शुद्धाद्वैत दर्शन के अनुसार भगवान को जब रमण करने की इच्छा होती है, तब वह अपने आनन्द आदि गुणों के अंशों को तिरोहित कर स्वयं जीव रूप ग्रहण करता है। "वल्लभाचार्य ने जगत और संसार में भी भेद निरूपण किया है अपने सिद्धान्तों के प्रतिपादन के लिए आचार्य ने अणुभाष्य, सुबोधिनी टीका, तत्वदीप निबन्ध शृंगार रस मण्डन, विद्वन मण्डल प्रभृति अमर ग्रन्थों का प्रणयन किया।[1] डा0 विजयेन्द्र स्नातक के अनुसार भक्ति का वह धारा साधना परक सिद्धान्त शून्य थी अर्थात आचार्यत्व का दायित्व ग्रहण करने के पश्चात् उनका सबसे पहला कार्य स्वमतानुकूल सैद्धान्तिक दर्शन पक्ष की स्थापना था, उन्होंने यह भी माना कि शुद्धाद्वैत सिद्धान्त{ श्री वल्लभ की मौलिक सूझ थी वह किसी प्रकार के प्रभाव की प्रतिक्रिया नहीं थी।[2]

1- हिन्दी साहित्य का इतिहास- डॉ0 नगेन्द्र पृ0 201

2- राधा वल्लभ सम्प्रदाय सिद्धान्त और साहित्य -डॉ0 विजयेन्द्र स्नातक पृ0 59

डॉ0 भंडारकर ने कहा है कि विष्णु स्वामी मत का मूल सिद्धान्त शुद्धाद्वैत था, उसी को श्री बल्लभ ने प्रश्रय प्रदान किया।[1] श्री प्रभु दयाल मीतल भी डॉ0 भंडारकर से सहमत है तथा उन्होंने सिद्ध किया कि परम्परागत शुद्धाद्वैत सिद्धान्त का व्यापक प्रचार श्री बल्लभ के अविर्भावोपरान्त हुआ तथापि उक्त भक्ति धारा में उसकी विद्यमानता पहले से थी । श्री बल्लभ के शास्त्रार्थ विजयी होने के उपरान्त विष्णु स्वामी सम्प्रदाय की प्रतिष्ठा पूर्णरूप से भंग हो गयी थी। अतः समस्त दार्शनिक विचार धारा का प्रसार श्री बल्लभ के नाम सम्बद्ध हो गया।[2]

रामानन्द सं0 1450 से 1525 वि तक-

रामानन्द स्वामी जी की जन्मतिथि और जन्म स्थान अभी तक विवादास्पद है। अंग्रेज लेखक फर्कुहर ने इनका समय 1400 से 1470 तक स्थिर किया है। आचार्य राम चन्द्र शुक्ल जी ने अपने इतिहास में पन्द्रहवीं शती के द्वितीय चरण 1450 से सोलहवी शती के बीच {1525} इनका समय माना है।

स्वामी रामानन्द संस्कृत के मनीषी थे। वैष्णव मताब्द भास्कर और श्री रामार्चन पद्धति इनके सुप्रसिद्ध ग्रन्थ हैं। रामानन्दी सम्प्रदाय को रामानुज सम्प्रदाय से पृथक् सिद्ध करने के लिए "ब्रह्म सूत्र" और "गीता" पर इनके नाम से भाष्यों का प्रचार किया है, किन्तु उनकी प्रमाणिकता अद्यावधि

1- Vallabha's Vadantic theory is the same as that of an earliar author of the name of Vishnu Swamin-
Colledted workds of Sir R.G. Bhandarkar, Volume IV, P. 109

2- अष्ट छाप परिचय पृ0 50-51

असंदिग्ध बनी हुई है। इनका दार्शनिक सिद्धान्त रामानुज सम्प्रदाय के अनुकूल ही है। रामानन्द जी की भक्ति पद्धति का प्रभाव राम भक्ति परम्परा पर प्रत्यक्ष लक्षित होता है। गोस्वामी तुलसीदास भी इनकी विचारधारा से परिचित ही नहीं पूर्णतः प्रभावित भी थे।

रामानन्दी वैष्णवों की एक शाखा योग-साधना में विश्वास रखने के कारण,अपना वैशिष्ट्य बनाये रखने के लिए सगुणोपासना से कुछ हटकर तपसी शाखा के नाम से योगपरक सिद्धियों का प्रचार करती हैं। कील्हदास इसी शाखा के साधक हैं। रामानन्द के हिन्दी में रचित कुछ पद सुप्रसिद्ध हैं। इन पदों के विषय में प्रामाणिक रूप से कुछ कहना कठिन है,केवल परम्परागत प्रसिद्धि के कारण ही इन्हें उनके द्वारा रचित मानाना उचित है- हनुमान स्तुति का पद इन्हीं द्वारा रचित है-

आरति कीजै हनुमान लला की।
दुष्ट दलन रघुनाथ कला की।।
जाके बल भरते महिकापैं।
रोग शोक जाके निकट न भापै।।
अंजनि पुत्र महा बल दायक।
साधु संत पर सदा सहायक।।
शाद्ध परे कवि सुमिरो तोहीं
होउ दयाल देहु जस मोहीं।।

गोस्वामी तुलसीदास- 1532ई॰

राम का स्वरूप ज्ञानातीत अगाध और अप्रमेय है, ऐसा ही रूप "ब्रह्म" का श्रुतियों में मिलता है, किन्तु तुलसी के राम इस से कुछ भिन्न कहकर होते हैं उनके "ब्रह्म" का निगम पुरान नेति-नेति कहकर कीर्तिमान करते हैं, वह व्यापक है, अचिन्त्य है, निर्गुण हैं किन्तु अन्त में उन्हें भक्त हित अवतार ग्रहण करना पड़ता है[1] यद्यपि तुलसी ने बार-बार कहा है-

राम ब्रह्म परमारथ रूपा। अविगत अलख अनादि अनूपा।।[2]

तदनुसार तुलसी ने भी राम की अनिर्वचनीयता अर्थात अचिन्त्य "ब्रह्म" की स्थिति को स्वीकार किया है। राम के स्वरूप को उन्होंने रूप, दृष्टि, बुद्धि आदि से परे, अविगत, अकथ, अपार तथा नेतिनेति कहा है।[3] तुलसी के राम के दो रूप हैं- सगुण और निर्गुण- सगुन अगुन दुइ ब्रह्म स्वरूपा- और तुलसी ने इन दोनों रूपों को स्वीकार किया है।

स्थल-

स्थल पर तुलसी ने दोनों रूपों को निर्गुण, निराकार, निर्विशेष, अनिर्वचनीय अनादि अखण्ड अप्रेमय अनंत आदि सम्बोधन दिये हैं। राम नित्य

1- मानस, बाल काण्ड, पृ० 76 द्वितीय खण्ड
2- राम चरित मानस, 2/93
3- वही , 2/126
महिमा निगम नेति कहि कहई। जोति हुँकाल एक रस रहई।।
राम चरित मानस 1 /34 1/4
महिमा निगम नेति कहि गाई - 7/124/1 राम चरित मानस

शाश्वत हैं। अतएवं उनके रूप अथवा अस्तित्व का विनाश नहीं होता, वह प्रकाशक है, उनकी चिन्मय शक्ति का परिचायक है, तुलसी ने मानस में कहा है-

1- राम ब्रह्म चिन्मय अविनाशी।
सर्व रहित सर्व उर पुर वासी।।[1]
सब कर परम प्रकाशक जोई।
राम अनादि अवध पति सोई।।
जगत प्रकाश्य प्रकाशक रामू।
मायाधीस ज्ञान गुन धामू ।।[2]

तुलसी के ब्रह्म सम्बन्धी दृष्टिकोण को समझने के लिए हमें उनके दार्शनिक सिद्धान्तों पर भी दृष्टिपात करना पड़ता है। उनके दार्शनिक सिद्धान्तों पर तुलसी के विविध वाद पर इसका प्रभाव बताया जाता है, किन्तु जैसाकि मानस की रूसी भूमिका में लिखा गया है कि तुलसी के दर्शन का अध्ययन अभी शैशवावस्था में है। वर्तमान समय में उनके दर्शन के मौलिक प्रश्नों को निर्णीत नहीं किया जा सकता, कुछ सीमा तक सत्य ही प्रतीत होता है क्योंकि सत्ता का विविध प्रदर्शन तुलसी को द्वैतवाद की ओर नहीं ले जा सकता। इस प्रकार सत एवं असत् की समस्या में तुलसी अद्वैत का अनुसरणकरते दिखायी देते हैं-

गिरा अर्थ जल बीचि, सम, कहि अतभिन्न न भिन्न।
बन्दहुँ सीताराम पद, जिन्हहि परम प्रिय खिन्न।।[3]

1-
2- राम चरित मानस 1/20, 1/1/7
3- राम चरित मानस -बालकाण्ड-पृ। 28- दोहासं0 18

तुलसी की "ब्रह्म" सम्बन्धी मान्यताओं की जड़ें, अत्यन्त प्राचीन अतीत में हैं। इन विचारों का स्थिर रूप ऋग्वेद तक में देखने को मिलता है। तुलसी ने अपने दार्शनिक चिन्तन में साम्प्रदायिक दृष्टि कहीं भी नहीं अपनायी है। उनका दर्शन एक भक्त का आत्मचिन्तन अधिक है, वस्तु परक विश्लेषणात्मक दर्शन कम।

तुलसी का "ब्रह्म" स्वरूप का विश्लेषण एक सा नहीं मिलता, कठिनायी यही है कि कहीं वह व्यक्त है कहीं अव्यक्त और दोनों स्थितियों में उसके महत्त्व को समान रूप से स्वीकार किया है।

तुलसी का दृष्टिकोण निर्गुण रूप अर्थात् अचिन्त्य, अगोचर, अप्रेमय अतर्क्य, अकाम, अनीह, अभेद आदि रूपों को भी तुलसी ने स्वीकार किया है।[1] उसके साथ ही उनका ब्रह्म अवतार भी ग्रहण करता है। यह कैसे संभव है क्योंकि जो "ब्रह्म" अर्थात् वृहत है सारा ब्रह्माण्ड ही जिसका स्वरूप है, वह लघु कैसे हो सकता है जो व्यापक है, वह एक देशीय नहीं हो सकता जो विरज है, वह गुण युक्त कैसे हो सकता है।[2] किन्तु राम का इस प्रकार का नकारात्मक निरूपण उनकी अनिवर्चनीयता का प्रमापक है, इसलिए ब्रह्म प्रतिपादक श्रुति की भाँति तुलसीदास भी-

मन समेत जेहि जान न बानी।

तरकि न सकहिंसकल अनुमानी ।।

1- "ब्रह्म" जो व्यापक विरज, अज अकल अनीह अभेद।
सो कि देह धरि होइ नर जाहिन जानत वेद।। -मा0पि02-71

2- मानस वा02, पृ0 475 मा0पि0वा02 पृ0 518

ऐसे राम का निरूपण करते समय नेति-नेति जैसे अर्थ गौरवशाली शब्द का बार-बार व्यवहार करते हैं।[1] जिसको वेद नेति -नेति कहकर निरूपण करते हैं जो स्वयं आनन्दरूप,उपाधि और उपमा रहित है,जिसके अंश से अनेक शिव,ब्रह्मा उत्पन्न होते हैं, ऐसे प्रभु सेवक के वश में हैं। बस यही पहुँचकर तुलसी की समस्त साधना सगुण परक हो जाती है,और उनका अचिन्त्य ब्रह्म भी भगत हित अवतार ग्रहण कर दिव्यरूप से अभिव्यंजित हो जाता है-

बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना। कर बिनु कर्म करइ विधि नाना।

*　　　*　　　*　　　*

सोइ दसरथ सुत भगति हित कोसलपति भगवान ।।[2]

अर्थात् जो सब प्रकार से अलौकिक है,जिसकी महिमा का वर्णन नहीं किया जा सकता वही अचिन्त्य अगाध स्वरूप ब्रह्म भक्तों के हितार्थ दसरथ सुत के रूप में अवतरित होते हैं। तुलसी के आराध्य का वास्तविक स्वरूप यही है। मानस के उत्तरकाण्ड में ब्रह्म के रूप में तुलसी ने अनेकानेक स्थलों पर संकेत किया है,किन्तु सार रूप में राम के आदर्शों को ग्रहण किया है किन्तु प्रत्येक ऐसे स्थलों पर ~~उनका~~ जहाँ वह अव्यक्त मूल मनादि तरु त्वच चरि निगमागम धने के रूप में स्वीकार्य होता है,वहीं अन्त में तुलसी यह कहने से नही चूकते-

ज्ञान गिरा गोतीत अज मायुए मुनभेपार।

सोइ सच्चिदानन्द,घन कर नर चरित उदार।।

1- तुलसी दर्शन मीमांसा- डॉ0 उदय भानु सिंह पृ0 51-52

2- मा0 वि0वा0भा0 2 ,पृ 0 494

वह साथ अचिन्त्यहैं किन्तु नर चरित करता है। अपने भक्तों के आग्रह पर। उनको विलक्षणता आदि निरंजन रूप में अभिहित होती है।

व्यापक ब्रह्म निरंजन, निर्गुन विगत विनोद।
सो अज प्रेम भगति वश, कौशल्या को गोद ।।[1]

स्वयं परमात्मा ब्रह्म, आदि अज, अगुन, गुनाकर मोहि कहकर अपनी अनिवर्चनीयता स्वीकार करते हैं।

अतएवं तुलसी को ब्रह्मसत्ता या चेष्टा इन सब रूपों से रहित है। अनुभव से प्राप्त होने या जानने योग्य है, अखण्ड उपमा रहित है, मन और इन्द्रियों से परे हैं, निर्मल और विनाश रहित, विकास रहित आनन्दराशि है।

वेद कहते है, तु वहीं है, और तुझमें भेद नहीं है,
जैसे जल और लहर एक ही है, उनमें कुछ भेद नहीं है।[2]

किन्तु तुलसी की साधक अपने आराध्य को समकक्षता नहीं स्वीकारता। भक्ति कीसबसे बड़ी विशेषता है, भक्त और भगवान में अन्तर। आराध्य के प्रति आराधना, सतत चिन्तन ही भक्ति का अभीष्ट है, अस्तु भक्ति और भगवान ही भक्त को अभीष्ट है। भक्त को किसी आश्रय अथवा

1- मा0वि0बा0भा- 3 पृ0 75
2- मा0वि0 भाग - 3 पृ0 544

आलम्बन की आवश्यकता होती है,यह आलम्बन सगुण रूप में भक्त के समक्ष आता है। अतएव तुलसी की ब्रह्म विषयक मान्यतायें बहुत अधिक अद्वैत के पक्ष में नहीं है,क्योंकि भक्त और भगवान के बीच का सम्बन्ध आधारहीन हो ही नहीं सकता। उन्होंने ब्रह्म के अचिन्त्य स्वरूप को स्वीकार किया है,किन्तु वह अन्त में सगुणत्व की भाव भूमि पर उतर आते हैं, यह तुलसीदास का निजी दृष्टिकोण है।

सूरदास-1478 ई॰

अवतार वाद की विवेचना सूर के काव्य में किसप्रकार हुई, इस पर विचार करने से पूर्व हम यह देखने का प्रयास करेंगे कि ईश्वर का स्वरूप किन विविध रूपों में व्यक्त हुआ। भक्ति के स्वरूप में हृदय पक्ष की प्रधानता होती है,उसे सगुण ब्रह्म के रूप में स्वीकार किया जाता है। ईश्वर की उपासना का यही कारण है।

डॉ॰ हरवंश लाल शर्मा ने लिखा है" नारायण की नवीन प्रतिष्ठा सगुण ब्रह्म के रूप में प्रतिष्ठित हुआ और नारायण एवं विष्णु की एकता की स्थापना हो गयी। आगे चलकर भगवान का जो स्वरूप नारायण के रूप में प्रतिष्ठित हुआ,वह दूसरे काव्य में कृष्ण के रूप में प्रकट हुआ। नारायण और वासुदेव पुन विरोध में प्रकट हुए।[1]

1- सूर और उनका साहित्य- डॉ॰ हरवंश लाल शर्मा पृ० 116

भक्त कवि सूरदास कदापि दार्शनिक नहीं थे। वे मात्र भक्त कवि ही थे। भक्त की सबसे बड़ी अभिलाषा भगवत्प्राप्ति है। अतएव सूर के लिए निर्गुण "ब्रह्म" का प्रश्न करना असंगत है। सूर के काव्य में सगुणरूप कृष्ण भगवान का अनुग्रह भक्त वत्सलता के रूप में न प्रकट होकर प्रेम के रूप में उत्पन्न हुआ। यही कारण है कि यहाँ भगवत्कृपा के उल्लेख गौण से प्रतीत होते है, सूर ने कृष्ण के लौकिकसम्बन्धों को लौकिक रूप ही दिया है।[1]

कतिपय समीक्षकों ने इस सिद्धान्त को प्रतिपादित करने की चेष्टा की किन्तु वह मात्र बलपूर्वक स्थापित प्रतीत होता है।

वल्लभाचार्य के सम्प्रदाय में ईश्वर के दोनों रूपों सगुण निर्गुण को मान्यता प्राप्त है। सूर इसी सम्प्रदाय में दीक्षित थे तथा इनके सिद्धान्त भी बहुधा इस सम्प्रदाय से मिलते है, किन्तु जहाँ निर्गुण सगुण में प्रधानता देने का प्रश्न उठता है,वहाँ इस सम्प्रदाय के भक्त कृष्ण के सगुण रूप को ही अधिक मान्यता देते हैं। परिणामतः भक्ति,ज्ञान,कर्म और योग में इन्होंने भक्ति को ही अपनाया है,सम्प्रदाय के कवियों का निश्चित मत था,सगुण भक्ति व्यावहारिक है तथा सरल भी। सूर के सगुण रूप प्रभु की अनुपम छवि की उपमा संसार में कहीं-कहीं भक्त केवल उस कुटिल अलक वाले मुख के ऊपरी सौन्दर्य पर ही इतना अधिक भाव मुग्ध है,यह बात संसार की साधना भ्रमपूर्ण है।[2]

1- डॉ० हरवंश लाल शर्मा- सूर और उनका साहित्य,पृ० 174
2- मध्यकालीन धर्म साधना- डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी,पृ० 234-35

निर्गुण सगुण में अन्तर-

निर्गुण भक्ति एवं सगुण भक्ति के आलम्बन के स्वरूप में मुख्य अन्तर हो यह है कि निर्गुण भक्ति का आलम्बन निराकार और अगोचर है, तथा सगुण भक्ति का आलम्बन साकार एवं गोचर है किन्तु ,यह साकार एवं गोचर आलम्बन अपने आकार के अतिरिक्त अन्य गुणों में निराकार से समानता रखता है। कबीर एवं तुलसी से उदाहरण देकर यह बात स्पष्ट की जारही है। भक्ति की इन दोनों पद्धतियों में और भी कई समान गुण दिखायी देते हैं। निर्गुण भक्ति में गुरु को वही महत्व प्राप्त है,जो साधना के अन्यरूपों ज्ञानमार्ग,सगुण भक्ति,या रहस्यवाद,में प्राप्त है- सद्गुरु की कृपा के बिना साधक साधना के क्षेत्र में आगे नहीं बढ़ सकता। निर्गुण भक्ति में नाम स्मरण को भी विशेष महत्व दिया जाता है। "सगुण भक्ति के साधक महाकवि तुलसी दास नाम की महिमा का वर्णन करते हुए उसे राम से भी अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं,और कबीर की दृष्टि में पण्डित वही है,जिसने प्रेम के ढाई आखर पढ़ लिया।" निर्गुण भक्ति में तो जप की अवस्था से ऊपर "अजपाजप" की अवस्था स्वीकार की ,जिसमें सिद्ध पुरुष अनहत शब्द के समान बिना किसी प्रयास के निरन्तर नाम स्मरण करते रहते हैं। निर्गुण भक्ति में दैन्य की भावना को भी वही महत्व प्राप्त है,जो सगुण भक्ति में दिखायी देता है। कबीर और तुलसी (विनय-पत्रिका) के दो पदों का अनुशीलन इस दृष्टि से पर्याप्त होगा।

1- हिन्दी साहित्य का इतिहास- डॉ0 नगेन्द्र पृ0 137

1· माधौं मै ऐसा अपराधी, तेरी भगति होति नहिं साधी।

× × × ×

कहै कबीर धीर मति राखहु, सासति करौ हमारी।।[1]

2· लाभ कहा मानुष तन पाए।

× × × ×

सुर दुर्लभ तनु धरि न भजे हरि मद अभिमान गँवाए

गई न निज- पर बुद्धि शुद्ध है, रहे न राम लय लाये।

तुलसि दास यह अवसर बीते का पुनि के पछिताये।।[2]

तटस्थभाव से उक्त पदों का अनुशीलन करने पर दोनों की अनुभूतियों में मूल भूत साम्य दिखाई पड़ता है। उक्त पदों में यदि यह विदित न हो कि प्रथम पद कबीर का है, द्वितीय पद तुलसी का तो यह कहना, असंभव-सा लगता है, कि एक में निर्गुण भक्ति और दूसरे में सगुण भक्ति। इस साम्य का कारण कवियों का दैन्य है। दोनों पदों में कवि कहते हैं कि इन्द्रियाँ मन और विषय वासनाएँ प्राणियों को भक्ति की ओर अग्रसर नहीं होने देती, उनके समक्ष सांसारिक बन्धनों का ऐसा व्यवधान डाल देती है, कि वह उसी में लिप्त हो जाता है। जब कभी भक्त अपने में उठे विषय वासनाओं के झंझावात में स्वतः अपने को अक्षम पाता है, तब वह अपने आराध्य को आर्त्त स्वर से पुकार उठता है, चाहे निर्गुण भक्त हो या सगुण भक्त, दोनों को ही अपने मन से युद्ध करना पड़ता है, विषय वासनाओं द्वारा पराजित

1- क0ग्र0 पद संख्या-36 पृ0 22

2- विनय पत्रिका- गोस्वामी तुलसीदास- पदसंख्या 201 पृ0 324, गीताप्रेस गोरखपुर।

भक्त की पुकार दैन्य पदों में प्रस्फुटित होती है,अत: दैन्य की भावना निर्गुण भक्ति की अनिवार्य विशेषता है। भक्तिकाल में निर्गुण को आराध्य मानकर चलने वाली एक और साधना पद्धति भी दिखायी देती है- वह है, सूफियों की प्रेम पद्धति। इसकी अपनी विशिष्ट परम्परा रही है,एतदर्थ इसे स्वीकार करने में कोई दुविधा नहीं होती।[1]

ज्ञानमार्गी निर्गुण भक्ति की अपेक्षा रहस्यवाद की अभिव्यक्ति अधिक स्थूल है,क्योंकि वह स्थूल गोचर विशिष्ट प्रतीकों के माध्यम से स्पष्ट होती है। इस परिप्रेक्ष्य में वास्तविक भक्ति निर्गुण भक्ति और सगुण भक्ति मध्यवर्ती है। कबीर आदि सन्त कवियों तथा जायसी आदि सूफी कवियों को निर्गुण भक्ति को स्वीकारने में दो कारण माने जाते हैं प्रथम कारण- इष्टदेव को अगोचर ,अक्षर और सर्वशक्ति मान सत्ता के रूप में स्वीकृति और द्वितीय इष्टदेव के किसी गोचर विशिष्ट और अक्षररूप को स्वीकृति का अभाव।

निर्गुण भक्ति और रहस्यवादी प्रेम पद्धति की सीमा भी वहीं है जो ज्ञानमार्ग की है। निर्गुण को ही आराध्य के रूप में स्वीकार करने का परिणाम यह हुआ कि साधना के दोनों पद्धतियों की स्वीकृति सीमित क्षेत्र के भीतर ही रही। जब सगुण भक्ति या प्रेम को आलंबन के रूप में ग्रहण किया जा सकता है,तो पुन: निर्गुण की ओर आकर्षित होने की सीमा अनुबन्धित हो जाती है। जिस प्रकार अधिकांश भक्त ज्ञान मार्ग पर नहीं चल सकते,उसी प्रकार

1- हिन्दी साहित्य का इतिहास- डॉ0 नगेन्द्र पृ0 136

वे निर्गुण भक्ति को नहीं स्वीकार कर सके लेकिन यह पूर्णतया सत्य है, कि जिस प्रकार ज्ञान मार्ग साधना का एक अनिवार्य रूप है, तदनुरूप निर्गुण भक्ति भी साधक की साधना का दिव्य रूप है। इसके विपरीत सगुणोपासक भक्तों की यह धारणा रही है जो निर्गुण और सगुण का मूलभूत अन्तर है। सगुण भक्त कवि सूरदास ने निराकार रूप को मान्यता देते हुए भी सगुण रूप को किस पद्धति से स्वीकार है-

रूप रेख गुन जाति जुगुति बिन निरालंब मन चकृत धावै।
सब विधि अगम विचारहि तातै सूर सगुन लीला पद गावै।।[1]

सगुण भक्त कवियों को भगवान का निराकर रूप अपनी ओर आकृष्ट न कर सका। भक्तों ने विष्णु के विविध अवतारों की सगुण रूप उपासना की। सगुण भक्त कवियों ने जिस भगवान की कल्पना की, वह निर्गुण और सगुण दोनों हैं। इसके विपरीत निर्गुण की ऐसी मान्यता नहीं है।

सगुण भक्तों ने जिस सगुण रूपधारी ~~जिस~~ ईश्वर की कल्पना की वह धर्म और भक्तों की रक्षा के लिए अवतार भी धारण करता है। वह लीला विहारी है, अलौकिक होते हुए भी उसे लौकिक लीला प्रिय है। इसीलिए समय-समय पर वह विभिन्न अवतार धारण करता है। भगवान के लीलाधारी रूप से ही हिन्दी वाङ्मय का भक्ति -साहित्य मण्डित है। भगवान द्वारा की गई विविध लौकिक लीलाएँ भक्तों की दृष्टि में अलौकिक ही है। अन्ततः

1- सूरसागर- पद संख्या- 64 पृ0 48
डॉ0 सिद्धनाथ पाण्डेय द्वारा सम्पादित

यह कहा जा सकता है कि सारा का सारा भक्ति साहित्य सगुण ब्रह्म की अवतारी लीलाओं से ओत प्रोत है। हिन्दी सगुण भक्त कवियों ने भक्ति को ही अपना परम लक्ष्य माना। महाकवि भक्त प्रवर गोस्वामी तुलसीदास ने अखिल सृष्टि को सियाराम मय जानकर उसके प्रति अपनी भक्ति भावना को मुक्त कंठ से अभिव्यक्ति की। इसी प्रकार यह सिद्ध किया जा सकता है कि भक्ति काल में विकसित सगुण भक्ति भावना परम्परानुमोदित ईश्वर विषयक मान्यताओं का समाहार करने वाली है। सगुण निर्गुण भक्ति का प्रतिपाद्य साम्य नही है।।

ग- भक्ति आन्दोलन और उसकी पृष्ठ भूमि-

ईसा की दसवीं शताब्दी मे भारत के सिन्ध प्रदेश पर मुसलमानों के आक्रमण का प्रारम्भ हुआ। उस समय भारत की राजनैतिक एकता विच्छिन्नावस्था में थी, इसके पश्चात् मध्य युग की परिस्थितियाँ भी बड़ी अस्त-व्यस्त थीं, भारत में एक छत्र राज्य का अभाव था। भारत पर मुसलमानों के आक्रमण के पूर्व इस्लामी झंडा पश्चिम में स्पेन से लेकर पूर्व में सिन्ध तक फहरा रहा था। महमूद गजनवी ने भारत के वैभव को सम्पूर्ण रूप से मिटा दिया था, साथ में उसने आश्चर्य के वे कारनामे किए कि हिन्दू धूल के कण मात्र रह गए।[1]

मुसलमानी आक्रमणों की आँधी के समक्ष सारा भारत झुकता गया, परन्तु हिन्दुओं ने अपनी पराजय को इतनी शीघ्रता से स्वीकार नहीं

1- संत साहित्य - डॉ0 सुदर्शन ,पृ0 5।

किया, उन्होंने पग-पग पर मुसलमानों आक्रमणों का विरोध किया, परन्तु आपसी फूट शत्रु के प्रति क्षमाशीलता की भावना और कई अंध विश्वासों ने मिलकर उनकी अवनति की। समय की निष्ठुरता के समक्ष उन्हें सिर झुकाना पड़ा।

कला और संस्कृति के निशान मिटते चले गए एक बात है कि भारत छोटे-छोटे राज्यों में विभक्त था, फिर भी कला कौशल को कोई विशेष हानि नहीं पहुँची थी। कुछ पाश्चात्य विद्वानों में बेवर, कीथ, ग्रियर्सन, तथा विल्सन आदि ने हिन्दी भक्ति आन्दोलन के सन्दर्भ में कहा है कि आन्दोलन पर ईसाई मत का प्रभाव भी पड़ रहा था, उनका मन्तव्य है कि हिन्दुओं ने ईसामसीह के धर्म से तन्मयता और भक्ति की इस भावना को प्राप्त किया था। इन मनीषियों ने अपने तर्क की पुष्टि में अनेकों उदाहरण भी दिये। बेवर महोदय ने महाभारत में उल्लिखित "श्वेतद्वीप" को गौराड़ जातियों का निवास स्थान यूरोप बताया। भारत में जयन्ती मनाने की प्राचीन प्रथा को भी ईसाइयत की ही देन प्रतिपादित किया है।

ग्रियर्सन महोदय ने "क्राइस्ट" और "कृष्ण" को एक ही माना। इन सभी मनीषियों ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि कुछ ईसाई दूसरी व तीसरी शताब्दी में मद्रास में आकर बस चुके थे, इनका मन्तव्य है-कि दक्षिण के आचार्यों ने इन्हीं ईसाइयों से प्रेरणा लेकर अपनी प्रतिष्ठा स्थापित करने की दृष्टि से प्रचार किया होगा। उक्त मनीषियों का मत हास्यमात्र

के लिए प्रयुक्त हो सकता है, इसके तथ्य प्रामाणिक नहीं सिद्ध होते।[1]

दक्षिण से प्रारम्भ होकर भक्ति आन्दोलन शास्त्रीय नहीं था, रामानुज ने उसे शास्त्रीय रूप दिया। आलवारों का भक्ति आन्दोलन केवल भावात्मक था। उनमें दैवी विभूतियों के प्रति आस्था एवं आत्म समर्पण की भावना अधिक तीव्र थी। इसी को आधार लेकर दसवीं शताब्दी में यमुनाचार्य ने उसे शास्त्रीय रूप दिया। रामानुज ने उसे और भी शाखाओं प्रशाखाओं में विभाजित करते हुए एक अत्यन्त बोधगम्य रूप प्रदान किया। यह दक्षिण की भक्ति धारा जब उत्तर की ओर अग्रसर हुई, तो उसे दो सम्प्रदायों में विभाजित होकर भक्ति का व्यावहारिक रूप अधिक भाव प्रवणता के साथ प्राप्त हुआ, ये दो महानुभाव और वारकरी सम्प्रदाय थे, महानुभाव सम्प्रदाय केवल साम्प्रदायिक होकर सीमित रह गया, किन्तु वारकरी सम्प्रदाय अधिक व्यापक हुआ, ज्ञानेश्वर एवं नामदेव ने इसको अधिक प्रतिपादित किया। इन आचार्यों ने भारत की यात्रा की थी, तथा इन्होंने भक्ति के उन्नयन शतशः प्रयास किया।

कालान्तर में बल्लभाचार्य एवं रामानन्द ने इसे भक्ति का प्रमुख अंग समझ कर जन जीवन में प्रसारित किया। भक्ति मार्गी साधकों भक्ति के प्रमुख तत्वों को स्वीकार किया, उनका विश्वास था कि नाम उसी को दिया जा सकता है, जिसका कोई रूप हो, निराकार का नाम गुण क्या हो

1- हिन्दी साहित्य का प्रवृत्यात्मक इतिहास- डॉ0 शिव मूर्ति शर्मा पृ0133

सकता है,अस्तु उनका आराध्य सगुण बनकर अपने भक्तों के समक्ष प्रकट होता है। भक्ति आन्दोलन के बाद भक्ति का वृहदस्प सामने आया।

उपासना पद्धति और सगुण मार्गी साधक-

सगुण मार्गी साधकों की समस्त साधना जीवन के प्रति क्रूर एवं नृशंस अत्याचारों की स्वाभाविक प्रतिक्रिया स्वीकार की जा सकती है। भक्तिकालीन परिस्थितियों पर इससे पूर्व प्रकाश डाला जा चुका है,जिसमें इस बात संकेत है कि सगुण और निर्गुण दो धाराओं के विभाजन का क्याकारण था। सगुणमार्गी साधकों की काव्य प्रेरणा का आधार या स्रोत भी यही परिस्थितियाँ मानी जा सकती हैं। भक्तों ने "ब्रह्म" के अवतारी स्प को प्रश्रय दिया है। सगुण साधकों का सम्पूर्ण साहित्य लोक मंगल की भावना से ओत प्रोत है।

इस उपासना पद्धति में वैदिक तथा अवैदिक दोनों तत्वों का समावेश हुआ। यही कारण है कि इसमें सरलता और सर्वग्राह्यता के गुण के साथ ही उच्च कोटि का चिन्तन और अभ्यास भी प्राप्त होता है।

भक्ति साहित्य में कहीं-कहीं हनुमानादि की साधना का संकेत प्राप्त होता है,कलिकाल में भक्ति से ही मुक्ति मिल सकती है,ज्ञान, योग,तप, की उतनी आवश्यकता नहीं,यद्यपि राम भक्तों ने योग को स्वीकार किया है किन्तु भक्ति साधना से उसको महत्व नहीं प्रदान किया।[1] भक्ति

1- संत वैष्णवकाव्य पर तान्त्रिक प्रभाव- डॉ0 विश्वम्भर नाथ उपाध्याय पृ0 349

के व्यावहारिक रूप का सम्यक विवेचन भक्त कवियों द्वारा प्राप्त होता है। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि यथार्थ में यद्यपि भक्ति मार्ग में सर्वत्र सम्प्रदायगत विभेद मिलता है, किन्तु मूल मान्यता अथवा आस्था में कोई विशेष अन्तर नहीं मिलता, उन सबका समान रूप से एक ही उद्देश्य था- राम आनन्द और प्रेम की मूर्ति, श्री कृष्ण और राधा की लीला का गायन।[1] तुलसी के काव्य में भी ज्ञान और योग का वह तिरस्कृत रूप नहीं मिलता[2] जैसा कि कृष्ण काव्य में प्राप्त होता है। परन्तु यह निश्चित है, कि ज्ञान और योग के ऊपर सगुण "ब्रह्म" की भक्ति को प्रतिष्ठित करने में तुलसी ने अथक प्रयास किया, कोई भी तत्व हो यदि उसका सगुण ब्रह्म की भक्ति से कोई विरोध नहीं तो तुलसी ने उसी को स्वीकार कर लिया। तुलसी ने अपने भक्ति के सन्दर्भ में सगुण भक्ति को विशेष महत्व दिया, वरन् उसे भक्ति प्राप्तिमेंसहायक स्वीकार कर लिया।

सूफी साधना और उसका स्वरूप-

यह स्वीकार किया जा सकता है कि सूफियों की साधना उनके ब्रह्म का स्वरूप उसे प्राप्ति के विविध उपकरण सन्तों और भक्त कवियों से नितान्त भिन्न नहीं थे। सूफी भक्तों को निर्गुण मार्ग का अनुयायी स्वीकार किया जा सकता है, क्योंकि इनका ब्रह्म भी नूर, शक्ति अथवा तेज के रूप में

1- हिन्दी साहित्य- भाग-2 पृ0 358
2- उत्तरकाण्ड मानस- दोहा - 85

प्रतिभासित होता है। सूफी मत साधना का प्रेम में अतीव महत्त्व पूर्ण स्थान है। उनकी साधना प्रेम की साधना है। उनको साधन मार्ग प्रेम पथ है,उनका प्राप्त प्रेम पथ है उनका एक भरोसो एक बल एक आस विश्वास प्रेम ही है।[1] प्रेम ही उनका अमोघ शस्त्र है,प्रेम ही उनका परम साधन है।[2] सूफी साधक खुदा से उनके प्रति दृढ़ आस्था की ही कामना करती है। एकउदाहरण -
एक साधिका की प्रार्थना थी "हे खुदा यदि मैं नरक के भय से तेरी उपासना करती हूँ तो तू मुझे नरक में जला और यदि मैं तेरी उपासना स्वर्ग प्राप्ति की आशा से करती हूँ,तो तू मुझे स्वर्ग से वंचित ही रख,किन्तु यदि मैं तेरी उपासना तेरे लिए ही करती हूँ तो तू अपना चिर सौन्दर्य मुझसे दूर न रख।[3]

जामी ने अपनी मसनवी में ईश्वर को शाश्वत सौन्दर्य के नाम से अभिहित किया है,वह सौन्दर्य सांसारिक समस्त सौन्दर्य में श्रेष्ठ है।[4] अन्य सूफी साधकों ने भी प्रेम के स्वरूप को आधार मानते हुए अपना मत अभिव्यक्ति किया है,सूफी साधक "अल शिबली" का कथन है "प्रेम हृदय में अग्नि के समान है जो परमात्मा की इच्छा के अतिरिक्त अन्य सभी वस्तुओं को जला कर भस्मी भूत कर देता है।[5]

अतः कहा जा सकता है कि "सूफियों के रति में माधुर्य के साथ-साथ मादक भाव भी रहता है,परन्तु उसमें निहित वासनाओं को पवित्र

1- तुलसीदास कृत -दोहावली- गीता प्रेस गोरखपुर- पृ0 96
2- पद्मावत का काव्य सौन्दर्य - डॉ0 शिव सहायक पाठक,पृ0 220
3-Margaret Smith, studies in early Mysticism in the near and middle east(1931).
4-Yes thought the shrink from earthly lover call eternal beuty is the Queen of all Ibid P.29
5- सूफी मत साधना और साहित्य-डॉ0 राम पूजन तिवारी,पृ0 310

वासना ही कहना उचित है,क्योंकि ईश्वरीय रति का आनन्द नित्य एवं शान्ति प्रद होता है।[1]

निष्कर्ष-

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि भक्ति के आचार्यों और मनीषियों में उपासना और उसकी साधना के जिन तत्वों का आकलन किया, ~~और~~ वे शास्त्र से उद्भूत होकर एक विशिष्ट परिवेश का निर्माण करते हैं। उक्त अध्याय में सम्प्रदाय बद्ध साहित्य में भक्ति के स्वरूप पर संक्षिप्त प्रकाश डाला गया ,जो मूलत: भक्तिक के संदर्भ में महत्वपूर्ण एवं आवश्यक है। विभिन्न सम्प्रदायों का काल निर्देश करते हुए तत्सम्बन्धित विभिन्न आचार्यों के सिद्धान्तों का विवेचन भी प्रस्तुत करने को यथा संभव प्रयास किया है। विभिन्न भक्ति के आचार्यों द्वारा वर्णित भक्ति के रूप का विश्लेषण किया गया है। सम्प्रदाय बद्ध साहित्य में भक्ति का स्वरूप विशद रूप में वर्णित है जिसके अध्ययनोपरान्त कुछ प्रमुख तथ्यों को ही प्रस्तुत किया जा सका है। भक्ति भावना के अन्तर्गत भक्ति की दास्य भावना का स्वरूप है उसका चरमोत्कर्ष जब हम प्रतीक रूप में उपस्थित रखते हैं,तो एक विशेष चित्र बनता है,उस व्यक्तित्व में हनुमान का रूप है। इसलिए भक्ति भावना किस प्रकार व्यक्ति का रूप ग्रहण करती है,यह उसके चरम कोटि के भक्त के प्रतीकात्मक रूप में स्वीकार किया गया है। इसके अतिरिक्त भक्ति के सगुण एवं निर्गुण रूपों का भी प्रतिपादित करने का प्रयास किया गया है तथा दोनों के मूलभूतअन्तर को भी स्पष्ट करने का

1- मलिक मुहम्मद जायसी और उनका काव्य- डॉ0 शिव सहायक पाठक
पृ0 418

प्रयास किया गया है। भक्ति सम्प्रदायों के काल निर्देशानुसार उनके विभिन्न रूपों का भी वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

"भक्ति" के विवेचन के पश्चात अग्रिम अध्याय में हनुमान भक्ति के विभिन्न रूपों पर विभिन्न दृष्टियों से भारतीय काव्य साहित्य तथा नाट्य साहित्य में वर्णित तथ्यों को प्रस्तुत किया जायेगा तथा उनके रूपों का क्रमिक विश्लेषण प्रस्तुत किया जायेगा।

तृतीय अध्याय

हनुमान के भक्ति परक चरित्र के उल्लेख में भारतीय साहित्य के काव्य नाटक साहित्य में सन्दर्भ-

"हनुमान" शब्द की व्युत्पत्ति एवं उनके व्यक्तित्व का निरूपण-

(क) काव्य-साहित्य-

(अ) वेद-

"हनुमान" भक्ति का रूप आर्यों के सबसे पुरातन ग्रन्थ ऋग्वेद में प्राप्त होता है। यद्यपि ऋग्वेद में "हनुमान" शब्द की व्याख्या कहीं पर भी प्राप्त नहीं होती, फिर भी "हनुमान" भक्ति विषयक सन्दर्भ कथाओं को प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है। भगवत्प्राप्ति के साधन भूत ज्ञानादि कर्मों में सर्वत्र ईश्वर विषयक भक्ति की श्रेष्ठता स्पष्टतः प्रतिपादित है। ऋग्वेदके प्रथम मन्त्र में ही हनुमच्चरित्र एवं भक्ति का संकेत प्राप्त होता है। हनुमान भक्ति का संकेत सम्पूर्ण सूक्त में प्रतिभासित हो रहा है। एतदर्थ उन वैदिक सूक्तों एवं तदन्तर्गत मन्त्रों को साभिप्राय प्रस्तुत किया जा रहा है-

"अग्निं दूतं वृणीमहे होतारं विश्व वेद सम्।"
" अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम।।[1]

1- ऋग्वेद- 1/12/1

"अग्नि" अग्रणी, वानराग्रणी, वायुपुत्र को या दैत्य दानव दहन (दैत्यवन के दाहक अग्नि) को "अस्य यज्ञस्य हतम्" ध्यान की परिपाकावस्था में भक्तों के समक्ष उपस्थित अथवा सर्व जन हिताय की महती अभिव्यक्ति से पुण्यमयी धरित्री अवध में अवतीर्ण "यज्ञो वै विष्णुः"[1] उक्त श्रुति के अनुसार "यज्ञस्यं विष्णु के अर्थात् दशरथ सुत, सच्चिदानंद स्वरूप श्री राम के दूत को "सुक्रतुम" शोभन कर्माणम् जिस वीराग्रणी महानुभाव ने प्रभु श्री राम की प्रसन्नता हेतु अनेकानेक अलौकिक कार्य, समुद्रोल्लंघन, पराम्बा भगवती सीता का अन्वेषण, रणांगन में मूर्च्छित लक्ष्मण के पुनः जीवन के लिए संजीवनी औषधि के उद्गम स्थल द्रोणाद्रि समानयन, आदि लोकोत्तर अपूर्वकृत्य भक्त श्री हनुमान को वृणीमहे, भक्त जन आराध्य स्वरूप स्वीकार करते हैं। कतिपय समीक्षकों का मत है, कि ऋग्वेद में हनुमान का परिचय वृषाकपि के रूप में प्राप्त होता है-

> विहि सोतोर सृक्षत नेन्द्र देवम मंसत।
> यत्रामदद् वृषा कपिरर्यः पुष्टेषु मत्सखा विश्व समादिन्द्र उत्तर: ।।[2]

उपर्युक्त कथन इन्द्र तथा इन्द्राणी के आपसी वार्ता के सन्दर्भ में "वृषाकपि" के रूप में वर्णित है। उक्त कथन के ही सन्दर्भ में कपि को हरित मृग कहा गया है।[3]

1- शतपथ ब्राह्मण- 1/1/2

2- ऋ०10,86,1-5,8,12,13,18,19,20,21,22 वैदिक इण्डेक्स खण्ड-1 पृ0 136 /राल्फ टी०एच० ग्रिफिथ दी आयन्स आफ ऋग्वेद, द्वितीय संस्करण ई०जे० लाजरसण्ड कम्पनी, बनारस, 1897 खण्ड-2, पृ0507-509 वृषाकपि का अर्थ श्री चक्रपाणि नाथ ने भावोपहारमें टीका किया है। प्राश्चात्य धारणाओं भिमन्यु पंचक भौतिकम अनर्थ मध्यपदेभ्यः पृच्छामि वृषाकपे। वृष- स्वशक्ति रस वर्ष प्रवण तथा अकंप अचलस्य कूटस्थ किया-रजनीकान्त विरचित विवरण।

3- वा०रा०-1-30/2-20 /2-1

यहाँ इन्द्र से हनुमान का सम्बन्ध पीछे की पौराणिक कथाओं में प्राप्त होता है,लेकिन इस वृषाकपि से हनुमान सम्बन्ध को उचित नहीं कहा जा सकता। इससे यह स्पष्ट होता है कि इस युग में वानरों को पालतू बनाना प्रारम्भ हो चुका था।

तैत्तरोय संहिता में इस सन्दर्भ में कुछ ऐसा ही संकेत प्राप्त होता है।[1] यहाँ "मयु" को जंगल का निवासी कहा है,एतदर्थ यह लंगूर प्रतीत होता है। इमं मा हिंसी द्विपादं पशूनां सहस्त्राक्ष मेध आचीयमान मयु मारण्य मनु ते दिशामि तेन चिन्वान स्तुनु वो निषीदि।[2]

यहाँ पर वर्णित "मयु शब्द वाजसनेयि संहिता में भी अश्वमेध के प्रकरण में मिलता है। इसलिए "मयु" शब्द लंगूर के हेतु प्रयुक्त हुआ प्रतीत होता है,क्योंकि एक दूसरे के स्थान पर इसे मनुष्य के स्थान पर रखा गया है। इस अर्थ में शत पथ में इस शब्द का प्रयोग हुआ। "मर्कट" शब्द भी वाजसनेयि संहिता तथा तत्तरोय संहिता में भी प्राप्त होता है।[3]

इसके अतिरिक्त कई बार अथर्ववेद में कई बार कपि का वर्णन आया है। इनको बालों से युक्त तथा कुत्तों का शत्रु कहा गया है।[4]

इसके अतिरिक्त हनुमान भक्ति विषयक सन्दर्भों में उनके आधार पर छान्दोग्य उपनिषद में "काप्यदास" पद मिलता है,जिससे ऐसा

1- तैत्तरोय संहिता- 4
2- वाजसनेयि- 24-3,8-47,वैदिक इण्डेक्स खण्ड-2 पृ0 139,शतपथ- 7-5,2,22
3- वाजसनेयि- 24-30तत्तरोय,55,11,1
4- अथर्ववेद- 3-9,4,4-37,11-49।

ज्ञात होता है कि इस काल तक पहुँचते-पहुँचते हनुमान भक्ति का प्रचार कपिपूजा के रूप में प्रारम्भ हो चुकी थी। कपिपूजकों (हनुमत-उपासना) का एक पंथ बन गया था।[1]

कतिपय समीक्षकों का यह मन्तव्य है कि ऋग्वेद में हनुमान का परिचयन "हनुमन" शब्द द्वारा निर्दिष्ट होता है, निम्नवत् दृष्टिकोण से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है-

> "अनुस्वधाम क्षरन्नापो अस्यावर्धत मध्य आनाव्यानाम।
> सध्रीचीनेन मनसातमिन्द्र ओजिष्ठेन हन्मना हन्नभि द्यून।।"[2]

भोक्ता जीव के भोग्य अन्न व्रीहि यवा दि नित्यत्ति के निमित्त मेघों द्वारा जल की वृष्टि होती है। मेघों में जल कहाँ से आया इस शंका का समाधान वेदमें दो समुद्र मान कर किया गया है।

ऋग्वेद के दो मन्त्रों (10/8/5-6) में उत्तर एवं अधर में दो समुद्र माने गये हैं। उत्तर, उत्कृष्ट, दिव्य, अपरिस्थित, अधर निकृष्ट, अधोवर्ति, पार्थिव समुद्र। ये दोनों समुद्र परस्पर एक दूसरे की वृद्धि में सहकारी है। मेघ में स्थित जल राशि रूप समुद्र को अन्तरिक्ष स्थित समुद्र की संज्ञा दी गयी है। उससे वृष्टि धारा के द्वारा गिराया गया जल निर्झरों एवं महानदियों का निर्माण करता है।

1- छान्दोग्योपनिषद-1-6-7 इस कप्य यास का पदच्छेद कपि+आस होगा, आस का आलंकारिक अर्थ आसन शेष होता है, कपि को आसन देना कपि पूजक ही कर सकते हैं जब तक उनको विशिष्ट जीव न समझा जाय तो उनको आसन देने का कोई अर्थ नहीं होता है-
वैदिक इण्डेक्स-ख-1, पृ0 139

2- ऋग्वेद-1-33/11

वे निर्झर एवं महानदियों में मिलते हैं,और महानदियाँ अन्ततः समुद्र से मिलकर पार्थिव जलराशि को वृद्धि करती है,इसलिए यह मानना उपयुक्त होगा,कि पार्थिव समुद्र को की तरह दिव्य समुद्र में भी अगाध जल है। यह इतना गम्भीर है कि उसे नौकाओं की हो सहायता से पार किया जा सकता है। "नाव्य" पद का प्रयोग गम्भीरता को सूचित कर रहा । उस अन्तरिक्ष में स्थित गम्भीर जलराशि समुद्र के मध्य वर्तमान श्री हनुमान अभिवृद्ध हुए,उन्होंने अपने आकार को विस्तृत कर लिया अन्ततः कहा जा सकता है कि वह अन्तरिक्ष स्थित गम्भीर जलराशि भी भक्त हनुमान को डुबाने में असमर्थ रही।[1] कतिपय मनीषियों का मत है कि हनुमान का वर्णन काव्य रूप में पंचविंश ब्राह्मण में प्राप्त होता है।[2]

वैदिक इण्डेक्स में इन्हें कपिगोत्र से सम्बन्धित बताया गया है।[3] सम्भवतः है कि ये कपि पूर्वजों के श्रेणी में आते हों।

ऋग्वेद में वर्णित "वृषाकपि" की कथा के सन्दर्भ में मैकडानेल ने लिखा है कि ऋग्वेद का यह सूक्त प्रक्षिप्त ज्ञात होता है। इसमें वृषाकपि के कारण इन्द्र तथा इन्द्राणी के बीच हुए झगड़े का भी विवरण प्राप्त होता है। यहाँ पर वृषाकपि इन्द्र का मित्र ज्ञात होता है। इसने इन्द्राणी की कुछ

1- कल्याण- हनुमानाग- ऋग्वेदमें श्री राम दूत हनुमान लेख- पृ0 38-39 प्रकाशन- गीता प्रेस गोरखपुर।

2- पंचविंश ब्राह्मण- 20,12,5

3- वैदिक इण्डेक्स- खण्ड-1 पृ0 148

वस्तु नष्ट कर दी थी, ऐसा विवरण प्राप्त होता है। इस कार्य पर वृषाकपि को प्रताड़ित किया जाता है, और वह भाग जाता है, परन्तु इन्द्र तथा इन्द्राणी में मेल हो जाने पर वह पुनः वापस आ जाता है।[1]

गेल्डनर तथा वेलंकर के अनुसार यह सूक्त इन्द्र तथा इन्द्राणी और वृषाकपि तथा इसकी स्त्री कपाई के मध्य हुए कथोपकथन के रूप में प्रस्तुत किया गया है।[2]

संभव है कि वृषाकपि का कोई अलग पंथ रहा हो, वेलंकर ने स्पष्ट कहा है कि यहाँ वृषाकपि के किसी स्वतन्त्र पथ की जो इन्द्र के विरुद्ध हो कोई कल्पना ज्ञात नहीं होती है।[3]

परन्तु कतिपय विद्वान इस मत से सहमत नहीं है। यदि इस समस्या पर यों विचार किया जाय कि वृषाकपि को ऋग्वेद में इन्द स्वयं मत्सखा कहते हैं।[4] इन्द्राणी का कथन है-

"ये इमम त्वम् वृषा कपिम् प्रियम इन्द्र अभिरक्षसि।"[5]

इससे यह स्पष्ट होता है कि यदि वृषाकपि का कोई पंथ था, तो इस ऋचा के समय तो वह इन्द्र के विरुद्ध नहीं प्रतीत होता है। यहाँ

1- ए०ए० मेकडानेल- वैदिक माइ थालॉजी पृ0 64
2- के०एफ० गेल्डनर- डेर ऋग्वेद 3 पृ0 273 तथा आगे एच०डी० वेलंकर
3- वेलकर -पृ0 13- पाद टिप्पणी
4- ऋग्वेद- 10,8-6/1
5- उपर्युक्त- 10,86,4-

यह भी ज्ञात होता है कि वृषाकपि को सोमपान का अधिकार प्राप्त था, और लोग इन्द्र के स्थान पर उसे सोम रस प्रदान करने लग गये थे। संभव है उस काल तक जब इस सूत्र की रचना हुई हो, तो वृषाकपि के पंथ को आर्यलोक अपनाने की बात सोच रहे हों। इस बात की भी झलक दृष्टिगत होती है। वस्तुत: "वृष" शब्द, तमिल कनोराज तथा मलयालम के अण शब्द से मिलता है जिसका वास्तविक अर्थ होता है, पुरुष स्त्री नहीं। "अण" शब्द दूसरे शब्दों के साथ मिला देने से वह पुरुष वाची हो जाता है। कुरंग शब्द का अर्थ तमिल में बन्दर होता है, परन्तु दूसरी तीन भाषाओं में कुरंग का अर्थ सम्भवत: मृग होता है। वृषाकपि को उपर्युक्त ऋचाओं में "हरितमृग" भी कहा है। मलयालम में यह शब्द लंगूर के लिए प्रयुक्त होकर प्राय: यह कन्नड़ तथा तेलगू भाषाओं में व्यक्ति के अर्थ में प्रयोग होने लगा। वैसे इसका प्रयोग बहुधा व्यवहार में नहीं होता था। शाब्दिक दृष्टि से तमिल तथा कन्नड़ में इस शब्द का अर्थ खोजना अवश्यंभावी है। तमिल और तेलगू में "मण्ड" ही प्राचीन शब्द कपि के हेतु प्रयुक्त होता है। एतदर्थ वैदिक वृषाकपि शब्द आणिमण्ड शब्द काद्योतक हो सकता है। वैसे ऐसा भी संभव है कि वृष शब्द कपि के साथ जोड़ा गया। जिससे यह शब्द नर बन्दर का द्योतक है। जो सम्भवत: वृष के समान बलवान था।[1] पारजिटर के अनुसार यह शब्द आणमण्ड संस्कृत होने पर "हनुमन्त" हुआ अन्यथा शब्द

1- मोनियर विलयम्स- संस्कृत इंगलिश डिक्शनरी 1923 संस्करण-पृ0 250

जिसका अर्थ होता है, दृढ़ोवाला प्रख्यात मनोषी पी० शाह का मत है, कि वृषा कपि को हनुमान से जोड़ना ठीक नहीं है क्योंकि संस्कृत शब्द "हनुमन्त" नहीं अपितु हनुमान या हनुमत है दूसरे हनुमान का वृषाकपि नाम पीछे के संस्कृत वाङ्मय में प्राप्य नहीं है। इनका मन्तव्य है, कि विष्णु सहस्रनाम में विष्णु का एक नाम है तथा रुद्र के एकादश नामों में एक है, फिर वृषाकपि सायण के अनुसार इन्द्र के पुत्र है। इसके अतिरिक्त हनुमान वायु के पुत्र के रूप में वर्णित है।[1]

इससे यह ज्ञात होता है कि वास्तव में वृषाकपि एक यक्ष का नाम था जो कि वैदिक साहित्य वेद में या अन्य ग्रन्थों में प्राप्त होता है। सम्भवतः इनको पूजा भारत मे आर्यों के पहले से प्रचलित थी। कतिपय प्रमाणों के आधार पर ऐसा ज्ञात होता है कि इस वृषाकपि रूपी यक्ष को हनुमान के रूप में अन्तर्हित कर दिया गया है। संभव है कि आर्यों को इस देवता का नाम न मालूम हो रहा हो और उनके स्वरूप के आधार पर वृषाकपि मान लिया हो। तत्पश्चात् अनार्यों के सम्पर्क में आने पर आणमण्डी नाम ज्ञात होने पर इस नाम को हनुमन्त या हनुमान के रूप में स्वीकार किया गया हो।[2]

मानस तत्वान्वेषी पं० राम कुमार दास जी रामायणी के अनुसार वेद में मूलतः हनुमान के भक्ति के रूप को कोई स्पष्ट चर्चा नहीं

1- उमाकान्त पी० शाह- वृषाकपि इन ऋग्वेद जनरल आफ द ओरियन्टल इन्स्टीट्यूट एम०एस० यूनिवर्सिटी का बड़ौदा -बड़ौदाखण्ड-8 सेप्टेम्बर 1958, नं० 1 पृ० 58

2- ऋग्वेद-10/99/2

आती, फिर भी उनके भक्त्यात्मक चरित्र का रूप स्पष्ट हो जाता है। उनकी मान्यता है कि विगत चार सौ वर्षों पूर्व प्रख्यात मनीषी श्री नीलकण्ठ सूरि ने वेदों के कुछ मन्त्रों को संकलित करके "मन्त्र रामायण" के रूप में उस पर भाष्य किया। जिसके आधार पर हनुमान के भक्ति के रूपों का भी वर्णन प्रस्तुत किया गया है। उनके अनुसार एक तो लंका चरित्र, जिसका विस्तृत विवरण वेदों व बृहंण रूप वाल्मीकीय रामायण के सुन्दर काण्ड में प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त द्वितीय अयोध्या में देवों एवं ऋषियों महर्षियों के समक्ष भगवान श्री राघवेन्द्रनेउनकी प्रशंसा की। जो कि वेद वर्णित हनुमान के भक्ति चरित्र का मूलाधार है-

" देवास आयन् परशूँ रबि भ्रन्,
वना वृश्चन्तो अभिविड्भिरायन्।
निसुद्रवं दधतो वक्षणासु,
यत्रा कृपीट मनु तद्दहन्ति।।[1]

प्रसंग आता है कि भक्ति स्वरूपा जनक नन्दिनी का सन्देश श्री राम जी के लिए लेकर हनुमान जी रावण के परम प्रिय अशोक वन को उजाड़ने लगे, और रखवालों के रोकने पर उन्हे मारपीट कर इतना व्याकुल कर दिया, कि जो बचे भी उनकी बुद्धि भी भ्रष्ट हो गयी, जिससे उन्होंने समझा कि देवता लोग आकर उपद्रव कर रहे हैं, अतः बचे हुए घायल लंकेश रावण से कहने लगे, कि बहुत से देवता अशोक बन में आ गये हैं, और वे हम

1- ऋग्वेद मण्डल -10, सूक्त 28, मन्त्र-8

लोगों के परशु आदि छीनकर धारण कर लिये हैं। इनके अतिरिक्त संतानादि परिवार सहित अशोक वन को उखाड़ते हुए इधर-उधर दौड़ रहे हैं। वे अत्यन्त तीव्रगामी अग्नि जैसे घरों को पीछे से अलग पड़े हुए काष्ठादि को जला डालते हैं। इस प्रकार समस्त देवतागण एक-एक पेड़ कुन्ज आदि को नष्ट कर देते हैं- ऐसा सुनकर रावण विचार करता है-

"शशः क्षुरं प्रत्यन्चं जगाराद्रि,
लोगेन व्यभेद आरात।
बृहन्तं चिद्दृहते रन्ध यानि,
वयद्वत्सो वृषभं शूशुवानः।।[1]

इस कथन से ऐसा स्पष्ट होता है कि रावण अपने कृत्यों को समझता है कि वह जो कर रहा है, वह अमानवीय है।

सुपर्ण इत्था नखमा सिषायावरुद्धः परिपदं न सिंहः।
निरुद्धश्चिन्महिषस्तर्ष्यावान् गोधा तस्मा अयथं कर्षदेतत।।[2]

वस्तुतः रावण को उपर्युक्त ज्ञानोदय हुआ था, तथापि तमः प्रधान होने के कारण क्षण भर में ही उसका वह ज्ञान तिरोहित हो जाता है। इसके पश्चात ब्रह्मपाश में बांधते हैं। वास्तव में राक्षसगण हनुमान जी को रोकने में असमर्थ थे, फिर भी पाश में बांधकर खींचने लगे।

1- ऋग्वेद- 10/28/9
2- ऋग्वेद- 10/28/10

लंकादहन के समय जगज्जननी भक्ति स्वरूपा माँ जानकी भक्त हनुमान के रक्षार्थ अग्नि से प्रार्थना करती है-

"परित्वाग्ने पुरं वयं विप्रं सहस्य धीमहि।
धृषद्वर्णं दिवेदिव हन्तारं भंगुरावताम्।।[1]

हे परम तेजस्विन। आप शत्रु आपकी व्यापकता सर्वविदित है। आप शत्रु नगर के चारो ओर अपना तेज स्थापित कीजिए जो अन्य समस्त पदार्थों को धर्षित करता है परन्तु स्वयं अधर्षित रहता है।

ऐसे अग्ने नित्य प्रति माया करने वाले राक्षसों का नाश करने वाले आपसे यह मेरी प्रार्थना है कि आप भक्त हनुमान की रक्षा करें।

भक्ति स्वरूपा, शक्ति स्वरूपा पराम्बा

भगवती सीता कृत अग्नि प्रार्थनात्मक ऋग्वेद में वर्णित वैदिक मन्त्रों का भावानुवाद वेदों प्रवर्हण भूत श्रीमद वाल्मीकीय रामायण में द्रष्टव्य है-

"यदिस्ति पतिशुश्रूषा यदिस्ति चरितं तपः।
यदि वास्त्येक पत्नीत्वं शीतोभव हनूमतः।।

x x x x

यदि मां तारये दार्यः सुग्रीवः सत्यसंगरः।।
अस्माद् दुःखाम्बु, संरोधाच्छीतो भव हनुमतः[2]

1- उपर्युक्त-10/87/22
2- वाल्मीकि रामायण -5/53/27-3

इसके अतिरिक्त वेदों में भी हनुमान के उदात्त चरित्र पर प्रकाश डाला गया है।

"हरि मृजन्त्य यरुषों न युज्यते सं,
धेनुभिः कलशे सोमो अज्यते।
उदाच मीरयति हिन्वते मती,
पुरुष्टुतस्यकतिचित परिप्रियः ।।[1]

श्री सीता जी का पता लगाकर भक्त हनुमान वानरों सहित जब श्री राघवेन्द्र के पास वापस पहुंचते हैं,तब रोष रहित परम शान्त स्वरूप श्री राम जी भक्ताधिराज श्री हनुमान के उपर हाथ फेरने लगे। जिस प्रकार गाय से उत्पन्न पंचगव्य युक्त कलश में सोमवल्ली का रस अच्छी तरह से मिलाया जाता है,उसी तरह आंजनेय ने श्री राम के प्रेम पूरित हृदय कलश को श्री सीता जी की प्रेम सन्देश रूपी वाणी से पूर्ण कर दिया और कहने लगे कि जिनकी बुद्धि सदैव बढ़ी रहती है। उन श्री राम जी को जब विशद एवं श्रेष्ठ शब्दों में बहुत काल तक स्तुति करने वाले ब्रह्मा शिवादि से स्तुति की जाती हुई वाणी भी प्रसन्न करने में समर्थ न होती तब भला मेरी वाणी किस गणना में है। अर्थात् मैं जितनी स्तुति कर सकूँगा,वह सब आपके महिमा के आगे अल्प ही रहेगी। उपर्युक्त वर्णित भाव भक्त हनुमान के निष्काम भावना एवं भक्ति की अनन्यता का परिचायक है।

1- ऋग्वेद- 9/72/1

उपर्युक्त वर्णित तथ्यों के आधार पर वेद में हनुमान के भक्ति को विभिन्न दृष्टियों से मूल्यांकन करने का प्रयास किया गया है। वेद में वर्णित हनुमान भक्ति को प्रस्तुत किया गया।

वस्तुतः हनुमान की भक्ति का रूप विशद है। वैदिक वाङ्मय में पर्याप्त नहीं है, फिर भी कुछ प्रमाणों के आधार पर जो भी रूप उपयुक्त सिद्धहुए, प्रस्तुत किया गया है। तत्पश्चात् महर्षि वाल्मीकि द्वारा विरचित वाल्मीकि रामायण में वर्णित हनुमान भक्ति के मुख्य रूपों को प्रस्तुत किया जा रहा है।

{आ} <u>वाल्मीकि रामायण-</u>

आदि कवि महर्षि वाल्मीकि विरचित वाल्मीकि रामायण में हनुमान भक्ति के विभिन्न रूपों के वर्णन के साथ ही हनुमान के उदात्त चरित्र का भी वर्णन प्राप्त होता है। चरित्र वाल्मीकि द्वारा वर्णित रामकथा में हनुमान का महत्वपूर्ण स्थान है। महर्षि वाल्मीकि ने ही हनुमान की भक्ति तथा स्वतन्त्र महनीय व्यक्तित्व का अत्यन्त मनोवैज्ञानिक, एवं यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है। हनुमान तथा राम का परिचय किष्किन्धाकाण्ड में प्रथम बार होता है। इसके परिचय के बाद उनका सम्बन्ध उत्तरोत्तर दृढ़ होता गया। राम के अनन्य भक्त के रूप में राम के साथ हनुमान ने भी देवत्व प्राप्त कर लिया है। वानर जाति का हनुमान यह एक मेव ऐसा चरित्र है, जो सर्ववन्द्य बन गया है। ऐसे सर्ववन्द्य राम भक्त हनुमान के सम्बन्ध में स्वयं

राम महर्षि अगस्त्य से कहते हैं, जिससे कि हनुमान के भक्ति की महत्ता अधिक विश्वसनीय हो जाती है-

> अतुलं बलमेतद् वै वालिनो रावणस्य च।
> न त्वेताभ्यां हनुमता समतिर्वति मतिर्मम।।
> शौर्यं दाक्ष्यं बलं धैर्यं प्राज्ञता नय साधनम्।
> विक्रमश्च प्रभावश्च हनूमति कृतालया।।
> x x x x
> एतस्य बाहुवीर्येण लंका सीता च लक्ष्मणः।
> प्राप्यमया जयश्चैव राज्यं मित्राणि बान्धवाः।।[1]

अतुलनीय बालि और रावण का बल निस्सन्देह है। परन्तु विद्वानों की यह धारणा है कि इन दोनों का बल भी हनुमान की बराबरी नहीं कर सकता। शौर्य, दक्षता, बल, धैर्य, बुद्धिमत्ता, राजनीतिज्ञता, पराक्रम और प्रभाव, राजनीतिज्ञता इन सभी सद्गुणों ने हनुमान के अन्तःकरण में घर कर रखा है। युद्ध में हनुमान के जो पराक्रम देखे गये हैं। वैसे वीरता पूर्ण कर्म न तो काल के, न इन्द्र के न विष्णु के और न कुबेर के सुने जाते हैं। इसी हनुमान के बाहु वीर्य से लंका, सीता, लक्ष्मण, विजय, राज्य, तथा मित्र बन्धुजन मुझे मिले हैं। वाल्मीकि रामायण में हनुमान का परिचय किष्किन्धा काण्ड में प्राप्त होता है। हनुमान कापरिचय सुग्रीव के सचिव के रूप में प्राप्त होता है। हनुमान बचपन से ही सुग्रीव का मित्र था। सुग्रीव के बुरे दिनों में भी हनुमान उनका

1- वा०रा०उत्तरकाण्डम -35/2/3/8/9

छोड़ते हैं। सुग्रीव के राजा बनने पर हनुमान उसका मंत्री रहता है। इसी प्रकार सुग्रीव हनुमान को विजनावस्था में राम तथा लक्ष्मण सेविजन में उनको भेंट होती है। वानराधीश सुग्रीव ने राम लक्ष्मण को जानने हेतु नियुक्त किया। हनुमान भिक्षु का रूप धारण कर राम लक्ष्मण का परिचय पूछते हैं-

"कपिरूपं परित्यज्य हनुमान्मारुतात्मजः।
भिक्षुरूपं ततो भेजे राठ बुद्धि तयाकपिः।।[1]

राम और लक्ष्मण का परिचय पूछकर तथा अपना परिचय देते हुए सुग्रीव मैत्री की भी बात बता दी। इससे उनकी बुद्धिमत्ता तथा कुशल वक्ता का रूप स्पष्ट दर्शित हो जाता है-

"एवमुक्त्वा तु हनुमनास्तौ वीरौ राम लक्ष्मणौ।
वाक्यज्ञो वाक्य कुशलः पुन र्नोवाच किंचन ।।[2]

राम हनुमान के अद्भुत वक्तृत्व से इतना प्रभावित होते है,उनको आश्चर्य हो जाता है और लक्ष्मण से कहते हैं-

नानृग्वेद विनीतस्य नायजुर्वेद धारिणः।
ना सामवेद विदुषः शक्यमेव विभाषितुम।।
नूनं व्याकरण कृत्स्य मनेन बहुधाश्रुतम् ।
बहुं व्याहर तानेन न किंचिदपि शब्दितम।।[3]

1- वा०रा०- 4/1/13
2- उपर्युक्त - 4/25/3
3- वही - 3/28-29

संस्कार क्रम सम्पन्नामद्‌ भुताम विलम्बिताम।
उच्चारयति कल्याणीं वाचं हृदय हर्षिणाम।।[1]

ऋग्वेद ,यजुर्वेद तथा सामवेद का अवगाहन किये बिना कोई भी इस प्रकार सुन्दर भाषा में वार्तालाप नहीं कर सकता। व्याकरण का उसे अच्छा अधिकारी होना चाहिए। इतने समय के वार्तालाप में इसने एक भी अपशब्द का प्रयोग नहीं किया है। हनुमान की यह वाग्‌निपुणता तथा विद्वता उनके चरित्र की उत्कृष्ट विशेषता है। राम कथा के मूल में हनुमान को बल, बुद्धि और अद्‌भुत कृत्यों के कर्ता तथा राम के अनन्य भक्त होने के कारण महत्वपूर्ण स्थान है" परवर्ती साहित्य में भी उनका महत्व उत्तरोत्तर बढ़ता गया। राम के अनन्य भक्त होने के कारण वे स्वयं जनता की भक्ति के आलम्बन बन गये।[2]

प्रारम्भिक राम सम्बन्धी आख्यान काव्यों में हनुमान को एक वानरगोत्रीय आदिवासी तथा सुग्रीव के बुद्धिमान सचिव के रूप में प्रस्तुत किया गया है। आदि काव्य रामायण में कपि कुंजर तथा वायुपुत्र भी माने जाने लगे। प्रचलित रामायण में वानरत्व विषयक विशेषणों के बाहुल्य से उनके वास्तविक वानरत्व की धारणा बनने लगी।

तत्पश्चात कपियोनि में रूद्रावतार और राम के आदर्श भक्त के रूप में उनकी पूजा होने लगी।[3]

1- वा0रा0-3/32
2- चिन्तामणि भाग-1, आचार्य राम चन्द्र शुक्ल पृ0-34
3- द्रष्टव्य- हिन्दी अनुशीलन,डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा, विशेषांक प्रयाग,पृ0 342

वस्तुत: हनुमान निवृत्त तृष्ण भक्त थे। इनके जीवन में प्रभु को छोड़कर कोई आकांक्षा उत्पन्न नहीं हुई। इनके हृदय कुंज में अनपायनी भक्ति का निवास है। विद्या, बल, वैभव, सर्वगुण, सम्पन्न होने पर भी अकिंचन हैं।

यही कारण है, कि इनके तेज के समक्ष कोई ठहर नहीं पाता, क्योंकि इनका सम्पूर्ण जीवन श्री रामपदारविन्द मकरन्द के उत्कट सौगन्ध से आनन्दोल्लसित है। एतदर्थ रावणादि का तेज इनके तेज से अभिभूत हो जाता है। यहाँ हनुमान जी की यही याचना है-

"स्नेहो मे परमो राजंस्त्वयि तिष्ठतु नित्यदा।
भक्तिश्च नियता वीर भावो नान्यत्र गच्छतु।।"[1]

"ष्ठा" गति निवृत्तौ धातु का विशिष्ट तात्पर्य है। शाश्वत स्थिर रहना "त्वयितिष्ठतु" हनुमान जी कहते हैं, प्रभु मेरी बुद्धि अन्य भावों में कुंठित हो जाय, आप में ही सदैव स्थिर रहे। मनसा वाचा, कर्मणा आपके श्री चरणों में हमारी आस्था पूर्ण हो। इस प्रकार हनुमान जी की अनन्य भक्ति एवं गुण वैभव अवर्णनीय है। वेद भी आपकी वन्दना विमल वाणी से करते हैं-

विदुष बरनत वेद विमल बानी
बंदि होरि विरुदावली निगमागम गाईं।।[2]

हनुमान भक्ति का रूप मूलत: विलक्षण ही है। जब श्री राम से भक्ति स्वरूपा पराम्बा भगवती सीता दूर चली गयी, तब भी भक्ति के परमा-

---

1- वा0रा0 4/16
2- विनय पत्रिका- 9/36

राधक हनुमान की आवश्यकता पड़ती है। हनुमान ही भक्ति के पूर्ण अनुसंधान में सफल हो सके। यद्यपि ज्ञान की चरम परिणति भक्ति ही है,परन्तु कुछ विद्वान भेद मानते हैं। प्राचीन काल से ही भेद भावना चली आ रही है। इस दूरी को भी यदि कोई मिटा सका,तो वह भक्ति के अनन्य आराधक हनुमान ही।

विमोह नगरी लंका में से भक्ति को निकाल लेना यह कार्य हनुमान जी ही पूर्ण कर सकते हैं। विमोह की नगरी लंका में पहुँचने के बाद संसार का प्राणी विमोहित होकर वहीं पर प्राय: आबद्ध हो जाता है,और अपने ध्येय को प्राय: विस्मृत हो जाता है। परन्तु भक्ति के उपासक हनुमान को किसी प्रकार की विस्मृति नहीं होती है। भगवती भक्ति स्वरूपा सीता को पूर्ण रूप से पहचान लेते हैं।[1]

यह हनुमान की सर्वोत्कृष्ट भक्ति का परिचायक है। वस्तुत: श्री हनुमान और भक्तों के परमाधार रक्षक और श्री राम मिलन के अग्रदूत हैं। श्री राम भक्त को श्री हनुमान जी से सहज प्रेम आश्रय और सस्नेह रक्षा प्राप्त होती है। भक्त प्रवर हनुमान जी के वचन में ही नहीं किन्तु उनके वास्तविक जीवन में भी कोई असम्भव तत्व नहीं था।

हनुमान भक्ति के अनेकों उदाहरण वाल्मीकि रामायण में प्राप्त होते हैं। मृतक को जीवन देना श्री हनुमान जी के लिए अति सामान्य बात है। श्री लक्ष्मण के जीवन को तथा उनके द्वारा प्रभु श्री राम को भी सुरक्षा के निमित्त श्री हनुमान ही हैं। स्वयं भगवान श्री राम अगस्त्य जी के समक्ष मुक्त कण्ठ से

1- राम दूत- त्रैमासिक पत्रिका- अप्रैल 1983 "मानस में प्राणतत्व हनुमान" आचार्य हरिदास शास्त्री का लेख- पृ०सं० 30

उनकी प्रशंसा करते हैं-

> "शौर्यं दाक्ष्यं बलं धैर्यं प्राज्ञतानय साधनम्।
> वि क्रमश्च प्रभावश्च हनुमति कृतालयाः।।[1]

शूरवीरता, दक्षता, बल, धैर्य, विद्वता, नीति, ज्ञान, पराक्रम, और प्रभाव इन सभी सद्गुणों ने हनुमान जी के भीतर घर कर रखा है। जिस प्रकार अखिल विश्व के लोगों के लिए सागरः सागरोपमः, सागर अपनी उपमा आप ही है। उसी प्रकार हनुमान भक्ति की उपमा हनुमान स्वयं ही हैं। वाल्मीकि रामायण के अन्तर्गत सुन्दरकाण्ड में हनुमान के रौद्र रूप का वर्णन प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त अशोक वन में सीता को हनुमान से भेंट, वाटिका विध्वंश लंका दहन, मधुवन प्रसंग और काण्ड का उपसंहार। वाल्मीकि रामायण में महेन्द्राचल पर से हनुमान के पलवन और सागरोंल्लघन के दृश्य का अत्यन्त कवित्व पूर्ण चित्त प्रस्तुत किया गया है।

मैनाक, सुरसा, सिंहिका, और लंका देवी से मिलाप मुठभेड़ करते हुए कामरूपधारी हनुमान अणिमा सिद्धि द्वारा लघुकाय होकर लंका में प्रविष्ट होते हैं। वाल्मीकि रामायण में उनका वृषदंशक रूप से प्रवृष्ट होना लिखा है।[2]

इसके अतिरिक्त वाल्मीकि रामायण में हनुमान के लंका भ्रमण[2], अन्तःपुर दर्शन[3], पुष्पक विमान[4] आदि का अर्थ विस्तृत विवरण प्राप्त होता है।

1-वा0रा0- 7/35/3
2- वा0रा0 पृ02,4·8 (गोविन्द राजीय टीका में वृष दंशक का अर्थ बिडाल दिया गया है)
3- वा0रा0 5/4
4- वही, 4, 5, 10, 11 सर्ग
5- वही, 8, 9 सर्ग

हनुमान के उपद्रव की कथा अशोक वाटिका के ध्वंश से आरम्भ होती है। इस उपद्रव में मूल में निहित तथ्य भक्ति अनुसंधान का प्रतीक है।

वाल्मीकि रामायण में हनुमान रावण के पास तक पहुँचने उसकी शक्ति और लंका की सामरिक स्थितियों को परखने और उससे दूत वार्ता का अवसर प्राप्त करने कके लिए अशोक वाटिका ध्वंश को साधन बनाते हैं।[1] वाल्मीकि रामायण में वर्णित हनुमान के लंका प्रवेश के समय से ही सीमाओं के निरीक्षण और रात्रि में नगर भ्रमण आदि कार्यों से उनके कुशल राजनैतिक दूतत्व का बोध होने लगता है,और सभा में पहुँचने पर वे अशोक वाटिका के ध्वंश का राजनैतिक अभिप्राय भी प्रकट कर देते हैं।[2] डॉ० जाकोबी का कथन है कि मूल रामायण की कथा में यह प्रसंग नहीं है। चमत्कारिकता के विचार से बाद में जोड़ दिया गया है।[3] जब भक्ति का अनुसंधान करते हुए हनुमान रावण के अन्त:पुर में पहुँचते हैं और वहाँ पर सुषुप्तावस्था में रावण की पटरानियों को देखते हैं तो उनका अन्तर्मन क्लान्त हो उठता है। वे सोचते हैं कि ये तो मेरा धर्म ही नष्ट न कर दें।[4] इससे ऐसा स्पष्ट हो जाता है कि ये ब्रह्मचारी थे। वैसे बाल्मीकि ने इन्हें इस विशेषण से सम्बोधित नहीं किया है। न इन्हे ब्रह्मचारी बताया है। अशोक वन में प्रविष्ट होने के पूर्व हनुमान जी वसुओं को इन्द्र को ,यम को,चन्द्र को, अग्नि को गरुड़ को राम को एवं भक्तिस्व रूपा पराम्बा भगवती सीता को नमस्कार करते हैं[5] इससे ऐसा प्रतीत

1- वा०रा०-5/41
2- वही, 5·50·15
3- देखें- राम कथा की उत्पत्ति एवं विकास पृ0 366 बुल्के।
4- वा०रा० 5-11-37-41
5- उपर्युक्त -5-13 ,56-58

होता है कि ये आर्य थे-

"वसून्रुद्रास्तथाऽऽदित्या नश्विनौ मारूतोऽपि च।
नमस्कृत्वा गमिष्यामि राक्षसां शोक वर्द्धनः।।

तत्पश्चात् हनुमान ने सीता जी को अशोक वन में दर्शन दिया।[1]
इस स्थल पर महर्षि वाल्मीकि ने सीता के मार्मिक मनोदशाओं को स्पष्ट चित्रण किया है-

उपवास कृशां दीनां निश्वसन्तीं पुनः पुनः।
ददर्श शुक्ल पक्षादौ चन्द्र रेखा मिवामलाम।।

x x x x

अश्रु पूर्ण मुखी दीनां कृशामनशनेन च।
शोक ध्यान परांदीनां नित्यं दुःख परायणाम।।[2]

भक्त प्रवर हनुमान भक्ति स्वरूपा सीता से साक्षात्कार करने से पूर्व बहुत कुछ विचार करते हैं-

"अनेन रात्रि शेषेण यदि नाश्वास्यते मया।
सर्वथा नास्ति सन्देहः परि त्यक्ष्यति जीवितम् ।।

सीता की आज्ञा पाकर हनुमान जी उनके सम्मुख प्रकट हुए, तथा उनको प्रमाण करते हैं।[3] हनुमान अपने आराध्य सर्वेश्वर श्री राम के कार्य सिद्धि हेतु सतत् प्रयत्न रत हैं। यह उनका आत्म समर्पण भक्ति के उत्कृष्टता का परिचायक है।

1- वही- 5,15,19-21,23
2- वा0रा0-5-30,12-13,5-31,1
3- उपर्युक्त -5-33/1-2

"परमाम्बा भगवती सीता हनुमान के मधुर वचनों को सुनकर हनुमान के विषय में विचार करने लगी, कि इसने कानों को मधुर लगने वाले वचन कहे हैं। यह सूर्य के समान तेजस्वी है। शशि के समान सुखप्रद है। कुबेर के समान सर्व लोकों के राजा है। विष्णु के समान विक्रमी हैं। कामदेव के समान सुन्दर हैं।[1]

वास्तव में राम भक्ति सन्दर्भ कथाओं के साथ ही हनुमान भक्ति की कथायें सन्निहित है। वाल्मीकि रामायण में परमोत्साही, रामकार्य के प्रति दक्षता प्रकट करने वाले विश्वस्त रामभक्त हनुमान को आदर्श राम भक्त के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। शिव महापुराण की शतरूद्र संहिता {अ020} में हनुमान को भक्त वर के अतिरिक्त राम भक्ति के प्रवर्तक होने का भी श्रेय दिया गया है-

"स्थापया मास भू लोके राम भक्ति कपीश्वर:।
स्वयं भक्तवरों भूत्वा सीता राम सुखप्रद:।।[2]

वस्तुत: भक्ति साहित्य के अधिकतर रचनाओं में हनुमान को राम भक्ति का आचार्य माना गया है-

हनुमान के राम भक्ति का प्राचीनतम उल्लेख वाल्मीकि रामायण के उत्तर काण्ड {सर्ग-40} में प्राप्त होता है। यहाँ पर हनुमान द्वारा राम से तीन वरदान प्राप्त करने का वर्णन किया गया है किन्तु राम से वर प्राप्ति की कथा के प्रारम्भिक रूप में राम भक्ति का उल्लेख नहीं।

1- वा0रा0 5-34-28/30
2- शिव महापुराण- शतरूद्र संहिता- अ0 20/1

इसी प्रकार देवताओं से हनुमान को वर प्राप्ति का प्राचीनतम वृतान्त राम भक्ति के विषय में मौन है किन्तु परवर्ती साहित्य में हनुमान को प्रदत्त वरदानों में से उनकी राम भक्ति को सर्वाधिक महत्व दिया गया है। उनके चिरंजीवत्व का प्रयोजन राम भक्ति ही बन जाता है।

उपर्युक्त कथाओं के अतिरिक्त हनुमान को राम भक्ति के विषय में अन्य सामग्री भी प्राप्त होती है।

श्रीमद्भागवत {5-19-1-5} में इनका उल्लेख प्राप्त होता है, कि "हनुमान हिमालय के किं पुरूष वर्ग के अन्य किन्नरों के साथ अविचल भक्ति भाव से राम की उपासना करते रहते हैं।"[1]

इनके राम भक्ति की उत्पत्ति के विषय में बंगाल की राम कथाओं में निम्न वृतान्त प्राप्त होता है। लक्ष्मण शिव का वाटिका में फल तोड़ने लगे, वहाँ के द्वारपाल हनुमान थे। लक्ष्मण उनसे युद्ध करने लगे अन्त में शिव अपने द्वारपाल हनुमान को राम के हाथ सौंपते हैं। उस समय से लेकर हनुमान शिव को छोड़कर राम भक्त बन गये।

वाल्मीकि रामायण के उत्तरकाण्ड {सर्ग 39} में हनुमान की रामभक्ति सर्वोत्कृष्ट कोटि की प्रतीत होती है। राम राज्याभिषेक के पश्चात् वानर सैनिक एक महीने तक अयोध्या में मधु मांसादि का सेवन करते रहे। और वह महीना राम भक्ति में लीन रहने के कारण उनको क्षणमात्र प्रतीत होता है-

---

1- राम कथा- उत्पत्ति और विकास- फादर कामिल बुल्के- पृ0 68।

ते पिबन्त:सुगंधीनि मधूनि मधु पिंगला:।
मासानि च सुमृष्टानि मूलानि च फलानि च।।
एवं तेषां निवसतां मास: साग्रो ययौ तदा।
मुहूर्तमिव ते सर्वे राम भक्त्या च मेनिरे।।[1]

परवर्ती साहित्य में उस प्रसंग के वर्णन में हनुमान को राम भक्ति का विशेष स्थान है। हनुमान के रामभक्ति के कई रूप दिखाई देता है। वाल्मीकि के हनुमान का व्यक्तित्व स्थान-स्थान पर स्वतन्त्र रूप से चित्रित है। हनुमान का यह व्यक्तित्व प्रमुखत: तीन रूपों में दिखलाई पड़ता है। सुयोग्य सचिव के रूप में ,कुशल दूत के रूप में, आदर्श राम भक्त के रूप में सुयोग्य सचिव के रूप में तथा कुशल दूत के रूप में हनुमान के चारित्य के चरित्र को राजनीतिज्ञता,बुद्धिमत्ता,वाक्पटुता,दूरदर्शिता का एक सुन्दर उदाहरण द्रष्टव्य है।

सीता के अनुसंधान में हनुमान लंका में विडाल समान प्रवेश करते हैं।[2] वाल्मीकि के इस कथन से बहुत आशय है,कि सबकी आँखों से बचता हुआ शत्रुओं का पूरा भेद जान लने को दृष्टि से शिकार के लिए उपयुक्त निरीक्षण हनुमान ने किया। वहाँ उसने शस्त्रागार,सैन्यागार,युद्घोपयुक्त अन्य सारी जानकारी का संग्रह,हनुमान ने बड़े गुप्त रूप से कर लिया,जिसका उपयोग भविष्य में हुआ।[3]

1- वा0रा0-39/26-27
2- वा0रा0-सुन्दरकाण्डम् -2/49-50
3- उपर्युक्त- 4/9,12,14,41

डॉ0 राम प्रकाश अग्रवाल के अनुसार ,वाल्मीकि का हनुमान वाग्मी राजदूत है तथाराम का अनन्य भक्त। तुलसी का मूक चरण सेवक।

हनुमान के उदात्त चरित्र की पवित्रता ने उसे सर्ववन्द्य बना दिया है। हनुमान के शील,चरित्र तथा भक्ति की महिमा महर्षि वाल्मीकि ने बड़े ही सूक्ष्म दृष्टि से वर्णन किया है।

हनुमान अपने आराध्य देव भगवान श्री राम के कार्य हेतु अनेकानेक दुःसाध्य कार्य करने में हिचकते नहीं हैं-

वनवासोपरांत लंका की विजय श्री प्राप्त करने के पश्चात श्री अवध के समीप पहुँचने पर राम जी ने भरत को संवाद देने के लिए, तथा यह जानने के लिए कि भरत का मन राज्य पाकर बदल तो नहीं गया है,इस कार्य हेतु हनुमान को ही भेज देते हैं।[1]

मानव वेश धारी हनुमान शीघ्र ही अयोध्या पहुँचने की तैयारी करते हैं।[2] श्रृंगवेरपुर पहुँचकर उन्होंने गुह को राम चन्द्र जी का सन्देश दिया, तत्पश्चात अयोध्या पहुँचकर भरत जी को राम का सन्देश सुनाते हैं।

तत्पश्चात भगवान श्री राम के राज्याभिषेक के पश्चात सीता जी वह मुक्ताहार जो बड़ी-बड़ी मणियों से ग्रथित था,तथा वस्त्रादि हनुमान को प्रदान करती हैं-

---

1- वा0रा0 6-128/2-17
2- उपर्युक्त- 6-128/18-20

"मणि प्रवर कुष्टं च मुक्ताहार मनुत्तमम्।
सीतायै प्रददौ राम चन्द्र रश्मिचय सम्प्रभम्।।
अरजे वाससी दिव्ये शुभान्या भरणानि चं।
अवेक्ष माणा वैदेही प्रददौ वायु सुतेन वे।।[1]

इससे ज्ञात होता है कि वानर लोग वस्त्रा भरण भी पहनते थे।[2] वे रूपवान भी होते थे जैसा रूप चाहते थे,धारण कर लेते थे। हनुमान जी परम तेजस्वी,महाबलवान तथा वाक्पटु एवं सर्वशास्त्र विशारद थे। हनुमान अपने विशेष गुणों के कारण ही राम के सबसे अधिक विश्वास भाजन बन सके। इसलिए राम सीता लक्ष्मण के समान ही वानर श्रेष्ठ हनुमान युगों-युगों के लिए भक्त जनों के आराध्य बने। स्वयं हनुमान दास भाव से श्री राम से भक्ति की ही याचना करते हैं-

"स्नेहो मे परमो राजं स्त्वयि तिष्ठतु नित्यदा।
भक्तिश्च नियता वीर भावोनान्यत्र गच्छतु।।
यावद्रा राम कथा वीर चरिष्यति महीत ले।
तावच्छरीरे वत्स्यन्तु प्राणा मम न संशय:।।[3]

इस प्रकार महर्षि वाल्मीकि ने वानर श्रेष्ठ हनुमान के मानवीय चरित्र के यथार्थ तथा मनोवैज्ञानिक ढंग से,एवं अलौकिकता से समन्वित करके प्रस्तुत किया है।

उपर्युक्त वर्णित कुछ मूल भूत तथ्यों के आधार पर हनुमान के राम भक्ति रूपों का विवेचन प्रस्तुत किया गया । मात्र उक्त वर्णन को ही

1- वा0रा0-6-131- 79-80
2- उपर्युक्त -1-17-19
3- वा0रा0 4/16-17

पर्याप्त नहीं कहा जा सकता, क्योंकि हनुमान की राम भक्ति अपूर्व, अगाध, एवं अनुपम है। लेकिन आवश्यक प्रमुख रूपों को ध्यान में रखकर उक्त विवेचन प्रस्तुत किया गया है। तत्पश्चात् महाभारत में वर्णित हनुमान भक्ति रूपों का विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है।

महा भारत में वर्णित हनुमान भक्ति का रूप-

महाभारत में हनुमान के सन्दर्भ में बहुत विस्तृत वर्णन नहीं प्राप्त होता। वन पर्व में हनुमान जी के दर्शन होते हैं। वन पर्व में जब भीमसेन द्रौपदी के लिए पुष्प लेने जाते हैं तो वहाँ एक मोटी शिला पर हनुमान जी को लेटे हुए देखते हैं।[1] वहाँ पर हनुमान जी अपना परिचय इस प्रकार देते हैं-

अहं केसरिणः क्षेत्रे वायुना जगदायुषा।
जातः कमल पत्राक्ष हनुमान् नाम वानरः।।[2]

उनका रूप भी प्राप्त होता है-

इस मिलन का वर्णन व्यासजी ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है-

भीमसेन ने कदलीवन में एक मोटी शिला पर लेटे हुए वानर राज महाबाहु हनुमान जी को देखा। विद्युत के समान कान्ति उत्पन्न करने वाली उनकी प्रभा थी। उनकी ओर देखना कठिन प्रतीत होता था। उनकी कान्ति विद्युत के समान पिंगल वर्ण की थी। उनका गर्जन वज्रपात की गड़गड़ाहट के समान

1- महाभारत-गीता प्रेस, गोरखपुर, वन पर्व षट्चत्वारिंशदधिक शततमो अध्याय: पृ0 1354-1371

2- महाभारत -3,147,27

प्रतीत होता था। उनके कन्धे चौड़े और पुष्ट थे। उन्होंने बाँह के मूलभाग को तकिया बनाकर अपनी मोटी और छोटी ग्रीवा को रख छोड़ा था। उनके शरीर का मध्य भाग तथा कटि प्रदेश पतले थे। उनकी पूँछ का अग्रभाग कुछ मुड़ा हुआ था, जो ऊपर को ओर उठकर ध्वजा के समान सुशोभित हो रहा था। उनके ओठ पतले थे और मुख का रंग ताम्बे के रंग के सदृश था। कान लाल रंग के थे। भौंहे चंचल हो रही थी। उनके मुख में चमकते हुए दाँत और दाढ़ी अपनी सफेदी तथा तीखे अग्रभाग के कारण शोभा पा रही थी। इस कारण उनका मुख किरण सहित चन्द्रमा के समान शोभायमान हो रहा था। मुख की दंतावली मुख पर आभूषण का काम कररही थी। स्वर्णमयी कदली वृक्षों के बीच विराजमान महा तेजस्वी हनुमान जी ऐसे जान पड़ते थे, मानों केसर की क्यारी में अशोक पुष्प का गुच्छा रख दिया गया हो। हनुमान जी अपने शरीर की कान्ति से प्रज्वलित अग्नि के समान जान पड़ रहे थे इनकी मधु के समान पीली आँखे इधर-उधर देख रही थीं। परिचय प्राप्त करने के पश्चात् भीम सेन ने प्रार्थना की कि मैं आपका वह पूर्णरूप जो समुद्र पार करने के समय आपने धारण किया था, उसे देखे बिना किसी प्रकार नहीं जाऊँगा।[2] यदि मैं आपका कृपापात्र हूँ तो आप स्वतः अपने रूप को प्रकट कर दीजिए-

भीम सेन के ऐसा कहने पर भक्त प्रवर श्री हनुमान जी ने भाई को प्रसन्न करने हेतु वह रूप दिखाया, जो समुद्र लाँघने के समय उन्होंने

1- महाभारत - 3-147,75-82
2- उपर्युक्त -पंचा शदधिक शततमों अध्यायः §150§ पृ0 1366

धारण किया था। उनका शरीर बहुत बढ़ गया। कदली खण्ड पर छा गया। ये दूसरे पर्वत के सदृश दिखाई पड़ने लगे। ताम्र के सदृश मुख में तीक्ष्ण दाँत दिखाई दे रहे थे, कुटिल भृकुटी थी तथा कुटिल मुख था। उनकी पूँछ बड़ी लम्बी थी, जो समस्त दिशाओं में व्याप्त प्रतीत हो रही थी। ऐसा महान रूप कौरव नन्दन को दिखाई दिया।

इस रूप को देखकर भीम पुलकित होने लगे। वे सुवर्ण के पर्वत के समान देदीप्य मान एवं कान्ति से आकाश मंडल अपूर्ण प्रभा से जगमग सा प्रतीत हो रहा था।

उक्त संवाद में ही हनुमान कहते हैं कि मैंने अपने परमाराध्य भगवान श्री राम से ऐसा वरदान प्राप्त कर लिया है कि इस पृथ्वी मंडल पर जब तक राम कथा प्रचलित रहेगी, तब तक ही मैं जीवित रहूँ। यह हनुमान के भक्ति का उत्कृष्ट रूप प्रतीत होता है-

यावद राम कथेयं ते भवेल्लो केषु शत्रुहन्।
तावज्जीवेय मित्येवं तथा स्त्विति स सोऽब्रवीत्।।[1]

तदन्तर हनुमान के अर्जुन की ध्वजा का वह विकट वेशवाली वानर उस समय अपने स्थान से उछला और कर्ण की कांकल युक्त ध्वजा पर चोट करने लगा जैसे गरूड़ अपने पंजों और चोंच सेसर्प पर आक्रमण करता है।[2]

1- महाभारत- पृष्ठ संख्या- 1368
2- उपर्युक्त कर्ण पर्व, पृ० 4063-96

महाभारत में रामकथा वन पर्व के 274 वें अध्याय से प्रारम्भ होकर 291 अध्याय तक दी गयी है। जयद्रथ द्वारा द्रोपदी के हरण पर युधिष्ठिर बड़े दुखी हुए और उन्होंने मार्कण्डेय ऋषि से पूछा कि क्या संसार में मेरे जैसा मन्द भाग्य दूसरा पुरुष है। इस पर मार्कण्डेय मुनि ने राम कथा सुनाई। यह कथा संक्षिप्त रूप में निम्नवत है-

कतिपय मनीषियों का ऐसा मत है कि राम की कथा का मूल रूप यही था।[1] इसमें भी हमें सर्व प्रथम हनुमान जी का दर्शन ऋष्यमूक पर्वत पर होता है। जब विराधराम कोसुग्रीव से मैत्री करने की सलाह देता है तो राम पम्पासर की ओर चल देते है और वहीं से ऋष्यमूक पर्वत पर पहुँचते हैं।[2]

महाभारत में भी हनुमान अयोध्या में राम के आगमन की सूचना देते हैं। हनुमान जी साधुवेश में चरण पादुका सामने रखकर बैठे हुए भरत को देखते हैं,उन्ही के साथ शत्रुघ्न भी है।[3] महाभारत में वर्णित हनुमान के रूपों का तथा चारित्रिक क्रियाकलापों कासंक्षिप्त रूप प्रस्तुत किया गया। इसके अतिरिक्त हनुमान के भक्ति के सन्दर्भ में कोइ विशेष चर्चा नहीं प्राप्त होती है। वस्तुत: यह कहा जा सकता है,हनुमान का चरित्र ही ऐसा उज्जवल है कि उनके प्रत्येक कार्यों मे परोपकार सेवाभाव आदि विशिष्ट गुण प्राय: देखते जाते हैं।

1- बुल्के- राम कथा- पृ0 53-43] ऐसे विचारकों में जैकोबी का स्थान मुख्य है]
2- महाभारत -280 अध्याय 9-21
3- भास नाटक चक्रम- अभिषेक नाटकम् डॉ0 श्री बल्देव उपाध्याय,पृ0 4

यदि धर्म ग्रन्थों के आधार पर अवलोकन किया जाय तो वाल्मीकि रामायण और महाभारत के रामोपाख्यान में वर्णित हनुमान् के चरित्रों में कोई विशेष अन्तर नहीं प्राप्त होता। सम्भवतः कथानक में थोड़ा बहुत अन्तर हो सकता है। इसके पश्चात् पुराणों में वर्णित हनुमान के भक्ति रूपों तथा चारित्रिक विशिष्टताओं पर संक्षिप्त रूप में प्रकाश डालने का प्रयास किया जा रहा है,पुराण तो मूलतः ज्ञान का अक्षय भंडार है,लेकिन हनुमान विषयक सन्दर्भों का ही विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है।

पुराणों में वर्णित हनुमानभक्ति के रूप-

पवन नन्दन श्री हनुमान जी का चरित भगवान श्री राम चन्द्र जी से इतना अनुस्यूत है कि श्री राम चर्चा के प्रसंग में मारुति चर्चा अनिवार्य है। मूलतः हनुमान जी के चरित्र काविस्तार तो वाल्मीकि रामायण तथा तत्सम्बद्ध इतर रामायणों में उपलब्ध होता ही है,परन्तु पुराण साहित्य भी उनके चरित का कुछ ऐसा उल्लेख करता है जो अत्यन्त अप्राप्य है। समग्र पुराणों के विपुल साहित्य के अन्वेषण और अनुशीलन के बिना हनुमान जी के पौराणिक आख्यान कायथार्थ परिचयनहीं मिल सकता।[1] वस्तुतः पुराणों में हनुमान के चरित्र का वर्णन श्री राम के चरित्र से ही सम्बन्धित प्रतीत होता है,किन्तु उक्त विवरण से रामायण के वर्णन में भिन्नता प्राप्त होती है।

1- अग्नि पुराण- आनन्दाश्रम संस्कृत ग्रंथावली- 41 हरिनारायण आप्टे, आनन्दाश्रम।

अ- अग्नि पुराण[1] के अष्टम अध्याय में जब राम पम्पासर नामक स्थान पहुँचते हैं तब उनसे हनुमान की भेंट होती है।[2]

भक्ताधिराज श्री हनुमान जी ने श्री राम के कार्य की सिद्धि हेतु तथा वानरों के जीवन रक्षार्थ विशाल सागरोल्लंघन किया और बीच में मैनाक एवं सिंहिका नामक राक्षसी का मान मर्दन किया। लंका में पहुँचकर उन्होंने रावण, कुम्भकर्ण, विभीषण, मेघनाद एवं और दूसरे राक्षसों के घरों का अवलोकन किया। यह उनके राम के प्रति समर्पित दृढ़ आस्था का प्रतीक है जो कि उनके भक्ति के सर्वोत्कृष्ट रूप का परिचायक है। पराम्बा भगवती सीता का अनुसंधान करते हुए हनुमान जी ने अशोक वाटिका में शिंशपावृक्ष के नीचे सीता जी को देखा। वहाँ पर उपस्थित राक्षसियाँ सीताजी को समझाने का प्रयास कर रही थीं और लंकाधीश रावण उन्हें त्रसित करने का उपक्रम कर रहा था। रावण के वहाँ से चले जाने पर हनुमान जी ने राम, लक्ष्मण एवं सुग्रीव के मित्रता की कथा सुनायी। श्री राम जी के द्वारा प्रदत्त अंगूठी सीता जी को प्रदान किया। सीता जी ने कहा कि यदि श्रीराम जीवित हैं, तो मुझे ले क्यों नहीं जाते। सीता जी के इस कथन पर हनुमान जी ने कहा कि श्री राम जी को यह नहीं पता कि आप लंका में है। आप की सूचना पाते ही राक्षसों एवं रावण को मारकर आपको ले चलेंगें आप निश्चिन्त हों। और आप अपना कोई अभिज्ञान मुझे प्रदान करें। पराम्बा भगवती सीता ने काक रूप धारी जयन्त की कथा सुनायी और अपने चूड़ामणि को दिया।[3]

1- अग्निपुराण- आनन्दाश्रम संस्कृत ग्रन्थावली- 41 हरिनारायण आप्टे, आनन्दाश्रम।
2- उपर्युक्त- पृ० 9
3- अग्निपुराण- यहाँ पर सीता जयंत को कौवे के रूप में आने की कथा की ओर संकेत करती है।

श्री राम जी के पास चलने की सीता जी की आतुरता देखकर हनुमान जी ने कहा कि आप मेरी पीठ पर बैठ जाँय मैं अभी सुग्रीव के साथ राम का दर्शन करा दूँ। सीता जी ने कहा कि श्री राम जी ही मुझको ले चलेंगे। तत्पश्चात् श्री हनुमान ने रावण के उद्यान में प्रवेश किया।

स्कन्द पुराण में वर्णित हनुमान के रूप तथा भक्ति का विवेचन इस प्रकार द्रष्टव्य है-

अ- स्कन्द पुराण का पन्चम खण्ड अवन्ती खण्ड के नाम से प्रख्यात है। इसके 79 वें अध्याय में हनुमान जी के चरित्र एवं पराक्रम की कथा बाल्मीकीय रामायण के उत्तरकाण्ड में वर्णित कथा के अनुरूप ही विस्तृत रूप से प्राप्त होता है। यहाँ पर भी ऋषियों के द्वाराप्रदत्त उस शाप का संकेत है, जिसके कारण हनुमान जी अपने पराक्रम को भूल जाया करते थे। वस्तुतः यदि ऐसा नहीं होता तो क्या वे बाली के अपराधों को देखते हुए उसे मारने का प्रयास न करते। मुनियों ने इस प्रसंग में भगवान श्री राम जी से प्रसंग में कहा था-

न बले विद्यते तुल्यो न गतौ न मतावपि।
अमोघ वाक्यैः शापस्तु दत्तोऽस्य मुनिभिः पुरा।
न ज्ञातं हि बलं येन बलिना वालिमर्दने।।[1]

हनुमान जी के द्वारा अनेक तीर्थों की स्थापना और अनेक शिवलिंगों की प्रतिष्ठा की भी विवरण यहाँ पर प्राप्त होता ,जो कि

1- स्कन्दपुराण- अध्याय- 79, श्लोक -21/22

सर्वथा अद्यतन प्रतीत होता है। इस खण्ड के 31वें अध्याय में उज्जयिनी में भगवान् श्री राम चन्द्र जी के द्वारा "हनुमत्केश्वर" लिंग की स्थापना का प्रसंग स्कन्द पुराण में ही प्राप्त होता है। इस नामकरण के सन्दर्भ में यह तथ्य प्रस्तुत किया गया कि विभीषण के अभिषेक के पश्चात् हनुमान जी लंका गये थे और वे वहाँ से कुबेर द्वारा प्रदत्त और विभीषण द्वारा पूजित छः लिंगों में से एक लिंग अपने साथ ही लाये थे। इसी की स्थापना भगवान् श्री राम ने उज्जयिनी में की थी, तथा हनुमान जी के ही नाम पर इसे हनुमतेश्वर नाम की प्राप्ति हुई। हनुमान जी स्वयं अपने हाथों ब्रह्महत्या के परिमार्जनार्थ नर्मदा के तट पर हनुमतेश्वर लिंग की स्थापना की। इतना ही नहीं उन्होंने नर्मदा नदी के तट पर ही "कपितीर्थ" नामक तीर्थ की भी प्रतिष्ठा की थी जहाँ हम श्री राम और लक्ष्मण को अयोध्या से लौटकर दो शिव लिंगों की स्थापना करते हुए पाते हैं।

इसके अतिरिक्त स्कन्द पुराण में ब्रह्मखण्ड के सेतु महात्म्य नाम के प्रकरण में राम की कथा प्राप्त होती है[1], इसमें पम्पातट पर पहुँचने पर राम की हनुमान से भेंट होती है-

श्री राम ने पूछा आप कौन हैं? हनुमान ने कहा कि मैं सुग्रीव का सचिव हूँ। हनुमान नामक वानर हूँ। सुग्रीव ने आप दोनों के पास भेजा है और वे आप दोनों से मित्रता चाहते हैं। श्री राम ने तथास्तु कहकर अग्नि के समक्ष सुग्रीव से मैत्री की।

1- स्कन्द पुराण- सेतु माहात्म्य- 2-1 /06
मोर संस्करण तृतीय भाग पृ0 -7

बालि को मारने पर राम सुग्रीव को राज्य प्रदान करते हैं। सुग्रीव वानरों की सेना सीता के अनुसंधानार्थ भेजते हैं। धौलागिरि पर औषधि लेने के लिए हनुमान जी ही प्रेषित किये जाते हैं। इस स्थल पर विशल्या नामक औषधि लाने के लिए हनुमान जी के भेजने का विवरण नहीं प्राप्त होता है। लंका से लौटते समय राम चन्द्र जी सेतु पर लिंग की स्थापना का विचार करते हैं तो कैलाशपर्वत पर से हनुमान जी को शिवलिंग लाने को भेजते हैं।[1]

पुण्य काल का विचार करके श्री राम ने हनुमान जी को शिवलिंग ले आने के लिए कैलाश पर भेजा। भगवान श्री राम की आज्ञा पाकर हनुमान जी ने अपनी भुजाओं का आस्फोटन किया,और वे बड़े वेग से छलांग मारकर गंध मादन पर्वत को पार करके कैलाश पर पहुँच गये। वहाँ उन्होंने लिंग रूप धारी भगवान आशुतोष को नहीं देखा,और तपस्या में रत हो गये। तपस्या में शिव जी को प्रसन्न करके हनुमान जी ने शिवलिंग को प्राप्त कर लिया। हनुमान जी ने बालू का लिंग जो जानकी जी ने बनाया था उसकी ही प्रतिष्ठा कर दी।[2] इसके अतिरिक्त स्कन्द पुराण में हनुमान के जन्म की कथा भी प्राप्त होती है। अंजना के तप की कथा भी प्राप्त होती है,जिसमें कि हनुमान की जन्म कथा वर्णित है।[3]

स्कन्द पुराण के वैष्णव खण्ड में अंजना का पुत्र प्राप्ति हेतु तप का वर्णन प्राप्त होता है।[4]

1- यह प्रसंग रामेश्वरम् के महात्म्य दिखाने को पीछे से जोड़ा हुआ प्रतीत होता है।

2- स्कन्दपुराण,44,104-110

3- स्कन्दपुराण भाग-2 अध्याय-39,पृ0 146

4- स्कन्दपुराण- नवल किशोर प्रेस,लखनऊ- वैष्णव खण्डान्तर्गत भूमि बाराह खण्ड- अध्याय 39-1-46-,40-1-51

पुत्र हीनाऽञ्जना पूर्वंदुःखिता तपसि स्थिता।

तां दृष्ट्वा मुनिशार्दूलो मतंगो विष्णु तत्पर:।।

x x x x

तत: कालान्तरे विप्र: केसरी महाकपि:

ययाचे मां ददस्वेति पितरं मे तत: पिता।।

स्कन्द पुराण में अंजना के तपस्या की कथा और कथाओं से नितान्त भिन्न प्रतीत होती है।[1] यहाँ पवनदेव कहते हैं, कि मैं तुम्हारा पुत्र होऊँगा, तथा अंजना के साथ उसका पति भी। इसके अतिरिक्त अन्य कथाओं में तो अंजना के साथ काम मोहित होकर समागम करते हैं, यहाँ वे अंजना को वरदान भी प्रदान करते हैं।

(इ) कूर्म पुराण[2] में राम चरित्र संक्षेप में प्राप्त होता है।[3] इसमें हनुमान के सन्दर्भ में निम्नवत विवरण प्राप्त होता है। भगवान श्री राम जब सीता हरण के पश्चात पम्पापुर की ओर जाते हैं तो वहाँ सुग्रीव से भेंट होती है। वानरों से श्री राम की मैत्री होती है,उन वानरों में सुग्रीव के अनुगामी वायुपुत्र हनुमान जी को भगवान श्री राम का प्रियपात्र दिखाया गया है। हनुमान जी ने भगवान श्री राम को धैर्य बँधाया और राम के कार्य को पूर्ण करने का आश्वासन दिया। तत्पश्चात समुद्र पार करके लंका में प्रवेश किया। वहाँ पर उन्होंने राक्षसियों से घिरी हुई परम्बा भगवती सीता को देखा। सीता जी से बातें भी की और राम जी के द्वारा प्रदत्त मुद्रिका

1- स्कन्द पुराण-अध्याय,40-1-2
2- कूर्म पुराण- खेमराज श्री कृष्णदास,वेंकटेश्वर प्रेस,मुम्बई सं0 1983
3- उपर्युक्त- अध्याय 21,16-56

सीता जी को प्रदान किया, लंका से लौटने के पश्चात् हनुमान जी ने सीता दर्शन की पूरी कथा सुनायी, तत्पश्चात् श्री राम जी वानर सेना के साथ लंका की ओर प्रस्थान किये। रावण को मार करके हनुमान जी की सहायता से सीता को लाये।

(3) विष्णु धर्मोत्तर पुराण में हमें रावण के जन्म की कथा 219वें अध्याय में मिलती है।[1] इसमें वैश्रवण के जन्म की कथा भी वर्णित है।[2] यहाँ कुशध्वज की कन्या वेदवती का रावण को शाप देना वर्णित है।[3] जो पीछे चलकर सीता के रूप में जन्म लेती है। नन्दी के रावण को शाप देने की कथा भी यहाँ मिलती है। जब रावण ने नन्दी की वानर आकृति को देखकर उपहास किया, तब नन्दी ने उसे शाप दिया, कि वानर ही तुम्हारा गर्व चूर्ण करेंगे[4]। यहाँ पर वर्णित हनुमान का चरित्र संक्षिप्त रूप में प्राप्त होता है।[5] महर्षि मतंग का आश्रम बालि के लिए अगम्य है। यह जानकर सुग्रीव, नल नील, तारा तथा हनुमान जी के साथ वहीं रहने लगे। इन वानरों में हनुमान जी बड़े बलवान थे। वे जन्म लेते ही खाने की इच्छा से राहु की ओर दौड़ पड़े। डरकर राहु इन्द्र की शरण में गया। इन्द्र ऐरावत हाथी पर थे। विशाल काय ऐरावत को देखकर हनुमान जी ने उस हाथी को ही पकड़ना चाहा। इस पर इन्द्र ने वज्र का प्रहार किया, जिससे पवन पुत्र का बाया (हनु) क्षतिग्रस्त हो गया। इसी कारण वायु पुत्र का नाम हनुमान पड़ा। इन्द्र के कृत्य से वायुदेव कुपित हो गये। वायुदेव को प्रसन्न करने

1- विष्णु धर्मोत्तरपुराण- 1,219,13-23
2- उपर्युक्त-1-219,5-13
3- उपर्युक्त- 1-220-19
4- उपर्युक्त- 1-222-5-8
5- उपर्युक्त- 1-223-26-35

के लिए सब देवता तथा साक्षात् भगवान सूर्य ने लोक के हित के लिए हनुमान जी को अजर-अमर, अजेय एवं अप्रतिम बलवान होने का आशीर्वाद दिया।[1] इसके अतिरिक्त हनुमान जी का वर्णन श्रीमद्भागवत में संक्षिप्त रूप में प्राप्त होता है।

(ग) गरूड़ महापुराण[2] में भी संक्षिप्त रूप में राम चरित्र की कथा वर्णित है। हनुमान जी के सन्दर्भ में जो भी वर्णन प्राप्त होता है वह निम्नवत है- समस्त वानरगण दक्षिण दिशा में सीता जी का अनुसंधान करने लगे, अनुसंधानोपरांत जब सीता जी नहीं मिली, तो सब वानर मरने को उद्यत हो गये। परन्तु इसी समय सम्पाती के वचन से कपियों में श्रेष्ठ हनुमान जी ने समुद्र लांघकर लंका में जाकर सीता जी को देखा और मुद्रिका दी, और वे चिन्हस्वरूप सीताजी का वेणीरत्न लेकर राम जी के पास आने लगे। बीच में उन्होंने रावण के वन को नष्ट किया, राक्षसों को मारा और राक्षसों द्वारा पूँछ में लगायी गयी आग से लंका को भस्म कर दिया। इसके बाद उन्होंने राम जी के पास आकर वेणी रत्न को दिया और सीता जी की भेंट की बात सुनायी।

(घ) श्रीमद्भागवत के नवम् स्कन्ध के दसवें तथा ग्यारहवें अध्यायों में रामचन्द्र का चरित्र वर्णित है, इसमें श्री हनुमान के विषय की सामग्री बहुत थोड़ी मिलती है। एक स्थान पर हमें हनुमान द्वारा राम के चरणों को वन में दबाने का संकेत प्राप्त होता है।[3]

1- विष्णु धर्मोत्तर पुराण- 1-252-1-24
2- गरूणपुराण- श्री वेंकटेश्वर स्टीम यन्त्रालय: पूर्व खण्ड प्रथम सारये आचार काण्डे रामायण वर्णन नाम 143 अध्याय पृ089-1-51
3- श्रीमद् भागवत- गीता प्रेस गोरखपुर-9,10,4

लंका के जलाने की कथा का संकेत मात्र अधोलिखित पद्य में प्राप्त होता है।[1]

वहौ दधौ रघुपति विंध्या कूटे,

सेतुं कपीन्द्र कर कौम्पत भूरु हांगे।

सुग्रीव नील हनुमत्प्रभु खे रनो केर्लकां

विभीषण दहा विराद्ग दग्धाय।।

इसके अतिरिक्त हनुमान जी का सन्दर्भ उन व्यक्तियों की नामावली में प्राप्त होती है। जिन्हे श्री राम चन्द्र जी अपने साथ बैठाकर लंका से अयोध्या ले आये थे।[2]

{२} वंगीय महाभागवत पुराण में भगवान पृथ्वी का भार उतारने को अवतार ग्रहण करने का निश्चय करते हैं तो भगवान शंकर स्वयं अपने मुखारविन्द से कहते हैं-

अहं वानर रूपेण सम्भूय पवनात्मज:

साहास्यं ते करिष्यामि।।[3]

इस पुराण में हनुमान शिव के अवतार के रूप में प्रतिष्ठित हैं। ये जब लंका पहुँचते हैं,तो ये लंका में निवास कर रही देवी को देखते हैं। मन्दिर में पहुँचने के पश्चात् ये देवी से लंका का परित्याग करने हेतु निवेदन करते हैं। परात्मा भगवती सीता के अपमान के कारण देवी रावण से असन्तुष्ट होकर लंका का परित्याग कर देती हैं।[4]

1- श्रीमद भागवत- गीताप्रेस गोरखपुर 9,10,16

2- श्री मद्भागवत-9,10,32

3- महाभागवत पुराण-अध्याय 37,बुल्के वही पृ0 662

4- उपर्युक्त अध्याय 39-19-29-बंगवासी प्रेस कलकत्ता 1321 वंगीय कथा का एक चित्र प्रस्तुत किया ।

और) पदमपुराण के पातालखण्ड में[1] राम का चरित्र राम के अयोध्या लौटने से प्रारम्भ होता है। वहाँ दूसरे अध्याय में[2] राम जी हनुमान को अयोध्या में भरत का समाचार लेने को भेजते है।

मद्वियोग ज दुःखाग्नि ज्वाला दग्ध कलेवरम्।
मदागमन संदेशं पयोवृष्टयां सुपिचिंतम्।।

इस आज्ञानुसार भक्ताधिराज हनुमान नन्दी ग्राम को जाते है। वहाँ वे भरत को विरहाग्नि से जलते हुए मन्त्रियों के साथ देखते हैं तथा उनसे हनुमान जी राम के आगमन का सन्देश सुनाते हैं।

इसके पश्चात राम चन्द्र जी जब अश्वमेघ का अश्व छोड़ते हैं और उसके रक्षार्थ शत्रुघ्न को भेजते हैं तो उनके साथ हनुमान को भी भेजते है।[3] इसके अतिरिक्त पदमपुराण में ही हनुमानका रुद्र से युद्ध करने का वर्णन भी प्राप्त होता है।[4]

आगत्य संमुखे रुद्रं समरांगणमूर्धनि।
जगाद हनुमान धीरः संविदोर्धुः सुराधिपम्।।

× × × ×

रघुनाथ प्रसादेन सर्वं मेऽस्ति महेश्वर।।
तथापि याचे हि वरं त्वत्तः समरतोषितात्।।

1- पदमपुराण- पातालखण्ड- द्वितीय भाग (आनन्दाश्रम) संस्कृत ग्रन्थ माला 131) 1896 ई0पृ0पृ0 425
2- उपर्युक्त -पृ0 427-2,2-9
3- उपर्युक्त -पृ0 444-11,10,13
4- उपर्युक्त -पृ0 521-522/

युद्ध में हनुमान जी वीरता एवं शौर्य से प्रसन्न होकर शिवजी ने कहा- हे राम से एक तुम धन्य हो। मैं दान यज्ञ तथा तपस्या से सुलभ नहीं हूँ। इसलिए जो वर मांगना हो मांग लो। इसके अतिरिक्त कल्कि पुराण में हनुमानके सन्दर्भ और भी संक्षिप्त विवरण प्राप्त होता है।

क- कल्कि पुराण में राम चरित्र तृतीय अंश के तृतीय अध्याय में मिलता है[1] इसमें रामायण की तरह हनुमान जी से राम की भेंट ऋष्यमूक पर्वत के सन्निकट होती है।[2]

ख- वृहद्धर्म पुराण में भी हनुमान विषयक सन्दर्भ प्राप्त होते हैं। वृहद्धर्म पुराण में दी हुई राम कथा महाभागवत पुराण की कथाओं से बहुतभिन्न नहीं है। यहाँ भी शिव जी पवनपुत्र के रूप में प्रकट होने का विचार व्यक्त करते हैं। हनुमान विडाल के रूप में लंका में प्रवेश करते हैं।[3] लंका पहुँचने के पश्चात देवी के मन्दिर में पहुँचकर उनसे प्रार्थना करते हैं कि वे लंका को छोड़ दें और वे सीता के अपमान के कारण रावण से रूष्ट होकर लंका छोड़ देती हैं।[4] तत्पश्चात् हनुमान जी निवेदन करते है- हे देवों आप लोग मेरी सहायतार्थ अपने स्थानों की ओर प्रस्थान करें। ऋक्ष एवं वानरों के अंगों में प्रविष्ट हो जांय। तत्पश्चात् भगवान शंकर ने प्रसन्न होकर कहा कि मैं वानरों के द्वारा पृथ्वी पर अवतार ग्रहण करूँगा और त्रिलोक दुष्कर

1- कल्कि पुराण - पृ0 191-207
2- उपर्युक्त - पृ0 197=3,3,38
3- वृहद्धर्म पुराण -पूर्व खण्ड- अध्याय 20,21
4- उपर्युक्त पूर्वखण्ड, अध्याय-20

कार्य को करूँगा। मेरा पराक्रम लोकातीत होगा। मैं वानर का रूप धारण कर आपको प्रसन्न करूँगा। लंका में मेरे पहुँचने के तुरन्त बाद देवी उस पुरी का त्याग कर देंगी।[1] यहाँ पर वर्णित महेश्वर की अष्टमूर्ति के वर्णन में पवनात्मज की मूर्ति का स्वरूप प्राप्त होता है।

अष्ट मूर्तेर्महेशस्य शिवस्य परमेष्ठिनः ।
पवनात्मज बुधैर्देव ईशान इति कीर्त्यते।
ईशानस्य जगत्कर्तुर्देवस्य पवनात्मनः।।
शिवा देवी बुधैरुक्ता पुत्रश्चास्य मनोजव:
चराचराणां भूतानां सर्वेषां सर्वकामदः।।[2]

ग- नरसिंह पुराण में हनुमान की कथा और पुराणों की ही तरह राम कथा के साथ प्राप्त होती है।[3] इसमें देवता, गन्धर्व, यक्ष, किन्नरों के साथ विद्याधरों का नाम भी आया है।[4] यहाँ पर विष्णु कहते है कि देवगण अपने अंशों से वानर रूप होकर पृथ्वी पर अवतार लें। तभी रावण का विनाश संभव होगा वे अपने-अपने अंशों से वानर रूप में पृथ्वी पर उत्पन्न होती हैं।[5]

जब राम सीता का अनुसंधान करते हुए किष्किन्धा पर्वत के नीचे पहुँचते हैं, तो सुग्रीव वायुपुत्र हनुमान जी को राम लक्ष्मण का भेद जानने को भेजते हैं।[6]

1- उपर्युक्त पूर्वखण्ड, अध्याय-20,26-38
2- उपर्युक्त उत्तर भाग अध्याय-6,251-255
3- नरसिंह पुराण- अध्याय -47-52
4- उपर्युक्त अध्याय- 47-11
5- उपर्युक्त अध्याय- 47-33-35
6- उपर्युक्त अध्याय 50-5,6

हनुमान का भिक्षु रूप धारण करके राम लक्ष्मण के पास पहुँचते हैं और उनकी सम्पूर्ण कथा जानकर सुग्रीव से मैत्री कराते हैं। सुग्रीव सीता के अन्वेषणार्थ बहुत से वानरों को राम के पास भेजते हैं।[1] सुग्रीव तीनों दिशाओं वानरों को भेजकर अंगद, जाम्बवन्त, हनुमान, मैन्द द्विविद नील आदि को दक्षिण को ओर भेजते हैं।[3] जाम्बवन्त कहते हैं कि समुद्रोल्लंघन को शक्ति केवल हनुमान में है तब सुग्रीव हनुमान से लंका जाने को कहते हैं।[3] जाम्बवन्त के कथनोपरान्त हनुमान जी समुद्र पार करने को उद्यत हुए। ये पूर्व मुख होकर गणों सहित ब्रह्मा जी को प्रणाम करते हैं तथा आकाशमार्ग से प्रस्थान करते हैं।[4] इसके अतिरिक्त इसमें वही कथा वर्णित है जो रामायण में है लेकिन इसमें लंका दहन का प्रसंग नहीं प्राप्त होता है। ये युद्ध में निकुंभ नामक राक्षस का संहार करते हैं।[5] युद्ध करते समय लक्ष्मण को जब शक्ति लगती तो पुनः हनुमान को विशल्य करणी औषधि लाने का राम आदेश देते हैं। शौर्य पुंज हनुमान द्रोणगिरि को ही ले आते हैं और शीघ्रातिशीघ्र लक्ष्मण जी को पीड़ा रहित कर देते हैं।[6] युद्ध के अन्त में देवता गण राम लक्ष्मण को अर्चना करते हैं और कहते हैं कि देखों यह सूर्य के पुत्र सुग्रीव हैं ये वायु के पुत्र हनुमान हैं।[7]

1- उपर्युक्त अध्याय 50-5,6
2- उपर्युक्त अध्याय- 50-7,16
3- उपर्युक्त अध्याय-अध्याय 50,85-89
4- उपर्युक्त अध्याय 50,123
5- उपर्युक्त अध्याय 52,68
6- उपर्युक्त अध्याय-52,87-93
7- उपर्युक्त अध्याय 52,112

ङ-नारदीय महापुराण में हनुमान का मन्त्र,यन्त्र,उनकी मूर्ति के विषय में सामग्री मिलती है जो वस्तुत: तान्त्रिक है।[1] इसके अतिरिक्त हनुमान के चरित्र के सन्दर्भ में भी वर्णन प्राप्त होता है।[2] यह रामायण से साम्य है। यहाँ पर उन्हें विष्णु तथा शिव दोनों का अवतार माना गया है,जैसा "ब्रह्म" तथा शिव दोनों का अवतार माना गया है,जैसा ब्रह्म पुराण की महारानी की कथा में वृषा कपि को माना है।

च- भविष्य पुराण- में रावण के जन्म की कथा के पश्चात् हनुमान के जन्म की कथा वर्णित है।[3]

गिरौ यत्र स्थिता देवी गौतमस्य तनूद्भवा।
अंजना नाम विख्याता केशरी के सरि भोगिनी।
रौद्र तेजस्तदा घोरं मुखे के सरिणो ययौ।
स्मरातुर: कपीन्द्रस्तु बुभुजे तां शमाननाम्।।

इसके अतिरिक्त भविष्य पुराण के ही अन्तर्गत अध्याय 131 तथा 132 ब्राह्मपर्व में सर्वदेवताओं के प्रतिमा बनाने के विषय में कुछ सामग्री प्राप्त होती है। इसी प्रकार की प्रतिमा हनुमान की भी बनी होगी क्योंकि यह किसी प्राचीन शास्त्रीय नियमों पर आधारित प्रतीत होती है।[4]

1- नारदीय महापुराणम् खेमराज कृष्णदास वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई सं0 1980 अध्याय 74,1-202
2- उपर्युक्त पूर्वार्द्ध अ029,1-30 तथा 92-107
3- भविष्य पुराण- खेमराज श्री कृष्णदास वेंकटेश्वर प्रेस, संवत 1867
4- उपर्युक्त 1,131,36-132-1- परिशिष्ट।

उपर्युक्त पुराणों के अध्ययनों परान्तऐसा विदित होता है कि पुराणों में वर्णित हनुमान का चरित्र मूलतः बाल्मीकि रामायण में वर्णित हनुमान की कथा का विकसित रूप है। बहुत सी कथायें उन स्थलों को पूर्ण करने के दृष्टिकोण से लिखी गयी है। जहाँ कि बाल्मीकि मौन रह गये हैं।

वैसे शिव महापुराण में इनको शिव के वीर्य से उत्पन्न होने की बात कही गयी है,और इनकी माता को गौतम की पुत्री कहा गया है। ब्रह्मपुराण में वे अपना विश्वरूप प्रकट करते हैं। नारद पुराण में वे ब्रह्मरूप कहे गये हैं तथाशिव और विष्णु के संयुक्त शक्ति के प्रतीक माने गये है। ब्रह्मपुराण में इनको वृषा कपि कहा गया है। स्कन्द पुराण में रामेश्वरम् में इनके द्वारा आनीत लिंग की स्थापना का विवरण प्राप्त होता है। देवीय महाभागवत पुराण में तथा ब्रह्म पुराण में जब वे लंका पहुँचते है,तो वहाँ देवी को उपस्थित पाते हैं। उनसे यह निवेदन करते हैं कि वे लंका छोड़ दे,क्योंकि रावण ने सीता का अपमान किया है,देवी इस पर लंका का परित्याग कर देती हैं। कई अन्य पुराणों में जैसे वामन पुराण,लिंग पुराण,नीलमत पुराण आदि में हनुमान का चरित्र नहीं प्राप्त होता है। उपर्युक्त पुराणों में वर्णित हनुमान के चरित्र एवं भक्ति को भी रूप प्राप्त होता है। सम्यक रूपेण वर्णित करने का प्रयास किया गया है।

उपनिषद-

भक्ताधिराज श्री हनुमान का वर्णन उपनिषदों में भी संक्षिप्त रूप में प्राप्त होता है, जिन उपनिषदों में हनुमान जी के चरित्र एवं भक्ति के सन्दर्भ प्राप्त होते है, निम्नवत हैं।

अ- श्री राम रहस्योपनिषद-

श्री राम रहस्योपनिषद में हनुमान जी का वर्णन मिलता है। जब सनकादि योगीन्द्र अन्य ऋषिगण एवं प्रह्लाद आदि भगवान विष्णु के भक्तों ने श्री हनुमान जी से प्रश्न किया कि अठारहवों पुराणों स्मृतियों चारों वेदों तथा छहो शास्त्रों और अध्यात्म विद्या के ग्रन्थों में किस तत्व का उपदेश हुआ है, तो श्री हनुमान कहा कि-

राम एवं परब्रह्म राम एवं परं तप:।
राम एवं परं तत्व श्रीरामों ब्रह्मतारक।।[1]

अर्थात श्री राम ही पूर्ण ब्रह्म है, श्री राम ही परम तप स्वरूप है श्री राम ही परम तत्व है, और श्री राम ही तारक ब्रह्म है।

तत्पश्चात ऋषियों ने श्री राम के अंगों के विषय में भी श्री हनुमान से प्रश्न किया जिसका उत्तर देते हुए श्री हनुमान जी ने राम रहस्य को उद्घाटित किया तथा प्रणव (ॐ) को भी श्री राम का अंग बताया और श्री रामोपासना का भी वर्णन प्रस्तुत किया।[2]

1- श्री राम रहस्योपनिषद- 1/6
2- कल्याण-हनुमान अंक- श्री बाबू लाल गुप्त "श्याम" का लेख-उपनिषदों में हनुमान" पृष्ठ संख्या -87

तदुपरांत श्री राम पूर्वोत्तर तापनीय उपनिषद में श्री राम का अर्थ श्री राम का स्वरूप, श्री राम मन्त्र की व्याख्या जप प्रक्रिया तथा ध्यान आदि के वर्णन के साथ-साथ संक्षिप्त चरित्र तथा पूजा यन्त्र का भी वर्णन प्राप्त होता है जिससे श्री हनुमान जी का भी नामोल्लेख है।

ततस्ततार हनुमानब्धि लंक समाययौ।
सीता दृष्टवा सुरान हत्वा पुर दग्धवा तथा स्वयम्
आगत्य रामेण सहन्यवेदयत् तत्वत:।।[1]

अर्थात तब हनुमान जी समुद्र को लांघकर लंका में प्रविष्ट हुए वहाँ उन्होंने सीता जी के दर्शन के पश्चात् असुरों का वध करके लंका में आग लगा दी तथा लौटकर श्री राम को सब समाचार यथावत सुनाया। संक्षेप में चरित्र का वर्णन करके षट्कोण का अनुसरण तथा आवरण पूजार्थ यन्त्रस्थ देवताओं का वर्णन किया गया है। वहाँ पर भी हनुमान का वर्णन प्राप्त होता है तथा श्री राम चन्द्र जी के उत्तर और दक्षिण भाग में क्रमश: शत्रुघ्न और भरत जी स्थित हैं। भक्त हनुमान श्रोता के रूप में भगवान् श्री राम के सम्मुख हाथ जोड़कर खड़े हैं। वे भी त्रिकोण के भीतर स्थित है-

उदग्दक्षिणयो: स्वस्य शत्रुघ्न भरतौ तत:
हनुमन्त च श्रोतारमग्रत: स्यात त्रिकोणगम।।[2]

तृतीय आवरण में भी हनुमान का वर्णन प्राप्त होता है यथा-
तृती: वायुसूनं च सुग्रीवं भरत तथा।।

1- श्री राम पूर्वोत्तर तापनीयोपनिषद 4/25-26
2- राम पूर्वोत्तर तापनीयोपनिषद -4/32
3- उपर्युक्त 4/35

६- रामोपनिषद-

रामोपनिषद में भी हनुमान का वर्णन प्राप्त होता है कि हनुमान ने ऋषियों के प्रश्नोत्तर पर बताया कि श्री राम के परम भक्त श्री विभीषण जी द्वारा निर्मित श्री राम परिचर्या में सात सहस्त्र गद्य, पाँच सौ आर्याछन्द, आठ सहस्त्र श्लोक, चौबीस सहस्त्र पद्य, दस सहस्त्र दण्डक हैं। इन मन्त्रों के क्रम को जानकर जीव कृतकृत्य हो जाता है।[1]

तदन्तर श्री हनुमान ने कहा कि - एक समय की बात है विभीषण ने सिंहासनासीन रावणान्तक भगवान श्री राम को पृथ्वी पर लेटकर भगवान श्री राम से प्रार्थना की- हे, महाबाहु श्री रघुनाथ जी मैंने अपनी श्री राम परिचर्या में कैवल्य स्वरूप का वर्णन किया है जो सबके लिए सुलभ नहीं है, अतः अज्ञजनों के सुलभता के लिए आप अपने सुलभ स्वरूप का उपदेश[2] करें। यह सुनकर भगवान श्री राम ने कहा- तुम्हारे ग्रन्थ में जो पाँच दण्डक है वे घोर से घोर पापात्माओं को पवित्र करने वाले है, इनके अतिरिक्त जो मेरे नामों का जप करता है वह भी पापों से मुक्त हो जाता है।[3] उपर्युक्त कथनोपरांत विभीषण ने पुनः प्रार्थना की जो पाँच दण्डक या छियान बे करोड़ राम नाम जपने में असमर्थ है, वे क्या करें। भगवान श्री राम ने बताया आदि अन्त में प्रणव से सम्पुटित करके मेरे मन्त्र का पचास लाख लाख जप, इसी प्रकारमेरे मन्त्र से दुगुने प्रणव का जो जप करता है, वह निःसन्देह

1- कल्याण- उपनिषद अंक- गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित -रामोपनिषद 7/10

2- उपर्युक्त -11

3- उपर्युक्त -उपनिषद अंक -रामोपनिषद 12

मेरा स्वरूप हो जाता है। विभीषण ने पुनः प्रार्थना की जो इतना करने में असमर्थ है वे क्या करें। भगवान श्री राम ने कहा-वे तीनों पक्षों गायत्री का पुनश्चरण करें,और जो इसमें भी असमर्थ है,वे मेरी गीता (राम गीता) मेरे सहस्त्र नाम का जप ,जो मेरे विश्व रूप का परिचायक का परिचायक है अथवा मेरे 108 नामों का जप अथवा देवर्षि नारद द्वारा वर्णित श्री राम स्तव राज का पाठ करें,अथवा हनुमान जी द्वारा वर्णित मन्त्र राजात्मक स्तोत्र,सीता स्तोत्र या श्री राम रक्षा आदि इनस्तोत्रों से नित्य मेरी स्तुति करते हैं वे भी मेरे समान हो जाते है,इसमें कोई संदेह नहीं ।

ई- मुक्ति कोपनिषद-

इसके अतिरिक्त मुक्ति कोपनिषद में जहाँ वेदान्त की महिमा,उपनिषदों का वर्णन,मुक्ति के भेद तथा अध्यात्मतत्व का वर्णन किया गया है,उसमें भगवान श्री राम और हनुमान का ही संवाद मुख्य रूप से ही वर्णित हैं। साकेत में भगवान श्री राम एक बार अपने स्वरूप में समाधिस्थ थे। समाधि से उत्थान होने पर श्री हनुमान जी ने श्री राम से पूछा कि मैं आपके स्वरूप को जानना चाहता हूँ कृपा पूर्वक वर्णन करें। तब भगवान श्री राम नें कहा कि " मेरा स्वरूप वेदान्त में भली भाँति प्रतिपादित है। मैं उसका वर्णन करूँगा। मुझ विष्णु के निःश्वास से विस्तृत चारों वेद उत्पन्न हुए। तिलों में तिल की तरह अनुस्यूत वेदान्त उसमें प्रतिष्ठित हैं।

> निःश्वास भूता मे विष्णोर्वेदा जाता सुविस्तराः।
>
> तिलेषु तैलवंद वेदे वेदान्त सुप्रतिष्ठतः ।।[1]

वेदों की संख्या चार है- ऋग्वेद,यजुर्वेद,सामवेद और अथर्ववेद। इन चारों की अनेकों शाखायें है और उन शाखाओं की उपनिषदें भी अनेकों हैं यथा- ऋग्वेद की 21 यजुर्वेद की 109,सामवेद की 1000 तथा अथर्ववेद की शाखाओं के 50 भेद हैं। इस प्रकार 1180 शाखाएं है ,तथा एक एक शाखा की एक-एक उपनिषद मानी गयी है।

> ऋग्वेदस्यं तु शाखाः स्युरेक विंशति संख्याकाः
>
> नवाधिक शतं शाखा यजुषो मारुतात्मज।
>
> सहस्त्र संख्याया जाताःशाखा साम्नः परतप।
>
> अथर्वणस्य शाखाःस्युः पन्चाशद भेदतो हरे।
>
> एकैक स्यास्तु शाखाया एकैकोपनिषन्तमा।।[2]

भगवान श्री राम ने कहा कि इन उपनिषदों में एक मात्र मुक्तिको पनिषद ही मुमुक्षुजनों को मुक्ति प्रदान करने में समर्थ है।

जिन उपनिषदों में हनुमान के सन्दर्भ में वर्णन प्राप्त होता है,प्रस्तुत किया गया है,वैसे हनुमान जी का चरित्र एवं भक्ति का स्वरूप इतना विलक्षण है कि किसी सीमा में अनुबन्धित नहीं किया जा सकता।

1- मुक्तिको पनिषद-1/9
2- मुक्तिको पनिषद-1/12-14

तत्पश्चात अध्यात्म रामायण में वर्णित हनुमान भक्ति तथा चरित्र के मूल्यों का विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है।

अध्यात्म रामायण-

अध्यात्म रामायण निर्विवाद रूप में महत्वपूर्ण है। इसके रचनाकाल तथा रचयिता के विषय में कोई विशेष जानकारी नहीं प्राप्त होती है। इस ग्रन्थ की रामानन्द सम्प्रदाय में बहुत प्रतिष्ठा है,और इसका प्रभाव आनन्द रामायण राम चरित मानस तथा एक नाथ के मराठी रामायण आदि पर प्रत्यक्षरूप से प्राप्त होता है। अध्यात्म रामायण को एक आधुनिक रचना कहा जाता है,अतः इसकी प्राचीनता में नितान्त सन्देह है।[1] सबसे अधिक संभव यह है कि इसकी रचना 14वीं या 15वीं शताब्दी में हुई थी,रामानन्द को भी इसके रचयिता सिद्ध करने का प्रयास किया गया है।[2]

अध्यात्म रामायण की समस्त रचना पार्वती शंकर संवाद के रूप में प्रस्तुत की गयी है,नारद ने ब्रह्मा से यहाँ संवाद सुना था। अध्यात्म रामायण में हनुमान जी का प्रसंग किष्किन्धा काण्ड के 9वें सर्ग में जाम्बवान के कथन से प्रारम्भ होता है। जब सीता जी के अनुसंधानार्थ समस्त वानरों में ऐसे वीर वानर की खोज की जाती है कि जो समुद्र को लांघकर सीता जी को मुद्रिका देकर वापस आ सके। जाम्बवान हनुमान की ओर इंगित करते हुए कहते हैं-

---

1- कलकत्ता संस्कृत सीरीज,भाग-11,भूमिका
2- दि आथर शिप ऑव दि अध्यात्म रामायण जर्नल गंगानाथ झॉ रिसर्च इन्स्टीट्यूट भाग-1 पृ0 215-39

इत्युक्तवा जाम्बवानाह हनुमन्तं व्यवस्थितम्।
हनुमन् किं रहस्तूष्णीं स्थीयते कार्य गौरवे।।[1]
इतना ही नहीं हनुमान जी के सन्दर्भ और कहते हैं-
प्राप्तहके नेव सामर्थ्यं दर्शयाद्य महाबल,
त्वं साक्षाद्वायुतनयो वायुतुल्य पराक्रमः।[2]

जाम्बवान के ऐसेवचन सुनकर हनुमान जी अति प्रसन्न हुए और उन्होंने समस्त ब्रह्माण्ड को मानो कम्पायमान करते हुए घोर सिंह ध्वनि की।

हनुमान जी की वीरता एवं पौरुष को जानकर जाम्बवान ने कहा कि हे वीर तुम्हारा शुभ हो, तुम केवल शुभ लक्षणा जानकी जी को देखकरचले आओ। राम कार्य के लिए जाते समय वायु तुम्हारा अनुगमन करें। इस प्रकार आशीर्वादों से अभिनन्दन करते हुए वानरस्यूथों के विदा करने पर हनुमान जी महेन्द्र पर्वत के शिखर पर चढ़ गये। वहाँ उन्होंने अद्भुत रूप धारण किया-

महा नगेन्द्राग्रशिरो गत्वा बभूवाद तद्दर्शनः।
महानगेन्द्र प्रतिमोमहात्मा सुवर्ण वर्णोऽरुण चारुवक्त्रो।।[3]
महाफणीन्द्राभ सुदीर्घ बाहु वातात्मजोऽदृश्यत सर्वभूतैः।।[4]

1- अध्यात्म रामायण- किष्किन्धाकाण्ड सर्ग 9-श्लोक संख्या-16 पृ0 215
2- उपर्युक्त श्लोक संख्या- 16 पृ0 215
3- अध्यात्मरामायण- किष्किन्धाकाण्ड
4- उपर्युक्त श्लोक संख्या 29, पृ0 216

उस समय समस्त प्राणियों को वायु पुत्र महात्मा हनुमान जी महान पर्वत राज के समान विशाल काय, सुवर्ण वर्ण अरुण (बाल सूर्य) के समान मनोहर मुखवाले और महान सर्पराज के समान दीर्घ भुजाओं वाले दिखलायी देने लगे।

भक्त हनुमान अपने परमाराध्य के कार्य हेतु आकाश मार्ग से बड़े तीव्रता के साथ प्रस्थान किये। पवन पुत्र हनुमान जी को इस प्रकार से वायु वेग से जाते देख देवताओं ने उनकी सामर्थ्य की परीक्षा के लिए इस प्रकार कहा-

गच्छत्येष महा सत्वोवानरो वायु विक्रमः।
लंका प्रवेष्टु शक्तो वान वाजनो मेहे बलंम् ।।[1]

यह शक्ति शाली वान वायु के समान तीव्र वेग से जा रहा है, किन्तु पता नहीं यह लंका में घुस सकेगा या नही अतः इसके शौर्य का पता लगाना चाहिए। सुरसा से देवताओं ने कहा- सुरसे तुम अभी जाकर इस वानर श्रेष्ठ के मार्ग में कुछ विघ्न खड़ा करो तथा इसके बल बुद्धि का पता लगाकर तुरन्त लौट आओ। सुरसा इनके बल बुद्धि का पता लगाकर इनको आशीर्वाद भी प्रदान करती है-

एवं वदन्त दृष्टवासा हनुमन्त मथा ब्रवीत।
गच्छ साधय रामस्य कार्य बुद्धि मतां वर।।[2]

1- अध्यात्म रामायण- सुन्दरकाण्ड सर्ग-1 श्लोक संख्या-9 पृ0 220
2- वहीं सर्ग 1 श्लोक संख्या 23 पृ0 221

हे बुद्धिमानों में श्रेष्ठ जाओ श्री राम चन्द्र जी का कार्य सिद्ध करो। हे वानर देवतागण तुम्हारे बल और बुद्धि के परीक्षार्थ मुझे भेजा था। मुझे निश्चय है कि तुम सीता जी को देखकर फिर शीघ्र ही रघुनाथ जी से मिलोगे, अब तुम जाओ। ऐसा कहने पर लंका की ओर प्रस्थान करते हैं लेकिन जैसे ही समुद्र को लांघते ही उनकी छाया को छाया ग्रह ने पकड़ लिया। वह सिंहिका नाम की एक घोर राक्षसी थी, जो सदा जल में रहकर आकाश में जाते हुए सदा जीवों की छाया पकड़कर उन्हें खींच लेती थी और खा जाया करती थी। उससे पकड़े जाने पर हनुमान जी सोचने लगे यह ऐसा कौन विघ्नकारक है-

> तथा ग्रहीतों हनुमांश्चिन्तयामास वीर्यवान।
> केनदें मेकृतं वेग रोधने विघ्न कारिणा।[1]

जो मेरे वेग को रोक रहा है ऐसा सोचते सोचते उन्होंने अपनी दृष्टि नीचे की ओर की और सिंहका राक्षसी दिखायी दी और उसे तुरन्त मार डाला। इसके पश्चात् लंकिनी जो लंका पहुँचते ही लंका पुरी राक्षसी का रूपधारण किये खड़ी थी। उसने हनुमान जी को नगर में प्रवेश करते देख डाँटा और पूछा-

> प्रविशान्तं हनुमन्तं दृष्टवालंका व्यतर्जयेत्।
> कस्त्वं वानर रूपेण गाम्ना दैत्य लंकिनीम।।[2]

1-अध्यात्म रामायण -सुन्दरकाण्ड सर्ग -1 श्लोक संख्या 36 पृ०सं० 221
2- अध्यात्म रामायण - सुन्दरकाण्ड सर्ग-1 श्लोक संख्या 47-पृ० 222

तू कौन है,जो इस रात्रि के समय मुझ लंकिनी का अनादर करके चोर के समान वानर रूप में नगर में जा रहा है,और यहाँ तू क्या करना चाहता है ,ऐसा कहकर उसने क्रोध से आँखे लाल करके लात मारी। तब हनुमान जी उसकी अवज्ञा करके उसे बाँये हाथ का घूँसा मारा,जिससे वह बहुत सा रुधिर वमन करते हुए पृथ्वी पर गिर पड़ी फिर उठकर महाबली हनुमान जी से कहा-

उत्थाय प्राह सा लंका हनुमन्तं महाबलम्।
हनुमन् गच्छ भद्र ते जिता लंका त्वयानघा।।[1]

हे हनुमान जाओ तुम्हारा कल्याण हो हे अनघ: तुम लंकापुर को जीत चुके। यह है,हनुमान के शौर्य और पराक्रम का परिचय। इसके अतिरिक्त लंकिनी पूर्व काल मे कहीं ब्रह्मा की बात को बताती है। इसके पश्चात लंकिनी हनुमान को भक्त हनुमान कहकर अपने को कृतकृत्य समझती है-

धँन्या महव्यय चिराय राघव
स्मृति र्ममासी द्भवपाश मोचिनी।
तदक्त संगोऽप्यति दुर्लभा मम
प्रसीदतां दाशरथि : सदा हृदि।।

1- अध्यात्म रामायण- सुन्दरकाण्ड सर्ग-1
श्लोक संख्या 57 पृ0 -223

आज बहुत दिनों से मुझे श्री राम चन्द्र जी की संसार बन्धन को नष्ट करने वाली स्मृति हुई है, उनके भक्त का अति दुर्लभ संग प्राप्त हुआ है। अतः आज मैं धन्य हूँ। मेरे हृदय में विराजमान वे दशरथ नन्दन राम मुझ पर सदा प्रसन्न रहें। हनुमान के भक्ति का यह अप्रतिम प्रभाव ही है कि वे लंकिनी को भी राम भक्त के रूप में दिखायी पड़ते हैं।

इसके पश्चात जब वे परात्परा भगवती, भक्ति स्वरूपा माँ जानकी के समक्ष जाते हैं तो उनके मुख का वर्ण अरुण कहा जाता है, और शरीर का पीतवर्ण तथा इनका आकार कलविंक या कलर्वक नामक पक्षी के बराबर बताया गया है-

कलविंक प्रमाणांगो रक्तास्य पीत वानरः।

यहाँ पर वे अपने को राम का दास सुग्रीव का सचिव घोषित करते हैं। यह राम के दास वाली बात वाल्मीकि रामायण में नहीं वर्णित है-

दासोऽहं कोसलेन्द्रस्य रामस्य परमात्मनः।
सचिवोऽहं हरीन्द्रस्य सुग्रीवस्य शुभप्रदे।।
वायो पुत्राऽहं मखिल प्राण भूतस्य शोभने।।[1]

अध्यात्म रामायण में भी तुलसी कृत रामायण के सदृश ही वे सीता को अपना विशाल रूपभी दिखाते हैं, जैसा कि तुलसीदास कृत रामायण में वर्णित है-

---

1- अध्यात्म रामायण- सुन्दरकाण्ड 3,23-24

श्रुत्वेवं वचनं देव्यै पूर्णरूपम दर्शयत।
मेरु मन्दर संकाशो रक्षोगण विभीषणम्।।[1]

मोरे हृदय परम संदेहा। सुनि कपि प्रकट कीन्ह निज देहा।
कनक भूधरा कार सरीरा। समर भयंकर अति बल बीरा ।।[2]

इसके उपरान्त वे अशोक वाटिका उजाड़ डालते हैं और वहाँ के चैत्य प्रासाद को तोड़ डालते हैं-

सीतया सह सम्भाषव्य ह्यशोक वानिका क्षणात।
उत्पाट्य चैत्य प्रासाद बभंजामित विक्रमः।।[3]

रावण की सेना को नाश करके जब वे अक्षय कुमार को भी मार डालते हैं तब इन्द्रजीत उन्हें ब्रह्मपाश में बाँधकर रावणके सम्मुख ले जाता है।[4] रावण की सभा में हनुमान जी वैसी ही बातें करते हैं जैसी तुलसीकृत रामचरित मानस में वर्णित है। अन्तर इतना ही हैकि यहाँ प्रहस्त उनसे प्रश्न करताहै, तुलसी कृत में रावण स्वयं। यहाँ हनुमान अध्यात्म की भी बातें करते हैं।[5] उसी प्रकार लंका जलाते हैं।[6] इसके पश्चात राम को सब संवाद सुनाते हैं।अध्यात्म रामायण 14 वीं या 15वीं शताब्दी में लिपिबद्ध किया गया। यह रामानन्द सम्प्रदाय का एक विशेष ग्रन्थ माना जाता है।[7] इसी से आनन्द रामायण,तुलसीदास कृत

1- उपर्युक्त- 3- 64
2- श्री राम चरित मानस-सुन्दरकाण्ड- दोहा संख्या 16- पृ0 47।
3- अध्यात्म रामायण-सुन्दरकाण्ड-2 सर्ग 76
4- सुन्दरकाण्ड- 3,89-79
5- सुन्दरकाण्ड- 4,7-25
6- सुन्दरकाण्ड- 4,34-45
7- बुल्के राम कथा- हिन्दी परिषद प्रकाशन,प्रयाग विश्वविद्यालय 1962 पृ0 17।

राम चरित मानस, एक नाथ की मराठी रामायण प्रभावित है। इसे रामानन्द का रचा हुआ सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया है।[1] इसमें राम को परमेश्वर परम ब्रह्म का अवतार माना गया है और हनुमान को राम के भक्त तथा दास के रूप में उपस्थित किया गया है।

अध्यात्म रामायण में वर्णित हनुमान भक्ति तथा रूप को प्रस्तुत किया गया है। इसके पश्चात् आनन्द रामायण में वर्णित भक्ति के रूप का वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है।

आनन्द रामायण-

आनन्द रामायण में हनुमान भक्ति का स्वरूप इन पंक्तियों में प्रस्तुत है।[2] आनन्द रामायण की रचना अध्यात्म रामायण के पश्चात् तथा एक नाथ {16वीं श0ई0} के पूर्व में हुई थी। अतः बहुत संभव है कि यह 15वीं शताब्दी में लिखा गया हो। इसमें अनेक स्थलों पर अध्यात्म रामायण के उद्धरण प्राप्त होते हैं।[3] 12251 श्लोकों के इस विस्तृत ग्रन्थ की कथावस्तु का यहाँ अत्यन्त संक्षिप्त निरूपण किया जाता है। मूलतः इसमें शिव पार्वती संवाद का वर्णन है तथा इसके अन्तर्गत द्वितीय कांड के तृतीय सर्ग से रामदास-विष्णुदास का उपसंवाद भी प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त हनुमान के जो सन्दर्भ प्राप्त होते हैं वे निम्नवत हैं-

---

1- दी आथरशिप आफ दी अध्यात्म रामायण जर्नल गंगानाथ झा रिसर्च इन्स्टिट्यूट भाग-1 पृ0 215-39

2- आनन्द रामायण - गोपाल नारायण {बम्बई} का संस्करण प्रकाशक- डी0वी0 मुलगांवकर, 1926 ई0

3- दे0 महाराष्ट्रीय- श्री रामायण समालोचना भाग2, पृ0 425 रा015

आनन्द रामायण के 11वें सर्ग में अहिरावण तथा महिरावण का राम लक्ष्मण को पाताल ले जाना तथा महा पराक्रमी हनुमान द्वारा उनकी मुक्ति का वर्णन प्राप्त होता है।[1] यह हनुमान की भगवान श्री राम के प्रति समर्पित आत्मसमर्पण मयी भक्ति का प्रतीक है।

यहाँ पर वाल्मीकि रामायण की ही भाँति वानरों को बुलाने को हनुमान दूत भेजते हैं,और पीछे हनुमान अंगद इत्यादि सीता की खोज हेतु भेजते हैं। हनुमान को श्री राम यहाँ पर भी स्वनामांकित अंगूठी देते हैं,राम जी यहाँ पर अपना मन्त्र भी हनुमान को देते हैं-

ततो रामो मुद्रिकां स्वां ददौ मारुतिं सत्करे।
मन्त्रा मात्कार युक्तेथं सीतायै दीयतां रहः।
ततो रामो निजं मंत्र ददौ तस्मै हनुमते।
त- तंत्रस्य लक्षीमते कृत्वातु जप लेखने ।।[2]

वाल्मीकि रामायण की भाँति यहाँ भी हनुमान जी समुद्र लाँघकर लंका पहुँचते हैं तथा वहा सीता का अनुसंधान करते है।[3]

भक्ताधिराज श्री हनुमान रात्रि में रावण के शयनागार में घूमते रहते हैं। बाद में वे अशोक वाटिका में प्रवेश करते हैं यहाँ पर वे शिशपा वृक्ष के नीचे सीता जी को देखते हैं। सीता जी बहुत ही कृश काय

1- आनन्द रामायण- सर्ग संख्या 11
2- आनन्द रामायण - 77-94
3- आनन्द रामायण -17-31

हो गयी है ,एक वेणी धारण की हुई है,भूमि में लेटी हुई राम नामोच्चारण कर रही हैं। सीता जी के शरीर आभूषण विहीन हैं। उधर रावण स्वप्न में देखता है कि बन्दर आया है और जानकी जी को देखकर सारा समाचार राम जी को सुनायेगा। एतदर्थ वह अशोक वाटिका में प्रवेश करता है,कि उस बन्दर के ही समक्ष सीता जी को त्रसित करे और वह जाकर राम जी से सम्पूर्ण वृतान्त सूचित करें,जिससे कि श्री राम के द्वारा शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त हो,इस प्रकार विचार करते हुए वह स्त्री समूह के साथ रावण वहाँ पहुँचने का उपक्रम करता है-

तां त्वाम दैमयथे के रावणस्य कोपतस्तद।
विभीषणस्य पर्यंके वर्तन रावणस्य च।।

यहाँ पर हनुमान के लंका में उपद्रव की जो कथावर्णित है वह वाल्मीकि इत्यादि रामायणों में नहीं प्राप्त होती है। रावण के स्वप्न की भी बात वाल्मीकि रामायण में नहीं वर्णित है । यहाँ भी वाल्मीकि रामायण की भाँति जानकी को राम की अंगूठी देते हैं,परन्तु जानकी चूडामणि के स्थान पर कंकन देती हैं।[1]

यहाँ हनुमान जी कहते हैं कि राममंत्र उनकी रक्षा करेगा[2], तथा रामायण की भाँति अशोक वन को नष्ट करते हैं। तत्पश्चात अशोक वन को उजाड़ने की अक्षय कुमार को मारने की तथा मेघनाद द्वारा ब्रह्मशास्त्र से हनुमान के बाँधे जाने की कथा वर्णित है।

1- आनन्द रामायण- उपर्युक्त 124
2- उपर्युक्त - 129-130

इसके पश्चात् कथा का प्रवाह राम चरित मानस की भाँति ही वर्णित है।

हनुमान के पूँछ काटने की आज्ञा का भी वर्णन वाल्मीकि रामायण में नहीं है। यहाँ पर वर्णित कथा में पूँछ जलाने का प्रस्ताव हनुमान ही करते हैं। इसमें इनके अप्रतिम पराक्रम का वर्णन द्रष्टव्य है। सीता जी से मिलकर समाचार ज्ञात करते हैं।

तत्पश्चात् हनुमान जी सीता जी से मुद्रिका लेकर आकाशमार्ग से प्रस्थान करते हैं। लंका के इस पार पृथ्वी पर उतर कर हनुमान जी जल पीने की इच्छा करते हैं इसी बीच एक महात्मा दिखायी पड़ते हैं। हनुमान जी अभिमान के साथ उस महात्मा से जलाशय के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करते हैं। मुनि अंगुलि से जलाशय की ओर संकेत कर देते हैं। हनुमान जी मुनि के सामने मुद्रिका, मणि तथा पत्र को रखकर जल पीने के लिए जलाशय पर जाते हैं इसीबीच में कोई छोटा सा वानर आकर उस मुद्रिका तथा मणि को मुनि के कमण्डलु में डाल देता है। हनुमान जल पीने के पश्चात् आते हैं और वे उस मुद्रिका के लिए पूछते हैं तो मुनि कमण्डलु की ओर संकेत करते हैं। हनुमान जी उस कमण्डलु में देखते हैंकि उस मुद्रिका के समान हजारों मुद्रिकायें हैं। हनुमान जी मुनि से अपनी मुद्रिका माँगते हैं। मुनि कहते है कि जो तुम्हारी हो ले लो। हनुमान जी आश्चर्य में पड़ जाते हैं और वे मुनि से प्रश्न करते हैं कि इतनी मुद्रिकाएँ आपको कहाँ से प्राप्त हुई हैं, मुनि कहते हैं कि राम जी की आज्ञा से अनेकों बार पवनपुत्र लंका में जाकर मुद्रिका लाते रहे हैं, और यहीं

पर रखते हैं भक्तशिरोमणि श्री हनुमान मुद्रिकाओं को गिनने लगते हैं किन्तु मुद्रिकाओं का अन्त ही नहीं होता है, तब हनुमान जी का गर्व दूर होता है, और मुनि को प्रणाम करके वे राम जी के पास चले जाते हैं। राम जी के समीप पहुँचकर हनुमान जी उस मुनि की कथा सुनाते हैं। राम जी कुछ हँसकर कहते है "मैने ही मुनि का रूप बनाकर तुम्हारे गर्व को दूर करने के लिए यह कौतुक किया था।"[1] उस समय हनुमान जी देखते हैं कि वह मुद्रिका राम जी के अंगुलि में हैं। हनुमान जी का गर्व दूर हो जाता है, और वे राम जी को साक्षात् विष्णु समझते हैं।

तत्पश्चात् हनुमान जी राम चन्द्र जी से लंका का वर्णन करते हैं, तथा सैन्य दल का प्रयाण आश्विन शुक्ल दशमी श्रवण नक्षत्र में होता है-

सर्वे गच्छन्तु सर्वत्र सेनायाः शत्रुघातिनः।

आरुह्य मारुतिं चाहं गच्छाम्यग्रेऽखिलैः ततः।।

आरुह्य लक्ष्मणो यातु सुग्रीव त्वमया सह।।

आगच्छस्वैति चा क्षाप्य हरीन रामः स लक्ष्मणः।।

इसी सन्दर्भ में यह कथा भी प्राप्त होती है कि विभीषण के राजतिलक का जब राम विचार करते हैं तो हनुमान समुद्र तट पर रेती से लंका बनाते हैं जो पीछे उनके नाम से प्रख्यात होती है।[2]

1- उक्त दोनो सन्दर्भ वाल्मीकि रामायण में नही है, न आकाशवाणी का न मुनि के समागम का।

2- आनन्द रामायण- 10,41-45

इसके अतिरिक्त जब भगवान श्री राम समुद्र के तट पर शिवलिंग की स्थापना का विचार करते हैं,तो परम भक्तानुरागी श्री हनुमान अपने परमाराध्य श्री राम की आज्ञा से काशी जाते हैं।

तत्पश्चात् भगवान श्री राम हनुमान जी से कहते हैं कि सागर के निकट मैं स्वनामानुसार शिवलिंग की स्थापना करना चाहता हूँ। आप वाराणसी जाकर एक सर्वोत्तम शिवलिंग वहाँ से लायें। इसके पश्चात् हनुमान जी आकाशमार्ग से एक क्षण में वाराणसी पहुँचकर भगवान आशुतोष के चरणों में प्रणाम निवेदित करते हैं और राम कार्य हेतु अपना अभीष्ट निवेदन करते है। भगवान शंकर श्री हनुमान के निवेदन पर राम कार्य हेतु दो उत्तम शिवलिंग अर्पित करते हैं,और कहते हैं- मैंने दक्षिण की ओर प्रस्थान के लिए पहले से ही निश्चय किया था।

तदन्तर हनुमान जी शंकर जी से दक्षिण में जाने के निश्चय के सम्बन्ध में जिज्ञासा करते हैं और शंकर जी अगस्त्य मुनि के साथ हुई बातों को भी सुनाते हैं।[1] हनुमान जी की कार्य निपुणता का तथा द्रुत गामिता का परिचय प्राप्त होता है। इसके पश्चात हनुमान जी को काशी से शिवलिंग लाने में विलम्ब हो जाता है और सर्वान्तर्यामी भगवान श्री राम हनुमान जी के गर्व को जान जाते हैं,अतः वे विप्रगणों से ऐसा निवेदन करते हैकि मुहूर्त निकला जा रहा मैं बालू का शिवलिंग निर्मित कर स्थापित कर रहा हूँ।

1- आनन्द रामायण- 10,71,120

सिकतामय शिवलिंग की स्थापना के हनुमान जी वाराणसी से शिवलिंग लाकर वहाँ उपस्थित होते है और तत्पश्चात् वे सागर के सुरम्य तट पर सिकतामय स्थापित शिवलिंग को देखते हैं इस स्थिति को देखकर अत्यन्त क्लेश और क्रोध होता है, इसके पश्चात् परम बलशाली हनुमान जी शिवलिंग को लपेटकर उखाड़ने का अथक प्रयास करते है। हनुमान जी की पूंछ टूट जाती है तदन्तर इनके वरप्राप्ति की कथा वाल्मीकि रामायण में सदृश ही है। ऋषियों ने इन्हे शाप दिया था कि स्मरण दिलाये बिना ये अपने बल को नही जान पायेगें। यह बाल्मीकि रामायण की कथा भी यहाँ प्रस्तुत की गयी है।[1]

अतस्त दल महात्म्यं को वा शक्नोति वर्णितुम।
तस्कदा मुनीनां हिचाश्रमेषु कुशादिकान।।
x x x x
यदा स्तुतो जाबंवता पुरा प्रायोपवेशने।
तदा स्मृतिस्तस्य जाताश्च बलस्य हनुमत:।।

इस प्रकार आनन्द रामायण के सम्यक अवलोकन करने से ऐसा स्पष्ट होता है कि आनन्द रामायण में वे सभी हनुमान के पराक्रम भक्ति, अनन्यता, आत्म समर्पण विषयक कथाएं प्राप्त होती है, जो हनुमान के विषय में विविध साहित्य में प्राप्त होता है। इसके पश्चात् तत्व संग्रह रामायण में वर्णित हनुमान के भक्ति विषयक अवधारणाओं का विवेचन किया जा रहा है।

1- आनन्द रामायण- 11,154,189
2- उपर्युक्त = 11,185-18,189

तत्व संग्रह रामायण-

तत्व संग्रह रामायण की रचना संभवतः 17 वी ई०ई० में राम ब्रह्मानन्द द्वारा हुई थी। ऐसा ज्ञात होता है कि डॉ० राघवन महोदय ने इस विस्तृत रामायण की हस्तलिपि का निरीक्षण किया था, तथा कतिपय सूत्रों से ऐसा ज्ञात होता है कि इसकी कथावस्तु का एनल्स ऑव ओरियन्टल रिसर्च (मद्रास) (1953) में प्रकाशित हुआ।[1]

तत्व संग्रह रामायण में पूर्ण रूप से राम के परब्रह्मत्व पर प्रकाश डाला गया, एतदर्थ इसका नाम तत्व संग्रह रामायण रखा गया है। राम के सन्दर्भ की कथाओं के साथ ही हनुमान भक्ति तथा कथा का यात्किंचित स्रोत प्राप्त होता है। तत्व संग्रह रामायण में राम को विष्णु के रूप में स्वीकृत किया गया है। तत्पश्चात हनुमान की जन्म कथा का संक्षिप्त विवरण प्राप्त होता है, तत्व संग्रह रामायण में वर्णित तथ्यों के आधार पर ऐसा ज्ञात होता है कि पार्वती उनकी माता है।[2]

आनन्द रामायण में वर्णित अहिरावण, महिरावण के वध के प्रसंग में भ्रमर द्वारा अमृत लाने से अहिरावण और महिरावण पुर्नजीवित हो जाते हैं। उक्त रहस्य जब हनुमान को विदित होता है तो वे सब भ्रमरों को मार डालते हैं। यह भ्रमर हनुमान के आदेश पर भोगपत्नी के पलंग तदन्तर हनुमान अर्जुन की ध्वजा पर बैठने का भी वर्णन प्राप्त होता है।

1- राम कथा-उत्पत्ति और विकास- रेवरेंड फादर कामिल बुल्के-पृ० 176
2- तत्वसंग्रह रामायण- 4,12

तत्व संग्रह रामायण में यह कथा कुछ परिवर्तन के साथ प्राप्त होता है। अन्तर मात्र इतना है कि यह संवाद यहाँ संवाद अर्जुन तथा कृष्ण के बीच में होता है और कृष्ण हनुमान जी को बुलाते हैं। हनुमान के चढ़ने पर सेतु टूटने लगता है तब भगवान कच्छप रूप धारण कर उसे बचाते हैं। इसके पश्चात् हनुमान कृष्ण का अनुरोध स्वीकार करके महाभारत के अवसर पर अर्जुन की ध्वजा पर विराजमान होते हैं।[1] तत्व संग्रह रामायण में ही स्वर्गारोहरण के अवसर पर राम हनुमान को यह कहकर आशीर्वाद देते है कि तुम सदा जीवित रहो, और इस संसार में राम भक्ति बनाये रखो।[2]

उपर्युक्त वर्णित राम आर्शीवचन के माध्यम से राम भक्ति को हनुमान सदासर्वदा जीवित रखते हैं। इसका वरदान उनको प्राप्त ही है।

इसके अतिरिक्त तत्व संग्रह रामायण में ही जब सीता का पता लगाकर हनुमान राम के पास वापस आते हैं तो राम उनको हृदय से लगाकर आशीर्वाद प्रदान करते हैं जहाँ कहीं मेरे नाम का उच्चारण होगा, वहाँ तुम उपस्थित रहोगे अन्त में तुम ब्रह्मा हो कर सृष्टि का सृजन करोगे और उसके उपरान्त मुझे में ही समाविष्ट हो जाओगे। तुम वास्तव में शिव हो जो काशी में मरने वालों को मेरा मन्त्र देकर तार देते हो।[3]

1- तत्व संग्रह रामायण - 7-4
2- उपर्युक्त 7-15
3- तत्व संग्रह रामायण- 5-11

प्रमुख सूत्रों के आधार पर वर्णित तत्व संग्रह रामायण में हनुमान के चरित्र रूप एवं भक्ति पक्ष पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है। इसके बाद हनुमत्संहिता हनुमान के चरित्र तथा भक्ति विषयक सन्दर्भों का विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है।

हनुमत्संहिता–

हनुमत्संहिता को संवत 1715 को एक हस्तलिपि का उल्लेख राजेन्द्र लाल मित्र के कैटलॉग में किया गया है।[1] इस रचना का महारासोत्सव के नाम से भी प्रकाशन हुआ है।[2]

हनुमत्संहिता में हनुमान अगस्त्य संवाद के रूप में सरयू तट पर राम की रासलीला तथा जल विहार का वर्णन किया गया है। विशेषतया यह है कि सीता अपने शरीर से 18108 नारियों की सृष्टि करती हैं तथा इनके साथ रास करने के लिए राम कृष्ण की भाँति इतने ही रूप धारण कर लेते हैं।

राम कथा पर विस्तृत वर्णन हनुमान अगस्त्य संवाद के रूप में ही प्राप्त होता है। हनुमत्संहिता में हनुमान के भक्ति परक चरित्र का भी उल्लेख यत्र तत्र प्राप्त होता है। हनुमत्संहिता की सं० 1715 की हस्तलिपि से पता चलता है कि गोस्वामी जी के जीवन काल में ही इसका सूत्रपात हुआ होगा।

1– राजेन्द्र लाल मित्र– कैटलॉग –भाग 7 पृ0 250

2– लखनऊ प्रकाशन मन्दिर 1904

वस्तुतः हनुमत्संहिता में हनुमान भक्ति विषयक कोई विशिष्ट सन्दर्भ नहीं प्राप्त होते है, भक्ति परक विशेष दृष्टि भी नहीं है। अपभ्रंश रामायण में प्राप्त भक्ति विषयक सन्दर्भों को प्रस्तुत किया जा रहा है।

अपभ्रंश रामायण- पउम चरिउ-

भारतीय जन भावना में श्री राम भक्त हनुमान की प्रतिष्ठा, वीरता जितेन्द्रियता और परिनिष्पन्न ज्ञान के आगार रूप में हुई। अन्तर केवल इतना है कि वैदिक साहित्य में हनुमान को दिव्य व्यक्तित्व से विभूषित बतलाया गया है और वैदिकेतर जैन साहित्य में उनके विभूतिमान लोकोत्तर व्यक्तित्व में उनके भक्ति का निरूपण मानवीय धरातल पर प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया गया है किन्तु जहाँ तक उनके भक्ति का प्रश्न है सम्पूर्ण भारतीय साहित्य में उन्हें समान रूप से आदरणीय स्थान प्राप्त है। वे जनजन को विभिन्न संकटो से मुक्त करने की क्षमता रखते हुए भक्ति के प्रदाता हैं।[1]

वस्तुतः लोक जीवन में उनका संकट मोचन नाम सर्वप्रथित है। इस प्रकार अपनी गुणातिशयता के कारण ही वे सदा लोकाराध्य हुए हैं। हनुमान के भक्ति तथा व्यक्तित्व वैशिष्ट्य के सन्दर्भ में बहु प्रसिद्ध अपभ्रंश कवि स्वयम्भू की रामायण पउम चरिउ के आधार पर कुछ प्रमुख तथ्यों को प्रस्तुत किया जा रहा है।

1- कल्याण का हनुमान अंक- अपभ्रंश रामायण- पउम चरिउ के हनुमान- लेख- श्री रंजन सूरि देव -गीता प्रेस, गोरखपुर।

महाकवि स्वयम्भू ने पउम चरिउ में वर्णन किया कि प्रतापी हनुमान ने अपनी उत्कृष्ट रागानुगा भक्ति के द्वारा अपने परम सेव्य, अखिल कोटि ब्रह्माण्ड नायक परात्पर परब्रह्म भगवान श्री राम को श्री वंशवद बना लिया था और स्वयं "वानराधीश" पदवी को अलंकृत किया था। साथ ही "हनुरुह द्वीप" में लालन पालन होने के कारण ही उनका नाम हनुमान पड़ा था।[1] पउम चरिउ के प्रणेता महाकवि स्वयम्भू ने हनुमान को भट श्रेष्ठ के रूप में भी वर्णन किया है। पउम चरिउ में ऐसा वर्णन प्राप्त होता है कि हनुमान की ध्वजा में उनका अपना ही रूप चित्रित था। अन्तर्यामी भगवान श्री राम जानते थे कि हनुमान जिस पक्ष में रहेंगे, विजय लक्ष्मी उसी को वरण करेगी।

हनुरुह द्वीप में रहने वाले हनुमान शिशिर कालीन नयमानन्द-कारी दिवाकर की भाँति सबको आँखों के प्रिय थे, किन्तु जब वे क्रुद्ध होते थ, तब गज की भाँति निरंकुश सिंह की भाँति रोषपूर्ण और शनि की भाँति भयावह बन जाते थे। सूर्य की भाँति दुर्निवार वेगशाली, यम के समान निष्ठुर दृष्टि अष्टमी के चन्द्रमा की तरह वक्र एवं बुद्धि में बृहस्पति के समान श्री हनुमान के कुपित होने पर श्री लक्ष्मण भी विस्मित हो जाते थे। स्वयंम्भू कवि ने हनुमान के व्यक्तित्व एवं युद्धवीर रूप का विन्यास बड़े मनोयोग से किया है। इस क्रम में कवि ने अपभ्रंश भाषा की समृद्धि की पराकाष्ठा

1- कल्याण- हनुमानांक- पउम चरिउ में हनुमान- श्री रंजन सूरि देव गीता प्रेस, गोरखपुर।

का प्रदर्शन करते हुए हनुमान को विजय लक्ष्मी से विभूषित,शत्रु संहारक, शत्रु सेना विध्वंसक,अस्खलितमान,सौभाग्यराशि,सत्पुरुष रत्न,साक्षात कामदेव, कंदर्प दर्प दलनकारी,दृढ विशाल वक्षस्थल,प्रचण्ड बाहुदण्ड,तनुतेज पिण्ड,आदि अनेक विस्मयकारी विरोचित विशेषणों से समलंकृत किया है।[1]

इसके अतिरिक्त हनुमान के बुद्धि की श्रेष्ठता का भी वर्णन "पउम चरिउ" में प्राप्त होता है जिस समय नागपाश में आबद्ध हनुमान ने रावण के दरबार में उपस्थित होकर सीता के सन्दर्भ में जिन शब्दों के द्वारा रावण की भर्त्सना की,उनसे उनकी परिष्कृत शास्त्रज्ञता का पूर्ण परिचय प्राप्त होता है।

इसप्रकार स्वयम्भू कवि ने अपनी अपभ्रंश रामायण "पउम चरिउ" अर्थात "पद्मचरित" में श्री हनुमान के जिस विराट व्यक्तित्व की अवतारणा की है,उससे उनकी लोकोत्तर श्रेष्ठता का प्रतिपादनहोता है। यही कारण है कि सीता के अनुसंधान के बाद उनकी चूड़ामणि के साथ हनुमान के किष्किन्धा नगर वापस आने पर स्वयं राघव श्री राम ने बरगद की तरह विशाल हनुमान को अपनी भुजाओं में भर लिया। महाकवि स्वयम्भू(8वीं शती) के समर्थ भाषा कवि हुये। यद्यपि इनके तथ्य-कथ्य और दार्शनिक उपस्थापनाओं में पर्याप्त पार्थक्य है। अपभ्रंश रामायण में कवियों की भावनाओं के अनुरूप ही क्रमशः मानव और अति मानव के प्रतीक रूप में श्री हनुमान के व्यक्तित्व और कृतित्व का विनियोग हुआ है। इसके अतिरिक्त गोविन्द रामायण में वर्णित हनुमान का

1- कल्याण - हनुमान अंक- अपभ्रंश रामायण पउम चरिउ के हनुमान ले० श्री रंजन सूरिदेव - गीता प्रेस गोरखपुर।

व्यक्तित्व और चरित्र का संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

गोविन्द रामायण-

वस्तुतः गोविन्द रामायण में गुरु गोविन्द सिंह ने रामावतार को कथा का ही वर्णन मुख्य रूप से किया है। हनुमान का संक्षिप्त परिचय निम्नवत है। गोविन्द रामायण में हनुमान का सन्दर्भ सीता-वेषण के समय प्राप्त होता है। हनुमान राम की मुद्रिका लेकर लंका को जाते हैं वहाँ पर अक्षय कुमार को मारकर तथा लंका को जलाकरसीता के अनुसंधान कार्य को पूरा कर वापस आ गये। हनुमान ने स्वपराक्रम के माध्यम से जाबमाली सहित सेना को मार भगाया। रावण के पास धूम्राक्ष तथा जाबमाली की मृत्यु का समाचार पहुँच गया।[1]

इसके अतिरिक्त गोविन्द रामायण में हनुमान के राम भक्ति विषयक कोई महत्वपूर्ण सन्दर्भ नहीं प्राप्त होते, केवल उनके व्यक्तित्व एवं पराक्रम का ही वर्णन यत्किंचित प्राप्त होता है। भक्ति की झलक मात्र प्राप्त होती है। तत्पश्चात कृत्तिवासीय बंगला रामायण में वर्णित हनुमान भक्ति तथा व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला जा रहा है।

कृत्तिवासीय रामायण-

कृत्तिवासीय रामायण में हनुमान भक्ति के सन्दर्भ में कुछ सूत्र प्राप्त होते हैं। कृत्तिवासीय रामायण में महाकवि कृत्तिवास ने हनुमान के बुद्धिमत्ता की प्रशंसा की है। इससे हनुमान के नये रूप एवं व्यक्तित्व की

1-गोविन्द रामायण- गुरु गोविन्द सिंह द्वारा प्रणीत रामावतार कथा- विनोद कुमार सन्मार्ग प्रकाशन-16 यू०बी० बंगलो रोड दिल्ली-7

संरचना होती है, वस्तुतः हनुमान का चरित्र भक्ति रस से आप्लावित है, वे महान पंडित है, संयमी है। एक ओर जहाँ उन्होंने कुशल सचिव रूप का परिचय दिया, वहीं दूसरी ओर राम के प्रति उन्होंने प्रभु भक्ति का उत्कृष्ट आदर्श रखा। इन गुणों के अतिरिक्त वे वीर पुंगव भी थे, राम ने इन्ही की वीरता और बुद्धि पर विश्वास कर इन्हे सीता के लिए अंगूठी का अभिज्ञान दिया था। इसके अतिरिक्त महाकवि कृत्तिवास ने ऐसे ही समस्त गुणों को ग्रहण करते हुए भी इन्हे कहीं वानर-वृत्ति युक्त और कहीं रूदन शील बनाकर परिवर्तन किया है। कृत्तिवास के हनुमान की राम भक्ति में अनन्यता है, परन्तु साथ में अज्ञता भी है। गरूड़ को राम ने कृष्ण रूप दिखाया, इसलिए वे गरूड़ के प्रति ईर्ष्यालु होकर इस घटना का प्रतिशोध लेना चाहते हैं। वे सीता द्वारा प्रदत्त बहुमूल्य माला के दाने इसलिए फोड़ डालते हैं कि उसमें राम सीता का रूप नहीं है। लक्ष्मण जी के व्यंग्य करने पर वे अपने हृदय को फाड़कर अस्थि-अस्थि पर राम नाम अंकित दिखा देते हैं।[2] यह हनुमान के राम भक्ति का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है। कृत्तिवासीय के हनुमान राम के विह्वल भक्त हैं, उन्हे सृष्टि के कण-कण में राम रूप के दर्शन होते हैं। तभी तो चन्द्रमा में उनको अपने प्रभु की श्याम छाया दिखायी देती है।[3]

कृतिवासीय रामायण में हनुमान कभी-कभी धैर्यच्युत भी होते हैं। वे सीता की खोज न कर पाने पर रोने लगते हैं। निद्रित रावण

1- कृतिवास रामायण- लंकाकाण्ड पृ0 460
2- कृत्तिवासीय रामायण- लंकाकाण्ड पृ0 462 महाकवि कृतिवास द्वारा विरचित।
3- राम चरित मानस- गोस्वामी तुलसी दास-6-12 (क)

को देखकर डर जाते हैं। रावण को सभा में उसका प्रभुत्व देखकर त्रस्त होकर राम के चरणों का स्मरण करने लगते हैं।[1]

कृत्तिवासीय रामायण में हनुमान को आदर्श भक्त रूप में तथा पंडित रूप में भी चित्रित किया गया है। यत्र तत्र उनकी वानर सुलभ चपलता का वर्णन भी प्राप्त होता है। संपाती को सात काण्ड रामायण सुनाने वाले तथा अंगद षड्यन्त्र को कुशलता पूर्वक फोड़ने वाले हनुमान के शौर्य का भी चित्रण प्राप्त होता है।[2]

कृत्तिवासीय के हनुमान राम के अनन्य भक्त है,भक्तों के आदर्श है। एतदर्थ ऐसा ज्ञात होता है कि उत्तर भारत के विभिन्न गाँवों हनुमान की उपासना श्रद्धा एवं आस्था के साथ होती है। उत्तर भारत के विभिन्न मन्दिरों में हनुमान आदर्श भक्त और वीर के रूप में प्रतिष्ठित हैं। आज भी मानस का पाठ करते समय ऐसा विश्वास किया जाता है कि हनुमान अदृश्य रूप में वहाँ अवश्य विद्यमान हैं। एतदर्थ पाठ के पूर्व ही उनके आसन की व्यवस्था कर दी जाती है।[3] कृत्तिवासीय रामायण एवं बंगाल में हनुमान का चरित्र,कर्तव्य परायण ,सरल बुद्धि और आदर्श भक्त के रूप में चित्रित किया गया है।

पराम्बा भगवती सीता उन्हें बुद्धि में बृहस्पति और पंडित कहा था।[4] वे बुद्धिमान प्रपंची भी जान पड़ते हैं। वे रूप बदलकर मन्दोदरी

1- कृत्तिवासीय रामायण-सुन्दर पृ0 224,226
2- वही, पृ0 256
3- कृत्तिवासीय रामायण में कहा गया है- राम नाम के प्रसंग पर तुम कहीं भी क्यों न हो,वहाँ पहुँच जाओगे-"राम नाम प्रसंग हइबे जेइ स्थाने। यथा तथा थाक तुमि आसिबे से खाने।।" लंका-462
4- बंगला रामायण -जानकी बलेन तुमि विचारे पंडित। महावीर हनुमान तुम बृहस्पति 436

और चंडी पाठरत बूढ़े बृहस्पति को छग आते हैं। वे राम के ब्रह्मत्व से परिचित एवं उनके भक्त थे। लक्ष्मण ने कहा था कि तुमसे बढ़कर राम का कोई भक्त नहीं है। श्री राममेर भक्त नाहि तोमार समान[1] किन्तु उनकी भक्ति में अज्ञता है। तत्पश्चात् कंबन रामायण में वर्णित हनुमान के व्यक्तित्व ,चरित्र एवं अनुपम भक्ति का विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है।

कंबन रामायण-

कंबन रामायण में हनुमान की सन्दर्भ कथायें किष्किन्धा काण्ड में प्राप्त होती है। कंबन रामायण में हनुमान राम से ब्रह्मचारी रूप धारण करके मिलते हैं। कंबन के राम सीता को पहचानने के लिए हनुमान से सीता के नख शिख का वर्णन बड़े विस्तार से करते हैं जो 33 पद्यों में चलता है।[2] वस्तुतः यह वर्णन अधिक कामोत्तेजक एवं राम के गौरव के प्रतिकूल प्रतीत होते हैं। विशेषतः ब्रह्मचारी हनुमान के समक्ष इस प्रकार का वर्णन पूर्णतः अनुचित था।

कंबन रामायण में हनुमान को चरित्रवान सिद्ध किया गया है। महाकवि कंबन ने इस बात का उल्लेख किया कि हनुमान ने सूर्य के रथ के आगे चलते -चलते संस्कृत व्याकरण का ज्ञान प्राप्त किया था[3] वह ऐन्द्र व्याकरण था।[4] कंबन रामायण में भी वस्तुतः तीन लघु उपाख्यानों का समाहार है वे हैं-

---

1- कृ०रा०मा० 463
2- कंबन रामायण - 4/13/33·65
3- कंबन रामायण - 4/17/14
4- वही,6/20/45

हनुमच्चरित्र, विभोषण शरणागति और सागर निग्रह। वैसे वाल्मीकीय और अध्यात्म रामायणों में भी हनुमच्चरित्र, तथा भक्ति का वर्णन प्राप्त होता है।

कंबन रामायण में भी ऐसा वर्णन प्राप्त होता है जो कथाक्रम की दृष्टि से स्वाभाविककेकंबन रामायण में भी ऐसा वर्णन प्राप्त होता है जो कथाक्रम की दृष्टि से स्वाभाविक है। कंबन रामायण में हनुमान का शौर्य वर्णन भी प्राप्त होता है। हनुमान समुद्र तीरस्थ महेन्द्र शैल पर खड़े होकर समुद्रोल्लंघन हेतु सन्नद्ध होते हैं।

महाकवि कंबन ने हनुमान के भार से महेन्द्र शैल की दिशा का विस्तृत वर्णन किया है। कंबन रामायण में हनुमान भक्ति स्वरूपा सीता का अनुसंधान करते-करते स्वतः ही अशोक वन में प्रविष्ट हो जाते हैं। उनके प्रवेश के पूर्व ही कंबन ने सीता को आत्म चिन्तन रत दिखाया है। वे राम के पूर्व चरित का स्मरण कर विरह कातर हो जाती है। तथा लक्ष्मण से कहे अपने कठोर वचनों के लिए पश्चाताप करती हैं।[1] वस्तुतः कंबन रामायण में वा०रा० और अध्यात्म रामायण के ही आधार पर हनुमान के चरित्र एवं भक्ति का वर्णन प्राप्त होता है।

कंबन रामायण में हनुमान सीता को विश्वास दिलाने के लिए राम के नख शिख का वर्णन करते हैं।[2] महाकवि कंबन मुख्यतः कवि हैं, गौणतः भक्त। एतदर्थ उनके रामायण में हनुमान भक्ति का वर्णन प्रसंगानुकूल ही प्राप्त

1- कंबन रामायण- 5/3/14·5/6/16

2- वही, 5/4:73

होता है। कंबन रामायण में हनुमान वन विध्वंश करने से पूर्व ही प्रत्यभिज्ञान स्वरूप सीता से चूड़ामणि लेते हैं,और जयन्त की कथा सुनाते हैं। कंबन ने सर्वथा एक नये अभिज्ञान की भी कल्पना की है। सीता हनुमान से कहती है कि उन प्रभु को स्मरण कराना कि मैंने जब अपने शुको के नामकरण के सम्बन्ध में उनकी सम्मति मांगी थी,तो उन्होंने प्यार से उसका नाम कैकेयी रखा था।[1] इसके पश्चात् हनुमान सीता से विदा होने से लेकर इन्द्रजित द्वारा बाँधे जाने तक की कथा कंबन ने बड़े विस्तार से कही है। हनुमान लंकादहन के पश्चात् सीता से मिलकर ही लंका से प्रस्थान करते हैं।

कंबन के अनुसार हनुमान राम के पास पहुँचकर उन्हे प्रणाम नही करते,अपितु भक्ति स्वरूपा सीता के प्रति असीम श्रद्धा व्यंजित करने के लिए जिस दिशा में स्थित है,उस दक्षिण दिशा को प्रणाम करते हैं।[2]

कंबन की यह मौलिक उद्भावना है,जो बड़ा ही मार्मिक बन पड़ा है। कंबन के राम हनुमच्चरित्र सुनकर भी हनुमान के प्रति कोई कृतज्ञता प्रकट नहीं करते ।

वस्तुतः यदि हम तुलनात्मक दृष्टि से विचार करें तो तुलसी का यह स्थल राम की कृतज्ञता एवं हनुमान के भक्ति वर्णन से बड़ा ही मार्मिक बन पड़ा है। वा0रामायण में हनुमान द्वारा औषधि लाये जाने की बात तीन बार उठी है।[3] यद्यपि हिमालय यात्रायें दो होती हैं।

1- कंबन रामायण- 5/6/83
2- वही ,5/15/55
3- वा0रा0 6/50/26-32,4/64/26-64,6,101,23-29

औषधि आनयन प्रसंग में जाम्बवान के परामर्श से ही हनुमान पर्वत उठा लाते हैं किन्तु वह पर्वत पापियों के नगर लंका में न आकर आकाश में ही रूका रहता है। यह कंबन की मौलिक उद्भावना है। पर्वत आने से पूर्व राम शोक प्रकट करते हैं। पर्वत की दिव्यापौषधियों की गंध से लक्ष्मण तथा अन्य घायल या मृत वानर-वीर उठ बैठते हैं। तब हनुमान पर्वत को यथा स्थान रख आते हैं।[1]

कंबन रामायण में अन्यत्र भी औषधि आनयन का वर्णन आता है। लक्ष्मण के शक्ति लगने पर वानर यूथ पति सुषेण उन्हें धैर्य बंधाते हुए कहते हैं, कि लक्ष्मण मरे नहीं हैं। सुषेण ही हनुमान को जाम्बवान द्वारा बताये गये पर्वत से विशल्यकर्णी, सावर्ण्यकर्णी, संजीव करणी और सन्धानी नाम्नोचार औषधियों को न पहचानने के कारण पुनः सम्पूर्ण पर्वत उठा लाते हैं। सुषेण जैसे ही बूटियाँ पीसकर लक्ष्मण को सुंघाते हैं कि वे स्वस्थ हो उठ बैठते हैं।[2]

कंबन के अनुसार रावण विभीषण पर शूल चलाता है जिसे लक्ष्मण अपने ऊपर झेलकर आहते हो गिर पड़ते हैं। उस समय राम अन्यत्र रहते हैं। जाम्बवान के कहने से हनुमान पुनः औषधि लेने जाते हैं। कंबन ने एक नयी उद्भावना यह है कि इस बार हनुमान पर्वत को नहीं अपितु औषधियों को ही पहचान कर ले जाते हैं। जाम्बवान के उपचार से लक्ष्मण स्वस्थ हो बैठते हैं। तब सब लोग राम के पास जाकर समस्त वृतान्त सुनाते हैं।[3] और अपना परिचय वायु पुत्र के रूप में देते हैं।

1- कंबन रामायण- 6/23/20-117
2- वा०रा० 6-/101/23-44
3- कंबन रामायण- 6/31/39-42

मै वायु का पुत्र हूँ। और अंजना के गर्भ से उत्पन्न हूँ, मेरा नाम हनुमान है। हनुमान के उपर्युक्त वचन सुनते ही दृढ़ धनुर्धारी चक्रवर्ती कुमार राम ने मन में कुछ विचार करके यह जान लिया कि इस हनुमान से उत्तम और कोई नहीं है। पराक्रम, शास्त्र संपत्ति, ज्ञान, भक्ति तथा अन्य सभी गुण इनमें अभिन्न रूप में विद्यमान है, फिर भगवान राम लक्ष्मण से बोले-

"हे धनुर्भूषित कंधे वाले वीर {लक्ष्मण} कोई कला {शास्त्र} समुद्र सदृश वेद, आदि ग्रन्थों को इसने प्रशंसनीय रूप में अध्ययन किया है। इसका गहनतम ज्ञान इसके वचनों से ही प्रकट होता है। मधुर भाषा से सम्पन्न ये क्या ब्रह्म देव हैं? या वृषभ वाहन {शिव} है? नहीं तो ये कौन हैं?[1] इससे स्पष्ट होता है कि हनुमान की भक्ति विलक्षण थी जिससे कि भगवान राम ने स्वयं प्रशंसा की है। कंबन रामायण में वर्णित हनुमान के व्यक्तित्व, भक्ति एवं शौर्य के सन्दर्भों को प्रस्तुत किया गया है, अब तुलसी साहित्य में वर्णित हनुमान के भक्ति एवं व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला जा रहा है।

तुलसी साहित्य-

लंका अभियान ही श्री राम लीला का आधार भूत घटना चक्र है और इस घटना चक्र के सूत्रधार रामायण के नायक श्री राम की अपेक्षा अन्जनी पुत्र हनुमान ही अधिक उपयुक्त दीखते हैं। दास्य भाव की प्रधानता के कारण तुलसी दास जी कृत राम चरित मानस में श्री हनुमान का प्रथम दर्शन

1- कंबन रामायण- किष्किन्धा काण्ड पृ0 438 अनुवादक- श्री न0वी0 राज गोपालन।

दास के रूप में होता है। रावण दरबार में पकड़ लाये गये श्री हनुमान अत्यन्त निर्भीक एवं स्पष्ट वक्ता हैं। भृकुटि विलोकत सकल सभीता, जैसे आतंकपूर्ण रावण के सामने देखि प्रताप न कपि मन शंका के रूप में प्रस्तुत होते हैं। उनके पराक्रम पर रीझकर श्री राम ने अत्यन्त विह्वल एवं कृतज्ञता पूर्ण स्वर में कहा-

सुनु कपि तोहि समान उपकारी।
नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी।।[1]

परन्तु परम तेजस्वी एवं पराक्रमी पवन पुत्र अपनी प्रशंसा सुनकर भावुक भक्त तथा अनन्य सेवक की भाँति परमाराध्य प्रभु के श्री चरणों में गिर पड़ते हैं। शीलोनता एवं नम्रता के आदर्श श्री हनुमान ने अपनी प्रशंसा का उत्तर बड़े ही विनम्र स्वरों में दिया और कहा कि प्रभु मैं इस प्रशंसा के योग्य नहीं यह सब आपकी कृपा से सम्पन्न हुआ है-

सो सब तव प्रताप रघुराई।
नाथन कछु मोरि प्रभुताई।।[2]
सुनि प्रभु वचन विलोकि मुख,
गात हरषि हनुमन्त।
चरण परेउ प्रेमाकुल,
त्राहि-त्राहि भगवंत।।[3]

केवल इतना ही कहते हैं और पुरस्कार स्वरूप याचना करते हैं- श्री राम भक्ति की। यहीं भक्ति मार्ग और भक्ति भावना तुलसी के मानस

1- राम चरित मानस- 5/31/ 2 1/2
2- श्री राम चरित मानस- 5/32/ 4 1/2
3- वही, 5/32

का प्रतिपाद्य विषय है। श्री हनुमान के पराक्रम, व्यक्तित्व एवं निःसीम क्षमता से दूरवर्ती प्रदेश के लोग भी परिचित हैं। लक्ष्मण को शक्ति लगने पर सुषेण वैद्य ने औषधि बतलाने के साथ ही सीधे श्री हनुमान जी से उसे लाने के लिए कहते हैं, जिसे वे पूरी तमन्ना से सम्पन्न करते हैं। गहन निद्रा से कुम्भकर्ण जब रावण को जागृत करता है तब वह कहता है कि जिनके हनुमान जैसे सेवक हों, उन श्रीराम को कौन जीत सकता है। राम राज्याभिषेक के उपरान्त श्री राम ने समस्त वानरों को सम्मान सहित विदा किया केवल श्री हनुमान ही एक मात्र अपवाद थे। श्रेष्ठ अद्वितीय एवं उदात्त चरित्र के धनी श्री हनुमान तुलसीदास जी के राम चरित्र मानस में सर्वत्र आदर्श भक्त एवं सेवक के रूप में चित्रित हुए हैं।

वस्तुतः महाकवि तुलसी ने राम चरित मानस में हनुमान को राम के आदर्श भक्त के रूप में प्रस्तुत किया है- स्थान-स्थान पर इनकोअभिमान रहित भक्ति का प्रदर्शन है। राम चन्द्र जी से और लक्ष्मण से इनका पहला साक्षात्कार पम्पासर के पास ही होता है जैसा कि वाल्मीकि रामायण में वर्णित है। सुग्रीव बालि के डर से राम तथा लक्ष्मण के विषय में जानकारी हेतु इन्हे भेजता है।

धरि बटुरूप देखु तैं जाई।
कहेसु जानि जियँ सयन बुझाई।।[1]

पठए बालि होइँ मन मैला।
भागौं तुरत तजौं यह सैला।।
विप्र रूपधरि कपि तहँ गयऊ।
माथ नाइ पूछत अस भयऊ।।[2]

1- राम चरित मानस-गोस्वामी तुलसीदास-किष्किन्धाकाण्ड-1-8पृ0 756
2- उपर्युक्त राम चरित मानस- 1-2/3/756

तत्पश्चात् राम को अपना आराध्य समझकर उनके चरण कमलों पर हनुमान अपना मस्तक रख देते हैं-

प्रभु पहिचानि परेउ गहि चरना।
सो सुख उमा जाइ नहिं बरना।।
x x x x
मोर न्याउ मै पूछा साईं।
तुम्ह पूछहुँ कस नर की नाईं।।[1]

तत्पश्चात् ये राम और लक्ष्मण को अपने कन्धों पर चढ़ाकर सुग्रीव से मैत्री कराने हेतु चले जाते हैं-

यहि विधि सकल कथा समुझाई।
लिये दुऔ जनि पीठ चढ़ाई।।

ये राम और सुग्रीव से मैत्री भी कराते हैं-

तब हनुमंत उभय दिसि,की सब कथा सुनाय।
पावक साखी देई करि जोरी,प्रीति दृढ़ाय।।[2]

तत्पश्चात् सीता के अन्वेषार्थ जाम्बवान, के उदबोधित करने पर ये लंका जाने को उद्यत होते हैं-

---

1- वही, 2-3/6-758
2- वही, 5/760

पवन तनय बल पवन समाना।

बुधि विवेक विग्यान निधाना।।

कवन सो काज कठिन जग माही।

जो नहिं होई तात तुम्ह पाहीं।।

राम काज लगि तब अवतारा।

सुनतहिं भयउ पर्वता कारा।।[1]

वाल्मीकि में यहाँ उनके जन्म की कथा का वर्णन आता है। यहाँ इनका रंग कनक के समान तुलसीदास जी ने बताया है-

कनक वरन तन तेज विराजा।

मानहुँअपर गिरिन्ह कर राजा।[2]

महाकवि तुलसीदास जी ने इनके समुद्रोल्लंघन का विवरण भी अनोखा दिया है, थोड़े से शब्दों में बहुत ही बात कह दी-

जिमि अमोघ रघुपति कर वाना।

ताही भाँति चला हनुमाना।।[3]

यहाँ पर हनुमान जी की गति की उपमा श्री रघुपति के वाणों से दी गयी है। क्योंकि हनुमान जी रघुपति के अनन्य उपासक हैं। दूसरे वोर वाण से सम्बद्ध होता है। अतएव कवि ने राम के अमोघ वाण की गति की उपमा राम से दी है।[4] वस्तुत: वीरों के बाण कभी-कभी व्यर्थ हो जाते हैं,

---

1- राम चरित मानस- किष्किन्धा काण्ड- 30-4/5/6-790

2- वही, 30-7- 790

3- राम चरित मानस-सुन्दरकाण्ड 1-8-794

4- मानस 5/1-

छूटने के पश्चात लक्ष्य को वेधकर ही लौटते हैं। राम जी के बाण किसी के रोकने से नहीं रुकते और अवश्य कार्य करके लौट आते हैं, वैसे ही हनुमानजी मैनाक, सुरसा, सिंहिका और लंकिनी इत्यादि के रोकने से न रुकेंगें। कार्य करके लौट आयेगें और अतिशीघ्र श्री रघुनाथ जी के समीप पुनः आ जायेगें। लंका नगर में ये मसक के समान छोटा रूप धारण करके प्रवेश करना चाहते हैं-

मसक समान रूप कपि धरी।
लंकहि चलेउ सुमिरि नरहरी।[1]

हनुमान जी "मसक" समान रूप धारण करके नृसिंह जी का स्मरण करके लंका में प्रवेश करते हैं। "मसक" लघु रूप की अवधि है, अन्तिम सीमा है। प्रायः लघु "मसक" राम में नहीं दिखलायी पड़ता है, एतदर्थ उन्होंने मसक के समान रूप धारण किया।

हनुमान जी को विभीषण के गृहावलोकन से ऐसा ज्ञात होता है कि वह घर श्री राम जी के आयुध(धनुष और बाण) से अंकित था। उसकी शोभा वर्णन नही की जा सकती थी। वहाँ नवीन(हरे-भरे) तुलसी के वृक्ष समूह देखकर कपीस हनुमान जी आनन्दित होते हैं। वस्तुतः ऐसा ज्ञात होता है कि त्रेता में भी मूर्ति पूजन होता था, यथा तीर्थ तीर देवन्ह के मन्दिर आदि। इसमें जाकर वे विभीषण से परिचय करते हैं तथा उसकी सहायता से सीता का पता ज्ञात कर अशोक वन में प्रविष्ट होते हैं वहाँ वे अपना लघुरूप धारण करके जाते हैं-

करि सोइ रूप गयउ पुनि तहवाँ।
बन असोक सीता रह जहवाँ।।[2]

1- राम चरित मानस- सुन्दरकाण्ड- 4/12 पृ0 798
2- राम चरित मानस(सुन्दरकाण्ड- 8/6-पृ0 803

परमाम्बा भगवती सीता को दशा देखकर इनको बड़ा कष्ट होता है-

परम दुखी भा पवन सुत देखि जानकी दीन।

जब ये अशोक के पेड़ के पत्तों के बीच में छिपे बैठे हुए थे, तभी रावण वहाँ आता है। अन्त में त्रिजटा अपना सपना सब राक्षसियों को सुनाती हैं। संभव है कि इस सपने को सुनकर ही हनुमान जी के मन में इसे सत्य करने की इच्छा जागृत हुई हो-

सपने वानर लंका जारी।
जातु धान सेनासब मारी।।[1]

सीता को बहुत विरहाकुल देखकर रामानामांकित मुद्रिका को सीता के समक्ष डाल दिया। सीता की आज्ञा पाने पर ये प्रकट हो जाते हैं परन्तु इनके संवाद देने पर और अंगूठी अर्पण करने पर भी "फिरि बैठी मन विसमय भयऊँ" तब राम की शपथ "करुणा निधान" कहकर करते हैं। "करुणानिधान" शब्द श्री राम जी के लिए सीता जी व्यक्तिगत रूप से करती हैं।

राम दूत मैं मातु जानकी।
सत्य शपथ करुणा निधान की।।

इससे भी हनुमान, श्री राम जी के अत्यन्त अंतरंग प्रतीत होते हैं। इनके सप्रेम वचन सुनकर ही सीता के मन में विश्वास उत्पन्न होता

1- वही, 11,5- 805

यहाँ विचित्र बात यह है कि पहले तो हनुमान स्वयं राम का सन्देश देते हैं,परन्तु कदाचित ब्रह्मचारी होने के कारण ये राम के मुख से ही उनका, विरह वर्णन करते हैं-

रघुपति कर संदेसु अब सुनु जननी धरि धीर।
अस कहि कपि गदगद भयउ भरे बिलोचन नीर।।[1]

कहेउ राम बियोग तव सीता।
मो कहुँ सकल भए बिपरीता।।[2]

जब सीता को यह संदेह होता है कि इसके समान छोटा बानर क्या कर सकेगा तो ये अपना रूप दिखाते हैं-

कनक भूधरा कार शरीरा। समर भयंकर अति बलबीरा।।[3]

यहाँ सीता इनको अजरत्व,अमरत्व का वरदान प्रदान करती है -

आशिष दीन्हि राम प्रिय जाना।
होहु तात बलसील निधाना।।
अजर अमर गुन निधि सुत होहूँ।
करहु बहुत रघुनायक छोहूँ।।[4]

भक्ति स्वरूपा भगवती सीता परम भागवत हनुमान जी को प्रसन्न करने के लिए इतने आशीर्वाद दिये,जब तक वे प्रसन्न नहीं हुए

1- राम चरित मानस- सुन्दर काण्ड- 14/810
2- वही, 15-1,810
3- वही, 16-8,811
4- राम चरित मानस सुन्दरकाण्ड- 17-2-3/812

तब तक आशीर्वाद का क्रम चलता रहा रहा- बलशील निधान हो,अजर हों अमर हो ,गुण निधान हो इतने आशीष पर भी श्री हनुमान का प्रसन्नता स्पष्ट नहीं होती। करहुँ बहुत रघुनायक छोहू, शब्द पर वे प्रसन्न हुए। श्री रघुनाथ जी की कृपा का आशीर्वाद सबसे पीछे दिया क्योंकि जब तक कुछ भी वासना हृदय में बाकी रहती है तब तक रघुनाथ जी की भक्ति नहीं मिलती। रावण के द्वारा इनका परिचयन पूछने पर इनका कथन बहुत ही प्रभाव-शाली दृष्टिगोचर होता है-

सुन रावन ब्रह्मांड निकाया।

पाइ जासु बल विरचति माया।।

× × × ×

हर कोदंड कठिन जेहि भंजा।

तेहि समेत नृपदल मद गंजा।।

खर दूषन त्रिशिरा अरु बाली।

बधे सकल अतुलित बल शाली ।।

यहां इनका दूतत्व अंगद के दूतत्व से बहुत भिन्न है,वे अपने सभा चातुर्य का प्रमाण इस प्रकार देते हैंकि जब तक रावण अपने प्रश्नों का अन्त नहीं कर लेता तब तक उत्तर देना प्रारम्भ नहीं करते,तथा रावण की पराजयों की ओर परिमार्जित भाषा में ही संकेत करते हैं-

---

1- राम चरित मानस -सुन्दर काण्ड -21 [8-9] 817

जानउँ मैं तुम्हार प्रभुताई।

समर बालि सन कर जस पावा।

सुनि कपि बचन बिहँसि बिहरावा।

अपने युद्ध का तर्क कैसा सुन्दर देते हैं, जिससे इनके नैयायिक होने का आभास मिलता है-

खायउँ फल प्रभु लागी भूखा।

कपि सुभाव ते तोरउँ रूखा।।

जिन मोहि मारा तेहि मैं मारा।

तापर बाँधेउ तनय तुम्हारा।[1]

अर्थात अन्याय तो हनुमान के ही साथ होता है। रावण को कोई उत्तर नहीं सूझता तो कहता है-

मिला हमहि कपि गुरु बड़ ग्यानी।[2]

और अन्त में हनुमान को मारने की आज्ञा देता है अंतमें हनुमान को मारने की आज्ञा देता है, उसी समय विभीषण आ जाते हैं और रावण उनकी इस सलाह पर कि कोई दूसरा दण्ड देना चाहिए, कहता है कि हनुमान की पूँछ में पट बाँधकर तेल बोर कर आग लगा दी जाय। इस कार्य का क्या परिणाम होगा यह जी ने पहिले ही समझ लिया -

बचन सुनत कपि मन मुसकाना।

भई सहाय शारद मैं जाना।[3]

1- राम चरित मानस- सु0 का0 दोहा-22 ,3-5,18
2- वही, दोहा, 24-2-1/8
3- वही,दोहा, 25-3

यह उनकी बुद्धिमत्ता का परिचायक है । जब राक्षसों ने उनकी पूँछ में आग लगा दी तो उन्होंने अपना रूप छोटा कर लिया-

भयउ परम लघु रूप तुरंता।

तत्पश्चात् अपनी पूँछ समुद्र में बुझाकर सीता जी के चूड़ामणि लेकर इस पार आ जाते हैं-

चरण कमल सिरु नाइ कपि गवन राम पहँ कीन्ह।

चलते चलते वे गर्जन करके अपने पयान की सूचना भी रावण को देते हैं। समुद्र के पार पहुँचकर वानरोचित किलकिला शब्द करते हैं। राम के पास पहुँचकर राम चन्द्र का चूड़ामणि देते हैं तथा जानकी के कष्ट की कथा का वर्णन करते हैं। यहाँ पर भी कुछ ऐसा आभास होता है कि सीता स्वयं ही अपना दुखड़ा कह रही है-

सुन सीता दुःख प्रभु सुख अयना।
भरि आये जल रा जिव नयना।।[1]

भक्ताधिराज श्री हनुमान अपनी भक्ति का यहाँ भी परिचय देते है-

कह हनुमंत विपति प्रभु सोई।
जब तक सुमिरन भजन न होई।।[2]

पुनः

बार बार प्रभु चहइ उठावा।
प्रेम मगन तेहि उठब न भावा।।[3]

1- राम चरित मानस- सुन्दरकाण्ड -दोहा- 32-1- पृ0 827
2- वही, दोहा-32-3 पृ0 827
3- वहीं, दोहा-33-1, पृ0 828

राम से भक्ति की याचना करते हैं।

नाथ भगति अति सुखदायनी। देहु कृपा कर अनपायनी।।[1]

वस्तुतः हनुमान जी परम भागवत हैं, एतदर्थ वे अपने बल का प्रदर्शन नहीं करते थे, वे निरभिमानी थे, जैसा कि इस उक्ति से स्पष्ट हो जाता है- रावण का गुप्तचर शुक कहता है-

जेहि पुर दहेउ हतेउ सुत तोरा।

सकल कपिन महँ तेहि बल थोरा।।

अंगद भी हनुमान के विषय में कुछ ऐसा ही कहते हैं, क्योंकि वे हनुमान के शौर्य को देख चुके हैं-

जो अति सुभट सराहेहु रावन।

सो सुग्रीव केर लघु धावना।।

चलइ बहुत सो बीर न होई।

पठवा खबरि लेन हम सोई।।[2]

यह उचित भी है क्योंकि महाकवि तुलसीदास ने पहले ही कहा है, जो ज्ञानी हैं वे अपने को छिपा कर रखते हैं-

कह नृप जे विग्यान निधाना।

तुम्ह सारिखे गलित अभिमाना।।

सदा रहहिं अपनपौ दुराये।

सब विधि कुसल कुवेष बनाये।।[3]

1- वहीं, दोहा- 34-1, पृ0 829
2- तुलसी कृत राम चरित मानस- लंका काण्ड-दोहा-23-9-10-पृ0 885
3- वही बालकाण्ड ।

राम रावण संग्राम में जब लक्ष्मण जी को शक्ति लगी और वे मूर्च्छित हो गये तो मेघनाद उन्हें उठाकर लंका ले जाने का प्रयत्न करने लगा परन्तु कुछ परिणाम नहीं निकला-

तब लगि लै आयउ अनुमाना।

अनुज देखि प्रभु अति दुःखमाना।।

उसके पश्चात् हनुमान सुषेन नाम के वैद्य को लंका से उनके भवन समेत ले आते हैं-

धरि लघुरूप गयउ हनुमंता।।

आनेउ भवन समेत तुरंता।।[1]

इन्हीं को औषधि लेने को भेजा जाता है। यहाँ सुषेन वानर सेनानी नहीं है अपितु लंका में रहने वाले राक्षस वैद्य हैं। रावण द्वारा भेजे हुए काल नेमि से मार्ग में इनको भेंट होती है-

मारूत सुत देखा शुभ आश्रम।

मुनिहिबूझि जल पियौ जायश्रम।।[2]

उससे जब हनुमान ने जल माँगा तो उसने अपना कमण्डलु देना चाहा इस पर हनुमान उसके माया निर्मित आश्रम के सरोवर में जल पीने गये तो एक मकरी ने उनका पैर पकड़ लिया। उसको जब इन्होंने मार डाला तो दिव्य शरीर धारण कर के वह यान पर चढ़कर चली गयी। उसी ने यह बता दिया कि यह राक्षस है मुनि नहीं है। हनुमान इसे अपनी पूँछ में बाँधकर मार डालते हैं, वे जब शैल पर पहुँचते हैं तो औषधि नहीं पहिचान पाने पर पर्वत

1- तुलसीकृत राम चरित मानस- लंका काण्ड-दोहा 55/8/922

2- वही दोहा-58-2-923

को ही उठाकर चल देते हैं-

देखा शैल न औषधि चीन्हा।

सहसा कपि उपारि गिरि लीन्हा।।[1]

देखा शैल कहकर यह जनादि या कि कालनेमि को मारकर तुरंत वे चले और बहुत शीघ्र द्रोणाचल पर पहुँच गये। औषधि न पहचानने का कारण यह था कि हनुमान जी को देखकर वे अदृश्य हो गयी यद्यपि प्रथम वे अति दीप्तिमान देख पड़ी थी। यथा-

प्रदीप्तां सर्वौषधि संप्रदीप्तं ददर्श सर्वौषधि पर्वतेन्द्रम"।[2]

अर्थात् सब औषधियों से युक्त सर्वौषधि पर्वत श्रेष्ठ को देखा। यहाँ यह कथा भी मिलती है कि भरत द्वारा वे गिराये जाते हैं-

गहि गिरि निसि नभ धावत भयऊ।

अवध पुरी उपर कपि गयऊ।।[3]

देखा भरत बिसाल अति निसिचर, मनअनुमानि।

बिन फर सायक मारेउ चाप, श्रवन लगि तानि।।[4]

भरत के बाण लगने पर हनुमान जी पर्वत समेत राम-राम उच्चारण करते हुए गिर जाते है- तब भरत कहते हैं-

जो मोरे मन बच अरु काया। प्रीति राम पद कमल अमाया।।
प्रीति कपि होउ बिगत श्रम सूला।
जौं मो पर रघुपति अनुकूला।।[5]

1- वही, दोहा -58-7-925
2- वा0रा0 74/57
3- तुलसी कृत राम चरित मानस- दोहा संख्या58-8/ पृ0 925
4- वही, दोहा संख्या 58
5- वही दोहा सं0 59-5/6 पृ0 925-926

हनुमान जी तुरन्त उठ बैठते है, कदाचित यह प्रसंग इस कारण जोड़ा गया है कि हनुमान को अपने बल का गर्व हो गया था। इनके अभिमान की बात इसी स्थान पर है-

सुनि कपि मन उपजा अभिमाना।

मोरे भार चलिहि किमि बाना।।

राम प्रताप बिचारि बहोरी।

बंदि चरन कह कपि कर जोरी।।

तव प्रताप उर राखि प्रभु जैहउ नाथ तुरन्त।

अस कहि आयसु पाइ, पद बंदि चलेउ हनु मंत।[1]

लक्ष्मण शक्ति लगने पर जब राम विलाप कर रहे हैं तभी हनुमान औषधि का पर्वत लेकर पहुँच जाते हैं-

आइ गयउ हनुमन्त जिमि करुणा महँ वीर रस।

हरषि राम भेटेउ हनुमाना।

अति कृतग्य प्रभु परम सुजाना।[2]

तत्पश्चात राम रावण संग्राम में हनुमान जी अद्भुत पराक्रम का वर्णन भी प्राप्त होता है। हनुमान जी राम जी के इतने विश्वास पात्र है कि इन्हे ही सीता को अपने विजय का संदेश देने के लिए भेजा जाता है-

पुनि प्रभु बोलि लियउ हनुमाना।
लंका जाहु कहेउ भगवाना।
समाचार जानकिहि सुनावहुं।
तासु कुशल लै तुम्ह चलि आवहुं।।

1- तुलसी कृत राम चरित मानस- लंका काण्ड दोहा-60-7-8 /927
2- वही, दोहा संख्या-61, 62-1 पृ0 929

जब हनुमान राम के पास आकर सीता की कुशल सुनाते हैं। तब राम विभीषण को आज्ञा देते हैं कि हनुमान के संग जाकर सीता को ले आओ। तत्पश्चात हनुमान ही भरत के पास भी राम का कुशल समाचार लेकर भेजे जाते हैं-

प्रभु हनुमन्तहि कहा बुझाई।
धरि बटु रूप अवधपुर जाई।।
भरतहिं कुशल हमारि सुनायहुँ।
समाचार लै तुम चलि आयहुँ।।[1]

जब हनुमान जी भरत के पास पहुँचते हैं तो विप्र रूप धारण करते हैं-

राम विरह सागर महँ, भरत मगन मन होत।
बिप्र रूप धरिपवन सुत,आइ गयउ जनु पोत।।[2]

तब हनुमान जी उनकी भक्ति को देखकर बड़े हर्षित होते हैं। उनको संवाद देने में बड़ी चतुराई का परिचय देते हैं-

जासु विरह सोचहुँ दिन राती2
रटहु निरन्तर गुनिगन पाँती।।
x x x x
रिपुरन जीति सुजस सुर गावत।
सीता सहित अनुज प्रभु आवत।।[3]

1- तुलसी कृत राम चरित मानस- लंका काण्ड- दोहा 121-1-2 पृ0 1010
2- वही,उत्तर काण्ड-दोहा 1(क)1016
3- वही,दोहा-2,3-5 पृ0 1018

सर्वप्रथम हनुमान जी भरत को सीता हरण तथा लक्ष्मण के शक्ति लगने की बात हनुमान जी ने बताई थी अब वे सीता सहित अनुज को लेकर आने की बात कहते हैं, तथा रण जीतने की बात भी बताते हैं, जिससे उनका मनोभाव ज्ञात होजाय। भरत जी पूछते है-

को तुम तात कहाँ ते आए।

मोहि परम प्रिय वचन सुनाए।

x x x x

दीन बन्धु रघुपति कर किंकर

सुनत भरत भेटेउ उठि सादर ।।[1]

भरत जी समझ नहीं पा रहे थे कि हनुमान को क्या दें और कहते हैं-

नाहिन तात उरिन मैं तोही।

अब प्रभु चरित सुनावहु मोही।।[2]

अन्य रामायणों केअनुसार हनुमान को भरत कन्यायें गाँव इत्यादि देते हैं फिर हनुमान जी तुरन्त राम के पास लौट आते हैं और उनको सब कुशल समाचार सुनाते हैं। जब सब वानर विदा हो जाते हैं, सबको वस्त्र, आभूषण मिलते है परन्तु हनुमान को वहाँ कुछ नही मिलता। जाते समय हनुमान सुग्रीव से राम के पास रहने की आज्ञा माँगते हैं वहाँ भी अपना विनीत स्वभाव दिखाते हैं-

---

1- तुलसीकृत राम चरित मानस- उत्तर काण्ड -दोहा-2-8-8,पृ01018
2- वही, दोहा 2-13 पृ0 1019

तब सुग्रीव चरन गहि नाना।
भाँति विनय कीन्हे हनुमाना।
दिन दस करि रघुपति पद सेवा।
पुनि तब चरन देखिहउँ देवा।।
पुण्य पुंज तुम्ह पवन कुमारा।
सेवहु जाई कृपा आगारा।[1]

मानस के अतिरिक्त तुलसी साहित्य में विनय पत्रिका में हनुमान के रूप का वर्णन प्राप्त होता है-

जयति निगमागम-व्याकरण कर लिपि-
काव्य कौतुक कला कोटि सिंधो
साम गायक भक्त कामदायक वाम देव
श्री राम प्रिय प्रेम बंधो।।

x x x x

जयति विहगेस-बल बुद्धि बेगाति मदमथन,
मनमथ माथन ऊर्ध्व रेता।
महा नाटक निपुन कोटि कवि कुल तिलक
गान गुन गन्धर्व जेता।।[2]

यहाँ इनके रूप का भी वर्णन प्राप्त होता है-

जयति बात संजात,विख्यात-विक्रम,
वृहद बाहु,बल विपुल,बालधि विसाला

1- तुलसी कृत राम चरित मानस- उत्तर काण्ड- दोहा संख्या 19-7-8-9 पृ0 1043
2- विनय पत्रिका-गोस्वामी तुलसी दास पद संख्या 28

जात रूपा चलाकार-विग्रह ललत लोम विद्युल्लता ज्वालमाला।

जयति बालार्क वर बदन, पिंगलनयन,

कपिश कर्कस-जटाजूट धारी।

विकट भृकुटि, बज्र दसन नख,

बैरि-मदमत्त-कुंजर-पुंज कुंज रारी।।[1]

जयति सुनिसाल विकराल विग्रह, बज्रसार

सर्वांग भुज दण्ड भारी।

कुलिस नख दसन वर लसति बालाधि

वृहद बैरि सस्त्रास्त्र धर कुधर धारी।।[2]

विनय पत्रिका में इन्हे रूद्रावतार भी कहा गया है-

जयति मर्कता धीस मृग राज विक्रम,

महादेव मुदमंगलालय कपाली।

x x x x

जयति रनधीर रघुवीर हित देवमनि,

रूद्र अवतार संसार पाता।[3]

विनय पत्रिका में तुलसीदास जी ने इन्हे संकट मोचन, विद्या विशारद, कालकर्म, तथा माया का नाश करने वाला कहा है-

सुमिरत संकट विमोचन,

मुरति मोद निधान की।[4]

1- तुलसी ग्रंथावली-विनय पत्रिका -काशी नागरी प्रचारिणी सभा-सं0 1980 प्र0सं0 पृ0 392

2- वही ,पृ0 391

3- वही पद संख्या 26-25

4- पृ0 391 वही पद 30,पृ0 392

जयति पर जंत्र मंत्रा भिचार-ग्रसने,
कारमनि कूट-कृत्यादि-हंता।

× × × ×

जयति वेदान्त विद,विविध विद्या विशारद वेद-
वेदांग-विद ब्रह्मवादी।
ज्ञान वैराग्य विज्ञान भाजन विभो,
विमल गुन गनत सुक नारदादी।।[1]

× × × ×

रित अति भीति ग्रह प्रेत चौरानल,
व्याधि बाधा समन घोर मारी।।[2]

इन विषय की कविता में गोस्वामी तुलसीदास जी ने इन्हें जन्त्र मन्त्र द्वारा अभिचार को ग्रसने वाला,साकनी,डाकनी ,पूतना,प्रेत,बेताल भूत आदि को जीतने वाला तथा वेदान्तविद,विविध विद्याओं का विशारद, वेदों को जानने वाला,ब्रह्मतत्व का निरूपणकरने की सामर्थ्य रखने वाला बताया है।[2] हनुमान को राम भक्तों का अनुवर्ती भी बताया है।

सामगाता अग्रणी,काम जेताग्रणी,रामहित
राम भक्तानुवर्ती।[3]

विनय पत्रिका में हनुमान को महाभारत में अर्जुन की पताका पर बैठने की भी बात मिलती है- जयति भीमार्जुन व्याल सूदन गर्वहर धनंजय रथत्रान केतू।।

1- तुलसी ग्रन्थावली- काशी नागरी प्रचारिणी सभा-विनय पत्रिका पदसंख्या 26-28,पृ0 39।
2- उपर्युक्त पृ0 प0 39।
3- विनय पत्रिका पद संख्या- 126

हनुमान बाहुक में इनके बाल्यकाल सन्दर्भित कुछ वर्णन प्राप्त होता है-

भानु सों पढ़न हनुमान गये भानुमन अनुमानि-
सिसुकेलि कियो फेरफार सो।

× × × ×

बल कैधों बीर रस,धीरज के,साहस के,
तुलसी शरीर धरे सबनि को सार सो।।[1]

इस पद से यह ज्ञात होता है कि इन्होंने सूर्य से विद्या प्राप्त की। सूर्य की ओर मुख करके पीछे की ओर चलते हुए इन्होंने विद्या अध्ययन किया था। महाभारत में से जब अर्जुन के रथ की ध्वजा पर विराजमान हुए तो उस समय का विवरण भी हनुमान बाहुक में प्राप्त होता है-

भारत में पारथ के रथ केतु कपिराज,
गाज्यो सुनि कुरु राज दल हलबल भो।

× × × ×

नाइ नाइ माथ जोरि जोरि हाथ जोधा,
जोहै हनुमान देखे जग जीवन को फल भो।।[2]

हनुमान बाहुक में इन्हें संकट हर भी कहा गयाहै-

देवी देव दनुज मनुज मुनि सिद्ध नाग,
छोटे बड़े जीव जेते चेतन अचेत है।

× × × ×

क्रोध कीजे कर्म को प्रबोध को जै तुलसी को
सोध की जै तिनको जो दोष देत हैं।।[3]

1- तुलसी दास-हनुमान बाहुक-टीकाकार-महावीर प्रसाद मालवीय,गीताप्रेस गोरखपुर सं02022,पृ07-8 पद-4
2- उपर्युक्त पद संख्या-5 पृ09
3- उपर्युक्त पद संख्या- 32 पृ0 29

इस प्रकार गोस्वामी तुलसी दास जी ने राम चरित मानस तथा हनुमान बाहुक में हनुमान को राम का अनन्य भक्त, अतुलित बलशाली, बुद्धि का सागर, ज्ञान का निधान, गरुड़ के समान शीघ्रगामी, बड़े-बड़े पहाड़ों को उठाने में समर्थ, विनम्र तथा सभा कुशल रूप में चित्रित किया है।

कवितावली में श्री हनुमान को अद्भुत पराक्रमी, राम के अनन्य भक्त साहसी आदि कहा गया है-

जब अंगदादिन की मति गति मंद भई,
पवन के पूत को न कूदिबे कोपुलगो।

*　　　*　　　*　　　*

चारिहु चरन के चपेट चापेचिपटि,
गोउचके उचकि चारि अंगुल अचलु गो।।[1]

इस प्रकार तुलसीदास जी ने कवितावली में हनुमान के पराक्रम का परिचय लंकादहन के समय प्रस्तुत किया है।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने इनको पग-पग पर राम भक्त, राम का दास, बल बुद्धि का सागर, संकट हर, ज्ञानी दरसाने का प्रयत्न किया है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपने इष्टदेव राम से अधिक प्रचार राम भक्त हनुमान का कियाहै।

1- कवितावली- गीता प्रेस, गोरखपुर, पृ0 39

संस्कृत नाट्य साहित्य में वर्णित हनुमान के भक्ति परक चरित्र-

हनुमन्नाटक-

हनुमन्नाटक एक रसपूर्ण कृति है। इसके दो संस्करण प्राप्त होता है। एक दामोदर मिश्र कृत द्वितीय मधुसूदन { मिश्र या दास} का। दोनों की तुलना में एक बात विदित होती है कि दोनों में 300 श्लोक समान हैं। इससे यह कहा जा सकता है कि दोनों का मूलाधार एक ही रहा होगा। दोनों संस्करणों में मूल रचयिता हनुमान जी को ही माना है। इनके काल निर्धारण के बारे में मनीषियों के अनेक मत हैं। कोई विक्रम काल का तो कोई भोजकाल का मानते हैं,और किसी ने नवीं शताब्दी के पूर्व का माना है। एतदर्थ काल का सही निर्धारण नहीं किया जा सकता, परन्तु इसे अति प्राचीन माना जा सकता है। नाटक अभिनेय होता है, अभिनय के चार भेद आंगिक,वाचिक,आहार्य और सात्विक माने गये हैं। हनुमन्नाटक में इन चारों का अभाव लगता है अस्तु भावनाएँ और उक्तियाँ बड़ी सुन्दर और मार्मिक हैं। भाषा रसीली और प्रसाद गुण युक्त है,तथा समस्त रसों का भी परिपाक हुआ है। उदाहरणार्थ पाँचवे अंक में मार्मिक भावों को देखा जा सकता है। राम बन में सीता की खोज में लग जाते हैं,उनके टूटे दिल के उद्गार कितने मार्मिक हैं-

> हारो नारो पिता कण्ठे,मया विश्लेष भी रूणा।
> इदानो मन्तरे जाता,पर्वता: सरितो द्रुमा।।[1]

1- हनुमन्नाटक- दामोदर दास कृत- 5/25

राम आगे बढ़ते हुए जब किष्किन्धा पहुँचते हैं, तो मार्ग में हनुमान जी मिलते हैं। राम उनसे पूछते हैं कि आपने सीता को देखा है। हनुमान जी विनम्रता पूर्वक उत्तर देते हुए कहते हैं- एक राक्षस द्वारा बलात ले जाती हुई उस स्त्री ने आभूषण फेंके थे वे ये हैं। राम अश्रुपूरित नेत्रों से आभूषणों को देखते हैं। ये तो सीता के ही हैं, लक्ष्मण देखो तो? लक्ष्मण कहते हैं नाथ मैं कुंडल औरकंगनों को तो नही जानता, हाँ इन नूपुरों को पहचानता हूँ क्योंकि प्रतिदिन प्रणाम करते समय इनको देखता था।

कुण्डले नैव जानामि नैव जानामि कंगने
नूपुरा वेव जानामि नित्यं पादाभि वन्दनात ।।[1]

सीता की खोज के लिए प्रस्थान करते समय उपस्थित संवाद में पवनपुत्र का पराक्रमी व्यक्तित्व प्रथम बार मुखरित होता है। उस समय वे कहते हैं -प्रभो आज्ञा दीजिए क्या मैं समुद्र को सोख लूँ, या रावण और जानकी सहित लंका को ही यहाँ उठा लाऊँ, अथवा पर्वतों द्वारा समुद्र को पाट दूँ।

देवाज्ञां देहि राज्ञां त्वमसि कुल गुरु:शोषये कि पयोधिं।
कि पालंका संलंकाधि पति मुपनये जानकी मानकीर्णाम्।।
सेतुं वहनामि मत: स्फुटित गिरि तटीभूत भंगा तरंगा
मुद्राम्यन्न क्रचकोडपिच मकरकुल ग्राह घोत्कार घोरमा।।[2]

1- वही, अंक-5 श्लोक 39 पृ0 64
2- हनुमन्नाटक- दामोदर दासकृत 5/75 अंक संख्या-6

इसमें अन्य प्रचलित कथाओं की भाँति श्री हनुमान की लंका में न तो विभीषण से भेंट होती है, और न अशोक वाटिका की खोज में किसी सेसहायता ही लेते हैं। अशोक वाटिका विध्वंश के अनन्तर अपने दरबार में रावण श्री हनुमान को दुर्वचन कहता हुआ सींगे अवश्य मारता है, परन्तु पराक्रमी पवन पुत्र से वह भयभीत और चकित हो जाता है। उसके भरी सभा में हनुमान उसकी भर्त्सना पूर्ण स्वर में प्रताड़ना की।

लक्ष्मण को शक्ति लगने पर जब राम सहित समस्त वानरी सेना हताश हो जाती है तब पवन पुत्र अपनी ओजस्वी वाणी से सबके मन में आशा का संचार करते हैं। अन्त में नम्र एवं विनयशील अंजनी पुत्र अपने बल प्रताप एवं पराक्रम का श्रेय प्रभु श्री राम को ही देते हैं। इस अर्चना के साथ हनुमन्नाटक का समापन होता है। महावीर चरितम में वर्णित हनुमान के स्वरूप व्यक्तित्व एवं भक्ति पर प्रकाश डाला जा रहा है।

महावीर चरितम्-

भवभूति कृत महावीर चरत्रम में निम्नवत सामग्री प्राप्त होती है।[1] परम्बा भगवती सीता पराधीन होने की अवस्था में अपना नामांकित उत्तरीय सुग्रीव के पास फेंका था-"अनुसूयानामांक मुत्तरीयम्"

हनुमान जी के सन्दर्भ में लक्ष्मण जी कहते हैं कि हनुमान जी महावीर हैं। इनके जन्म लेते ही अपने पराक्रम से देवताओं एवं असुरों को चकित कर दिया था। अधोलिखित श्लोक में भवभूति भी हनुमान का दूसरा

1- भवभूति-महावीर चरित्रम- सं0टोडरमल ए0ए0 मेकडानल आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस-1928 (भवभूति का काल इनके अनुसार आँठवी शताब्दी का प्रथम चतुरांश है)

नाम वृषाकपि देते हैं।[1]

यत्संक्रन्दनन्दन: कपि वृषा निमंत्र्य दो: स्तम्भयो

व्यापारेणनिरास्थर स्थिर्गारवद् देव द्विषो दुन्दुभि:।

तत्कंकालम काण्ड पाण्डु धन प्रस्पर्धि रुन्धत्पुन:

पादां गुष्ठ विवर्त नाद्य मितो निर्विन्ध्य माविष्यति।[2]

तत्पश्चात हनुमान के लंका दहन की कथा प्राप्त होती है।

भवभूति ने हनुमान द्वाराअशोक वन के नष्ट करने इत्यादि की कथा त्रिजटा से कहलाई है। वह माल्यवान से कहती है कि मैं अभागिन क्याकहूँ। इस एक दुष्ट वानर ने क्षणमात्र में लंका को जलाकर तथा वृक्ष एवं पत्थरों से प्रहार कर राक्षसों का नाश कर दिया एवं अक्षय कुमार को मार डाला[3] इसके अतिरिक्त हनुमान जी के व्यक्तित्व एवं अपरिमित भक्ति तथा अनन्यता का वर्णन सातवें अंक में राम हनुमान संवाद प्रकरण में प्राप्त होता है-

राम: (सवितर्कम्) मन्ये प्रभञ्जनेरस्समत्प्रवृत्ति मुप लक्ष्य मां
प्रत्यु द्गतोह सतैन्यो भरत:। (प्रविश्य)

हनुमान: (स पाद पंकज स्पर्श प्रणम्य)

देव,

स्थितो ध्यायन्नत: किमपि चरितं स्वेन भवत
श्चिरं वार्तामेना मथ मद्दु पलभ्य प्रचलित:।
जटी चीरी रामेत्य सृतं विशवं नाम रक्ष
न्महेहद्यो दान्त प्रकृति सहितोभ्येति भरत:।[4]

1- वृषाकपि के रूप में वर्णन है-श्लोक 34
2- श्लोक उपर्युक्त,पृ0 139
3- उपर्युक्त पृ0 154,अंक 64
4- महावीर चरितम् महाकवि भवभूति प्रणीतम् सप्तम अंक-पृ0 228

इसके अतिरिक्त महावीर चरितम् में हनुमान के भक्ति परक चरित के सन्दर्भ में कोई विशेष चर्चा नहीं है। उत्तर राम चरित में हनुमान का कोई प्रसंग नहीं मिलता है।[1] बालि का नाम तो आया है,परन्तु हनुमान का नाम नहीं आता है। इसके अतिरिक्त अनर्घ राघव में वर्णित हनुमान भक्ति के स्वरों पर संक्षिप्त में दृष्टि डाली जा रही है। मुरारिकृत अनर्घ राघव में हनुमान के शौर्य का वर्णन प्राप्त होता है। हनुमान जी का प्रथम प्रकरण गुह के इस कथन में आता है- "गुह: क्षणं च देवस्य महावीर संवाद गोष्ठोय भूष्य मूक यात्रामन्तरयिष्यति"

तदह मग्रतोगत्वा दिष्ट्या वर्धयामि सूर्य तनयमा।[2]

यहाँ हनुमान को महावीर की संज्ञा दी गयी है। यहीं गुह हनुमान के विषय में यह भी सूचना देता है- गुह: अयमि किष्किन्धेश्वर स्कन्धा

वारैक वीरो भगवत: प्रभंजनस्य परस्त्रैण्य: पुत्रो हनुमान।[3]

इसके पश्चात् यह भी सूचना प्राप्त होती है कि हनुमान अंगद को युवराज पद पर अभिषिक्त कर देते हैं,इसके पश्चात् माल्यवान हनुमान के लंका दहन की सूचना देते हैं-[4]

दग्धा प्रदीप्त पावक परिचय पिण्डस्य हेमवेशमान:।

क्षण मुत्पुच्छय माने हनुमति लंका पुरी देखा।

इसके पूर्व की कथा भी यहाँ कुछ मिलती है।[5] तत्पश्चात् माल्यवान

1- उत्तर राम चरित-भवभूति- सम्पादित टी०आर० रत्नम अय्यर, निर्णय सागर प्रेस,बम्बई 1938
2- श्री मुरारि,अनर्घराघव,निर्णय सागर प्रेस बम्बई,1908,अंक-5,पृ0255
3- उपर्युक्त,पृ0 214
4- उपर्युक्त,पृ0 214
5- उपर्युक्त,पृ0 215

ने कहा "वत्स सारण बालि के बध के द्वारा अपनी शत्रुता का शोध करने वाले वानरों के स्वामी तथा मित्रता के द्वारा हम लोगों के वृत्तान्त को जानने के लिए ऐसा किया है।[1]

इसके अतिरिक्त अनर्घ राघव मुरारि मिश्र कृत नाटक है। इस नाटक में हनुमान के चरित्र, व्यक्तित्व और शक्ति के महत्वपूर्ण सन्दर्भों को ही प्रस्तुत किया जा सका है।

महानाटक-

श्री मधु सुदन मिश्र विरचित महानाटकम् में हनुमान का सन्दर्भ सीता के अनुसंधान के समय प्राप्त होता है। जाम्बवान के द्वारा हनुमान के बुद्धिबल का स्मरण दिलाने पर हनुमान जी भगवान श्री राम को प्रणाम करते हुए कहते हैं-

> कि प्राकार विशाल तोरण वती लंकामि है वानये,
> कि वा सैन्यसमुद्र छिन्न छतच्च संकलं तत्रैव सम्प्राद्ये।
>
> x x x x
>
> जम्बु द्वीप मितोनये? किमथवा वारांनिधि शोषये
> हेलोत्पाटित विन्ध्य मन्दर गिरि स्वर्ण त्रिनेत्रा चल
> क्षेम क्षुण्ण विवर्तमान सलिल वहनामि वारां निधिम्।[2]

उपर्युक्त श्लोक में हनुमान जी के अदभुत पराक्रम एवं व्यक्तित्व का परिचय प्राप्त होता है। तत्पश्चात् भगवान श्री राम हनुमान जी से कहते हैं-

---

1- उपर्युक्त पृ0 224, अंक-6 11, श्लोक के पश्चात

2- महा नाटकम् मधुसुदन मिश्र विरचितम् श्लोक 24, पृ0 195

एतैर्महत्व मुद घुष्टं मारूति तव ते जनः।
वृथा परिश्रमः कार्यः सीता जीवति वा न वा।।
कूर्मो मूल वदाल बालवदपां नाथो,लतावदिदशो।
मेघाः पल्लववत, प्रसूनफल वन्नक्षत्र सूर्येन्दवः।
राजन् व्योम महाक्रहो ममतले,श्रुत्वेति गां मारूतिः,
सीतान्वेषण मादिदेश सहसा रामः सहर्ष स्वयंम्।।[1]

तत्पश्चात् परामबा भगवती सीता हनुमान से अपना परिचय भी देते है। वे हनुमान जी की महान गुणवत्ता,वाक्पटुता एवं बुद्धिमत्ता का निरीक्षण कर "महात्मा" शब्द से सम्बोधित करती है,यह हनुमान जी के भक्ति की उत्कृष्ट उपादेयता है,जिससे कि साक्षात भक्ति ही सराहना करती है-

दुहिता जनकस्याहं वैदेहस्य महात्मनः।
सीतेति नाम तस्याहि भार्या रामस्य धीमताः।
× × × ×
धनुर्वेदे च वेदे च वेदांगेषु च निष्ठितः।
विपुलांसो महावाहो कम्बुग्रीवों महामनाः।।[2]

हनुमान जी की मुद्रा का भी वर्णन भी महा नाटकम में प्राप्त होता है-

सुवर्णस्य सुवर्णस्य सुवर्णस्य वरानने
प्रेषितं राम भद्रेण सुवर्णस्यागरीय कम्।[3]

1- महानाटकम् - मधुसूदन मिश्र विरचितम् पृ0 196 श्लोक संख्या 5/26
2- वही, 5/56-58/212
3- वही 6/66 पृ0 212

इसके पश्चात् छठवें अंक में हनुमान राम का मिलन होता है, हनुमान जी राम के प्रति पूर्ण समर्पित भाव से भक्ति की याचना करते हैं-

पोतो नाम्बु निधिर्न रावण पुरोनि: शेष चूर्णो कृता
नोनीतानि शिरांसि राक्षस पते नानिन्दा सोतामया।
आलेखार्पण पारितोषिक महं नाहामि वारांहट:
संजल्पत्य निलात्म जेस व्यति स्मेराननो राघव:।

इसके अतिरिक्त प्रसन्न राघव में वर्णित हनुमान भक्ति के सन्दर्भ प्रस्तुत किया जा रहा है।

प्रसन्नराघव-

जय देव कृत प्रसन्न राघव नामक[1] नाटक के पाँचवे अंक में नदियाँ तथा सागर वार्तालाप करते हैं। इसी के अन्तर्गत वानरों के माध्यम से सीता के अनुसंधान हेतु भेजने की कथा भी प्राप्त होती है। तुंग भद्रा नदी कहती है कि सीता जी के नूपुर प्रदान से विश्वस्त राम जी ने बड़ी सरलता से बालि को मार कर सूर्यपुत्र सुग्रीव को वानरराज्य पर अभिषिक्त किया है। तत्पश्चात् सीता की खोज के लिए हनुमान आदि अन्य वानरों को समस्त दिशाओं में भेज दिया। छठवे अंक में रत्नशेखर लंका का दृश्य नाटक के रूप में राम-लक्ष्मण के समक्ष उपस्थित करता है। परम्बा भगवती सीता त्रिजटा से आग के लिए प्रार्थना करती हैं और वह अग्नि के अभाव को बताती है। तत्पश्चात् सीता अशोक वृक्ष

1- जय देव कवि विरचितम् -प्रसन्न राघवम् सं0 श्री जीवानन्द विद्यासागर भट्टाचार्य श्री राम पुर-महेशास्त्यन्ते -1872 ई0

से गिरा देते है। सीता सर्वप्रथम संशय करती है, कि यह मुद्रिका लंका में कैसे आयी फिर उसी से राम लक्ष्मण का कुशल समाचार जानने की इच्छा व्यक्त करती है-

(पटा क्षेपेण प्रविश्य)

हनुमान- कुशलं देवि कुशलं ।

सीता- अभो अजुह कोसि तुमम?[1]

तत्पश्चात हनुमान उत्तर देते हैं-

"तारापतेरनुचरो रघुनन्दनस्य,

दूतः सुतोऽस्मि मरुतः प्रथितो हनुमान।।

त्वां अन्वेष्टुमुद्यतवतो दशकंधरस्य,

न्यस्तं करे महाशिला रोमन्थेव।।[2]

राम के पराक्रम का भी वर्णन प्रस्तुत करते है-

"बालिने विक्रमता धनुरंग,

नाक लोक ललना कुच केलिः।

तारया सम्म दीयत चास्मै,

वानरेन्द्र पदवो मणि मौलिः।।[3]

राम के शौर्य, उदात्तता तथा चारित्र्य वैशिष्ट्य का भी वर्णन आता है-

---

1- उपर्युक्त, श्लोक संख्या-39 पृ0 95
2- उपर्युक्त, श्लोक संख्या-41-पृ0 97
3- उपर्युक्त, श्लोक संख्या- 43, पृ0 97

"हिमांशुश्चण्डांशुर्ज्वलन धरोदाव दहनः,
सरिद्वोघोवातः क्रुपित फणि निश्वास पवनः।
नवामल्लो भल्लो कुवलय वनं कुन्त गहनं,
ममत्वद्विश्लेषात्सुमुखि विपरीतं जगदिदम्।[2]

सीता जी चूड़ामणि को हाथ में लेकर चूड़ामणि सम्बन्धी पूर्व वृन्तान्तों को स्मरण कराती हैं। तब हनुमान जी कहते हैं-"देवि श्री राम के चरणों के दर्शन की उत्कंठा मुझे शीघ्र भगवान के चरणों तक जाने को बाध्य कर रही है। सीता जी रोती हुई कहती है कि "तुम्हारे बिना मेरी यह दशा राम जी को कौन सुनायेगा। तब हनुमान जी सीता को आश्वासन देते हैं और कहते हैं कि शीघ्र ही लक्ष्मण जी के धनुष की गंभीर ध्वनि से राक्षसों की बहुयें रोयेंगी। इसी समय नेपथ्य से आवाज आती है कि अरे वानर राजकुमार अक्ष को मारकर कहाँ भागा जा रहा है। रावण की आज्ञा से धनुर्धारी मेघनाद तुम्हे मारने के लिए पहुँच रहे हैं।

(नेपथ्ये)
हत्वा कथंचिदपि राज कुमार मक्षं,
रे वानरापसद कुत्र पलायितोऽसि।
त्वां हन्तुमिच्छति दशानन शासनेन,
दर्पोद्धतो धृत धनुर्नन मेघनादः।[2]

1- उपर्युक्त श्लोक 43-पृ0 97
2- प्रसन्नराघवम् जयदेव विरचितम् श्लोक संख्या-46,पृ0 97

सप्तम अंक में विधाधर तथा विधाधरी के कथोप कथन में लक्ष्मण के शक्ति लगने का विवरण तथा हनुमान के गंध मादन से महा औषधि लाने का वृतान्त मिलता है।[1] इसे सूंघकर लक्ष्मण चैतन्य हो जाते हैं।

उपर्युक्त वर्णन में हनुमान के भक्ति परक चरित्र का उल्लेख भारतीय साहित्य के काव्य और नाट्य साहित्य में प्रस्तुत किया गया है। यहाँ महत्वपूर्ण हनुमान के भक्ति, व्यक्तित्व शौर्य आदि का अंकन किया गया है। यद्यपि यह पर्याप्त नहीं कहा जा सकता। प्रस्तुतीकरण का मुख्य आधार हनुमान के भक्ति, व्यक्तित्व एवं शौर्य आदि का वर्णन ही है। वस्तुतः हनुमान के भक्ति का गरिमा युक्त चरित्रांकन असंभव है तथापि यथा संभव प्रयास किया गया है। तदनन्तर विभिन्न वाङ्मयों में वर्णित हनुमान के भक्ति को उद्घाटित करने की चेष्टा की जायेगी।

चतुर्थ अध्याय

हिन्दी एवं कुछ प्रमुख हिन्दीतर साहित्य में वर्णित हनुमान भक्ति का रूप

क- हिन्दी साहित्य-

राम कथा के पात्रों में हनुमान को पराक्रमी अप्रतिम बुद्धि वाले, अद्भुत कार्यों के कर्ता, राम के अनन्य भक्त एवं आदर्श सेवक होने के कारण महत्वपूर्ण स्थान है। परवर्ती साहित्य में उनका महत्व उत्तरोत्तर बढ़ता गया, और राम के अद्वितीय सेवक एवं अनन्य भक्त होने के कारण वे स्वयं भी जनता की भक्ति के आलम्बन बन गये।[1] यहाँ तक कि उन्हें एक अवतार (शिव का) माना जाने लगा।[2]

मध्य युगीन राम कथा साहित्य में हनुमान के चरित्र एवं भक्ति का जो विकास हुआ, उसका उत्कृष्ट उदाहरण तुलसी साहित्य में प्राप्त होता है। "हनुमान के चरित्र एवं भक्ति का क्रमिक विकास प्रारम्भिक आख्यान काव्य (मूल रामायण के पूर्व) से लेकर, वा॰रा॰, तथा अन्य प्रचलित रामायण में मध्यकालीन देश भाषा साहित्य तथा आधुनिक काल तक में होता आया है।[3] प्रचलित रामायण में वानरत्व विषयक विशेषणों के बाहुल्य से उनके वास्तविक वानरत्व की धारणा बनने लगी, तत्पश्चात् कपियोनि में रुद्रावतार और राम के आदर्श भक्त के रूप में उनकी पूजा होने लगी।[4]

1- चिन्तामणि भाग-1 पृ0 34, आ0रामचन्द्र शुक्ल
2- देवमनि रुद्र, अवतार संसार पाता विनय पत्रिका-15
3- उदाहरणार्थ आधुनिक कवियों में श्री श्याम नारायण पाण्डेय "जय हनुमान" काव्य की रचना दृष्टि से की है।
4- द्र0हिन्दी अनुशीलन, धीरेन्द्र वर्मा (विशेषांक प्रयाग पृ0342 पर डा0बुल्के का लेख)

राम चरित मानस में हनुमच्चरित्र के तीन प्रमुख गुण प्रकाशित किये गये हैं-बलबुद्धि ,सेवा भावना तथा भक्ति भावना।

हनुमान के चरित्र तथा भक्ति की महत्ता को देखकर कतिपय मनीषियों ने यह प्रश्न उपस्थित किया,कि क्या हनुमान की पूजा राम से प्राचीनतर थी,जिस कारण हनुमान की भक्ति को राम कथा में इतनी प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है,या राम कथा में उनका इतना महत्व देखकर इस देश में वानरपूजा की परम्परा प्रवर्तित हुई।[1] हनुमान के चरित्र,भक्ति एवं व्यक्तित्व की गरिमा महनीय है। हनुमान अनेक साहसिक कार्यों के कर्ता हैं।[2] वस्तुतः हनुमान का चरित्र इतना उदात्त है कि कोई महनीय व्यक्तित्व भी उसकी समानता करने में सक्षम नहीं हो सकता। तृतीय अध्याय में तुलसी साहित्य के अन्तर्गत हनुमान के भक्ति का वर्णन प्रस्तुत कर दिया गया है,एतदर्थ पूर्ण विवरण यहाँ देना संभव नहीं है,फिर भी हनुमान भक्ति के तत्वरूपों को स्पष्ट करने का प्रयास किया जा रहा है। तुलसी साहित्य में हनुमान की चरितकथा में तीन क्रमिक सोपान लक्षित होते हैं। प्रारम्भ में वे वानरराज के सुयोग्य सचिव के रूप में दिखलाई पड़ते हैं,मध्य में कुशल दूत के रूप में और अन्त में सेवक तथा आदर्श भक्त के रूप में दिखाई पड़ते हैं। जैसा कि राम के साथ अयोध्या जाने के बाद

1- ए हिस्ट्री ऑफ इण्डियन लिटरेचर विन्टर निट्ज,पृ0 478
2- "Superlatives crowd round Hanuman as you contemeplate him.
वी0एस0एस0 शास्त्री (लेक्चर्स ऑन रामायण)

उनके यहाँ राम की सेवा में रुक जाने से प्रकट है-

पुन्य पुंज तुम्ह पवन कुमारा।
सेवहु जाइ कृपा आगारा।।[1]

तुलसी कृत राम चरित मानस में चित्रित किये गये हनुमान एक सेनानी नहीं बल्कि मुख्य रूप से राम के परम भक्त हैं। यद्यपि मानस में इनके समुद्रोल्लंघन, अशोकवाटिका विध्वंश, लंका दहन, मेघनाद युद्ध, कुम्भकर्ण युद्ध आदि महान पराक्रमों का निर्देश प्राप्त होता है, फिर भी इन पराक्रमों की सही पार्श्वभूमि इनकी राम के प्रति अनन्य भक्ति की है। इसी कारण महाकवि तुलसी दास जी कहते हैं-

महावीर विनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।[2]

हनुमान जी मात्र साहस, पराक्रम, एवं अनन्त शौर्य के लिए स्तुत्य नहीं हुए, अपितु राम के अनन्य भक्त और सखा के रूप में गोस्वामी तुलसीदास जी ने अनेक बार इनकी प्रशंसा की है। मध्यकालीन भक्ति साहित्य में वीरता एवं पराक्रम के साथ इनका व्यक्तित्व भक्त शरण्य के रूप में ग्राह्य हुआ है।

तुलसी के हनुमान भक्ताग्रगण्य एवं अनन्य भक्त के रूप में मन, वच, कर्म अर्पण करने वाले, अतुलित बलधाम तथा साहसी कार्यकर्ता हैं। हनुमान

1- तुलसी कृत राम चरित मानस-7·19
2- तुलसी कृत राम चरित मानस-1·16-10

राम के अनन्य एकाकार भक्त होने के कारण महाकवि तुलसीदास के लिए पूज्य एवं वन्दनीय बन गये हैं।

अन्त में तुलसी के परम भक्त हनुमान वानराधीश सुग्रीव के राम के ही चरणों में रहने के लिए अनुमति माँगता है, तब सुग्रीव उन्हे अनुमति प्रदान करते हैं-

तब सुग्रीव चरन गहि नाना।
भाँति विनय कीन्हे हनुमाना।।
दिन दस करि रघुपति पद सेवा।
पुनि तब चरन देखिहउँ देवा।।
पुण्य पुंज तुम्ह पवन कुमारा।
सेवहु जाई कृपा आगारा।।[1]

हनुमान जी ने रघुपति पद सेवा में दस दिन अर्थात् पूरा जीवन बताया है, पूरा जीवन ही नहीं जन्म जन्मान्तर पर वह राम कृपा की छाया में रहा-

नाथ एक वर माँगउ राम कृपा करि देहु।
जन्म जन्म प्रभु पद कमल कबहुँ घटै जनि नेहु।।[2]

1- तुलसी कृत राम चरित मानस-उ0-18/4-8
2- वही उ0- 1,49/

महाकवि तुलसी के अनुसार हनुमान तो रामावतार मंडल के सदस्य हैं-

राम काज लगि तब अवतारा।।

तुलसी दास जी ने हनुमान के मानवीय चरित्र को यथार्थ तथा मनो वैज्ञानिक ढंग से, परन्तु अलौकिकत्व से समन्वित करके प्रस्तुत किया है। गोस्वामी जी ने हनुमान के अलौकिक एवं अवतारी चरित्र को राम कथा के बाद सबसे अधिक विस्तार सेभक्त रूप में प्रस्तुत किया है।

राम भक्ति काव्य धारा के अन्तर्गत राम चन्द्रिका का महत्व पूर्ण स्थान है। महाकवि के शवकृत राम चन्द्रिका में हनुमान का जो चरित्र मिलता है। वह मूलतः वा०रा० के आधार पर ही आधारित ज्ञात होता है। केशवदास संस्कृत के महान पण्डित थे। प्रौढ़ पाण्डित्य के कारण इनके काव्य में प्रवाह तथा माधुर्य की कमी होना स्वाभाविक था। यहाँ भी हनुमान का राम से समागम ऋष्यमूक पर्वत पर होता है। वे विप्र वेष धरकर राम का परिचय ज्ञात करने के लिए आते हैं।[1]

जब कपि राजा रघुपति देखे
मन नर नारायण सम लेखे।
द्विज वपु के श्री हनुमत आये।
बहुविधि दे आशिष मन भाये।।

1- केशव कौमुदी- राम चन्द्रिका प्रथम भाग-टीकाकार लाला भगवान दीन जी दीन प्रकाशक- राम नारायण लाल, इलाहाबाद मार्गशीर्ष सं०2001 वि०पृ०196

परम बियोगी सम रस भीने
तन मन एकै युग तन कीने ।
अब तुम कौ का लगि बन आये।
केहि कुल हौ कौनहि पुनि आये।।[1]

राम चन्द्रिका में हनुमान आदि अन्य वानर गण सीता की खोज में अंगद के संग दक्षिण दिशि की ओर प्रस्थान करते हैं-

बुद्धि विक्रम व्यवसाय युत साधु समुझि रघुनाथ।
बल अनन्त हनुमंत के मुंदरी दीन्ही हाथ ।।[2]

तत्पश्चात् हनुमान भक्ति स्वरूपा पराम्बा भगवती सीता की खोज के लिए संपाती के बताने पर हनुमान जी समुद्र पार करने को उद्यत होते हैं।

हरि कैसो बाहन कि विधि कैसो हेम,
हंस लीक सी लिखत नभ पावन के अंक को।
तेज को निधान राम मुद्रिका विमान कैधौं,
लच्छन को बाण छूट्यौं रावण निशंक।।
गिरिगज गंड से उडान्यो सुवरन अलि,
सीता पद पंकज सदा कलंक रंक को।
हवाई सी छूटी केसो दास आसमान में कमान कसो,
गोला हनुमान चल्यो लंक को।।[3]

1- महाकवि केशवकृत-राम चन्द्रिका-52-54 पृ0191-192
2- उपर्युक्त -32/209
3- उपर्युक्त -38/211

जिस समय हनुमान लंका में पहुँचते हैं, लंकिनी कहती है, कि उसे ब्रह्मा ने वर दिया था कि "जब हनुमंत आयेंगे और तुझे मारेगें तब लंका विभीषण की होगी। ऐसा कहकर वह नारी जब चली जाती है तो हनुमान सारी नगरी को देखते हैं।[1]

हनुमान रावण को मणि जटित पलंग पर सोते देखते हैं-

तब हरि रावन सोवत देख्यो।
मनि मय पलि का की छवि लेख्यो।।
तहँ तरुनी बहु भाँतिन गावैं।
विविध परवावज बीण बजावैं।।[2]

ये अशोक वाटिका में जाकर मुद्रिका को सीता के समक्ष डालते हैं-

देखि देखि कै अशोक राज मुद्रिका,
कह्यो देहि मोहि आगि तैं जु अंग जाल है रह्यो।
ठोर पाई पौनपूत डारि मुद्रिका दई।
आस पास देखि कै उठाइ हाथ कै लई।।

अंगूठी को देखकर सीता का चित्त भ्रम में पड़ जाता है, तब उन्हें ऊपर देखने पर वानर दिखाई पड़ता है[3] जब सीता पूछती हैं कि तुम बताओ नहीं तो शाप दे दूँगी तब हनुमान वृक्ष पर से उतर आते हैं।

1- उपर्युक्त ,पृ0 219
2- उपर्युक्त ,पृ0 214,48
3- उपर्युक्त ,पृ0 227-13,66-69

डारि शाखा मुद्रिका कपि उतरि आयो भूमि।
सिया चित्त भइ चाइ। तब कही बात बनाई।।

तत्पश्चात् हनुमान सीता को मुद्रिका प्रदान कर तथा प्रभु का सन्देश सुनाकर भगवान राम के पास वापस जाकर सीता जी की दशा का वर्णन करते हैं-

कछु सोच दशा कहि मोहि न आवै
पर जो जब बात सुनै दुख पावै।
हर सी प्रीति बासर बासर लागै।
तन घाव कहीं मन प्रानन खावै।।

यहाँ लाला भगवान दीन जी ने अपनी टीका में यह लिखा है कि हनुमान संगीत विद्या के आचार्य माने जाते हैं।[2] हनुमान जी एक गुप्त बात भी बताते हैं वह इस प्रकार है कि कुरंग के आने के पहिले राम ने सीता को अग्नि में प्रवेश करने को कहा था।[3]

आवन कनक कुरंग के कही बात सुख पाई।
कोपानल करि बास बनि शोक समुद्र न बढ़ाई।।

सीता द्वारा प्रदत्त चूड़ामणि हनुमान भगवान श्री राम को प्रदान करते हैं। भगवान श्री राम को विश्वास हो जाता है कि हनुमान सीता

1- उपर्युक्त- 72/222
2- उपर्युक्त- पृ0 251
3- उपर्युक्त -पृ0 253

तक अवश्य पहुँचे हैं। सीता कथित इस एकान्तिक वार्ता सुनकर वह विश्वास और पक्का हो गया, तब राम जी हनुमान जी की प्रशंसा करने लगे-

सांचों एक नाम हरि लीन्हे सब दुःख हरि,
और नाम परि हरि नरहरि ठाये हौं।
वानर नहीं हो तुम मेरे वानरस सम,
बली मुख सूर बली मुख निज गाये हो।
शाखा मृग नाही बुद्धि बलन के शाखामृग।
कैधौ वेद शाखा मृग केशव को भाये हौं।
साधु हनुमंत बलवंत जसवंत तुम,
गये एक काज को अनेक करि आये हो।।[1]

हनुमान जी ने उत्तर दिया-

बई मुद्रिका लै पार, मनि मोहि लाई वार।
कह करयौं मैं बलंक, अति मृतक जारि लंक।।

इसके अतिरिक्त राम चन्द्रिका के उत्तरार्ध में रामचन्द्र जी हनुमान को भरत की खोज लेने को भेजते हैं।[2]

हनुमंत बलो तुम जाऔं तहाँ।
मुनि वेष भरथ बसते जहाँ।
सुनि के हम भोजन आसु करै।
मुनि प्रात भरत्यहिं अंक भरै।।

1-केशवकृत राम चन्द्रिका- 32/245
2- केशव कौमुदी [द्वितीय भाग] केशवदास कृत राम चन्द्रिका की समूल टीका-टीका कार स्व0 लाला भगवान दीन [दीन] राम नारायण लाल पब्लिशर एण्ड बुकसेलर इलाहाबाद 1945, पृ09

हनुमान जाकर देखते हैं-

हनुमंत बिलोके भरत सशोके अंग सकल मल धारो।

बलका पहिरे तन सीस जटागन है फल मूल अहारो।।

बहु मंत्रिन मन में राज काज में सब सुख सो दिन तोरे।

रघुनाथ पादुकनि, मन बच प्रभु गीन सेवत अंजुलि जोरे।

सुमित्रा से भगवान राघवेन्द्र कहते हैं[2]-

इन सुग्रीव विभीषणे अंगद अरु हनुमान।

सदा भरत शत्रुघ्न सममाता जो मैं जान।।

भगवान श्री राघवेन्द्र के राज्य तिलक के अवसर पर हनुमान जी शाही झण्डे को सम्हाले हुए हैं।[2]

जामवन्त हनुमन्त नलनील मरुति व साथ।

छरी छबीली शोभि जे दिग पालन के हाथ।

तिलक के पश्चात् राम सबको सब वस्तुएँ प्रदान करते हैं।[3]

दीन्हो मुकुट विभीषणे आपनो अपने हाथ।

कंठ माल सुग्रीव को दीन्हो श्री रघुनाथ।

माला श्री रघुनाथ के उर शुभ सीतहि सोदई।

अर्पयों हनुमन्त को अति दृष्टि के करुणामई।।

1- उपर्युक्त, पृ0 32-13
2- उपर्युक्त, पृ0 88-27
3- उपर्युक्त, पृ0 90-32-33

जब अश्वमेध के घोड़े को लवकुश ने बांध लिया तो शत्रुघ्न तथा लक्ष्मण के हारने पर रामचन्द्र भरत को भेजते हैं। उनके साथ जाम्बवान, हनुमान और सुग्रीव विभीषण इत्यादि भी जाते है-

जाम्बवन्त विलोकियो रणभूमि भू हनुमंत।
इतो बड़ो विक्रम कियो, जिते युद्ध अनन्त।।

इसके अतिरिक्त महाकवि केशव कृत राम चन्द्रिका में कोई विशेष भक्ति परक हनुमान के चरित्र का वर्णन नहीं प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त हिन्दी साहित्य के ही अन्तर्गत राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जी द्वारा लिखित महाकाव्य "साकेत" में हनुमान का वर्णन इस प्रकार प्राप्त होता है। मैथिलीशरण गुप्त की राम कथा में उर्मिलापति लक्ष्मण के संजीवनी द्वारा प्राण रक्षक रूप में ही हनुमान ने कुछ महत्व पाया है। मैथिली शरण गुप्त के हनुमान का व्यक्तित्व न तो एक रूप है और न स्वतंत्र है जो केवल अप्रत्यक्ष एवं सामान्य है।[1]

मैथिली शरण गुप्त ने हनुमान को कथा सूत्र जोड़ने के लिए उपयोग किया है। संजीवनी बूटी लाने के लिए गये तथा भरत द्वारा आहत होने पर संक्षेप में पूर्ण राम वृतान्त देने वाले हनुमान के प्रभावी वक्तृत्व का संक्षेप में ही इस प्रकार उल्लेख किया है-

---

1- राम कथा के पात्र, बाल्मीकि, तुलसी और मैथिलीशरण गुप्त, ले0 डॉ0 भ0ह0राजू रकर, ग्रन्थम, राम बाग, कानपुर पृ0 265

मारुति ने निज सूक्ष्म गिरा में,

बीज तुल्य जो वृत्त दिया।

आते ही इस अश्रुभूमि में,

उसने अंकुर रूप लिया।।[1]

उपर्युक्त वर्णित हनुमान के बल, तथा बुद्धि का परिचय वाल्मीकि और तुलसी द्वारा चित्रित चरित्र में अनेकशः मिलता है। वस्तुतः हनुमान के सम्बन्ध में एक प्रवाद रहा है, कि राम से सम्बन्ध आने के उपरान्त वे सदा राम के साथ ही रहे हैं।

डा० राम प्रकाश अग्रवाल के अनुसार हनुमान वाग्मी राजदूत हैं, और अनन्य भक्त। जो हनुमान विभीषण शरणागति के समय मूक बना रहता है, वहीं अन्य अवसरों पर अपनी वाग्मिता का प्रमाण एक दूसरे रूप में देता है। जिससे भक्त की कल्पना शक्ति का विकास होता है-

"कह हनुमंत सुनहु प्रभु,

शशि तुम्हार प्रिय दास।

"तव मूरति विधु उर बसति,

सोई स्यामता अभास।।[2]

1- साकेत- मैथिली शरण गुप्त -11 पृ0 449

2- तुलसी कृत राम चरित मानस-लंकाकाण्ड 12 क।

महाकवि तुलसीदास तथा मैथिली शरण गुप्त ने इसे हनुमान की उपलब्ध विशेष प्रभु प्रसाद राम कृपा के रूप में चित्रित किया है।

पाछे पवन तनय सिरु नावा।

जानि काज प्रभु निकट बोलावा।।

× × × × ×

हनुमंत जन्म सुफल करि माना।

चलेउ हृदय धरि कृपा निधाना।।[1]

मैथिली शरण गुप्त ने उपर्युक्त वर्णित भाव प्रकट किया है-

दी मुद्रिका मुझे प्रभुवर ने,

फेरा मुझ पर स्व कर सरोज।

दुस्तर क्या है, उसे विश्व में,

प्राप्त जिसे प्रभु का प्रणिधान।।[2]

अन्त में राम की मुद्रिका देखकर सीता के हृदय में विश्वास उत्पन्न किया, तथा अपना उत्तरदायित्व पूर्ण किया। उक्त प्रसंग से हनुमान के अन्तः करण का हृदय पक्ष चित्रांकित होता है। वस्तुतः शरीर पक्ष के प्रसंग अनेक हैं, जिनमें उनके अदम्य साहस का परिचय प्राप्त होता है। हनुमान के चरित्र की पावनता ने हनुमान को सर्ववन्द्य एवं आदर्श बना दिया है। हनुमान के शील चारित्य की गरिमा महिमा मण्डित है। हनुमान अपने विशेष गुणों के कारण ही राम के सबसे अधिक विश्वास भाजन बने। एतदर्थ राम सीता

1- तुलसी कृत राम चरित मानस-किष्किन्धा काण्ड- 25/5-6
2- साकेत- मैथिलीशरण गुप्त-11/पृ0 430-431

लक्ष्मण के समान वानर श्रेष्ठ हनुमान युगों-युगों के लिए आराध्य बन गये। अन्त में दास्य भाव से भगवान राम से यही वर माँगते हैं-

स्नेहो मे परमो राजं स्त्वयि तिष्ठतु नित्यदा।
भक्तिश्च नियता वीर भावो नान्यत्र गच्छतु।।
यावद्राम कथा वीर चरिष्यति मही तले।
तावच्छरीरे वत्स्यन्तु प्राणामम न संशय।।[1]

राम ने अन्त में हनुमान की इच्छा पूर्ण की मत्कथा: प्रचरिष्यन्ति या वल्लोके हरीश्वर। तावद्रस्य स्व सुप्रीतो मद्वाक्य मनु पालयन।।[2]

मैथिली शरण गुप्त ने वाल्मीकि के ही अनुकरण पर हनुमान के चरित्र को अत्यन्त संक्षेप में प्रस्तुत किया है।

तत्पश्चात विष्णु दास कविकृत रामायन कथा के अर्न्तगत हनुमान के भक्ति रूपों पर संक्षिप्त में प्रकाश डाला जा रहा है। रामायण कथा के लेखक विष्णु दास का समय 15वीं शताब्दी है। इस बीच की अवधि में हिन्दी में राम काव्य सम्बन्धी ग्रन्थों का विशेष रूप से उल्लेखनीय प्रणयन नहीं हुआ। वस्तुत: हिन्दी राम काव्य का प्रकाश स्तम्भ राम चरित मानस ही रहा है। राम चरित मानस का सम सामयिक और परवर्ती प्रभाव इतना व्यापक और तीव्र रहा कि लोगों ने इसके अतिरिक्त राम काव्य की अन्य महत्त्वपूर्ण कृतियों पर विशेष ध्यान ही नही दिया। विष्णु दास कविकृत रामायन में हनुमान का

1- वा0रा0 4/18
2- उपर्युक्त -4/17

सन्दर्भ लंका गमन के समय प्राप्त होता है, जिससे उनके शौर्य का वर्णन विदित होता है-

अंगद सब कारन सुनि लियौं।
पवन पूत कहँ आयसु दियो।।
पुनि बल बोले बारम्बार।।
x x x
उपयौ हनुमंत लंक गिरि गयो।
जै जै शब्द उनका सहिं भयो।।[1]

तत्पश्चात् हनुमान जामवंत का चरण स्पर्श कर लंका नगरी की ओर प्रस्थान करते हैं-

इतनो सुनि अंगद सिर नाइ।
परसे जामवंत के पाँइ।
बंदर भेंटि सुबल्यौं तुरन्त
पर्वत शिखर गयौ हनुमंत।।
x x x
देखत कपिन्ह अचम्भौ भयौ।
उपयौ हनु अकासहिं गयौ।।
तब तैसे दोसै हनुमंत ।
मनौ अकास गरुड़ है पंतु ।।[2]

1- विष्णु दास कवि कृत- रामायण कथा पं0लोकनाथ द्विवेदी शिलाकारी-
प्रकाशन-साहित्य भवन प्रा0 लिमिटेड, इलाहाबाद पृ0 90

2- उपर्युक्त पृ0 संख्या 92/- 24-26

फिर हनुमान लंकास्थित अशोक वाटिका में सीता को सोचतर देखकर दुःखी होते हैं,तथा उनको प्रभु का सन्देश एवं मुद्रिका देने का प्रयत्न करते हैं,हनुमान विचार मग्न होते हैं:-

बिनु संदेश कहे क्यों जाऊँ।
तुझे राम तो कहा कहाऊँ।।
सोचत हनू विचारत भाउ ।
यह है मूल मन्त्र को ठाउ।।

x x x x

ऊँची धुनो बोले हनुमंत । राघव दशरथ सुत जु कहंता
बन महुँ गए पिता आदेश। दे मांधव तपसो के भेष।।[1]

तत्पश्चात हनुमान मुद्रिका गिरा देते है,
जिसे देखकर परामबा भगवती सीता दुःखी होती हैं तथा
प्रसन्न होती हैं-

खिनु खिनु मुंदरो खिनु हनुमंत।
सीता सुख उपज्यो देखंत।।
जोरे हाथ नवाये सीस।
उपजी मया हनू जब दीस ।।
धनि धनि पवन पूत वर वीर।
धनि जननी जिहि पोख्यो छीर।।
सो जोजन सागर नाकियो।
हियें न डर रावन कोकियो।।[2]

1- उपर्युक्त पृ0 101-162 एवं 164
2- उपर्युक्त - 196-197,पृ0 103

पराम्बा भगवती सीता हनुमान के ऊपर अत्यन्त प्रसन्न होती है, तथा अजरता अमरता का वरदान भी प्रदान करती है, प्रभु की कृपा एवं भक्ति प्राप्त करने का आशीर्वाद देती है-

विनती करै दुहूँकर जोरि। प्रभु के परेउ चरनौं होरि।।
तब सो सीता आयसु दियो। दृष्टि समान अमर सो कियो।।
आइसु दियै चल्यौ हनुमंत।
हरष्यौ पवन पूत मय मंत।।
सो पै हनुमंत कहा कराऊँ।
बिनु रावन देखे क्यों जाऊँ।
आयौ गयो न जानत कोई। क्यौं ताकौ जसि कीरति होइ।।[1]

इसके अतिरिक्त रामायन कथा में हनुमान के शौर्य एवं अद्भुत पराक्रम का वर्णन लंका दहन के समय वर्णित है।

इसके पश्चात् हनुमत्पताका में वर्णित हनुमान भक्ति तथा भक्तित्व एवं शौर्य के सन्दर्भ में प्रकाश डाला जा रहा है।

रीतिकाल या श्रृंगार काल के अन्तिम चरण में बुन्देल धारा में एक प्रकाण्ड पंडित काली दत्त नागर (जन्म सं0 1909) ने दिशाओं में अपनी प्राञ्जल प्रतिभा की किरणों को बिखेरा बहुमुखी प्रतिभा के धनी काली महाराज माता बगुला मुखी के उपासक थे। वे अपने समय के प्रख्यात तांत्रिक एवं महान ज्योतिषी भी थे। इस भक्ति कवि के उत्साही प्रपौत्र श्री अरुण

1- उपर्युक्त- 247-249, पृ0 1·7

नागर ने उरई में महाकवि काली कला शोध केन्द्र स्थापित करते हुए उनकी कृतियों के उद्धार का बीड़ा उठाया। महाकवि काली की प्रतिनिधि रचना "हनुमत्पताका" ही है। संस्कृत ब्रज भाषा और खड़ी बोली की छटा के साथ ठेठ बुन्देली की इस कृति में भक्ति,श्रृंगार और शौर्य की त्रिवेणी प्रवाहित हो रही है। काली कवि ऐसे हनुमद् भक्त थे,जिनपर रीति कालीन शैली का पूरा प्रभाव था। उनकी पैनी दृष्टि रसराज श्रृंगार की झलक देखने दिखाने के अवसरों को नहीं भुला सकती थी। जहां उन्होंने लंका की किशोरियों की क्रीड़ा में तथा नारी सौन्दर्य के चित्रण में स्वछन्द श्रृंगार का चित्रण किया है, वहां वियोगिनी सीता की हीन दशा का भी चित्रण है।[1] "हनुमत्पताका" नामक खण्ड काव्य में लंका गमन से प्रारम्भ होकर राम मिलन तक का विवरण है। अन्त में एक-एक कवित्त में राम,लक्ष्मण,सुग्रीव,अंगद जामवन्त आदि ने हनुमान की प्रशंसा की है। मेघनाद के रथ पर आरूढ़ होकर अशोक वाटिका का विध्वंश करने वाले वानरों को पकड़ने के लिए आता है। हनुमान जी उस पर बड़े गर्जना के साथ टूट पड़ते हैं-

गीर गंभीर महा रणधीर सुबीर,
धुरीमन की शिरता जसो।
× × × ×
मेघ गरजन के रथ पै कविराज,
दराज परो गिरि गाज सो।[2]

1- राम दूत त्रैमासिकी पत्रिका-अक्टूबर 1985 लेख- डॉ0 हरिमोहन लाल श्रीवास्तव,पृ0 7
2- हनुमत्पताका-महाकवि काली- मुद्रित भारती प्रेस उरई,पृ0 95-20

मल्ल विद्या विशारद महाबल शाली

हनुमान ने पहलवानी दावपेंच दिखा-दिखा कर मेघनाद को अपनी पूँछ में लपेट लिया-

बैठे कर बाँये तर बगल तर हो पैठे,
कमर लपेट कर बल भर पूर में ।
× × × ×
झूम कर झपक झपेटत भुजान बीच,
लूम कर लपक लपेटत लंगूर में।[1]

जिस समय मेघनाद का शारीरिक बल चुक गया, तो उसेन रिपु भुज तमन मंत्र के रूप में ब्रह्म अस्त्र बगुला मुखी का प्रयोग किया और हनुमान ने उसकी मर्यादा का निर्वाह करने के लिए बन्धन स्वीकार किया। रावण के दरबार में पहुँच कर हनुमान जी अपना परिचय शान के साथ देते हैं। परन्तु "द्रोणगिरि" धारन उधाल अहीश प्राण में भावी घटनाओं के उल्लेख के कारण "काल दोष" आ समाया है। भक्तों की दृष्टि में यह हनुमान जी द्वारा भविष्य की सूचना मानी जा सकती है-

लंका पुर जारन उजारन अशोक वन,
मारन हौं असुर कुमारन की भीरको।
× × × ×
द्रोन उपारन हौं धीर दिवी धारन को
धारण हौं चतुर मुनिन्द रघुवीर को।।[2]

1- उपर्युक्त- 97/2।
2- उपर्युक्त- 103/2।

रावण के आदेश से हनुमान की पूँछ में आग लगा दी गयी, मानों रावण ने उन्हें सोने की अपनी लंका को उजाड़ रखने का निमंत्रण दिया हो। गोस्वामी तुलसी दास ने कवितावली के सुन्दरकाण्ड में लंका-दहन के कितने ही बेजोड़ चित्र प्रस्तुत किये हैं काली कवि के इस एककवित्त से उठने वाली फुत्कारें और लपटें भी तो देखिए-

पुच्छ पुर फेरत लपेरत पताकन को,
गेर कटीलियाँ नवेलियाँ नागिन को।
* * * *
फोर नभ मंडल अखंडल अटा पै जाय,
दपटे दराज लहलपटे आगिन को।।[1]

हनुमद्भक्तों को बजरंगवीर की जिन भुजाओं का अमित भरोसा है, उनके सन्दर्भ में महाकवि काली के कवित्त का चमत्कार प्रस्तुत किया जा रहा है-

विभव संपदा है के हदा है सिन्धु संगर को,
सुखई सदा है बेर बंधन विधान को।
* * * *
वज्र बंधुआ है शूर सेन सिंधुआ है राम,
यश को धुआ है के भुजा है हनुमान को।।[2]

1- उपर्युक्त- 103/22
2- उपर्युक्त- 129/29

तत्पश्चात् महाकवि काली ने हनुमान की महत्ता का वर्णन किया है तथा उनके भक्ति के सन्दर्भ में संक्षिप्त परिचय दिया है-

स्वर्ग पुर जीना है कुरीना राज संपत को,
भूषण नवीना भारती के कंठ सुत को।
x x x x
पुंज कविता को जाहि मंजु कविता को कुंज
कल्प लता को पताका पौन पुत को।[1]

हनुमन्त वीर के यश को यह ध्वजा काली कवि की कीर्ति पताका भी है। हनुमत्पताका में महाकवि काली ने हनुमान जी के शौर्य एवं अप्रतिम पराक्रम तथा अखण्ड व्यक्तित्व का वर्णन प्रस्तुत किया है। तत्पश्चात् सुदर्शन सिंह कृत हनुमान चरित में वर्णित हनुमान जी के व्यक्तित्व एवं भक्ति को प्रस्तुत किया जा रहा है-" हनुमानचरित में हनुमान जी को विचार के रूप में वर्णित किया है। "वे शिवपुत्र है,कल्याण की इच्छा विचार को जन्म देती है। विचार स्वयं कल्याण का दूसरा स्वरूप है। माता अन्जना से उनकी उत्पत्ति है। मल रहित सात्विक बुद्धि में विचार का उदय होता है। हनुमान जन्म से राम भक्त अर्थात् अन्तरात्मा के समर्थक हैं।"[2]

हनुमान इच्छा रूप धारी हैं, कभी छोटे कभी पर्वताकार भी हो जाते हैं। राक्षसों के लिए वे अजेय हैं। विचार कभी व्यापक और कभी सूक्ष्म

1- उपर्युक्त- 131/29
2- हनुमान चरित- सुदर्शन सिंह - पृ0 343- हनुमान का आध्यात्मिक स्वरूप।

हो जाता है। जब वह जाग्रत एवं व्यापक रहता है,कोई आसुरी भाव उसे परास्त नहीं कर सकता है। वह अविकारी है,इसी से हनुमान ब्रह्मचारी कहे जाते हैं।[1]

हनुमान सुग्रीव के पास रहते थे,और यही सीतान्वेषी राम से उनकी भेंट होती है। शान्ति स्वरूपा सीता को खोजते-खोजते जीव किष्किन्धा अर्थात् मन के समीप पहुँचता है। यहाँ उसे विचार मिलता है, जो उनको उत्साह{सुग्रीव} से मैत्री कराता है।

हनुमान कपि हैं,विचार चंचल है। राम अयोध्या की लीला समाप्त करके लीला संवरण कर गये,किन्तु अपने जनों की रक्षा के लिए हनुमान को यहीं छोड़ गये। भक्ति के अनन्याराधक भक्ताधिराज हनुमान को ही अधिकार है,किसी को राम के चरणों तक पहुँचाने का। वे अजर,अमर है, कल्पान्त तक धरा पर रहेंगे।[2]

महाभारत के युद्ध में हनुमान अर्जुन की ध्वजा पर बैठे रहते हैं, भगवान की आज्ञा उन्हे केवल तटस्थ बैठे रहने की थी,प्रेम जब उद्योग का सारथ्य कर रहा हो तो विचार को संग्राम में आने की आवश्यकता नहीं। प्रेम के द्वारा प्रेरित उद्योग स्वत: आसुरी भावों पर विजय प्राप्त कर लेगा।[3] इसके पश्चात् हनुमान चरित मानस में हनुमान भक्ति तथा व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला जा रहा है।

1- उपर्युक्त- पृ0 संख्या 345
2- उपर्युक्त- पृ0 संख्या 347
3- उपर्युक्त- पृ0 संख्या 349

कविवर श्री दीना नाथ शुक्ल जी द्वारा विरचित हनुमान चरित मानस में हनुमान के जन्म तथा व्यक्तित्व,शौर्य,एवं भक्ति का वर्णन बड़े ही मनोरम दृष्टि से प्रस्तुत किया है। कवि ने हनुमान के जन्म के समय में प्रकृति वर्णन की अनुपम छटा बिखेरने का प्रयास किया है-

कार्तिक का सुखद प्रभात रहा,

बहुपुष्प लतायें फूली थी।

x x x x

नवरंग चौकड़ी भरते थे,

वन गायें अरु हरिणो के दल।।[1]

तत्पश्चात कवि ने हनुमान के बाल्यकाल की क्रियाओं का चित्रण काव्यात्मक भावों के साथ प्रस्तुत किया है।

देखा पवन सुत निकट ही,

इक सुन्दरी व्याकुल पड़ी

x x x x

मैं हूँ प्रकम्पन चाहता,

यह सुत हमारे साथ हो।।[2]

इसके अतिरिक्त हनुमान चरित मानस में हनुमान का सन्दर्भ भक्ति स्वरूपा पराम्बा भगवती सीता की खोज में प्राप्त होता है,जिसमें उनका शौर्य वर्णन प्रत्यक्ष रूप से दृष्टव्य है-

---

1- हनुमान चरित मानस-रचयिता- दीना नाथ शुक्ल "दीन"
2- कविवर दीना नाथ शुक्ल "दीन" विरचित हनुमान चरित मानस-पृ034

गरज उठा कपि दल सिंहोसा,

कानन पथ तमतमा उठा।

* * * *

अथवा गूलर सा लेकर,

उसका निज ग्रास बना डालो।।[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में हनुमान के बल की गरिमा का वर्णन प्रस्तुत किया गया है। निम्नवत पंक्तियों में तो हनुमान के अप्रतिम पराक्रम को चरम सीमा पर प्रदर्शित कर दिया गया है-

रावण भी क्यामहाविष्णु,

तेरा पथ रोक सके कैसे।

* * * *

अपनी पुष्ट भुजाओं में ले,

गदा शक्ति लेकर तरषै।।[2]

इसके अतिरिक्त हनुमान चरित मानस में हनुमान के शौर्य पराक्रम वर्णन के साथ-साथ राम के प्रति समर्पित अनन्य भक्ति का भी वर्णन प्राप्त होता है। तत्पश्चात अहिरावण वध, द्वापर दर्शन, क्रीड़ा दर्शन आदि का वर्णन बड़े ही भावात्मक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। तत्पश्चात् कवि श्री मान द्वारा विरचित हनुमान के भक्ति स्वरूपों एवं व्यक्तित्व का वर्णन "हनुमत हुंकार" नामक काव्य खंड में प्राप्त होता है। उक्त काव्य में हनुमान के अप्रतिम पराक्रम

1- उपर्युक्त- पृ0 48
2- उपर्युक्त- पृ0 48

का ही वर्णन प्रस्तुत किया गया है-

महाबीर लंकापश्रुली हनुमत।
बजरंग वायु-पुत्र त्राहि-त्राहि दीन जन को।
x x x x
फार-फार फन्दन कौं, मार-मार बैरिन कौं,
बार-बार विष, जार-जार ज्वर वान कौं।।

हनुमत हुंकार में महाकवि मान ने हनुमान के दूतत्व का भी वर्णन बड़े ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है-

साहसीक सुभट शिरोमणि उदार कपि,
केसरी कुमार ऐजदार उमंकर कौ।
x x x x
लायक लखौ लौ रघु नायक कौ पायक,
सहायक सपूत बन्दौ दूत रघुबर कौ।।

महाकवि मान ने हनुमान को अष्ट सिद्धियों के प्रदाता तथा समस्त संकटों को दूर करने वाला सिद्ध किया है।

नाशन अरिष्टन कौ प्रकाशन विलासन कौ,
दासन कौ सुखद त्रासन असेत कौ।
x x x x
सुमिरे तमाम करे पूरे मन काम, रिद्ध
सिद्धिन कौ धाम, बन्दौ नाम हनुमंत कौ।।

1- मारुति काव्यांजलि-पृ0 19-मान कवि द्वारा विरचित- हनुमानहुंकार-हुंकेत
अंक-पृ020, पद संख्या-3
2- उपर्युक्त-पृ0 16, पद संख्या-24
3- कवि श्रीमान द्वारा विरचित- हनुमत हुंकार-
4- उपर्युक्त-पद संख्या 6, पृ023

रीतिकालीन कवि सेनापति ने हनुमान को भजन रसिक रूप में वर्णित किया है-

भए हैं भगत भगवंत के भजन रस,
है रहे विवेकी, जग जान्यौ जिन सपनौ।
× × × ×
जैसौ हनुमान जान्यौ भजन को रस जिन
राम के भजन जौलौं जोव्यौ माँग्यौ अपनौ।।[1]

आधुनिक कालीन छायावाद के स्तम्भ महाकवि सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला" जी ने राम की शक्ति पूजा काव्य में हनुमान के अप्रतिम पराक्रम शौर्य, आदि का वर्णन प्रस्तुत किया है-

वारित-सौमित्र-भल्लपति अगणित मल्लरोध,
गर्जित प्रलयाब्धि-क्षुब्ध-हनुमत केवल प्रबोध,
उद्गीरित वह्नि भीम पर्वत कपिचतुःप्रहर
जानकी भीरु उर आशा-भर, रावण सम्बर।[2]

तत्पश्चात महाकवि निराला ने हनुमान को दल विशेष के नायक के रूप में चित्रित किया है।

1- भारतीय काव्यांजलि- कविवर सेनापति विरचित पद- पृ0 20-21
2- राम की शक्ति पूजा- कवि श्री महाकवि सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला" पृ0 22

आये सब शिविर, सानु पर पर्वत के मन्थर,

सुग्रीव विभीषण, जाम्बवान आदिक वानर,

सेनापति दल विशेष के अंगद हनुमान,

नलनील, गवाक्ष प्रात के रण का समाधान

करने के लिए फेर वानर दल आश्रम स्थल।[1]

इसके पश्चात महाकवि निराला ने हनुमान को राम के अनन्य भक्त के रूप में चित्रित किया है-

बैठे मारुति देखते राम-चरणारविन्द

युग अस्ति नास्ति के एक रूप गुण गण अनिन्द्य।

x x x x

पारूत्य, सच्चिदानंद रूप, विश्राम धाम,

जपते सभक्ति अजपा विभक्त हो राम नाम।[2]

हनुमान के अप्रतिम, व्यक्तित्व आदि के सन्दर्भ को प्रस्तुत करते हुए महाकवि निराला ने भक्ति रूपों का भी वर्णन प्रस्तुत किया है-

बोले- सम्बरो देवि निज तेज नहीं वानर,

यह नहीं हुआ श्रृंगार युग्म-गत, महावीर,

x x x x

विद्या का ले आश्रय इस मन को दो प्रबोध,

झुक जायेगा कपि, निश्चय होगा दूर रोध।[3]

1- उपर्युक्त-पृ0 23
2- उपर्युक्त-पृ0 24
3- उपर्युक्त पृ0 26

इस प्रकार महाकवि निराला ने हनुमान के चरित्र, व्यक्तित्व, शौर्य, भक्ति आदि का भावात्मक चित्रण तथा ओजस्व वर्णन राम की शक्ति पूजा में प्रस्तुत किया है। कविवर श्याम नारायण पाण्डेय जी द्वारा विरचित काव्य जय हनुमान में वर्णित हनुमान भक्ति रूपों तथा व्यक्तित्व वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है-

जाम वंत अंगद इंगितया,
हनुमान आगे आये

x x x x

ज्योतिर्मय प्रत्यक्ष सामने,
विविध राम के रूप फिरे।[1]
बाहर भीतर राम राम हो,
राम लीन कपि पुलक पुलक।
लगे विनय करने कर जोड़े
गिरे नयन जल ढुलक ढुलक।[2]

इसप्रकार श्याम नारायण पाण्डेय जी ने अपने काव्य जय हनुमान के उदात्त चरित्र का वर्णन करके महनीय कार्य किया। इसके पश्चात नरेन्द्र शर्मा विरचित हनुमान रामायण में हनुमान के भक्ति रूप तथा शौर्य व्यक्तित्व आदि का वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है-

---

1- जय हनुमान- रचयिता श्याम नारायण पाण्डेय सप्तम सर्ग पृ0 104
2- उपर्युक्त पृ0 105

कहहु जगद्गुरु परम उदारा।

श्री हनुमंत चरित्र सुख सारा।।

× × × ×

महा शम्भु पुनि सोई हनुमंता।

सोइ शिव ब्रह्म रूप गुणान्तर।।[1]

इसके पश्चात् महान हनुमान के गुणों को वर्णित किया गया है-

तेजवंत हनुमंत महाना।

आभूषित बहु सुर वरदाना।।

× × × ×

जे मुनिवर हरि भगत सयाने

हनुमान कह पहचान सुजाने।।

दो० मालपुआ मोदक मधुर,

लिए रहहि सब ठाढ़।

कपिहि पवाई दुलारि के,

लहहिं सकल सुख सार।।[2]

कविवर नरेन्द्र शर्मा जी ने हनुमान को राम के अनन्य भक्त के रूप में चित्रित किया है-

---

1- हनुमान रामायण- नरेन्द्र शर्मा द्वाराविरचित- सियापियानिवास-मो० राम कोट,अयोध्या।

2- उपर्युक्त-हनुमान रामायण-प्रथम सोपान- नरेन्द्र शर्मा विरचित/-जन्मकाण्ड पृ० 113-114 दोहा-19।

सुनहुँ उमा मानत हनुमाना।

राम भगत कहँ प्रान समाना।।

रहत सदा हर छनमीतमाना।

किम संभव विद्याकर दाना।।[1]

हनुमान का सूर्य से विद्यासीखने का भी वर्णन हनुमान रामायण में प्राप्त होता है-

सुनि हनुमंत तब कहत था,

सुन दिन मीण तब पास।

रहि सम्मुख चलि पीछ पग,

करिहौ श्रुति अभ्यास।।[2]

इसके पश्चात् कविवर नरेन्द्र शर्मा ने हनुमान की महनीय महत्ताका कारण भी स्पष्ट कर दिया-

अवतरेउ श्री हनुमान,

रामाय न सकल सुख खान है।

सिय राम धाम ललाम प्रिय,

हनुमान हिय गुणवान है।

अद्भुत सरित उन्मुक्त नित सुपुनीत ललित महान है।

शीह रूप परम अनूप जग,प्रगटेउ स्वयं हनुमान हैं।।[3]

1- उपर्युक्त पृ0-10 प्रेमकाण्ड,दोहा
2- उपर्युक्त पृ0-10 प्रेमकाण्ड,दोहा-15,पृ0 10
3- उपर्युक्त पृ0 -प्रथम चतुर्थ सोपान-उदय काण्ड

माता अंजनी को हनुमान को भक्ति का उपदेश देते हुए चित्रित किया गया है,भक्तराधिराज श्री हनुमान राम भक्ति की विशद व्याख्या सुनकर गदगद हो जाते हैं-

भक्ति गीत सुनि पवन कुमारा।
झूमत गदगद प्रेम अपारा।।
जननी करति राम गुन गाना।
सुनत सनेह सहित हनुमाना।।[1]

माता अंजनी हनुमान जी को अद्भुत मय भक्ति का उपदेश प्रदान करती है,और इनको सीता राम के चरणारविन्दों में अनुराग करने के लिए प्रेरित करती हैं-

अस जिय जानिबनावहुँ ताता।
तन मन सीय राम रंग राता।।
x x x x
जिन्ह सियराम भगति नहिं पाई।
जननी तिन्हहिं वृथा जग जाई।।
सिया राम मय हो हु सुत,कह गदगद महतारि।
सुफल जनम जग होउ तब,लेउँ लाल बलिहारि।।[2]

इसके पश्चात कविवर नरेन्द्र शर्मा जी ने हनुमान को नवधा भक्ति प्राप्त होने का वर्णन प्रस्तुत किया है-

---

1-कविवर नरेन्द्र शर्मा विरचित - श्री हनुमान रामायण-पृ0 116- प्रथम सोपान जन्म काण्ड-196-1-2
2-उपर्युक्त पृ0 118,दोहा-198-7-10

सो गुरु कीर सुनहु मम ताता।

नवधा भगति श्रवन मन लाई।

x x x x

जिन्ह के उर असि भगति सुबासा।

सकल लोक महँ करहि प्रकासा।।

पारस मनि इव गुरु भगति,करइ शिष्य कल्यान।

हरइ तमस तारकर सकल,भरई हृदय सद ज्ञान।।[1]

इसके अतिरिक्त लछिराम जी ने हनुमन्त शतक में हनुमान जी को आदर्श भक्त तथा अनन्य सेवक के रूप में चित्रित किया है। "हनुमन्त-शतक संवत-1959 में प्रकाशित हुआ था-

पावन प्रसिद्ध श्री अवधसरजू,

सी कौन पिपिन प्रमोद जितैपरिमलभार सो।

x x x x

राम रघुवीर सौं न स्वामी सिरमौर,

और सेवक न सोचों है प्रभञ्जन कुमार सो।।[2]

कविराज लछिराम जी ने हनुमान जी को समस्त कामनाओं को प्रदान करने वाला कल्पतरु सदृश सिद्ध किया है-

---

1- उपर्युक्त पृ0 7-8,प्रेमकाण्ड-द्वितीय सोपान-दोहा 12क।

2- हनुमन्त शतक- पद संख्या 20,पृ0 14,कविराज,लछिराम जी।

लखन सनेही प्रान अंगद सुकण्ठ दल,

जामवन्त जीवन अंगद अंग जोर है।

× × × ×

भागवन्त राम रघुवीर सन्त-सिरमौर

कामदकल्पतरु केसरी किशोर है।।[1]

तत्पश्चात् हनुमान की लक्षिराम जी ने हनुमान की महान

बलशाली सिद्ध किया है-

फाँदी सिन्धु रेखा सी गरब सिंहिका की,

गारि बदन विदारि लंकिनी की फन्द फेरी मैं।।

× × × ×

भानु वंश भूषन महिप राम चन्द्र हित दूजो,

बलवान हनुमान सो न हेरी मैं।।[2]

लक्षिराम जी ने हनुमान जी के महनीय व्यक्तित्व को

उद्घाटित किया है।

इसके पश्चात् कविवर जयशंकर त्रिपाठी जी द्वारा

विरचित आंजनेय काव्य में वर्णित हनुमान भक्ति के संदर्भ में कुछ अंश

प्रस्तुत किया जा रहा है। कविवर जय शंकर त्रिपाठी जी द्वारा विरचित

आँजनेय काव्य श्री जय शंकर प्रसाद जी की कामायनी की परम्परा में

लिखा गया है। संक्षिप्त कथा सूत्र का आधार लेकर ज्ञान-विज्ञान के किसी

चिन्तन तथ्य का विश्लेषण करना ही इस परम्परा की विशेषता है।

1- उपर्युक्त -पृ0 10-11,पद संख्या- 9

2- उपर्युक्त -पृ0 13, पद संख्या 16

कवि ने हनुमान जीवन पापों के शमनकर्ता के रूप में प्रस्तुत किया।

नहि,यदि इंगित कर दे व्योम,
पुलक भर ले तारों के रोम-
स्वयं यह हनुमान आज्ञप्त
करेगा भंजन पाप-स्तोम।[1]

हनुमान के अन्य सन्दर्भ भी प्राप्त होता है-

गयी वह रात,हुआ फिर प्रात,
हुआ फिर से दिन का अवसान,
पसारे आँख पन्थ अवदात,
देखते आञ्जनेय हनुमान।[2]

तत्पश्चात् हनुमान कोसुग्रीव के मित्र के रूप में चित्रित किया है-

उन्हीं का लघु अनुचर हनुमान
हो रहा प्रभु दर्शन से धन्य,
चाहता सखा भाव सुग्रीव
और प्रभु का आशीष अनन्य।"[2]

फिर भगवान श्री राम हनुमान को बुद्धिमता का वर्णन करते हुए लक्ष्मण से कहते हैं-

---

1- उपर्युक्त -पृ0 82
2- उपर्युक्त -उत्तर सर्ग-पृ0 98

राम ने तब लक्ष्मण की ओर
उठायी अपनी करुणा-दृष्टि,
कहा-"लक्ष्मण कैसी अनुभूत
किया तुमने वाणी की सृष्टि।[1]

तत्पश्चात् हनुमान को महान ज्ञानी शास्त्रवेत्ता के रूप में सिद्ध किया है-

साम-ऋग-यजुर्वेद का मर्म
छिपा वाक्यों में अन्तर्भूत,
शास्त्र विद-वैयाकरण-प्रयुक्त
कह रहा वाणी कोई दूत।"

पुन: तब तक मारुति ने व्यक्त
किया अपना अन्त: इस भाँति-
"भाग्य से वानपति के आज
उदय प्रभु पद-रज-मंगल पाँति।
कृपा से पवनपुत्र हनुमान
जानता है कुछ तत्व निदान,
सींच दे कृपा वृष्टि का वारि
खड़ा उत्सुक वानर दल म्लान।"[2]

1- वही, पृ0 99
2- उपर्युक्त पृ099, उत्तर सर्ग।

इसके पश्चात् हनुमान को अनन्य सेवक के रूप चित्रित किया है-

कहा मारुति न पुलकित गात।

रखे प्रभु के चरणों पर हाथ-

"दूर कर सेवक का गुरु भार

स्वयं बनते कृतज्ञ क्यों नाथ।[1]

राम की एक पलक की दृष्टि

सहज है सारे विश्रुत कर्म,

कहीं सीता वेषण हेतु

वानरों से मैत्री का मर्म।[2]

इसके पश्चात् गजेन्द्र नाथ चतुर्वेदी जी द्वारा विरचित श्री हनुमान विजय नामक काव्य खण्ड में वर्णित हनुमान भक्ति के कतिपय सन्दर्भों को प्रस्तुत किया जा रहा है। वस्तुत: हनुमान जी में ब्रह्मा, विष्णु, और शंकर की शक्तियों का समन्वय है तथा जहाँ परात्पर पूर्ण ब्रह्म श्रीराम के अवतार का पंचायतन रूप में वर्णन है, वहाँ उसी परिवार के अनन्य अंग श्री हनुमान जी भी हैं। हनुमान जी सीता के शोक को हरण करने वाले तथा लंका धीस रावण को नष्ट करने वाले प्रतीत होते हैं-

राम नाम पारद परिष्कृत प्रकष्टता दे

आसुरी निकृष्टता को हीनता नसाई है।

भव्य भक्ति माइन को गन्धक गुनीली लाई,

बुद्धि बल विक्रम प्रताप ताप ताई है।।

x x x x

1- उपर्युक्त-पृ0-109
2- उपर्युक्त-पृ0 109

सीता के वियोग विषम ज्वर निवारिबे को,

स्वर्ण लंक जारि स्वर्णभ सम बनाई है।[1]

परम भागवत श्री हनुमान जी को राम की अनपायनी

भक्ति भी प्राप्त है-

लट लट कोलो चारु भ्रुकुटि कृपा भरोत्यों

नेह लहरो लौ दोठि द्रुरित दरयौ करै।

x x x x

पाँइन प्रनत हनुमन पैद्रवत,

उर अनु पायनो सो राम भगति भरयौ करै।।[2]

तत्पश्चात् हनुमान को अनन्य राम भक्त के रूप में

चित्रित किया गया है-

कारो कबरारो भई कनक अटारो तारो

भारो भारो भीतिन पै छाप भीति भारो को।

x x x x

दै दै कर तारी नचै देव देवनारी आदि

जै जै हनुमन्त राम नाम के पुजारी को।।[3]

इसके पश्चात् ठाकुर वासुदेव नारायण सिन्हा द्वारा प्रणीत "वीर हनुमान" काव्य में हनुमान के अप्रतिम पराक्रम तथा अतुलनीय बल एवं भक्ति का वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है।

1- श्री हनुमत विजय- रचयिता- गजेन्द्र नाथ चतुर्वेदी-पद-74,पृ090
2- उपर्युक्त -पद- 110,पृ0 118
3- उपर्युक्त पद -86,पृ0. 102

कवि का यह भाव है, कि भगवान श्री राम जहाँ रहते हैं, हनुमान भी वहाँ अवश्य विराजमान रहते हैं-

श्री राम रहते हैं जहाँ,

हनुमान रहते हैं वहाँ,

x x x x

वह कौन दुष्कर कार्य?

होता न तुमसे आर्य है?

हे वीर, कर दो सार्थ निज बल भक्ति को।[1]

तत्पश्चात् हनुमान संजीवनी बूटी लाकर लक्ष्मण के प्राणों की रक्षा करते हैं, तब भगवान् श्री राम उन पर प्रसन्न होकर अविरल भक्ति प्रदान करते हैं-

तव स्नेह यदि पाता नहीं,

हिय कमल खिल पाता नहीं,

x x x x

यह राम की अनुरक्ति है,

बनती जगत की शक्ति है।

भारती वही तब प्राणियों में जीवनी।[2]

इसके पश्चात प्रभुदत्त जी ब्रह्मचारी द्वारा विरचित हनुमान शतक में हनुमान के कतिपय सन्दर्भ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

1- वीर हनुमान- वासुदेव नारायण सिन्हा-पृ047
2- उपर्युक्त ,पृ0 51

राम रूप हनु हिये सभासद लखित हरषावें।
राम नाम प्रीत प्रेम सुने हनुमंत मन भावे।।
राम भक्त हियमान बढ़े प्रभु ताहि न सावें।
गरूड़ सुदर्शन पार्थ अरु,सत भामा अभिमान अति।

x x x x

गरूड़ गरब में भीर गये,जहँ कपि उपवन फल भखत।
विनिता सुत बोले कड़कि,वान च्यों। उधम करत।।[1]

तत्पश्चात डॉ0 कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह कृत "रामदूत" महाकाव्य के अन्तर्गत हनुमान भक्ति के कतिपय सन्दर्भ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

मूलत: हनुमान की कथा अन्य कथाओं से भिन्न है। कथा को संयोग-वियोग की घाटियों में उतार चढ़ाकर जो रसमयता उत्पन्न की जा सकती है,उसके लिए उसमें अवकाश नहीं है,क्योंकि वे बाल ब्रह्मचारी हैं। वीर काव्य के नायक के रूप में भी उनका चित्रण कठिन है,क्योंकि वे मर्यादा पुरूषोत्तम राम के एकनिष्ठ समर्पित सेवक, तथा आदर्श भक्त के रूप में प्रतिष्ठित हैं। हनुमानजी अपने इष्ट की सेवार्थ लघुतम या विराटतम रूपों में परिवर्तित होते रहते हैं। यहाँ भी भगवान श्री राम को हनुमान के ऋणी रूप में चित्रित किया गया है-

---

1- उपर्युक्त पृ0 5।
2- श्री हनुमान शतक-पद- 86,पृ0 38 -रचयिता प्रभुदत्त ब्रह्मचारी
3- उपर्युक्त -पद 87,पृ0 38

मारुति ने अनन्त उपकारों के,बन्धन में मुझको बांधा,
स्वेच्छा से अवतरित हुए हैं,मेरे लीला सहचर बन नित।[1]

x x x x

मेरे लक्ष्यों का ही सम्पादन ही है उनके जीवन का व्रत
उऋण हो सकूंगा मैं कैसे हैं उनका ऋण भार अपरिमित।

x x x x

बोले लक्ष्मण-"तन मन जीवन प्राण कर चुके प्रभु को अर्पित,
मारुति के अन्तर में आशा-आकांक्षा है शेष न किंचित।

x x x x

शिव का विग्रह करो प्रतिष्ठित,सब अभिषेक उपकरण लाओ।[2]

तत्पश्चात् भगवान श्री राम "रामेश्वरम् में शिव की स्थापना करके उनका पूजन करते हैं-

लक्ष्मण नत थे, "धन्य नाथ यह अप्रत्यक्ष मारुति का पूजन,
परम भक्त वात्सल्य आपका यह गायेगें जन पुलकि तमन।[3]

वस्तुतः लोक मानस में महावीर हनुमान के प्रति श्रद्धा एवं भक्ति भावना अत्यन्त प्राचीनकाल से रही है,जो आज भी सर्वत्र दिखाई पड़ती है। लोक जीवन में हनुमान शौर्य के देवता एवं अनिष्टकारी शक्तियों के विनाशक हैं।

1-श्री राम दूत{महाकाव्य} रचयिता-डॉ0 कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह-पंचदश सर्ग-पृ0 185
2-उपर्युक्त -पृ0 186
3-उपर्युक्त -पृ0 187,पंचदश सर्ग।

वस्तुत: उत्तर भारत से सुदूर दक्षिण तक हनुमान को प्रतिष्ठापित करने का श्रेय रामदासजी को है।

मूलत: हिन्दी साहित्य में संबद्ध प्राचीनतम रचना आचार्य रामानन्द की

आरती कीजै हनुमान लला की है,

किन्तु हनुमत काव्य की परम्परा को हिन्दी साहित्य में प्रवर्तित करने का श्रेय गोस्वामी तुलसीदास जी को है। उनकी हनुमत परक कृतियों में बजरंग बाण,बजरंग साठिका,संकट मोचन,हनुमान चालीसा,हनुमान पंचक,हनुमान स्तोत्र ,हनुमान शिक्षा मुक्तावली,तथा हनुमान बाहुक का उल्लेख मिलता है। कतिपय मनीषियों ने हनुमानबाहुक को छोड़कर सभी कृतियों को अप्रमाणिक माना है।[1]

तुलसी के अनन्तर राम मल्ल पाण्डे का हनुमच्चरित्र मिलता है,जो सं0 1616 की रचना है। आचार्य शुक्ल ने इसे सं0 1896 की रचना मानी है।ब्रह्म राय मल्ल कृत "हनुमत मोक्ष कथा" भी सं0 1616 के आसपास की कृति है। खान खाना के आश्रित लक्ष्मी नारायण की रचना "हनुमान जी का तमाशा सं0 1657 की रचना है। सं0 1680 में संस्कृत हनुमन्नाटक के आधार पर हृदय राम ने भाषा हनुमन्नाटक की रचना की है जो अत्यन्त मर्मस्पर्शी रचना है। उसके अनुकरण पर अनेक नाटक बाद में लिख गये। राम हनुमान

1- श्री राम दूत-त्रैमासिकी-मारुति विशेषांक मध्यकालीन हिन्दी में हनुमत काव्य परम्परा लेख- डा0 कमला शंकर त्रिपाठी-पृ0 93

संवाद का एक चित्र निम्नवत है-

एहो हनू कह यो श्री रघुवीर
कछु सुधि है सिय को हितमाँही।
x x x x
प्रान बसे पद पंकज में जम
आवत हैं पर पावत नाही।।[1]

हनुमत काव्य परम्परा में मान कविका विशेष स्थान है। मिश्र बंधुओं ने इनका समय सं0 1754 से पूर्व स्वीकार है, इनकी तीन कृतियां हनुमान पचीसी, हनूनाटक, तथा श्री हनुमान नखशिख है, इसका वर्णन उक्त अध्याय में ही प्रस्तुत किया जा चुका है। इसके अतिरिक्त भगवत राय खीचीकृत "हनुम-पचीसी" का उल्लेख मिलता है, जिसमें हनुमान के पराक्रम की व्यंजना है-

ओड़े ब्रह्म अस्त्र को अवाती महाताती बंदौ,
युद्ध मद माती छाती पवन कुमार की।।[2]

भगवत राय के पश्चात् इस धारा के प्रसिद्ध कवि मानसिंह हैं, जिनकी हनुमान पचीसी, महावीर पचीसी, हनुमान पंचक, तथा हनुमान नखशिख प्रसिद्ध रचनाएं हैं। तदुपरांत सेवाराम कृत "हनुमच्चरित्र" (सं 1831) इच्छा राम कृत "हनुमत पचीसी", बहादुर सिंह का यस्थ रचित हनुमान चरित्र, देवी दीनकृत हनुमत नखशिख, ब्रजलाल भट्ट रचित हनुमंत बाल चरित्र (सं0 1876) विशेषोल्लेख्य है।

1- भाषा हनुमन्नाटक-हृदय राम कृत।
2- भगवतराय खीची कृत-"हनुमत पचीसी"

हनुमान के चरित्र को केन्द्र बनाकर काव्य रचना करने वालों में चरखारी के खुमान कवि का नाम महत्वपूर्ण है। इनकी कृतियों में हनुमान नख शिख,हनुमत पचीसी,हनुमान पंचक आदि प्रसिद्ध है। हृदयराम के हनुमन्नाटक एवं राम कवि ने "हनुमान-नाटक की रचना की है। हनुमान से सम्बन्धित अन्य कृतियां-विश्वेश्वरदत्त कृत "हनुमानस्तोत्र" भरत कविकृत हनुमान बिरदावली " हरतालिका प्रसाद त्रिवेदी रचित हनुमान अष्टक,रीवां नरेश महाराजा रघुराज सिंह रचित"हनुमत चरित्र"केशवकृत हनुमान जन्मलीला तथा गणेश प्रसाद कृत हनुमत पच्चीसी है। रसिक भक्ति धारा के आचार्य बनादास तथा रीतिकाल के अन्तिम आचार्य बनादास तथा रीतिकाल के अन्तिम आचार्य लछिराम ने क्रमशः हनुमत विजय तथा हनुमत शतक की रचना कर इस परम्परा को आगे बढ़ाया।[1] परमानन्द लल्ला ने "हनुमान नाटक दीपिका" तथा जय गोविन्द दास ने {हनुमत्सागर} की रचना कर हनुमत भक्ति का परिचय दिया है। वस्तुतः गोस्वामी तुलसीदास जी ने जिस हनुमत काव्य परम्परा का सूत्रपात किया उसकी परम्परा सम्पूर्ण मध्यकाल में अनवरत रूप में मिलती है। इसके अतिरिक्त आधुनिक काल में भी हनुमान के चरित्र एवं भक्ति पर आधारित अनेक काव्य लिखे गये हैं,जिसका वर्णन उक्त अध्याय में प्रस्तुत किया जा चुका है।

1- श्री राम दूतमणि- मारुति विशेषांक -सं0 कृष्ण चन्द्र जोशी-डॉ0कमलाशंकर त्रिपाठी का लेख-मध्यकालीन हिन्दी में हनुमत काव्यपरम्परा लेख,पृ 94

इसके पश्चात् अब मलयालम साहित्य में प्राप्त यत्किंचित हनुमान भक्ति तथा व्यक्तित्व के विषय में कतिपय सन्दर्भ प्रस्तुत किया जा रहा है।

मलयालम-

यद्यपि मलयालम साहित्य की प्राचीनतम रचना राम चरित से सम्बन्धित है, किन्तु मलयाली कवियों ने राम कथा वर्णन में किसी मौलिकता का प्रदर्शन नहीं किया।[1] मलयालम रामायण में हनुमान के भक्ति परक महत्वपूर्ण सन्दर्भ नहीं प्राप्त होते हैं। तत्पश्चात् तमिल रामायण में वर्णित हनुमान भक्ति के कतिपय सन्दर्भ प्रस्तुत किये जा रहे हैं- वस्तुतः कंबरामायण जो मूलतः तमिल से अनुदित है। उक्त रामायण में हनुमान चरित्र प्रायः वा०रा० की भाँति ही है, परन्तु कहीं-कहीं कुछ अन्तर भी है। यहाँ बाली का चरित्र हनुमान वर्णन करते है, बाली कहता है, कि कोई महान कार्य हो तो उसको करने के योग्य हनुमान है। इनके सदृश कोई सहायक नहीं है। इससे तुम सीता का अन्वेषण कराओ।[1] यहाँ श्री हनुमान के अप्रतिम पराक्रम का वर्णन प्राप्त होता है। यहाँ हनुमान रावण के शूल से आहत लक्ष्मण को पुनर्जीवित करने के लिए औषधि लेने उसी पहाड़ पर जाते है, जिस पर पूर्व में गये थे, और औषधि पहचान कर ले आते हैं। इसके लगाते ही लक्ष्मण उठ बैठते हैं। हनुमान का आलिंगन करते हैं। भगवान श्री राम हनुमान को चिरंजीवी होने का वरदान

1- कंब रामायण- कंबन रचित श्री न०वी० राजगोपालन भाग1, पृ०444

भी देते है।[1] यहाँ रावण वध के पश्चात् राम के न आपने पर भरत चिता में प्रवेश करके अपने प्राण देने को तत्पर है।[2] जब हनुमान अयोध्या पहुँचते हैं, ये उनको रोकते हैं, तथा राम को दी हुई अँगूठी भी प्रदान करते हैं।[3]

इसके पश्चात बंगीय स्मृति में वर्णित हनुमान भक्ति के कतिपय सन्दर्भ प्रस्तुत किये जा रहे हैं-

<u>बंगीय स्मृति-</u>

बंगाली राम कथाओं में हनुमान तथा राम की भेंट का वृतान्त अधिक विस्तृत रूप में वर्णित है। बंगीय स्मृतियों के अनुसार लक्ष्मण शिव की वाटिका में फल हेतु जाते हैं। वहाँ पर हनुमान को द्वारपाल के रूप में चित्रित किया गया है।

लक्ष्मण को विलम्ब होते देख भगवान श्री राम वहाँ पहुँच जाते हैं। अन्त में भगवान आशुतोष भी वहाँ पहुँच जाते हैं। अन्त में भगवान शंकर राम को हनुमान को समर्पित करते हैं,तथा हनुमान[4] शिव की सेवा छोड़ कर राम भक्त हो जाते हैं। एतदर्थ ऐसा विदित होता है कि बंगीय स्मृति एवं बंगाली रामायण का स्रोत वाल्मीकि न होकर चारणों की कथा है।[5] बंगीय स्मृति के सुप्रसिद्ध मनीषी महामहोपाध्याय ने अपने प्रसिद्ध स्मृति निबन्ध अष्टाविंशतितत्व " में उन्होंने जिस असाधारण शास्त्रज्ञान स्वतंत्र-चिन्तन पद्वति और सूक्ष्म विचार विश्लेषण का परिचय दियाहै,वह अत्यन्त

1- उपर्युक्त पृ0 457
2- उपर्युक्त पृ0 523
3- उपर्युक्त पृ0 585
4- दिनेश चन्द्र सेन- दी बंगाली रामायन्स,पृ0 47
5- एस वैयापुरी पिल्लै- हिस्ट्री आफ तमिल लांग्वेज एण्ड लिटरेचर (मद्रास 1956) पृ0 929

विस्मयप्रद है। श्री रघुनन्दन कृत-तत्व निबन्ध में भगवान श्री राम के जिस ध्यान का उल्लेख किया है, उसमें अग्रस्थित श्री रामानुग्रह कांक्षी भक्त प्रवर हनुमान का भी उल्लेख है। श्री राम नवमी व्रतानुष्ठान में अंग देवता के रूप में ॐ हनुमते नमः इस मन्त्र के द्वारा श्री हनुमान की पूजा का विधान है।

बंग प्रदेश में भक्ति युग में श्री हनुमदुपासना प्रचलित थी और इसमें साधक सम्प्रदाय सक्रिय था। तन्त्रसार में भक्ताधिराज श्री हनुमान के विभिन्न मन्त्रों द्वारा विशेष रूपों में विभिन्न प्रकार की पूजा का विधान है। इसमें हनुमान जी का द्वादशाक्षर मन्त्र भी उल्लिखित है-

"हं हनुमते रुद्रात्मकाय हुं फट्"।

इसके अतिरिक्त तन्त्रसार ग्रन्थ में अतिगुह्य वीर साधन पद्धति वर्णित है। उपर्युक्त पद्धति के अनुसार साधना करते रहने पर रात्रि के चतुर्थ याम में श्री हनुमान जी साधक के सामने उपस्थित होकर महाभय प्रदर्शित करते हैं। तत्पश्चात् वह सुखी भी हो जाता है-

विद्यांवापि धनं वापि राज्यं वा शत्रु निग्रहम्।
तत्क्षणा देव चाप्नोति सत्यं सत्यं सुनिश्चितम्।।[1]

तत्पश्चात राजस्थानी लोक साहित्य में वर्णित हनुमान के भक्त एवं व्यक्तित्व का निरूपण प्रस्तुत किया जा रहा है।

राजस्थानी लोक साहित्य-

राजस्थान धर्म प्राण प्रदेश है, परन्तु साथ ही वह वीर पूजक भी है। एतदर्थ यहां की जनता के हृदय में भक्ताधिराज श्री हनुमान के प्रति

1- तन्त्रसार- तृतीय परिच्छेद।

विशेष भक्ति भावना का होना सर्वथा स्वाभाविक है। राजस्थान के गाँव-गाँव में महावीर हनुमान के बंगले (छोटे-आकार के देवालय) दीख पड़ते हैं। कुएँ के पास महावीर जी थान अवश्य होता है। प्रायः कुएँ में पानी निकालते समय सामान्यतया यह पद भक्ति पूर्वक गाया जाता है-

जय हणमान बलाकारी बाल-बंदयाल्याणाणी।
पाणील्या पतालका जीवै तेरा बालका।।[1]

ऐ बलशाली हनुमान मेरी डोरी बालक समान कमजोर है परन्तु तुम इसी के सहारे पाताल का पानी ऊपर ला दो, जिससे तुम्हारे बालक अर्थात्* हम लोग जीवित रह सकें।

राजस्थानी भक्त मण्डलियों में श्री हनुमान जी से सम्बन्धित भजन भी बड़े प्रेम से गाये जाते हैं। इन भजनों में महावीर श्री हनुमान जी के जीवन गाथा के विशिष्टप्रसंग पाये जाते हैं। उदाहरण स्वरूप "अशोकवाटिका" में हनुमान तथा लक्ष्मण मूर्च्छा के समय हनुमान का वर्णन प्रस्तुत है-

जाय मिल्यो सीता माता सूं, अंजनी को पुत्र बलाकारी जी।
पणघट घाटां बैठ्यो है बांदर, मन में तो धीरज धारो जी।।

x x x x

नोखोयणी सेन चढ़ी बांदर परीफर आई, डांली-डांली जी।
तुलसी दास भजो भगवाना, ऊपर पेड़ तले डाली जी।।[2]

उपर्युक्त भजन में हनुमान चरित गाया, गया है परन्तु इसमें किसी प्रकार का काव्य-कौशल नहीं है, अपितु लोक हृदय की सरलता व्याप्त

1- राजस्थानी राम कथा- तीसरा अध्याय, पृ0 50
2- राजस्थानी राम कथा- विमलेश।

है। महाकवि तुलसीदास जी श्री राम कथा के अनन्य गायक के रूप में सुप्रसिद्ध है। जन सामान्य को साहित्यिक प्रामाणिकता से कोई मतलब नहीं,वहाँ तो केवल भगवान की भक्ति से ही प्रयोजन रहता है। साथ ही ऐसे अवसर पर जनसाधारण को काव्य रस नहीं,परन्तु भक्ति रस चाहिए,जो इन भजनों में भरपूर है।

लोक साहित्य का दूसरा विशिष्ट अंग लोक कथा है। राजस्थानी लोक कथाओं में श्री महावीर श्री हनुमान जी की महिमा व्याप्त है। लोकगीतों और लोक कथाओं के अतिरिक्त लोक प्रचलित दोहे में भी अनेकशः हनुमान जी का स्मरण किया गया है। वे आरक्षदेव के रूप में लोक पूजित हैं। राज स्थान में श्री गणेश के समान ही श्री बजरंगबली की मान्यता है। वे हर समय अपने भक्तों की सहायता करने के लिए प्रस्तुत रहते हैं,और भक्तजन उनको स्मरण करके शक्ति प्राप्त करते हैं,यथार्थ ही प्रस्तुत किया गया है-

लाल लंगोटो हदवण्यो, तिलक वण्यो असमान।
सारां पहलो सुमरिये,अंजनी को हण मान।।[1]

इसके अतिरिक्त राजस्थानी रामकथा में हनुमान राम के प्रति पूर्णरूपेण समर्पित प्राप्त होते हैं,तथा अपनी अनन्यताप्रकट करते हुए कहते हैं-

हनुमान बोल्यो,स्वामी मैं इब समझ्यो हूँ,
इबै समझ्यो मैं आप सृष्टि का स्वामी ही हो
राम आप हो वण सालो राम ही नही हो
भगत वहल हो,प्रभु हो,अन्तर्यामी भी हो।[2]

1- राजस्थानी राम कथा- विमलेश।
2- राजस्थानी राम कथा- तीसरा अध्याय।,विमलेश- 62-63

इतना ही नहीं उन्होंने राम के कृपा का आश्रयण भी पूर्ण रूपेण ग्रहण किया था।

राम कृपा से हनुमान बल विक्रम पाके,
राम लखन ने उठा कहवाँ पे तुरत बठाके।
पवन वेग से भर छलाँग परबत पे पूँग्यो
धरौं मान से राम चरण सब पूग्या आँके।[1]

तत्पश्चात हनुमान जी सुग्रीव और श्री राम की मित्रता भी कराते हैं-

यूँ कहकर सुग्रीव राम का चरण पकड़ के,
चरणों में सिर मेल दिया भगती में धरके।
x x x x
राम भगति में मगन हुया जो भी नरवानर
छिण में बाँका दुःख दालिद संताप तक्या है।।[2]

इसके पश्चात भक्ताधिराज श्री हनुमान को सीता की खोज करते समय भक्त विभीषण से मुलाकात होती है। विभीषण के द्वारा हनुमान को सीता भक्ति का पता लगाने की युक्ति मालूम हो जाती है।

यूँ कहकर के भक्त विभीषण,हनुमान का
नाम गाँम पूछके पूछली सारी बाता ।
भगति भाव में भर के ओन्यूँ सुबकण लाग्या।
है सीतामाता को पूरा पतो बताता।[3]

1- उपर्युक्त - पृ0 63
2- उपर्युक्त - पृ0 65
3- राजस्थानी राम कथा- विमलेश -तीसरा अध्याय-पृ0 86

इसके अतिरिक्त अन्य कतिपय प्रसंगों में हनुमान का वर्णन प्राप्त होता है। वस्तुतः राजस्थानी राम कथा में हनुमान का शौर्य, व्यक्तित्व तथा पराक्रम आदि का वर्णन ही मुख्य रूप से प्राप्त होता है, भक्ति गौण रूप में ही वर्णित है।

तत्पश्चात् मालवी लोक साहित्य में वर्णित हनुमान के कतिपय सन्दर्भ प्रस्तुत किये जा रहे हैं-

मालवी लोक साहित्य-

वस्तुतः लोक साहित्य ही लोक जीवन का दर्पण है। इसमें संस्कृति एवं सभ्यता के दर्शन होते हैं। भारतीय लोक साहित्य में जन-जीवन की झाँकी दृष्टिगत होती है। मालवी लोक-साहित्य भी इसका अपवाद नहीं है। भारतीय लोक साहित्य में बहुदेववाद की अभिव्यक्ति पर्याप्त मात्रा में दिखाई पड़ती है। लोक वार्ता की प्रकृति के प्रायः लौकिक मान्यताओं के कारण देवी देवताओं के सम्बन्ध में अभिप्रायों के सूचक हैं। गीतों मेंवर्णित लोक-देवियाँ और लोक देवों के चरित्र का सम्बन्ध कल्याण के उद्देश्य से युक्त है।[1]

मालवा की कावी रसिका ने जहाँ एक तरफ अपने आराध्य देव लोक नायक, मर्यादापुरुषोत्तम, अखिल कोटि ब्रह्माण्डाधिनायक भगवान श्री राम के गुणों का वर्णन किया है, वहीं श्री राम भक्त हनुमान की सेवा-भक्ति, शौर्यशील कार्यों आदि का भी गान किया है।

1- मालवी लोक साहित्य- एक अध्ययन- लेखक डॉ0 श्याम परमार-पृ0 273

मालवा को महिमामयी पावन धरित्री विगत सहस्त्रों वर्षों से भक्त श्री हनुमान को श्री राम को एक सच्चे सेवक के रूप में मानती आयी है, तथा उनके अप्रतिम साहसिक कार्यों का उल्लेख अपनी लोक कथाओं, लोक वार्ताओं एवं लोकगीतों में करती आ रही है। एक लोक गीत में हनुमान जी को अद्भुत झांकी द्रष्टव्य है-

जै श्री बाला जी माराज, अनोखी थाँका झांकी।
थारे माथे मुकुट बिराजे, राजे काना में कुण्डला।।
x x x x
तुलसी दास जस गावे, जरण मरण छुट जावे।
बाबा नैया कर दो पार, अनोखी थाँकी झांकी।।[1]

मालवा की ग्राम नारी द्वारा गाये गये उक्त लोकगीत में जहां वीर हनुमान की छवि का भी वर्णन किया गया है, वहीं साहस पूर्ण कार्यों का भी उल्लेख किया गया है। राजस्थान के ग्रामीण अंचलों में हनुमान के प्रति समर्पित आस्था एवं भक्ति का उत्कृष्ट उदाहरण ग्रामीणों के धारणाओं में देखा जा सकता है-

मारा चित चरण के मायने, सुमेरू बजरंग ने।
धूम देखाँ धावर का थरपना साँजों जी।।
देश देश का आवे जातरी,
लावेगा धिरत, सिंदूर।
x x x x
हुकुम हुयो बजरंग बली को,
कर देसो बाबो बेड़ा पार। सुमरू बजरंग ने।[2]

1- उपर्युक्त-पृ0 310
2- उपर्युक्त-पृ0 340

इसप्रकार मालवा के इन लोक गीतों में श्री राम भक्त हनुमान को झाँकी विविध रूपों में दिखायी गयी है। मालवा निवासी श्री राम के इस लाड़ले भक्त की पूजा-अर्चा एवं पराक्रमों का वर्णन एक लोक-देवता के रूपों में हजारों वर्षों से करते आ रहे हैं। केवल लोक-गीत में ही नहीं मालवा की लोक-कथाओं, लोक वार्ताओं एवं जनश्रुतियों में भी हनुमान की कीर्ति पताका फहरा रही है।

तत्पश्चात् बुन्देली लोक साहित्य में हनुमान के कतिपय सन्दर्भ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

बुन्देली लोक साहित्य-

भारतीय भक्ति साहित्य में बुन्देली लोक साहित्य का विशिष्ट स्थान है। भारत के अन्य भूभागों के सदृश ही बुन्देलखण्ड में भी भक्त हनुमान की पूरी मान्यता है। यहाँ मांगलिक अवसरों पर हनुमान जी का पूजन, अर्चन, और निमन्त्रण देने की परम्पुनीत परम्परा रही है। वे अपने आराध्य श्री हनुमान से छमा याचना भी करते हैं यहाँ की स्त्रियाँ भक्ताधिराज श्री हनुमान की मनौती भी करती हैं। एक उदाहरण द्रष्टव्य है-

> हनुमान वा तुमई निमन्तो हो।
> सरग-नसेनी पाट की थारी जे पढ़ नेवतो देय
> तुम मेरे नेवते पवन सुत, तुम मेरे आइयो हो,
> साज सजूते आइयो कारज समॉरन आइयो
> कहूँ भूला परे कहूँ चूका परे तो बिसरियो हो।[1]

1- कल्याण- हनुमान अंक- बुन्देली लोक साहित्य में हनुमान- ले0पं0 रमाबल्लभ जी पाण्डेय-पृ0 475

हनुमान जी की वीरता,लोक विख्यात भले ही थी,परन्तु सीता जी को ले आने जैसे छोटे काम के लिए भगवान श्री राम को लंका में भटकाने के कारण वीरमाता अन्जना उन्हे कैसे फटकार रही हैं,

तैने मेरो दूध लजाये पवन सुत
काहे सजो तैने रीछ बंदरिया का हे वे कटक सजाओ।
x x x x
बोलन न मारो मात अंजना सेंट पिअन नयो पाओ।
जानकी तरन आस रघुबर की हरि चरनन चित लाओ।।[1]

इन गीतों के अतिरिक्त बुन्देलखण्ड में "लगुरियाँ" गीत हनुमत-उपासना के लिए सर्वाधिक प्रचलित है। ऐसी प्रतिमाओं का पूजनी स्त्रियाँ भी करती हैं,एक गीत द्रष्टव्य है-

अनरित के बरस गय,भेव हम तुम भीजे गोला में
कौनाँ को भीजे रंग चुनरी,कौनाको भी जैं पाग।
x x x x
राम जू केचेला भये शिवशंकर ने फूंके कान
वे चरन छोड़ को जाय वारे लाँगुरिया।।

इसके अतिरिक्त बुन्देलखण्ड में हनुमान के विभिन्न रूपों का वर्णन आता है। उदाहरणार्थ- ध्यानस्थ हनुमान,पाताल विजयी हनुमान,सखी के हनुमान,मनसा हनुमान आदि। एतदर्थ ऐसा स्पष्ट है,कि बुन्देलखण्ड निवासियों के अन्त: करण में हनुमान के प्रति असीम आस्था एवं अनन्य भक्ति है।

1- उपर्युक्त,पृ0 475

तत्पश्चात तेलगु साहित्य में वर्णित हनुमान भक्ति के कतिपय सन्दर्भ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

तेलगु साहित्य-

दक्षिण भारत की प्रमुख भाषा तेलगु में भी श्री राम चरित्र पर प्रभूत साहित्य उपलब्ध है। श्री हनुमान जी का चरित्र श्री राम चरित्र का ही एक अंश है। श्री राम साहित्य के सभी ग्रन्थ, काव्य कौशल भाषा शैली आदि की दृष्टि से अपनी-अपनी विशिष्टता रखने पर भी सभी में श्री राम कथा के कथानक का प्रवाह लगभग समान ही है। प्राचीन एवं काव्य दृष्टि से उत्कृष्ट कतिपय तेलगु साहित्य में हनुमच्चरित्र एवं भक्ति का सन्दर्भ प्रस्तुत किया जा रहा है।

वस्तुतः तेलगु साहित्य में श्री हनुमान का जन्म, हनुमान जी की तपस्या, श्री सीता दर्शन, अशोक वन विध्वंस, लंका दहन, संजीवनी आनयन, श्री राम सीता मिलन एवं राज्याभिषेक आदि का वर्णन प्राप्त होता है। भक्ति परक सन्दर्भों को ही प्रस्तुत किया जा रहा है-

हुलक्कि भास्करु द्वारा विरचित भास्कर रामायण और आतुकूरि मोल्ला (कवयित्री) द्वारा विरचित मोल्ल रामायण का भी प्रेरणा स्रोत वाल्मीकि रामायण ही है।

जिस समय हनुमान भक्ति स्वरूपा परात्परा भगवती सीता का पता लगा करवापस आते है और भगवान् श्री राम को सीता का सन्देश सुनाते है, तब आश्रितों के हितांकाक्षी, सूर्य वंश केसवर्द्धक राम चन्द्र जी

,ने जब प्राणाधिका प्रिया के वचनों को हनुमान के द्वारा सुना और उसका पता जान लिया,तब उन्होंने बड़े प्रेम से कहा" हनुमान ने जैसा कार्य किया,क्या वैसा कार्य करना देवताओं के लिए संभव है? ऐसा प्रतीत होता है कि शक्ति में या तो हनुमान श्रेष्ठ हैं ,या गरुड़ श्रेष्ठ हैं। समुद्र को पार करना उनके सिवा और किसके लिए संभव है देव,गंधर्व,दैत्य तथा किन्नरों के लिए भी दुर्गम,राक्षस सेना के प्रचण्ड बाहुबल से दिन रात सुरक्षित लंका में प्रवेश करके वहां से जीवित लौट आना क्या शशिधर शिव के लिए संभव है।[1]

इसके अतिरिक्त भगवान श्री राम हनुमान की महानता का वर्णन करते हैं,अपने स्वामी के कार्य को जो शीघ्र सम्पन्न करता है,वह उत्तम पुरुष है। प्रभु के कार्य में विघ्न पड़ने पर,विलम्ब के साथ उसे पूरा करने वाला मध्यम श्रेणी का पुरुष है। प्रभु के कार्य से बचने की चेष्टा करने वाला व्यक्ति दुस्सेवक है। इन तीनों में हनुमान निस्सन्देह श्रेष्ठ व्यक्ति सिद्ध हुआ। पावनात्मज ने एक महान कार्य को एक बड़े हर्ष तथा तत्परता से सम्पन्न किया है। अब मैं उसका प्रत्युपकार मैं किस प्रकार से कर सकूँगा। अब प्रेम से उसका आलिंगन करना ही इस समय मेरे वश की बात है। यों कहकर परमप्रभु श्री राम ने हनुमान को हृदय से लगा लिया,और अविरल भक्ति का अनुपम वरदान दिया।[2]

रंगनाथ रामायण,भास्कर, और मोल्ल रामायणों के रचयिता चौदहवी शती के ही है। इन तीनों ही रामायणों में श्री हनुमान के श्री राम भक्त स्वरूप की अभिव्यक्ति बड़े भाव पूर्ण ढंग से की गयी है,जिसकाप्रभाव आज

1- रंगनाथ रामायण- सुन्दर काण्ड- राजगोन बुद्ध रचित-मूल तेलुगु से अनुदित- अनुवादक डॉ० ए०सी० कामाक्षिरावु,पृ० 401

2- उपर्युक्त - पृ० 405

भी जनमानस पर है और लोग बड़ी भक्ति-भावना से श्री हनुमान जी की आराधना करते हैं। तत्पश्चात् नागपुर लोक साहित्य में वर्णित हनुमान के कतिपय सन्दर्भ प्रस्तुत किये जा रहे हैं-

नागपुरी लोक साहित्य में श्री हनुमान जी को स्तुति आदि से सम्बन्धित रचनायें लोक गीतों के रूप में प्राप्त हैं, जिनमें इन्हें बुद्धि-विद्या के आगार एवं दातान, रोग शोक नाशक, भयहरण, महावीर शब्दों आदि सम्बोधित किया गया है। नागपुरी लोक गीतों में शब्द सौन्दर्य एवं भाव लालित्य से परिप्लुत है-

जय जय हनुमान, अतुलित बलवान, जयति अंजनी लाल।
जय महावीरे गे साजने, भयु सदा मगने अमरे।।

x x x x

गौरी शंकर लाल, राम प्रेमे हरखात उरे सिया रघुवीर
धारे निरन्तरे में साजैन, भयु सदा मगने अमरे ।।[1]

इसके अतिरिक्त कन्नड़ साहित्य में हनुमान के कतिपय सन्दर्भ प्रस्तुत किये जा रहे हैं-

वस्तुत: कर्नाटक महावीर एवं भक्ताग्रणी श्री हनुमान की जन्मभूमि के रूप सुप्रसिद्ध है। रामायण वर्णित पम्पा क्षेत्र, तथा किष्किन्धा वर्तमान कर्नाटक के बल्लारी जिले के हम्पी में भग्नावशेष के रूप में विद्यमान हैं। यहाँ अन्जनाद्रि, ऋष्यमूक पर्वत आदि आज भी अपने अस्तित्व की मौन घोषणा कर रहे हैं।

1- कल्याण-हनुमान अंक- लेख -नागपुरी भाषा में हनुमान सम्बन्धी लोकगीत लेखक श्री गौरी नन्दन जी शर्मा, पृ0 48।

कर्नाटक में हनुमान जी ग्राम के रक्षक देवता माने जाते हैं। कर्नाटक में हनुमान की उपासना एवं भक्ति का एक कारण यह भी है कि वहाँ ही जन्म धारण करने वाले, द्वैत मत संस्थापक मध्वाचार्य जी हनुमान जी के अवतार माने जाते हैं। कहा भी गया है-

प्रथमो हनुमान नाम द्वितीयों भीम एवं च पूर्ण प्रज्ञ तृतीयस्तु भगवत्कार्य साधको।[1] द्वैत मत के अनुसार वायु के तीन अवतार हुए- त्रेता युग में श्री हनुमान, द्वापर में श्री भीम और कलियुग में श्री मध्व। वैष्णव मत को श्री हनुमान का मत घोषित करते हुए पुरंदर दास (1550 ई0) ने कहा-"हनुमन मतवे हरिय मतवु" श्री हनुमान जी का मत ही श्री हरि का मत है। मध्व मतानुयायियों का ऐसा मत है कि हनुमान भविष्य के ब्रह्मा हैं। कन्नड़ के सुप्रसिद्ध मनीषी श्री डी0वी0 गुण्डप्पा जी ने "बालिगों दुनाविके" नामक ग्रन्थ में श्री हनुमान को भारतीयों का आदर्श गुरु घोषित करतेहुए लिखा है- जीवनोत्साह, पौरुष प्रकाश, लोकस्नेह, प्रगति, विज्ञान, सौजन्य से सभी हमारे तारक मन्त्र हैं। इसका निदर्शन हमें आदिकवि वाल्मीकि ने आञ्जनेयावतार में दिया है। स्वार्थत्याग पूर्ण स्वामिभक्ति, निरालसपौरुष संधान, उत्साहपूर्वक लोक धर्म में श्रद्धा- ये तीनों गुण श्री हनुमान के जीवन में जितने स्पष्ट हैं, उतने अन्यत्र नहीं। इसलिए वे हनुमन्त भारतीयों के गुरु तथाधर्मादर्श बने।[2] उन्होंने ठीक ही कहा है-

---

1- कल्याण-हनुमान अंक-कन्नड़ साहित्य में हनुमान- ले0डॉ0 एम0एस0कृष्णमूर्ति इंदरेश, पृ0 412
2- उपर्युक्त, पृ0 415

देखो हनुमान को,धोर गुरु को,
माँगो उससे पौरूष के वर को।।
एक हैं पौरूष के साथ,एक है धर्म के साथ।।
×   ×   ×   ×
मन में स्थिर करो राम को सन्प्रीति से
जनम को करने दे सार्थक हे हनुमद्गुरु।।[1]

इसके पश्चात् अब रामेतर काव्य में वर्णित हनुमान भक्ति के रूपों को प्रस्तुत किया जा रहा है।

(ख) रामेतर भक्ति काव्य-

रामेतर भक्ति काव्य में हनुमान जी के कतिपय सन्दर्भ प्राप्त होते हैं। वस्तुतः भगवान राम के चरित्र के साथ ही हनुमान जी के चरित्र का भी वर्णन प्राप्त होता है।

महाभारत तथा श्रीमद् भागवत में हनुमान से भक्ति सम्बन्धित संक्षिप्त सामग्री प्राप्त होती है। तृतीय अध्याय में महाभारत में हनुमान के चरित्र,आदर्श एवं भक्ति का निरूपण प्रस्तुत किया गया है। यहाँ पर श्रीमद् भागवत के आधार पर हनुमान भक्ति एवं चरित्र का वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है।

श्रीमद्भागवत के नवम स्कन्ध के दसवे तथा ग्यारहवे अध्यायों में भगवान श्री राम चन्द्र का चरित्र चित्रण वर्णन है। इसमें भी हनुमान के विषय की सामग्री बहुत थोड़ी मिलती है। एक स्थल पर हनुमान द्वारा राम के चरणों

1- उपर्युक्त,पृ0 415

को वन में दबाने का संकेत प्राप्त होता है।[1]

इसके अतिरिक्त लंका के जलाने की कथा का संकेत मात्र अधोलिखित पद्य में प्राप्त होता है।[2]

यद्रोद धौ रघुपति विविधाद्रि कूटै:
सेतुं कपीन्द्र करकम्पित भूरूहांगै।
सुग्रीव नील हनुमत्प्रमु खैरनी के लंका,
विभीषण दृशा विराद ग्रदधात्र ।।

इसके पश्चात् हनुमान जी का नाम उन व्यक्तियों की सूची में मिलता है, जिन्हें राम चन्द्र जी अपने साथ बैठा कर लंका से अयोध्या ले आये थे।[3]

इसके अतिरिक्त जैमनीयकृत अश्वमेध पर्व में भगवान श्री राम के अश्व मेध की कथा प्राप्त होती है। यह ग्रन्थ उनके लंका से लौटने के समय से प्रारम्भ होता है-

सीता मीम्न मुखच्छु द्वायस्यपुरं ययौ।
विभाषणेन वीरेण लक्ष्मणेन महात्मना।

× × × ×

तथा हनुमत प्रमुखैर्वानरै: परिवारित:।
अयोध्यां प्रविवेशाथ वशिष्ठ प्रमुखाद्विजा:।।[4]

1- श्रीमदभागवत- गीता प्रेस, गोरखपुर-9, 10, 4
2- उपर्युक्त 9, 10, 16
3- उपर्युक्त 9, 10;32
4- जैमिनीय अश्वमेधपर्व-खेमराज श्री कृष्णदास, वेंकटेश्वर प्रेस, मुम्बई, 1951 श्लोक 6-7, अध्याय-25

अश्वमेध यज्ञ प्रारम्भ कर के राम घोड़ा छोड़ते हैं, जो वाल्मीकि के आश्रम में पहुँचते हैं और लव उसे बाँध लेते हैं। कुश के शत्रुघ्न और लक्ष्मण को सेना सहित जीत लेने पर भरत को राम उनसे युद्ध करने को भेजते हैं। इनकी सेवा के साथ हनुमान जाते हैं। यहाँ की इस कथा में कुछ नवीनता है। यह कथा महाकवि केशवदास कृत "रामचन्द्रिका" के आख्यान से बहुत कुछ साम्य रखती है-

श्री राम उवाच-

कोऽसौ भरत जानीह सबालों ब्रज कानने।

समानय कुशीजित्वा सानुजं ममसीन्नधौ।

* * * *

तौ श्रुतो बालक वरोतल सैन्यानि पातकौ।[1]

न तौ भवान्नि जानाति हनुमान्वेति वानवा।।

तत्पश्चात् जैमिनीय ऋषि कहते हैं-

भरतः काननं प्राप्य हनुमन्त मुवाच है।

हनुमत्पश्च संग्राम कुशा वाणैनिपातिताः।।[2]

तत्पश्चात हनुमान जी कहते हैं-

बालकौ कार्मुक युतौ घनश्यामौ च संग तौ।।

काक पक्ष धरौं वीक्ष्य हनुमानिद मब्रवीत।

एतौ रामाकृतो बालौ बलं रामस्य वीक्षकै।

संजारिस्तच्छन्तु सर्वत्र भारताधा महाबलाः।।

एवं ब्रवीते वीरे तु तदापवन नन्दने ।।[3]

1- उपर्युक्त-अध्याय 25/53-59
2- उपर्युक्त-अध्याय 25/61
3-उपर्युक्त -अध्याय-26-16-17

इसके अतिरिक्त जैमनीय अश्व मे छ पर्व में हनुमान के पराक्रम, अप्रतिमशौर्य, आदर्श सेवक रूप का भी वर्णन यत्र तत्र प्राप्त होता है।

इसके अतिरिक्त मध्यकालीन भक्ति युग के सूर्य, हिन्दी साहित्य जगत के देदीप्यमान प्रभापुंज महाकवि सूरदास जी द्वारा विरचित सूरसागर में हनुमान जी के शौर्य, भक्ति आदर्श सेवक आदि का वर्णन प्राप्त होता है।

भक्ताधिराज श्री हनुमान मर्यादा पुरूषोत्तम भगवान श्री राम के संतत सेवक, सहचर एवं अनुचर है, किन्तु किष्किन्धा में दूतत्व ग्रहण, सागर संतरण संजीवनी बूटी आनयन- ये सब चरित्र सूरकाव्य में अनुपद वर्णित हैं। वस्तुत: यदि एक दृष्टि डाली जायतो श्री हनुमान का व्यक्तित्व एक संजीवनी सम्पुटित चरित्र है। प्रारम्भ में श्री राम के लिए उनके द्वारा आनीत सीता की सुध संजीवनी रूप ही है। रामायण के चरित्र नायक श्री राम और उनके अनुज श्री लक्ष्मण दोनों को संजीवनी प्रदान करने का श्रेय श्री हनुमान को ही है। श्री हनुमान जी तो अपनी अतुलशक्ति को सीता की खोज के समय विस्मृत किये बैठे हैं, शापगत होकर या अपनी सहज प्रकृति के अनुसार। तभी जाम्बवान् उनके सामर्थ्य का स्मरण दिला रहे हैं-

या दल मध्य प्रकट के सीर-सुत, जाहि नाम हनुमंत।
बहै त्याइहै सिय सुधि छिनमें अरू आइहै तुरन्त।

x x x x

उन प्रताप त्रिभुवन को पार्या, ताके बलहि न अंत।।[1]

हनुमान जी के अन्त:करण में अनुपम अलौकिक शक्ति समाहित है। भक्ताधिराज श्री हनुमान के अदृष्ट एवं अव्यक्त विक्रम की अभिव्यक्ति

1- महाकवि सूरदास कृत सूरसागर- 9/74

कितनी स्पष्ट है। आत्म विस्मरण की हल्की परत हट गयी और उनका प्रच्छन्न ओज उद्योतित हो उठा-

चढि गिरि शिखर सब्दइक उचरयो, गगन उठ्यो आघात।

x x x x

चौंकि सकल परस्पर बानर, बोच परो किलकात।[1]

हनुमान जी भक्त भीति से जगज्जननी जनक नन्दिनी पराम्बा भगवती सीता के समक्ष अशोक वाटिका में जाकर विनीत और समर्पित मुद्रा में खड़े हो गये -

जननी हौ अनुचर रघुपति कौ।

मति माता करि कोप सरापै, नहिं दानव ठग मति कौ

x x x x

सागर तीर भीर बनचर को, देखि कटक रघुपति कौ।[2]

आवै मिलाऊँ तुम्हे "सूर" प्रभु, राम रोष डर अति कौ।

श्री राम चन्द्र जी का सेवक-अनुचर होना उनके लिए एक बहुत बड़े गौरव और स्वाभिमान का विषय है।

शरीर में प्रस्वेद-कम्पनादि सात्त्विक भावों के साथ के निर्द्वन्द्व स्वछन्द और निर्बन्ध हो गये। शौर्य और भक्ति का एकत्र विनियोग एवं निदर्शन श्री हनुमान के चरित्र की विशेषता है। भगवान श्री राम स्वयं पवन पुत्र के महान विक्रम से विस्मित हो रहे हैं। भगवान श्री राम पवन तनय

1- उपर्युक्त 9/74
2- उपर्युक्त 9/74

की अलौकिक शक्ति को जानते हैं। श्री हनुमान को जिस प्रकार अपनी प्रभुप्रदत्त अन्तःशक्ति और आत्मबल पर विश्वास है, उसी प्रकार प्रभु भी अपने भक्त की क्षमता, प्रतिभा और सामर्थ्य में दृढ़ विश्वास रखते हैं और इसलिए जब जब विषम स्थिति, अपरिहार्य आपदा आती है तब श्री राम अपने अनन्य प्रिय भक्त का स्मरण करते हैं। जिस समय लक्ष्मण जी को शक्ति लगती है, उस समय भगवान श्री राम उनके प्राण रक्षणार्थ संजीवनी आनयन सरीखे दुस्तर कार्य के लिए विह्वल होकर हनुमान का ही आवाह्न करते हैं।

कहाँ गयौ मारुत पुत्र कुमार।

ह्वै अनाथ रघुनाथ पुकारे, संकट मित्र हमार।

× × × ×

नाहिन और बियौ कोउ समरथ जाहि पठावौं

को अब है पौरुष दिखरावै, बिना पौन के पूत।।[1]

मारुति को प्रभु "संकट-मित्र" नाम से पुकार रहे हैं, इधर श्री हनुमान भी प्रभु सेवा के लिए तत्क्षण तत्पर हैं।

निःसन्देह वे अपने संजीवनी अभियान में कृत कार्य होंगे, यह उनकी अडिग निष्ठा है। यथा समय मैं वे दिव्य चमत्कार भी श्री राम देख लेते हैं-

---

1- उपर्युक्त - 9/105

हनुमान संजीवनि ल्यायौ।

महाराज रघुवीर धीरकौ, हाथ जोरि सिर नायौ।

परबत आनि धर्यौ सागरस्तर भरत संदेश सुनायौ।

सूर संजीवनि दै लछिमन कौ, मूर्च्छा फेरि जगायौ।।[1]

भक्त कवि सूरदास के वीर हनुमान, संजीवनी सुसमुटित व्यक्तित्व से समन्वित श्री हनुमान सम्बन्ध सिद्ध होंगे।

भक्ति काल के कवियों में श्रेष्ठ कवि अब्दुल रहीम खानखाना ने हनुमान जी को विपत्ति हर्ता के रूप में चित्रित किया है-

ध्यावौ विपति विदारन सुवन समीर।

खल-दानव-वन जारन प्रिय रघुवीर।।

ओछो काम बड़ो करै तौन बड़ाई होय।

ज्यो रहीम हनुमंत को गिरधर कहै न कोय।[2]

इसके अतिरिक्त महाकवि गिरधर कवि राय ने हनुमान को गिरिधारी हनुमान के रूप में चित्रित किया है-

साईं एकहिं गिरि धरयो, गिरधर गिरिधर होय।

हनुमान बहु गिरि धरे, गिरधर कहैन कोय ।।[3]

इसके अतिरिक्त रामेतर भक्ति काव्य में विशेष हनुमान भक्ति परक सन्दर्भ नहीं प्राप्त होते हैं। रीतिकालीन भक्ति काव्यों में हनुमान की

1- उपर्युक्त-9/156
2- मार्मिक काव्यांजलि -संपादक- काव्य श्री डॉ0 दयाशंकर मिश्र, पृ0 22
3- उपर्युक्त -पृ0 23

भक्ति का यत्र तत्र वर्णन प्राप्त होता है। कविवर सेनापति ने हनुमान को एक आदर्श भक्त के रूप में चित्रित किया है-

भए है भगत भगवंत केभजन- रत,
है रहे विवेकी,जग जान्यौ जिन सपनौ।
x x x x
जैसौ हनुमान जान्यौ भजन को रस जिन,
राम के भजन हो लौ जी व्यौ मांग्यौ अपनौ।।[1]

हनुमान राम के भजन हेतु ही इस संसार में रहने की कामना करते हैं।

इसके अतिरिक्त अन्य कवियों काउल्लेख उक्त अध्याय में ही वर्णन किया जा चुका है। इसके अतिरिक्त कृष्ण भक्त कवियों में महाकवि रत्नाकर का नाम आता है जिन्होंने हनुमान के चरित्र के सन्दर्भ में कतिपय पदों की रचना की है-

ऐहौं हनुमान मान एतौ जौ बढ़ाये जग।
राखियै तौ ध्यान आन-बान के निभाए कौ।
x x x x
फेरियौ निगाह ना गुनाह हू किये पै लाखु,
राखियै उठाह निज बाँह दै बसाये कौ।।[2]

1- उपर्युक्त -पृ0 21
2- उपर्युक्त -पृ0 22

मूलत: हनुमान जी निष्काम-पूर्ण भक्त हैं, जिनके जीवन में प्रभु को छोड़कर कोई आकांक्षा उदय नहीं हुई। जिनके हृदय कुंज में अनपायनी भक्ति का निवास है, विद्या बल, वैभव, सर्वगुण सम्पन्न होने पर भी अकिंचन है। यही कारण है, इनके तेज के समक्ष कोई ठहर नहीं पाता, क्योंकि इनका सम्पूर्ण जीवन श्री राम-पदारविन्द-मकरन्द के उत्कट सौगन्ध्य से आनन्दोलित है। अत: रावणादिक का भी तेज इनके तेज से अभिभूत हो जाता है। यहाँ हनुमान जी की यही याचना है कि-

स्नेहो मे परमो राजं स्त्वयि तिष्ठतु नित्यदा
भक्तिश्च नियता वीर भावो नान्यत्र गच्छतु।।[1]

वस्तुत: हनुमान जी का जीवन ही अपने परमाराध्य भगवान श्री राम कार्य के लिए समर्पित है, जिस समय लक्ष्मण जी को मूर्च्छा लगती है, इस समय इनका अप्रतिम पराक्रम दर्शनीय है-

जौं हौं, अब अनुशासन पावौं।

तौ चन्द्रमहिं निचोरि चैलज्यों आनि सुधासिर नावौं।

× × × ×

दीजै सोइ आयसु तुलसी प्रभु ज्यहि तुम्हरे मन भावौ।।[2]

वस्तुत: कृष्ण काव्य में हनुमान का भक्त आराध्य, पुरुषार्थ स्वरूप उतना नहीं दृष्टि गोचर होता जितना राम काव्यों में वर्णित है।

1- वा0रा0उ0 16
2- तुलसी ग्रन्थावली, लंकाकाण्ड-पृ0 331, पद-8, प्रकाशक- नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

तृतीय अध्याय में हनुमान के विभिन्न स्वरूपों पर अध्ययन प्रस्तुत किया जा चुका है। यथा संभव उक्त अध्याय में भी प्रस्तुत किया गया है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है, कि हनुमान का चरित्र एवं भक्ति आदर्श समस्त साहित्य में वर्णित है।

उक्त अध्याय में विभिन्न महत्वपूर्ण भाषाओं पर आधारित साहित्य में हनुमान भक्ति तथा व्यक्तित्व आदि का वर्णन प्रस्तुत किया गया है। वस्तुतः हनुमान का चरित्र इतना विस्तृत उदात्त एवं पावन है कि भारत के समस्त भाषाओं में वर्णन आता है। विभिन्न भाषाओं में हनुमान के चरित्र एवं अप्रतिम पराक्रम, आदि का वर्णन ही हनुमान की उपादेयता का उत्कृष्ट उदाहरण है। इसके पश्चात अब हनुमान के विभिन्न स्वरूपों का अध्ययन जन्म, कार्य, आदि का वर्णन प्राप्त साक्ष्यों के आधार पर प्रस्तुत किया जायेगा। पाँचवे अध्याय में हनुमान के विभिन्न मार्मिक पक्षों को भी उद्घाटित करने की चेष्टा की गयी है।

पञ्चम अध्याय

हनुमान के विभिन्न स्वरूपों का परिचय

जन्म कथाओं के सन्दर्भों के आधार पर -

श्री हनुमन्नाम विवेचन-

परम भागवत श्री राम के अनन्य भक्त महावीर हनुमान के अनेक सोपाधिक नाम है। ये सभी नाम अपने में अनेक रहस्यपूर्ण संकेत छिपाये हुए हैं एवं हनुमान के पृथक्-पृथक् रूपों आदर्शों व्यक्तित्व आदि का संकेत करते हैं। इनमें से कुछ प्रसिद्ध नामों का विवेचन करने का प्रयास किया जा रहा है-

हनुमान-

यह हनुमान जी का स्वस्वरूप निर्देशक मुख्य नाम है। इसनाम के अतिरिक्त अन्य नाम गुण कर्मादि की उपाधि के आश्रित होने के कारण विशेषण विशिष्ट हैं। वाल्मीकि रामायण और अध्यात्म रामायण में उन्होंने भगवान श्री राम को अपना परिचय "हनुमान" नाम से ही दिया है-

"अहं सुग्रीव सचिवो हनुमान नाम वानरः।।[1]

हनुमानिति विख्यातो लोके स्वेनैव कर्मणा।।[2]

1- वा०रा० 5/34/38
2- उपर्युक्त 5/35/82

अहं सुग्रीव सचिवो वायु पुत्रो महामते।।

हनुमान नाम विख्यातो अञ्जनी गर्भ सम्भवः।[1]

राम चरित मानस के उत्तरकाण्ड में वे भरत जी को भी इसी नाम से अपना परिचय देते हैं-

मारुत सुत मैं कपि हनुमाना। नासु मोर सुनु कृपा निधाना।।[2]

वस्तुतः नाम और नामी में अभेद सम्बन्ध होता है। नाम में नामी का व्यक्तित्व;उसका चरित्र ,गुण एवं प्रभाव सूक्ष्म रूप से अन्तर्हित होते है। "हनुमान" इस नाम में भी हनुमान जी का सम्पूर्ण व्यक्तित्व,गुण और चरित्र पौरुष एवं प्रभाव बीज रूप से अन्तर्निहित है। "हनुमान" शब्द हिंसा तथा गति अर्थ वाली "हन्" धातु में "उ" प्रत्यय और तद्धितीय "मतुप" प्रत्यय लगाने पर निष्पन्न होता है,जिसका अर्थ है- हनु(दाढ़) वाला "मेदिनीकोश" के अनुसार "हनु" शब्द के कई अर्थ हैं- वेश्या,मृत्यु,अस्त्र ,रोग एवं दोनो कपोलांग।[3] हनुमान की अप्रतिम संहार शक्ति को विचार कर ही महर्षि अगस्त्य ने श्रीराम सेकहा था-

प्रवीविविक्षोरिव सागरस्य लोकान्"

दिधक्षोरिव पावकस्य।

लोक क्षयेष्वेव यथान्तकस्य,

हनुमतः स्थास्यति कः पुरस्तात् ।।[4]

प्रलय काल में भूतल को आप्लावित करने के लिए भूमि के भीतर प्रवेश करने की इच्छा वाले, महासागर के तुल्य,सम्पूर्ण लोकों को दग्ध कर

1- अध्यात्म रामायण- 4/1/23-34
2- तुलसी कृत राम चरित मानस- 7/1/4
3- मे0 को0 20/25-26
4- वा0रा0 7/39/48

डालने के लिए उद्यत हुए संवर्तक अग्नि तुल्य तथा लोक संहार के लिए उठे हुए काल के समान प्रभावशाली इन हनुमान के सामने कौन ठहर सकेगा?

त्रैलोक्यविजयी महापराक्रमी रावण की स्वर्ण नगरी लंका को अकेले ही भस्मीभूत कर देना उनकी संहार कारिणी शक्ति का स्पष्ट प्रमाण है। हनुमान में अन्तर्निहित पराक्रम और प्रहार की प्रबल प्रचण्ड शक्ति का विचार करके ही ब्रह्मा ने बाल हनुमान को वर देते हुए पवन देव से कहा था-

अमित्राणां भयंकरो मित्राणाम भयंकर:।
अजेयो भविता पुत्रस्तव मारुत मारुति:।।
रावणोत्सादनार्थानि राम प्रीति कराणि च।
रोम हर्ष कराण्येव कर्ता कर्माणि संयुगे।।[1]

अपनी तेजस्विता और पराक्रम से सम्पूर्ण रामायण कथा में छाये हुए दो ही प्रमुख पात्र हैं- श्री राम और राम दूत हनुमान। हनुमान का पराक्रम श्री राम से कुछ ही न्यून है। युद्ध भूमि में रावण भी हनुमान के प्रचण्ड प्रहार तथा उदग्र सामर्थ्य के सामने तेजोहीन हो गया था।

भगवान श्री राम स्वयं मानते हैं कि हनुमान का बलशाली और रावण से भी अधिक है-

अतुलं बलमेतद वै वालिनो रावणस्य च।
न त्वेताभ्यां हनुमता समीत्वित मीतर्मम ।।[2]

1- वा०रा० 7/36/23;25
2- वा०रा० 7/35/2

स्वयं हनुमान जी ने अपने मुख से कहा है कि मैं अपार पराक्रम वाला हूँ ,करोड़ो तुच्छ रावण मेरे समान नहीं हो सकते। अतएवं श्री हनुमत्स्वरूप के ध्यान में श्री उनके प्रबल सामर्थ्य एवं उदग्र संहार शक्ति का चिन्तन ही मुख्य है-

वामहस्ते महावृक्षं दशास्य कर खण्डनम्।

उद्यद्दक्षिणदोर्दण्डं हनुमन्तं विचिन्तयेत्।।

"हन्धातु का दूसरा अर्थ है -गति शब्द के वैयाकरणों के अनुसार गति के भी तीन अर्थ हैं- ज्ञान,गमन और प्राप्ति। मतुबर्थ [तदस्य अस्ति- वह इसका है] से संयुक्त करने पर "हनुमान" का अर्थ होगा- ज्ञानवाला,गतिवाला, और प्राप्ति वाला। भक्ताधिराज श्री हनुमान सर्वविद्या वारिधि है,गति एवं बल के भंडार हैं। उन्हें सभी ऐश्वर्य -भोगों की तथा ब्रह्म की प्राप्ति हो चुकी है। हनुमान अपने नामार्थ के अनुरूप गति,मति एवं शक्ति के अतुल हैं,इस बात को स्वयं महर्षि अगस्त्य श्री राम के सम्मुख स्वीकार करते हैं-

सत्य मेतद् रघुश्रेष्ठ यद् ब्रवीषि हनूमति।

न बले विद्यते तुल्यों न गतौ न मतौ परः।।[1]

श्री हनुमान के वेग एवं गति की अपूर्व शक्ति उनके समुद्रोल्लघन तथा लंका से गन्ध मादन पर्वत पर जाकर त्वरित गति से औषधि सहित पर्वत खण्ड को ले आने एवं उसे पुनः प्रत्य स्थापित कर आने में प्रत्यक्ष दिखायी देती है। "हन्" धातु के गत्यर्थ मूलक "प्राप्ति" अर्थ की दृष्टि से विचार करने पर तो श्री रामैक परायण प्रभु सेवक हनुमान को किस वस्तु की प्राप्ति दुर्लभ रही। लंका

1- वा0रा0 7/35/15

जाकर श्री जानकी जी की कुशल समाचार सुनाने पर प्रभु ने उनका आलिंगन कर अपना सर्वस्व ही उन्हें पुरस्कार रूप में दिया एष सर्वस्व भूतस्तु परिष्वङ्गो हनुमतः। मया काल मिमं प्राप्य दत्तस्तस्य महात्मनः।[1]

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम उन्हें दुलर्भ अनपायिनी भक्ति का वरदान देते हैं-

नाथ भगति अति सुखदायनी।
देहु कृपा करि अनपायनी।
सुनि प्रभु परम सरल कपि बानी
एवमस्तु तब कहेउ भवानी।।[2]

यही नहीं भगवान् श्री राम के वरदान से श्री राम और हनुमान की कीर्ति कथा का परम भक्ति के साथ गान भवसागर से पार करने वाला है-

मोहि सहित शुभ कीरति तुम्हारी,
परम प्रीति जो गाइहैं।
संसार सिन्धु अपार पार,
प्रयास बिनु नर पाइहैं।।[3]

महाकवि तुलसीदास जी के मतानुसार तो जगज्जननी जानकी की कृपा से स्वयं हनुमान जी अष्ट सिद्धियों और नव निधियों के दे सकने के वरदान सामर्थ्य से युक्त हैं-

---

1- उपर्युक्त 6/1/13
2- तुलसीकृत राम चरित मानस- 5/33/1
3- उपर्युक्त 6/105/80।

अष्ट सिद्धिनव निधि के दाता।

अस बर दीन्ह जानकी माता।[1]

इससे यह स्पष्ट होता है कि हनुमान जी में "प्राप्ति" गुण की प्रचुरता है। उन्हे भौतिक आध्यात्मिक भोग, यौगिक शक्ति सिद्धि एवं भक्ति तथा मुक्ति की प्राप्ति सहज तथा उपलब्ध है।

इसके अतिरिक्त हनुमान को एक अन्य अर्थ भी प्राप्त होता है। जब इन्द्र ने अत्यन्त कुपित होकर उन पर अपने वज्र से प्रहार किया। इन्द्र के वज्र से चोट खाकर ये एक पहाड़ पर गिर पड़े। वहाँ गिरते समय इनकी बाँयी ठुढ्डी टूट गयी। इस प्रकार वाम हनु के क्षतिग्रस्त होने के कारण इन्द्र ने इनका नाम "हनुमान" रखा-

मत्करोत्सृष्टवज्रेण हनुरस्य यथा हतः।

नाम्ना वै कपिशार्दूलो भविता हनुमानिति।।[2]

इन्द्र ने पवन देव से कहा- मेरे हाथ से छूटे हुए वज्र के द्वारा इस बालक की हनु ठुढ्डी टूट गयी है इसलिए इस कपि श्रेष्ठ का नाम "हनुमान" होगा। "शंकर सुवन" नाम का विवेचन इस प्रकार है-

<u>शंकर सुवन-</u>

शिव पुराण के अनुसार शूलिन् महेश्वर को चर्तुभुज के मोहिनी रूप के दर्शन हुए। चन्द्र शेखर मोहित हो कामातुर बने, उनका वीर्य स्खलित हुआ

1- हनुमान चालीसा-गोस्वामी तुलसीदास कृत।

2- वा0रा0 7/36{11}

जिसे सप्त ऋषियों ने पत्र पुटक में सहेज कर रखा, तत्पश्चात् कालान्तर में उसे गौतम कन्या अन्जना में कर्ण द्वार के माध्यम से प्रतिष्ठित किया। शिव-शुक्र सम्भूत पुत्र हुए लोक विख्यात हनुमान।[1]

इस कथा का अन्य रूपान्तर भी है- प्रमथाधिप तेजस् के रक्षार्थ हर और हरि उसे पत्रद्रोण में सुरक्षित कर कानन चारी बने। वहाँ गहन वन में उन्होंने तपस्यारत अन्जना को दीक्षा लेने के लिए प्रेरित किया। चक्रपाणि ने अन्जना को मंत्र दीक्षा देते समय उसके कान द्वारा अभिमंत्रित मृत्युन्जय रेतस् को उसके गर्भ में स्थापित कर दिया। भूतेश-बीजोद्भूत अन्जनी तनय हनुमान जी रुद्रात्म बने। वस्तुतः हनुमान जी किसके पुत्र थे इस सन्दर्भ में कई तरह के प्रश्न उठते हैं। भारतीय भक्ति परम्परा में हनुमान साहित्य में अनेक स्थलों पर उनके माता पितादि के सम्बन्ध में अनेक नाम मिलते हैं- राम चरित मानस[2] विनय पत्रिका[3] वायुपुराण[4] अध्यात्म रामायण,[5] रामाज्ञा प्रश्न[6], राम रक्षास्तोत्र[7]

1- श्री राम दूत- त्रैमासिक पत्रिका-सं0 श्री कृष्ण चन्द्र जोशी "अनुज" प्रकाशन श्री हनुमान आराधना मंडल प्रयाग- 6, डॉ0 विश्व नाथ याज्ञिक का लेख- विभिन्न हनुमन्नामो का निरूपण, पृ0 20

2- मारुत सुत मैं कपि हनुमाना। [7/1/4]

3- राम को दुलारो दास बाम देव को निवास, नाम कलि काम तरु केसरी-किसोर को [9, 14]

4- अंजनी गर्भ संभूतो हनुमान पवनात्मजः। [60/73]

5- अहं सुग्रीव सचिवो वायुपुत्रो महामते, हनुमान विख्यातो ह्यंजनी गर्भ संभव 4/1/23-24

6- वातात्मजं वानर यूथ मुख्यं श्री राम दूत शरण प्रपद्ये [33]

7- क- मारुत स्यों रसः श्रीमान हनुमान नामवानरः [1/17/16]
ख- सत्वं केसरिण पुत्रः क्षेत्रजो विक्रमः। [4/66/29]

वा·रामायण,[1] स्कन्दपुराण,[2] आनन्द रामायण,[3] श्री रामार्चा पद्धति,[4] कवितावली[5] हनुमान बाहुक[6] रहीम रत्नावली[7] हनुमान चालीसा[8] राम चरिताब्धि रत्न[9] हनुमन्नाटक[10] सूरसागर[11], गीतावली[12], राम स्वयम्बर,[13] चम्पूरामायण[14] इतके/ अन्य ग्रन्थों में भी हनुमान के जन्म के सम्बन्ध में कथाएं प्राप्त होती हैं।

एक मुख हनुमत्कवच,[15] संगीत रत्नाकर,[16] भाव प्रकाशन[17]

1- क- मारुत स्यौ रस: श्रीमान् हनुमान नाम वानर: [1/17/16]
   ख- सत्वं केसरिणं पुत्र: क्षेत्रजो विक्रम:।
2- आज्ञया राम चन्द्रस्य स्थापयामास वायुज:। ब्रह्माण्ड [46/77]
3- हनुमान अंजनी सूनु: वायुपुत्रों महाबल: [8/13/8]
4- राम सिद्धयर्थे स्योश्यं हनुमान् मारुतात्मज: [2/39]
5- तुलसी पवननन्दनु अटल युद्ध-क्रुद्ध कौतुक करत [लंकाकाण्ड-47]
6- कह तुलसिदास बस जासु उर मारुत-सुत मूरति विकट।
7- छायहुँ विपद विदारन सुवन-समीर [वही,5]
8- क-संकर सुवन केसरी नन्दन।
   ख- अंजनि पुत्र पवन सुत नामा।
9- मरुत्सुत राम पदार विन्दवन्दार कमाश्रु वन्दे। [1/7]
10- अथ दशरथ सुनो राज्ञया वायु पुत्रो,रजनिचर पुरी मालोक्य भूत्वा दिदंक्ष: [6/13]
11- अंजनि कौ सुत,केसरि के कुल,पवन गवन उपजायौ गात। नवम स्कन्ध, 513
12- गाल भेलि मुद्रिका,मुदित मन,पवन पूत सिर नायो-सुन्दरकाण्ड-1 [
13- चहिरि हार तोड्यौ सभा,पवन कुमार अपार।
    राम स्वयम्बर,महाराज रघुराज सिंह-23
14- निद्रास्य याद रुणितेन समीर पुत्र: सौमित्र नेत्र युगलेन निपीय मान:।
    सुन्दरकाण्ड,122]
15- श्री राम हृदयानन्दं भक्त कल्प महीरुहम,
    अभयं वरदं दोर्भ्यां कलये मारुतात्मजम्।
16- आंजनेयो मातृगुप्तो रावणोनन्दि केश्वर: [शार्ङदेव:]
17- शिष्याणां भरतस्य वानि च भ्रान्त्या व्याप्यपत तान्येजना
    सुनोरप्यथ नाट्य वेदमखिलं सम्यक्-तमव्याचदत[शारदा तनय]

श्री वैष्णव मताब्ज भास्कर[1], नारद पुराण[2], हनुमन्मन्त्र चमत्कारानुष्ठान पद्धति[3], आदि ग्रन्थों के अनुसार एक ओर जहाँ अंजनि पुत्र, आञ्जनेय, अंजनि की सुत, अंजनी गर्भ संभूत, आदि कहकर उनकी माता के अंजनी या अंजना नाम का संकेत किया गया है, वहीं दूसरी ओर पवन पुत्र, पवन सुत, सुवन समीर, मारुतसुत, मारुती, वायुपुत्र, वातात्मज, मारुतात्मज तथा केसरी नन्दन, केसरी किसोर और संकर सुवन आदि शब्दों के प्रयोग के द्वारा यह सूचित किया गया कि वे वायु देवता, केसरी और शंकर के पुत्र हैं। ऐसी स्थिति में इस प्रकार की शंका का उठना सर्वथा स्वाभाविक है। वस्तुतः हनुमान किसके पुत्र हैं, वायुदेव के, केसरी के या शंकर के। मूलतः हनुमान जी को रुद्रावतार माना जाता है-एक बार खण्ड परशु स्थाणु शंकर व सती कैलाश शिखर पर विराजमान थे। रामावतार में ब्रह्मा की आज्ञा थी कि समस्त सुरगण वानर रूप में पृथ्वी पर अवतरित हों। देवगणों ने विधि की आज्ञा का अनुवर्तन किया-

> जो कछु आयसु ब्रह्मा दीन्हा।
> हरषे देव बिलम्ब न कीन्हा।।
> x x x x
> गिरि कानन जहँ-तहँ भरिपूरी।
> रहे निज निज अनीक रचि रूरी।।[4]

1- स्वात्यां कुजे शैव ति थौ कुकीर्ति के,
   कृष्णेहञ्जनागर्भत एवं साक्षात्। 8।
2- अंजनेय पाटलास्यं स्वर्णादिसम विग्रहम्, पारिजात द्रुमस्थ चिन्तयेत साधकोत्तमः [75/102]
3- ॐ हनमों हनुमते रुद्रावताराय वायु सुताय अंजनी गर्भ संभूता- इत्यादि।
4- तुलसीकृत राम चरित मानस - बाल काण्ड -188-2/5

शिवाजी को भी अवनि अवतरण की कामना जगी। भगवती दक्ष कन्या सती ने रावण की शिव-भक्ति भावना की गंगाधर को स्मृति कराई। पिनाकिन ने उत्तर दिया कि लंकेश्वर दशानन ने देश-शिरों से मेरे दस रुद्र रूपों का ही स्तवन किया है। मेरे ग्यारहवें रुद्र रूप की उस दश ग्रीव ने अवहेलना की है। मैं इस अंश से उसका विरोधी बनूँगा। समीर द्वारा मेरा यह अंश अञ्जना गर्भ से प्रसूत हो रावणारिराम का सेवक बनेगा। महाकवि गोस्वामी तुलसीदास जी ने इस भाव की सम्पुष्टि की है-

जेहि शरीर रति राम सों,

सोइ आदरहि सुजान

रुद्र देहतजि नेह वश,

वानर भै हनुमान।।[1]

जानि राम सेवासरस,

समुझि करब अनुमान।

पुरुषा ते सेवक भए,

हरते भे हनुमान।।[2]

श्री हनुमान वस्तुतः शंकर सुवन नहीं साक्षात शंकर है, जिन्हे भक्त प्रवर गोस्वामी तुलसीदास जी ने विनय पत्रिका में महादेव, कृपाली, वानराकार, विग्रह पुरारी, शूलपाणी आदि नामों से अभिहित किया है।[3]

1- गोस्वामी तुलसी दास कृत दोहावली
2- गोस्वामी तुलसी दास कृत दोहावली
3- विनय पत्रिका- 26,27,29, गोस्वामी तुलसीदास कृत।

स्कन्द पुराण में भी इस तथ्य की पुष्टि होती है।[1]

यो वै चैकादशो रुद्रो हनुमान समहाकपि:

अवतीर्ण: सहायार्थं विष्णो रमित तेजस:।।

अगस्त्य संहिता के अनुसार भी श्री हनुमान जी साक्षात शिव के अवतार हैं।[2] हनुमान बाहुक में भी इस आशय की बात कही गयी है-

राम को दुलारो दास बामदेव को निवास।[3]

इस सन्दर्भ में जो अन्य कथा मिलती है, वह निम्नवत है- भगवान श्री राम के अवतार के स्वर्ण अवसर पर शिवजी के मन में ऐसी अभिलाषा जगी कि मैं भी उनकी सेवा का सुयोग प्राप्त करने के उद्देश्य से पृथ्वी पर अवतरित होऊँ। इस बात को जानकर जब पार्वती जी ने उनसे निवेदन किया कि भगवान राम तो रावण वध के लिए अवतीर्ण हो रहे हैं, और रावण आपका अनन्य भक्त रहा है, ऐसी स्थिति में आप उसके वध में सहायक कैसे हो सकते हैं? तब भूत भावन भगवान शंकर ने कहा कि मेरा रूप एकादश रुद्रों का है रावण ने मुझे प्रसन्न करने के लिए जब अपने दस मस्तकों को काटकर अर्पित किया था तो उसने मेरे एक रूप का तिरस्कार किया था। इसलिए मैं उसी एक अवशिष्ट रूप से अवतरित होकर भगवान राम की सेवा करने के साथ-साथ रावण वध में राम का सहायक बनूँगा। फलत: भगवान शिव अपने ग्यारहवें रुद्र रूप में "अंजना" के गर्भ से श्री हनुमान के रूप में अवतरित हुए।

1- स्कन्द पुराण- माहेश्वर खण्ड, के0 8/99-100
2- मेघ लम्बेडञ्जना गर्भात् प्रादुर्भूत: स्वयं शिव:।
3- हनुमान बाहुक 9/14

वायु पुराण एवं भविष्य पुराण के अनुसार एक बार शिव जी ने रूद्र रूप में अंजना के पति केशरी के शरीर में सूक्ष्म रूप में प्रविष्ट होकर अंजना के साथ विहार किया, जिसके फलस्वरूप अंजना गर्भवती हुई और कालान्तर में रूद्रावतार श्री हनुमान जी की माता बनी। इसी काल में वायु देवता ने भी केसरी के शरीर में सूक्ष्मतः प्रविष्ट होकर "अंजना" के साथ समागम किया। इस प्रकार हनुमान जी शंकर-सुवन और पवन सुत के नाम से अभिहित किये जाते हैं। वस्तुतः हनुमान जी शंकर के अंशावतार है। रूद्र ग्यारह परस्पर में अविभाज्य है, अखंडित है, अतः उच्च सेवा दर्शी हनुमान जी साक्षात रूद्र हैं, वह पिनाकिन से भिन्नाभिन्न हैं। "शंकर सुवन" के सन्दर्भ में एक अन्य कथा भी प्राप्त होती है। एक बार पौलस्त्य दशकण्ठ का पुष्पक विमान कैलाश श्रृंग पर अचानक अवरूद्ध हुआ वानरूपी शिव वाहन नन्दी के कारण। रावण के हास्य से क्षुब्ध होकर नन्दी ने उसे शाप देते हुए कहा कि प्रजापति पुलह के वंश में तुम्हारे विनाशार्थ मेरे मुख जैसे भीम पराक्रमी वाले मुख उत्पन्न होंगे, विष्णु धर्मोत्तर पुराण की उक्त पंक्तियाँ दृष्टव्य है-

"मद वक्त्रसदृशावीराः पुलहस्य प्रजापतेः।
उत्पत्स्यन्ति कुल भीमाः क्षयार्थ वानरास्तव।।[1]

नन्दी की यह शाप गाथा भी रूद्रांश हनुमद्रूप में प्राकट्य इंगितकरती है। स्कन्द पुराण" के कथनानुसार ग्यारहवाँ रूद्ररूप नंदी का है। कृत्तिवासस गिरीश ने "शिवपुराण" शिव पुराण के अनुसार शिलाद ऋषि की तपस्या से आह्लादित हो नन्दीरूप में अवतरित हो उनके पुत्र बनने का वरदान दिया-

---

1- विष्णु धर्मोत्तर पुराण- 4/8।

तैव्युत्रो भविष्यामि नन्द नारनात्ययोनिजै:[1]

एकादशवे रुद्र के रूप में हनुमान का वर्णन गुजराती रामायण में भी प्राप्त होता है। अंजनी के तप से प्रसन्न हो वृषध्वज ने,उसकी पुत्रेच्छा की पूर्ति हेतु,उसके गर्भ से ग्यारहवें रुद्र रूप में प्रकट होना स्वीकार किया-

"शंकर कहे,धन्य अंजनी तने पुत्रथाशे नेट।
रुद्र जे अगियारमा,ते प्रगटशे तुज पेट।।[2]

आनन्द रामायण मे सुवर्चला नाम की एक अप्सरा थी जो नृत्यभंगा के दोष में चतुरानन-ब्रह्मा द्वाराशापित गृध्री बनी। शाप मुक्ति का उपाय था पुत्रेष्टि यज्ञ द्वारा प्राप्त चरु में से कैकेयी के पायस भाग को उसके द्वारा अन्जन शिलोच्चय पर गिरा देना। स्वभाव का चरु भक्षण करने में कैकेयी को विलम्ब हुआ और उसे छीनकर गृध्री उड़ गयी और उसने उस पायसांश को अन्जन गिरि पर गिराया। तेज वायु वेग के कारण वह निपतित चरु शिवाशी-र्वादिता तपस्विनी अंजनी के हाथ में आया और-

"शिवमन्त्र मणी ने अन्जनीये भक्षकोधौ तेह[3]

उक्त कथा से यह सिद्ध होता कि तपस्यासंलग्न अन्जना ने अष्ट मूर्तिदर्शनके वरदान से ग्यारहवे रुद्र के रूप में हनुमान जी को जन्म दिया। इसके अतिरिक्त श्री अनिरुद्धाचार्य वेंकटाचार्य जी हनुमान जी के रुद्र रूप होने की वैदिक व्याख्या इस प्रकार प्रस्तुत करते है- "वेदों में आग्नेय प्राण शिवे

1- शिव पुराण में उद्धृत।
2- गिरधर कृत गुजराती रामायण 60/400
3- उपर्युक्त -61/401 बालकाण्ड

एवं सौम्य प्राण "शक्ति" शब्द से अभिहित होता है। इन दोनों के संयोग से अभिहित होता है। इन दोनों के संयोग से उत्पन्न सप्त विध प्राण ही "मरूदंण" हैं। मरूतोरूद्र पुत्रास: मरूदंण रूद्र के पुत्र हैं,अत: वायु "मारूत" नाम से कहा जाता है। पुराण-विज्ञान के अनुसार अदिति {सूर्य संयुक्ता पृथ्वी} से मरूदंण की उत्पत्ति हुई। इन्द ने अदिति के गर्भ में प्रविष्ट होकर पहले उस गर्भ के सात भाग किये। पुन: एक-एक भाग के सात खण्ड किये इस प्रकार मरूतो की संख्या उनचास हुई। ये पृथ्वी से लेकर द्युलोक पर्यन्त बहने वाली वायु के उनचास प्रकार हैं। इसमें से पृथ्वी में स्थित धन भावापन्न सर्वादि-मरूत्प्राण महावीर हनुमान है। मरूदंण के अन्तर्गत होने से ये रूद्र पुत्र है। वैखानस आगम में हनुमान आकाश से अभिन्न है।[1]

इसप्रकार वैदिक दृष्टि से देखे या पौराणिक कथा की दृष्टि से हनुमान का अंजनि पुत्र एवं पवन सुत होने पर शंकर सुवन या रूद्रावतार होना सुतरां उत्पन्न हो जाता है। अंजनि मूलत: अग्निसेना हैं। वायु विश्वप्राण {cosmic life energy} है। वैदिक परिभाषा में रूद्र अग्नि भी हैं एवं प्राण भी।[2]

शंकर सुवन श्री हनुमान का रूद्र रूप,श्री राम के प्रति अनन्य भक्ति,एक निष्ठनिष्काम सेवा,उनकी निर्विकार चित्ता एवं योगी रूप का संकेत देता है।

1- कल्याण- श्री गणेश अंक- पृ0 77
2- एष रूद्रो यदग्नि- {तै0सं0-2/6/66} अग्निर्वै रूद्र- श·ब्रा·523/1/10}
   एषहि रूद्रो यदग्नि: । मै·1/6/7/11 ए0ब्रा0 2/5 एषा वा अस्य{अग्ने:}
   घोरा तनुर्यद रूद्र: {तै0सं0-2/3/2/2
   प्राणा वैरूद्रा: प्राणा हीदं सर्व रोदयन्ति- जै0उ0 4/2/1/6

पवन तनय-

1- "स्कन्द" एवं भविष्योत्तर पुराणों के अनुसार सन्तान हीन अंजना संतप्त होकर मतंग मुनि के पास विनय करने पहुँची। उनके परामर्शानुसार अन्जना ने नरायणादि में जाकर घोरतपस्या की। बारह वर्ष व्यतीत होने पर वायु देवता ने प्रसन्न होकर वरदान किया जिसके फलस्वरूप हनुमान जी का जन्म हुआ और वह पवनात्मज कहलाये।

2- "ब्रह्माण्डपुराण" में त्रेता युगीन असुर केसरी को शंकरकृपा से पुत्र के स्थान पर एक सुन्दरी कन्या प्राप्ति का आशीर्वचन मिला। वह कन्या अन्जना थी। इसका विवाह वानरराज केसरी से हुआ। अन्जना दीर्घकाल तक पुत्र वंचिता रही। पुलोमा के आज्ञानुसार पुत्र प्राप्त्यर्थ,अन्जना ने सप्त सहस्त्र वर्षों तक श्री वेंगराचल पर्वत पर तप किया सिद्धि के क्षण आकाशवाणी हुई कि जब दैत्य राज रावण के वध के लिए रघुकुल दीपक राम चन्द्र जी अवतरित होंगे तब तुम्हे एक अप्रतिम सुत की प्राप्ति होगी यह अन्जना पुत्र,वायु तनय हनुमान जी हुए।[1]

3- पवनसुत कहे जाने का श्री दीना नाथ जी शर्मा ने "हनुमच्चिन्तन" में एक कारण और प्रतिपादित किया है। उनके अनुसार "शिव महापुराण" में पृथ्वी ,जल,तेज,वायु,आकाश,सूर्य,चन्द्रमा,यजमान ये आठ शर्व के प्रत्यक्ष रूप हैं-

"भूम्यम्भोऽग्निर्मरुद्व्योम क्षेत्रज्ञार्क निशाकराः।
अधिष्ठिताश्चाधिष्ठ रूपैः शिवस्यहि: ।।[2]

1- राम दूत- त्रैमासिकी- सं0 कृष्ण चन्द्र जोशी "अनुज" -विविध हनुमन्नामों का निरूपण- लेख -डॉ0 विश्वनाथ याज्ञिक, पृ0 20

2- शिव महापुराण- 4/105

अतः मारुति नाम से हनुमान जी का धूर्जटि शम्भु से सम्बन्ध सुस्थिर होता है। भक्ताधिराज श्री हनुमान जी ने अपनी अद्भुत वीरता, अनवरत सेवा आदर्श चरित्र, अनन्य भक्ति आदि अनन्त सद्गुणों से केवल अपना ही जीवन सफल नहीं किया, तथा लोक में केवल मात्र महान आदर्श की ही प्रतिष्ठा नहीं की, अपितु वे जिनके अवतार एवं अंश थे, उन भगवान शंकर सर्वपूज्य पवनदेव, कपि श्रेष्ठ केसरी तथा माता अन्जनी की परमोज्ज्वल कीर्ति का भी चतुर्दिक विस्तार किया।

तत्पश्चात "केशरीनन्दन" नाम पर विवेचनात्मक दृष्टि डाली जा रही है-

केशरी नन्दन-

कपिराज केसरी सुमेरु पर्वत के शासक थे, अञ्जनापति थे। हनुमान जी उनके क्षेत्रज पुत्र हैं। वह पवनात्मज आञ्जनेय के देवर्षि निर्दिष्ट जनक हैं-

सत्वं केसरिणः पुत्रः क्षेत्र जो भीमविक्रमः।
सप देवर्षि निर्दिष्टः पिता मम महाकपिः।।[1]

तापसों के प्रोत्साहन से केसरी ने गोकर्ण तीर्थ शैल पर दानव शम्ब सादन का बध किया। उनको पुत्र प्राप्ति का वरदान मिला। फलतः उनकी पत्नी अंजना ने वायु के मानस संकल्प वीर्य से एक पुत्र जना। इस पुत्र का नाम जग विश्रुत केसरी नन्दन हनुमान पड़ा।

1- वाल्मीकि रामायण - 3/105

वा॰रामायण में भी हनुमान के प्रादुर्भाव की कथा प्राप्त होती है। वा॰रामायण के अनुसार हनुमान केसरी नामक वानर पुत्र थे।अंजना को महापराक्रमी और तेजस्वी पुत्र की माता बनने का भी वरदान प्राप्त हुआ था।[1] समय आने पर माता अंजना ने श्री हनुमान को जन्म दिया,जिसके फलस्वरूप श्री हनुमान जी पवनपुत्र केशरी नन्दन,मारुतात्मज आदि नामों से पुकारे जाते है। इस प्रकार हनुमान जी अंजनापति केसरी के क्षेत्रज[2] और वायु देवता के औरस-पुत्र[3] हुए। वस्तुतः हनुमान जी एक ही माता अंजना के पुत्र थे। पिता भी उनके ही थे केसरी,जिन्होने अंजना का विधिवत पाणिग्रहण किया था। परकेसरी की तपश्या से प्रसन्न होकर भगवान शंकर या वायुदेवता स्वयं माता अंजना के गर्भ से श्री हनुमान के रूप में अवतीर्ण हुए। इसलिए श्री हनुमान आंजनेय या अन्जनीपुत्र तो है ही केसरी के क्षेत्रज पुत्र होने के कारण केसरी नन्दन भी हैं। भगवान शंकर के अमोघ वीर्य से प्रादुर्भूत होने अथवा भगवान शंकर द्वारा रूद्र रूप में केसरी के शरीर में प्रविष्ट होकर अंजना के साथ विहार करने के परिणामस्वरूप श्री हनुमान जी का जैसे शंकर सुवन नाम सार्थक है,उसी प्रकार पवन देवता द्वारा अंजना के साथ मानस समागम करने अथवा झोका देकर दशरथ के पुत्रेष्टि यज्ञ के चरू का एक भाग अंजना के सुपुट में समर्पित करने अथवा वायुदेवता द्वारा केसरी के शरीर में प्रविष्ट होकर "अंजना" के साथ समागम करने के परिणाम स्वरूप उनका पवन सुत मारूतात्मज आदि नाम भी सर्वथा यथार्थ एवं सार्थक है।

1- वा॰रामायण - मन सांस्मगतो दृष्ट्वा,परिष्वज्ययशस्विनि
वीर्यवान बुद्धि सम्पन्न स्तव पुत्रोभविष्यति।

2- सत्वं केसरिणःपुत्रः क्षेत्र जो भीम विक्रम ·वा॰रा॰ 4/66/29

3- मारूत स्यौरसः पुत्रः। उपर्युक्त 4/66/30

"वस्तुत: केसरी नन्दन होने से हनुमान जी में ब्रह्मानन्द सर्वदा अभिव्यंजित है। केसरी का शब्दार्थ है "क" रूप आनन्द ब्रह्म में जो नित्याशायी हो। अत: केसरी सुत आनन्द स्वरूप है, आनन्दविहारी है। आनन्द रूप बनकर वह जीव मात्र के सम्बल हैं, आधार है।"[1] इसके पश्चात हनुमान के आंजनेय नाम की सार्थकता पर विचार किया जा रहा है।

आञ्जनेय-

सुव्रतासती अन्जना देवी के पुत्र होने के कारण हनुमान जी आञ्जनेय अञ्जनिनन्दन या अंजनी सुत नामों से पुकारे जाते हैं यह नाम उनके आधि दैविक रूप का संकेत करता है। अन्जना पूर्व जन्म में "पुञ्जिकस्थला" नाम की एक श्रेष्ठ अप्सरा थी। उनका अनुपम सौन्दर्य त्रिलोक में विख्यात था। शापवश वे कपि योनि में आई थी।[2]

एक बार जब वे मानवी रूप धारण कर सुमेरु शिखर पर विहार कर रही थी, तभी पवन देव ने उनका मनसा संस्पर्श किया।[3] इसप्रकार वायु देवता के मानस संकल्प एवं संस्पर्श से अन्जना के क्षेत्र से हनुमान का अयोनिज जन्म हुआ है। उनकी जन्म कथा सर्वथा दिव्य एवं रहस्यमयी है।

वस्तुत: परब्रह्म के अंशभूत सभी देवता नित्य एवं चिन्मय है। परमात्मा अपनी लीला एवं प्रयोजन के अनुसार उनमें से कुछ को लोक में अभिव्यक्त करते हैं, कुछ को परोक्ष रखते हैं, और कुछ को अपने में ही अन्तर्निहित रखते हैं।

1- राम दूत- त्रैमासिकी पत्रिका-सम्पादक- कृष्ण चन्द्र जोशी "अनुज" डॉ० विश्वनाथ याज्ञिक का लेख- हनुमन्नामों का निरूपण, पृ० 23
2- वा०रा० 4/66/8-9
3- उपर्युक्त -वा०रा० 4/66/17-18

अभिव्यक्त शक्तियों में से कुछ देवशक्तियाँ परमात्मा के इच्छानुसार नित्य एवं स्थायी होती है तथा कुछ कार्य करके पुनः परब्रह्म शक्ति में तिरोहित हो जाती है। इसी प्रकार आञ्जनेय नित्य ब्रह्म कला है, पर उनकी अभिव्यक्ति श्री रामावतार के समय लीला में सहायता देने के लिए हुई थी। तब से वे पुनः इस लोक में नित्य देवता के रूप में कार्यरत हैं। मेरुतन्त्र के अनुसार हनुमान का प्रभाव चारों युगों में स्थायी है।

पुञ्जिक स्थलानाग की अप्सरा का वर्णन "शतपथ ब्राह्मण" में आता है। इस ब्राह्मण के अनुसार पुञ्जिक स्थला का अर्थ है- दिशा या अग्नि की सेना।[1] दिशाएँ अनन्तता की प्रती हैं।[2] दिशाओं का देवता वायु है। वह उन सब में आविष्ट है।[3] रामायण के अनुसार अप्सराएँ "अप" जल में मन्थन करने से उसके रस से उत्पन्न हुई थी।[4] इस प्रकार अप्सरा शब्द उत्कृष्ट विश्व का प्राण है, तथा सभी का उत्पादक एवं सम्पूर्ण कर्म का कारक होने से "विश्वकर्मा" है।[5] अञ्जना और वायु के संस्पर्श में स्वर्गल्पीदिक [दिव्य सेना, दिव्य प्रकाश] एवं वायु का सत्य रूपी दिक एवं पवमान का, दैवी प्रकृति एवं विश्व प्राण का योग सम्यग रूप से सुघटित होता है। इन दोनों दिव्य शक्तियों के संयोग का परिणाम है-स्वर्गीय बल, प्रकाश एवं सत्य की चेतना से युक्त हनुमान जी का दिव्य जन्म। हनुमान के बाल्यकाल में भिन्न-भिन्न देवों ने जो उन्हे वरदान दिये हैं वे भी इसी बात के संकेतक हैं कि हनुमान देवताओं की शक्ति के पुन्जीभूत रूप थे।

1- शतपथ ब्राह्मण- 8/6/1/16
2- अपरिमिता हि दिशः उपर्युक्त 6/5/2/7,-मेरुतन्त्र 2/3/7/23 पै0-2/229
4- वा0रा0 1/45/33
5- श0ब्रा0 8/1/1/7

इसके अतिरिक्त जिस समय हनुमान सहित वानर सेना को खोज खबर लेते हुए जब विभीषण जाम्बवान आदि के पास पहुँचे,तब उन्हे कुछ-कुछ चेतना आयी। उस समय जाम्बवान ने विभीषण से श्री राम या लक्ष्मण के विषय मे न पूछकर केवल हनुमान के ही विषय में ही इस प्रकार पूछा था-

अंजना सुप्रजा येन मातरिश्वा चसुव्रत।

हनुमान वानर श्रेष्ठः प्राणान् धारयते क्वचित।।

x x x x

धरते मारुति स्तात मारुत प्रतिमो यदि।

वैश्वानर समोवीर्ये जीविताशा ततो भवत्।।[1]

उत्तम व्रत केपालक विभीषण यह तो बताओ जिनको जन्म देने से अन्जना देवी उत्तम पुत्र की जननी और वायुदेव श्रेष्ठ पुत्र के जनक माने जाते है,वे वानर श्रेष्ठ हनुमान जीवित तो है? यदि वीर वर हनुमान जीवित है तो यह मरी हुई सेना भी जीवित ही है- ऐसा समझना चाहिए। यदि उनके प्राण निकल गये हो,तो हम लोग जीते हुए भी मृतक के तुल्य हैं। तात यदि वायु के समान वेगशाली और अग्नि के समान पराक्रमी पवन कुमार हनुमान जीवित है,तो हम सबके जीवित होने की आशा की जा सकती है।

इसके बाद हनुमान हिमालय से दिव्य औषधियुक्त पर्वत खण्ड को युद्धभूमि में लाकर उसकी गन्ध से ही सबको स्वस्थ कर देते हैं। हनुमान के द्वारा लंका के दहन में एवं उस भयानक अग्निज्वाला से स्वयं अस्पृष्ट रहने में भी उनके आग्नेयांश होने का प्रमाण मिलता है। आन्जनेय की वन्दना का यह श्लोक भी

1- वा0रा0 6/74/18,22-23

उनके अग्नि गर्भ-सम्भूत होने का संकेत देता है-

उल्लंघ्य सिन्धोः सलिलं सलीलं ,

यः शोक वह्निं जनकात्मजाया।

आदाय तेनैव ददाह लंका,

नमामि तं प्रान्जलिराञ्जनेयम्।।

जिन्होने लीला पूर्वक सिन्धु सील लंका उल्लंघन करके जनकात्मजा सीता की शोकाग्नि को लेकर उसी अग्नि से लंका को जला दिया,उन आञ्जनेय को मैं हाथ जोड़कर प्रणाम करता हूँ।

"वस्तुतः पुञ्जिक स्थलाका अर्थ है- पुञ्जी भूत भूमि,अर्थात् सम्पूर्ण बिखरी हुई चेतना को एकत्र संघटित करके एक समन्वयात्मक व्यक्तित्व (one integral being) के रूप में प्रकट "एक तानता एवं एकत्व को प्राप्त हुई भौतिक चेतना की सत्ता। अञ्जना शब्द "अञ्ज" धातु से निष्पन्न हुआ है,जिसके अर्थ हैं- व्यक्ति(विवेचन) म्रक्षण (स्निग्धता) कान्ति एवं गति। जो सौन्दर्य प्रसाधन सहित अपनी कान्ति एवं गति से अभिव्यक्त हो,उसका नाम अंजना है।[1] सहायक रूप का स्मरण दिलाता है,यह भाव उक्त श्लोक में भी ध्वनित है-

अंञ्जनी गर्भ सम्भूत कपीन्द्र सचिवोत्तम।

राम प्रिय नमस्तुभ्यं हनुमान रक्ष सर्वदा।।

इसके पश्चात हनुमान के मधुर स्वरूप का वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है।

1- गोस्वामी तुलसीदास जी कृत -हनुमान चालीसा

हनुमान का मधुर स्वरूप-

श्रीमद वाल्मीकीय रामायण के अनुसार साकेत यात्रा के अवसर पर श्रीराघवेन्द्र सरकार से श्री हनुमान जी तीन वरदान माँगे थे। एक तो श्री प्रभु के श्री चरणों में अनन्य भक्ति, दूसरे पृथ्वी पर राम कथा के प्रचलन पर्यन्त शरीर धारण और तीसरे अप्सराओं के मुख से नित्य राम चरित का श्रवण-

स्नेहों मे परमो राजंस्त्वयि तिष्ठतु नित्यदा।
भक्तिश्च नियतावीर भावो नान्यत्र गच्छतु।।

*   *   *   *

यच्चैतच्चरितं दिव्यं कथा ते रघुनंदन।
तन्ममाप्सरसो नाम श्रावये पुनर्रर्षभ।।[1]

महाभारत के वन पर्व में श्री हनुमान ने भीम से श्री राम द्वारा प्राप्त उक्त वदानों की चर्चा तो की है साथ-साथ गंध मादन पर्वत पर, जहाँ भीम को श्री हनुमान जी का दर्शन होता है, अप्सराओं द्वारा राम चरित गाकर सुनाये जाने की घटना भी कही है।[2] इसकी पुष्टि श्रीमदभागवत महापुराण से भी होती है। वहाँ "गंध मादन" संज्ञा के स्थान पर किंपुरूषवर्ग पद का प्रयोग है और अप्सरा के स्थान पर "किन्नर" और गंधर्व कहा है। किं पुरूष वर्ष में श्री हनुमान जी किन्नर गंधर्वों द्वारा श्री राम कथा-श्रवण करते हैं उन लोगों के साथ श्री राम की अविचल भक्ति भाव से उपासना करते है और निम्नलिखित मंत्र जप करते हैं जो आर्य लक्षण शीलात्मक है-

---

1- महा भारत, वन पर्व 148-16 से 20

"ॐ नमो भगवते उत्तमश्लोकाय नम आर्य लक्षण शील व्रताय नम उपशिक्षात्मन उपासित लोकाय नमः साधुवाद निकषणाय नमो ब्रह्मण्य देवाय महापुरुषाय महाराजाय नम इति।[1]

हनुमत्संहिता में श्री हनुमन्त लाल ने अपने "ऐश्वर्य" और माधुर्य दोनों स्वरूपों का उद्घाटन करते हुए कहा है कि वे ऐश्वर्य में हनुमान हैं और माधुर्य में वयस्या (चारुशीला)-

माधुर्ये च वयस्याहमैश्वर्ये हनुमान्कपि:।[2]

हनुमत्संहिता और हनुमन्नाटक में हनुमान जी राम की प्रधान सखी चारुशीला के रूप में चित्रित हैं और प्रिया-प्रियतम को श्रृंगारी लीलाओं मेंतत्वज्ञ आचार्य के रूप में प्रतिष्ठित ।

राम भक्ति में हनुमान जी आचार्य पीठ पर आसीन हैं। दास्य भक्ति में वे हनुमान है, सख्य भक्ति में चारुशीलमणि और माधुर्य भक्ति में "सर्वेश्वरी चारुशीला"।।[3]

रहस्य रामायण के अनुसार आचार्यों के तीन रूप माने जाते हैं- आचार्य, दास, सखी, आचार्य रूप से वे संसार में जीवों का उद्धार करते हैं, दास रूप से वे भगवान का वाह्य कैंकर्य करते है और सखी रूप में वे अन्तःपुर में प्रिया प्रियतम से लाड़ लगाते हैं-

त्रिधारूपेणवर्तन्ते महतां धर्म शालिनाम।
आचार्यत्वेन ब्रह्माण्डे दास रूपेण सन्निधौ।।
रामस्यान्तःपुरे से वै सखी रूप प्रियानुगा।[4]

1-श्रीमद भागवत, पंचमस्कन्ध 19/1-3
2- हनुमत्संहिता 1,5-80/3
3- डॉ0 भगवती प्रसाद सिंह रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय, पृ0 300-303
4- रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय-डॉ0 भगवती प्रसाद सिंह-पृ0 355

राम भक्ति साहित्य में हनुमान के उक्त तीनों स्वरूपों का पूर्ण विकास हुआ है। संकट ग्रस्त विषयी जीवों के संकट दूरकर श्री प्रभु के सम्मुख करते है। श्री राम के विविध कार्यों के लिए तो इनका अवतार प्रसिद्ध है-

राम काज लगि तव अवतारा।

इन दो लोक मंगल-स्वरूपों के साथ-साथ श्री हनुमान के एक तीसरे अन्तरंग मधुर चारुशीला स्वरूप का भी विकास हुआ, जिससे कि वे अन्तःपुर की अनेक रसमयी क्रीड़ाओं के द्वारा प्रभु से लाड़ लगाती है।

जिस प्रकार राम के नेहवश रुद्र ने हनुमान का रूप धारण किया, उसी प्रकार हनुमान ने राम की सेवा के लिए सख्य भावानुकूल चारुशील मणि और माधुर्य भावानुकूल "चारुशीला स्वरूप धारण कर लिया।

चारु शील मणि लाल, आज्ञा सब सिर पर धरी।

हनुम वपुन विशाल, चारुशीला यूथेश्वरी।।[1]

गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी शिव के तीन सम्बन्धों की चर्चा की है-

सेवक स्वामि सखा सिय पी के।[2]

उनमें शिव हनुमान रूप में राम के सेवक, रामेश्वरम, शिव स्वरूप में स्वामी और चारु शील मणि चारु शीला रूप में सखा सखी है। देवता हो या सिद्ध या मुनि, वे प्रभु की सेवा में मधुकर, खग मृग आदि अनेक रूप धारण कर लेते हैं-

---

1- मधुराचार्य- माधुर्य केलि कादम्बनी, पृ0 22।

2- राम चरित मानस- 1/15

मधुकर खग मृग तनु धरि देवा।
करहिं सिद्ध मुनि प्रभु के सेवा।।[1]

साकेत की नित्य लीला में श्री प्रभु के भूषण हों या वसन छत्र हों, सभी नित्य परिकर है, सब चिन्मय हैं। सच्चिदानन्द प्रभु की नित्य लीला में प्रस्तुत वनपर्वत, पशु पक्षी सभी सच्चिदा नन्द मय हैं-

लीला केरि विभूति जो,
सब सिय परिकर रूप।
सत चेतन आनन्द मय,
त्रिगुणातीत अनूप।
भूषन वसन तेज सुखधामा।
सब चेतन अतिरूप ललामा।
विविध रूप धरि श्री सिय आली।
सेवहिं प्रभुहिं प्रेम प्रतिपाली।[2]

भक्त प्रवर श्री हनुमान जी साकेत विहारी श्री सीता राम के नित्य मुक्त परिकरों में सर्वश्रेष्ठ है। जिस प्रकार ऐश्वर्य लीला में हनुमान श्रेष्ठ दास है उसी प्रकार माधुर्य लीला में सर्वोच्च सखी।

हनुमत्संहिता में अगस्त्य ऋषि श्री हनुमंत लाल के इस मधुर स्वरूप की स्तुति करते हुए श्री सीता राम की अन्तरंग लीलाओं की जिज्ञासा करते हैं।

1- उपर्युक्त 4/3।
2- प्रेम लता -वृहद उपासना रहस्य पृ0 75

त्वं साक्षात् चारु शीलाच,

नित्या मध्ये प्रपूजिता।

इति श्रुतं मया सर्वं तेन,

त्वां प्रणम माम्यहम ।।[1]

श्री सीता राम भद्र जिस अष्ट दलाकार कमलासन पर विराजमान है,उनके चारों ओर आठों दलों पर चारु शीलादि अष्ट सखियाँ सेवा तत्पर रहती हैं-

सख्य: श्री चारु शीलाधा,

जानकी राम चन्द्रयो:।

परित: पद्म पत्रेषु,

संस्थिता सेवनोत्सुका।।[2]

उन अष्ट सखियों के नाम निम्नवत हैं-

1- चारुशीला 2- हेमा 3- क्षेमा 4- वरारोहा 5- पद्मगन्धा 6- सुभगा 7- चन्द्र कला 8- लक्ष्मणा।

राम भक्ति साहित्य में इन सबके पृथक-पृथक जन्म कर्म,सेवादि कापरिचय मिलता है।[3]

मधुरोपासकों में कुछ चारु शीला को और कुछ चन्द्रकला को सर्वेश्वरी मानते हैं: चारुशीला हनुमान जी का महली सेवा रूप है तो चन्द्रकला भरत जी का।

1- हनुमत्संहिता- 1/8-9
2- चित्रनिधि -श्री सीता राम श्रृंगार रहस्य।
3- क- चारुशीला स्त्रोत,पृ0 40
   ख- राम भक्ति में रसिक सम्प्रदाय,पृ0 29।

वाह्य कार्येषु प्रधान्यं भरतस्य यथामतम।

तथान्तरंग लीलासु श्रेष्ठ यामस्या मनोरमे।[1]

युगल सरकार की नित्य केलि में कैकर्य सुख के द्वारा युगल केलि का लोकोत्तर रसास्वादन राम भक्ति का चरम लक्ष्य है। इसे ही निकुंज सेवा रस महल माधुर्य आदि नामों से पुकारा गया है-

श्री प्रसाद प्रसाद करि अष्ट सखी गुन गाय।

अलि निवास जिनकी मया, महल माधुरी माया।[1]

मधुरी पासकों का मुख्य ध्यान है, सखी गण से अलंकृत राम समण्डल मध्यस्थ श्री सीता राम-

ऊँ रास मण्डल मध्यस्थं;

रासोल्लास समुत्सुकम्।

सीता राम महं बन्दे,

सखीगण समावृतम।।[2]

रास विधायिक है, सर्वेश्वरी चारु शीला। श्री सीता राम की ऐश्वर्य लीला में जो हनुमान जी हैं, उन्होंने ही माधुर्य नित्य बिहार में चारुशीला रूप में अवतार लिया है, और स्पष्ट संकेत करते हुए श्री जनक दुलारी शरण (श्री चावन जी) महाराज कहते हैं-

---

1- भावना पचीसी, पृ0 4
2- राम चरण दास- रस मालिका पृ02

"बाजै बाजै बधाई आज,केशरी नृप गृह मैं।

कार्तिक कृष्ण चुर्दशि तिथि को मंगलवान बिराज।

स्वाती नक्षत्र समय गोधूली,प्रगट रसिक सिरताज।

नित्य बिहार चारु शीला जू, विहरन सिय रघुराज।

सोई प्रगट वपुष कपि कुल वर हनुमत नाम देराज।।[1]

स्वामी अग्रदास जी की भावना के अनुसार चन्द्र कला प्रिया जू के कर कमल पकड़कर मंगल गीत गाती हुई हिंडोले पर चढ़ाती हैं,और चारु शीला अपने कटाक्ष से प्रियतम के झूलन पर बैठाकर प्रथम बार झूला झूलने के लिए सिखाती है-

चन्द्रकला प्यारी कर गहि के,

मंगल गाई चढ़ाई।

चारु शीला पिय नैन इसारन,

झूलत प्रथम सिखाई।।[2]

झूलन लीला में श्रुतिकीर्ति,उर्मिला माण्डवी,के साथ-साथ चारुशीला भी प्रमुख रूप में सम्मिलित हैं-

हिंडोल झूलति सिय महारानी।

श्रुति की रीत उर्मिला माण्डवी चारु शीला गुणखानी

x x x x

सिया जू सकुचि रही नहिं बोलति अग्रअली मनमानी।।[3]

1- वैदेही वल्लभ रस कोष मंजूषा पद संख्या-5 श्री बावनी जी द्वारा कृत।
2- झूलन् विहार पदावली-संपं -मैथिली शरण शास्त्री
3- उपर्युक्त पद संख्या-2

होली गीतों में भी चारु शीला रूप का वर्णन प्राप्त होता है- श्री बावन जी महाराज के शब्दो में -

रंग महल में आज रसिक दोउ खेलत होरी।
बैठे कनक भवन आँगन मधि युगल किशोर किशोरी।
x x x x
चारु शीला श्री कृपावती जू अग्र अली रस बोरी
श्री प्रसाद कामद ललित कान्ह चन्द्र कला दिक मोरी
फाग को साज सजोरी।[1]

राम भक्ति के उन्मेष काल से ही श्री हनुमान जी के ऐश्वर्य स्वरूप के साथ-साथ उनके मधुर चारुशीला स्वरूप का भी विकास हो गया था। जिस प्रकार रामानन्द राम के अवतार माने जाते हैं,उसी प्रकार उनके द्वादश शिष्यों में सर्वप्रधान अनन्ता नन्द चारुशीला जी के अवतार माने जाते हैं-

रामानन्द जू के शिष्य जी अनन्तानन्द,
शीतल सुचन्दन से भक्तन अनन्दकर।
x x x x
जन कललो की कृपा पात्र चारु शीला अली,
रूप में अभिन्न भूमि रंग भूमि लीला पर।
उपर समाधि उर अमित अगाध नैन,
अँसुवा श्रव उमगत मानों धराधर।।[2]

1- वैदेही वल्लभ रस कोष,पद 39
2- रसिक प्रकाश भक्त माल,पृ0 12

दास्य भक्ति में जिस प्रकार श्री हनुमान जी मध्वाचार्य-

जय जय जय हनुमान गोसाईं।

कृपा करहुँ गुरुदेव की नाईं।

रूप में प्रतिष्ठित है,उसी प्रकार माधुर्य भक्ति में चारुशीला जी

नत्या श्री जानकी रामौ चारुशीलां सखीतत।

आचार्य अग्रादासाह्यं सम्प्रदाय प्रवर्त्तकम् ।।[1]

श्री हनुमान जी का अखण्ड ब्रह्मचर्य,तीव्र विषय वैराग्य,अनन्य भक्ति भाव ,अनुपम कैंकर्य ,राम कथा एवं रामानामकृत्य ये कतिपय ऐसे तत्व है, जो इनके मधुर चारुशीला-स्वरूप की प्राप्ति के लिए आवश्यक है।[2] यह केवल विषयी के लिए नहीं,अपितु ज्ञानी के लिए भी अप्राप्य है-

यह रस रीति प्रिया प्रीतम की,

दिव्य स्वाति जल जैसे।

विषयी ज्ञानी भक्त उपासक,

प्रापत सबको कैसे।

कदली कमल पपीहा सीपी,

पात्र भेद गुण तैसे।

भगवत बीज विषमता नहीं

भूमि भाग्यफल ऐसे।।[3]

1- राम भक्ति में रसिक सम्प्रदाय- डॉ0 भगवती प्रसाद सिंह पृ0 89

2- राम दूत- त्रैमासिकी पत्रिका- लेख- हनुमंत लाल जी का मधुर स्वरूप- डॉ0 श्री कृष्ण उपाध्याय। प्रकाशन -हनुमान आ0 मंडल,प्रयाग-6

3- सं0 विश्वेश्वर शरण- श्री स्वामी हरि दास सागर पृ0 665

रस- साधना वस्तुतः विषस्य विष मौषधम् है। श्री पीताम्बर देव जू के शब्दों में -

विषै सु विष लौं त्यागिए,
रसिकन सन्मुख धाय।
संग हरिदासि पिछानि लै,
निरभै रस जस गाय।।[1]

इसके पश्चात् अब हनुमान के महावीरत्व का वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है।

हनुमान का महावीरत्व-

भारतीय भक्ति-साहित्य में हनुमान के महा वीरत्व का वर्णन प्राप्त होता है। महावीर हनुमान, भक्त प्रवर गोस्वामी तुलसीदास जी के परमाराध्य थे। महावीर श्री हनुमान सर्ववन्द्य है, जिनके यश का वर्णन भगवान श्री राम ने स्वयं किया है-

महावीर विनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।[2]

उपर्युक्त पंक्तियों में भक्त शिरोमणि श्री हनुमान जी के गौरवपूर्ण गुणों का यत्किंचित वर्णन किया गया है। "महावीर" शब्द विशेष के रूप में अनेक पात्रों के साथ प्रयुक्त होता है, किन्तु यदि विशेषण से पृथक केवल महावीर शब्द का प्रयोग किया है तो उसका एक मात्र तात्पर्य होता है "श्री हनुमान"।

1- उपर्युक्त, पृ० 51।
2- तुलसीकृत राम चरित मानस-बालकाण्ड 10/17 पृ० 29

"महावीर" शब्द अन्य लोगों के लिए विशेषणहै,किन्तु श्री हनुमान जी के चरित्र में मात्र विशेषण नहीं,अपितु वह उनके नामों में से एक नाम है।

कहने को तो वीरता के अनेक मापदण्ड हैं,किन्तु उन समस्त मापदण्डों पर यदि कोई एक व्यक्ति खरा उतरता है तो वे एक मात्र श्रीहनुमान हैं। जहाँ तक वाह्य शारीरिक वीरता का सम्बन्ध है, श्री हनुमान सुन्दरकाण्ड के प्रारम्भ में गोस्वामी जी उनके लिए अतुलित बल धामम् शब्द का प्रयोग करते हैं। महावीर हनुमान अकेले ही लंका के समस्त राक्षसों का संहार करने की क्षमता रखते हैं। समुद्र तट पर उन्होंने स्वयं ही जामवंत के समक्ष यह मत व्यक्त करते हुए कहा है-

सहित सहाय रावनहि मारी।
आनउं इहाँ त्रिकूट उपारी।।[1]

उक्त कथन श्री हनुमान जी की केवल गर्वोक्ति ही नहीं,अपितु उनके यथार्थ बल का परिचायक है। अकेले उस लंका में प्रविष्ट होना उसकी सुरक्षा का इतना दृढ़ प्रबन्ध था कि एक मच्छर भी बिना अनुमति के लंका में प्रविष्ट नहीं हो सकता था,जहाँ पर "कीर जतन भट कोटिन्ह विकट तनु नगर चहुँदिसि रच्छहीं" के रूप में प्रतिक्षण कोटि-कोटि राक्षस अस्त्र-शस्त्र सहित सन्नद्ध थे,वहाँ हनुमान जी लंका का न केवल वहिरंग दर्शन करते हैं, अपितु लंका के प्रत्येक घर में प्रविष्ट होकर वहाँ का सारा रहस्य भी जान लेते हैं। अशोक वाटिका में उन्होंने (श्री हनुमान जी ने) जब माँ से फल खाने की आज्ञा माँगी थी तब उनका उद्देश्य एक मात्र क्षुधा निवारण ही नहीं था, वस्तुत: वे तो उन गर्वीले राक्षसों के बल को चुनौती देना चाहते थे जो रावण

1- तुलसी कृत राम चरित मानस- किष्किन्धाकाण्ड- 30 क.8

के सेवकों के रूप में वाटिका में सन्नद्ध थे। उस समय श्री हनुमान से लड़ने के लिए जितने योद्धा आये हनुमान जी के द्वारा उनका यथोचित सम्मान हुआ और रावण का पुत्र अक्षय कुमार तो इसी संघर्ष में मारा भी जाता है।

उनके इस अद्वितीय पराक्रम की धाक रावण ने भी स्वीकार किया क्योंकि श्री हनुमान के पराक्रम को उसने अपनी दृष्टि से देखा था। महावीर हनुमान ने अपने अतुलनीय पराक्रम के बल को घोषित करते हुए श्री हनुमान जी का अकेले लंका में प्रविष्ट होना एवं वाटिका ध्वंस के पश्चात स्वयं मयी लंका का दहन करना उनके अद्वितीय पराक्रम का परिचायक है किन्तु श्री राम चरित्र की दृष्टि में वीरता की परिभाषा केवल शारीरिक बल ही नहीं है। वीरता की दूसरी परिभाषा करते हुए स्वयं भगवान श्री राम ने अरण्य काण्ड में श्री लक्ष्मण से कहा है-

> तात तीनि अति प्रबल खल, काम क्रोध अरु लोभ।
> मुनि विग्यान धाम मन, करहिं निमिष मन छोभ।।[1]
> लोभ के इच्छा दम्भबल, काम के केवल नारि।
> क्रोध के परुष वचन बल,मुनिवर कहहिं विचारि।।[2]

यद्यपि काम क्रोध और लोभ तीनों ही प्रचण्ड शत्रु हैं किन्तु उनमें भी काम सर्वाधिक शक्तिशाली है। काम का परम बल नारी है। भगवान श्री राम ने कहा,काम की शक्ति पर जिसने विजय प्राप्त कर ली, मेरी दृष्टि में सच्चा शूर वही है। इस दृष्टि से हनुमान का चरित्र अप्रतिम है। बाल ब्रह्मचारी श्री हनुमान के जीवन में कभी भी काम वृत्ति का उदय हुआ ही नहीं। उनके

1- तुलसी कृत राम चरित मानस- अरण्य काण्ड- दोहा सं0 38 क,पृ0 386
2- उपर्युक्त 38 ख।

काम विजय की सर्वोत्कृष्ट कसौटी थी, रात्रि में लंका का दर्शन।

वस्तुत: हनुमान जी ही एक ऐसे व्यक्ति हैं जिनके व्यक्तित्व में वासना का कहीं लेशमात्र भी नहीं है। इस दृष्टि से पवन तनय के लिए "महावीर" शब्द सर्वदा सार्थक है।

वीर की तीसरी परिभाषा भगवान श्री राम ने विभीषण से करते हुए कहा है -

महा अजय संसार रिपु, जीति सकइ सो वीर ।
जाके असरथ होइ दृढ़ सुनहु सखा मति धीर ।।[1]

यह संसार शत्रु ही सर्वथा अजेय है और जिस व्यक्ति के पास धर्मरथ होता है, वही इन शत्रुओं को परास्त कर वीरता की सच्ची उपाधि प्राप्त करता है। हनुमान जी के चरित्र में धर्मरथ का सांगोपांग निर्वाह हुआ है। वस्तुत: उनमें धर्मरथ पूरी तरह विद्यमान है-

सौरज धीरज तेहि रथ चाका।
सत्यशील दृढ़ ध्वजा पताका।।[2]

महावीर हनुमान के भव्य शौर्य का दर्शन समुद्र के तट पर तब होता है जब वे पर्वताकार हो जाते हैं-

राम काज लगि तव अवतारा।
सुनतहिं भयउ पर्वता कारा।।
x x x x
सहित सहाय रावनहि मारी।
आनउं इहाँ त्रिकूट उपारी।।[3]

1- राम चरित मानस- लंकाकाण्ड- 80क पृ0 493
2- उपर्युक्त 80 क-5 पृ0 493
3- उपर्युक्त किष्किन्धा काण्ड 30 क- 6-9, पृ0 410

उस समय उनकी शौर्य भरी वाणी सारे वानरों के अन्त:करण की निराशा को दूर कर देती है किन्तु इस शौर्य के साथ-साथ श्री हनुमान जी का धैर्य भी अप्रतिम है,क्योंकि रावण के विनाश का सामर्थ्य होते हुए भी उन्होंने धैर्य पूर्वक जाम्बवान से अनुमति माँगी -

जामवंत मैं पूछउँ तोही।
उचित सिखावन दीजेहु मोही।।[1]

इसका तात्पर्य यह है कि शौर्य की उत्तेजना में श्री महावीर हनुमान धैर्य नहीं खोते है-

सत्य शील दृढ़ ध्वजा पताका।[2]

हनुमान जी के अन्तर्जीवन में सत्य और शील का अनुपम समन्वय है। वस्तुत: हनुमान जी के जीवन रूपी रथ में बल और विवेक के अश्वविद्यमान हैं। इन्द्रिय दमन के रूप में वे पूर्ण ब्रह्मचारी एवं विषयों से सर्वथा विरक्त है। परहित उनके चरित्र में कूटकूट कर भरा हुआ है।

हनुमान जी ब्राह्मण और गुरू के कितने बड़े सेवक हैं ,इसका दृष्टान्त है कि सूर्य को गुरू मानकर उन्होंने उनसे शिक्षा प्राप्त की। धर्मरथ में वीरता के जो लक्षण कहे गये हैं,वे सब हनुमान जी के चरित्र में विद्यमान है। इस दृष्टि से श्री हनुमान जी के लिए "महावीर" शब्द सर्वथा सार्थक है। इसके अतिरिक्त ज्ञानिनामग्रगण्य हनुमान के स्वरूप का संक्षिप्त रूप प्रस्तुत किया जा रहा है-

---

1- उपर्युक्त -उ0 क-10,पृ0 410
2- उपर्युक्त लंका काण्ड 80 क-5

ज्ञानि नामाग्रगण्य हनुमान-

भक्त प्रवर श्री हनुमान जी केवल उत्तम भक्त ही नही ,अपितु ज्ञानिनामाग्रगण्य भी है। ऐसी एक श्रुति परम्परा है कि एक बार श्री हनुमान जी ने भगवान श्री राम से कहा था-

देह दृष्ट्या तु दासोऽहं, जीव दृष्ट्या त्व दंशक:।
वस्तु वस्तु स्त्वमेवाहमिति,मे निश्चिता मति:।।[1]

वास्तव मे श्री हनुमान जी का सम्पूर्ण जीवन ही उपर्युक्त श्लोक की एक आचरणात्मक व्याख्या है। ऐसा प्रतीत होता है मानों इस श्लोक में श्री हनुमान जी ने अपने कथन में एक साथ ज्ञान एवं भक्ति का सम्पूर्ण निचोड़ भर दिया है ,कहा भी गया है-

पारमार्थिक मद्वैत द्वैत: भजन हेतवे।
तादृशी यदि भक्ति: स्यात सातु मुक्ति शताधिका।।
द्वैतं मोहाय बोधात्प्राग बोधे मनोषया।
भक्तर्थं भावितं द्वैत मद्वैत,दपि सुन्दरम् ।।[2]

अर्थात् पारमार्थिक अद्वैत,ज्ञान होने परयदि उसे भजनोपयोगी द्वैत मानकर भगवान मे भक्ति की जाती है,तो ऐसी भक्ति सैकड़ो मुक्तियों से कहीं बढ़कर है। प्रत्येक चैतन्या भिन्न परमब्रह्म का ज्ञान होने के पहले द्वैत बन्धन का कारण बनता है,किन्तु ज्ञान के बाद भेद मोह के निवृत्त हो जानेपर भक्ति द्वैत अद्वैत से भी सुन्दर है।

1- राम दूतमणि- भक्त ज्ञानियों मे अग्रगण्य श्री हनुमान- लेख- डॉ0 राम कृष्ण शर्मा, पृ0 105
2- बोधसार में उद्धृत।

हनुमान जी नवों व्याकरणों एवं सम्पूर्ण वेद शास्त्रों के वेत्ता श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ हैं,अतएवं ज्ञानिनामाग्रगण्य के रूप में उनकी सर्वत्र प्रसिद्ध है।

अतुलित बल धामम हेम शैलाभ देहं,
दनुज बन कृशानुं ज्ञानानाम ग्रगण्यम।
सकल गुण निधानम वानराणाम धीशं,
रघुपति प्रिय भक्तं वात जातं नामि।।[1]

श्री राम चरित मानस सुन्दर काण्ड के मगलाचरण में पवन सुत हनुमान की बल-बुद्धि विद्यायुक्त सेवा भाव संवलित कर्तव्य निष्ठ भगवान श्री राम चन्द्र जी को यशः प्रशस्ति में पर्यवसित होकर उन्हे अपना ऋणी बनाकर[2] लंकाकाण्ड में रावण कुम्भकर्णादि दुर्दान्त राक्षसों के विनाश की ओर अग्रसर होती है। भगवान श्री राम हनुमान जी द्वारा अनुष्ठित "रामकाज" को जिसको किये बिना उन्हे विश्राम नहीं अपने प्रति उपकार मानते हुए कहते हैं-हे हनुमान तुम्हारे समान मेरा उपकारी देवता मनुष्य अथवा मुनि कोई भी शरीर धारी नहीं है। मैं तुम्हारा क्या प्रत्युपकार करूँ, मेरा मन तुम्हारे सम्मुख नहीं हो सकता।[3]

ज्ञानिनामाग्रगण्य का विश्लेषण प्रस्तुत किया जा रहा है-

ज्ञानिनाम अग्रगण्य- अग्रगन्तारः स हनुमान वा०रामायण में हनुमन्नाम के दोनों रूप प्राप्त होते हैं।

भृत्यं कार्यं हनुमता सुग्रीवस्य कृतं महत् ।[4]
तस्मिन्योगे नियुक्तेन कृतं कृत्यं हनुमता।।[5]

1- राम चरित मानस- सुन्दरकाण्ड श्लोक संख्या-3
2- उपर्युक्त- सुन्दरकाण्ड 32 3 1/2
3- उपर्युक्त- 5/1
4- वा०रा० 5/5/60
5- वा०रा० 6/1/6
6- उपर्युक्त 6/1/10

आदि काव्य के अनुसार ब्रह्मा द्वारा प्रेरित होकर सूर्य देव ने हनुमान को अपने तेज का सौवां भाग प्रदान करते हुए (आशीर्वाद) वरदान दिया कि मैं इसे शास्त्र ज्ञान दूँगा। जिससे यह श्रेष्ठ वक्ता होगा, शास्त्र ज्ञान में इसकी समता करने वाला कोई न होगा।[1] पद्मपुराण में हनुमान की पूँछ को विधातनिर्मित पाश से तुलना की गयी है, और कहा गया है कि उसके द्वारा वे किसी वीर को उसी प्रकार आकृष्ट कर लेते थे, जिस प्रकार कोई स्नेह से अपने मित्र को[2]। श्री आदि शंकराचार्य ने श्री हनुमान जी को "ज्ञानिनामाग्रगण्य" होने का मूल स्रोत भगवान श्री राम चन्द्र जी की उस ज्ञान मुद्रा को बताया है, जिसके अनुसार वे अपने सामने हाथ जोड़कर खड़े हुए हनुमान आदि भक्तों को अपनी कल्याणकारिणी चिन्मुद्रा से ज्ञान प्रदान करते रहते है।[3] आदि काव्य में हनुमान के शास्त्र ज्ञान स्रोत का विस्तृत वर्णन मिलता है। सुग्रीव द्वारा प्रेषित हनुमान की शुद्ध वक्तृता सुनकर भगवान श्री राम कहते हैं- हे लक्ष्मण जिसे ऋग्वेद की शिक्षा न मिली हो, जिसने यजुर्वेद का अभ्यास नहीं किया हो, वह इस प्रकार जो सामवेद का विद्वान न हो वह इस प्रकार सुन्दर भाषा में वार्तालाप नहीं कर सकता। निश्चय ही इन्होने समूचे व्याकरण का कई बार स्वाध्याय किया है क्योंकि बहुत सी बाते बोल जाने पर भी इनके मुँह से कोई अशुद्धि नहीं निकली।[4]

1- उपर्युक्त- 6/36/14
2- पद्म पुराण में उद्धृत।
3- श्री राम भुजंग प्रयात स्तवराज-7
4- वा०रा० 4/3-28/29

महर्षि वाल्मीकि ने समुद्रोल्लंघन प्रसंग में जाम्बवान द्वारा श्री हनुमान की बल बुद्धि की प्रशंसा कराई है। जाम्बवान् कहते हैं-हे वानर जगत के वीर सम्पूर्ण शास्त्र वेत्ताओं श्रेष्ठ हनुमान तुम एकान्त में आकर चुप क्यों बैठे हो तुम बोलते क्यों नहीं।[1]

गोस्वामी तुलसीदास जीने "मानस" के आरम्भ में ही श्री सीता राम के गुण समूह रूपी पवित्रवन में विहार करने वाले विशुद्ध विज्ञान सम्पन्न कवीश्वर (वाल्मीकि जी) और कपीश्वर (हनुमान जी की वन्दना की है।[2]

श्री हनुमान जी विवेक प्रधान वैराग्यादि गुण सम्पन्न उत्तम साधना के प्रतीक हैं। आध्यात्मिक और यौगिक अर्थानुसार मानव शरीर में हनुमान जी शक्ति रूप में और प्राण शक्ति रूप में निवास करते हैं।[3]

विनय पत्रिका में श्री हनुमान की शक्ति और बुद्धि की प्रशंसा की गयी है।[4] वस्तुत: मानस के चार आदर्श मात्र हैं-

लक्ष्मण जी, भरत जी, शंकर जी, और हनुमान जी। ये भगवान श्री राम के आदर्श सेवक हैं परन्तु शंकर जी स्वयं निर्णय देते हैं कि हनुमान से श्री राम का परम भक्त और आदर्श सेवक अन्य कोई नहीं है।[5] महावीर विक्रम बजरंगी (वज्रंगी) विद्या वारिधि, बुद्धि निधाता, ज्ञानिनामाग्रगण्य हनुमान सर्ववन्द्य हैं। उपर्युक्त वर्णन से यह सिद्ध होता है कि हनुमान जी ज्ञानियों में सर्वथा

1- वा0रा0 4/66/2
2- मानस-1 श्लोक -4
3- मानस पीयूष भाग-5, किष्किन्धाकाण्ड, पृ0 232
4- विनय पत्रिका- 26/8
5- कल्याण धर्मांक सेवाधर्म के आदर्श पृ0 427

अग्रगण्य हैं। इसके पश्चात अब हनुमान के अतुलित बलशाली रूप का वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है।

अतुलित बलशाली हनुमान-

"बल बलवतां चाहम"[1] के उक्त गीता की उक्ति के अनुसार सभी बलवानों के बल स्वयं भगवान ही हैं। क्रुद्ध रावण ने बंदी हनुमान जी से जब पूछा कि "केहि के बल घालेहि बन खीसा"[2] तूने किसके बल पर बन को उजाड़ कर नष्ट कर डाला तब शील और तेज के समन्वित रूप हनुमान जी अत्यन्त निर्भीकता के साथ उस बल का स्पष्ट परिचय दिया-

सुन रावन ब्रह्माण्ड निकाया, पाई जासु बल बिरचित माया।
जाके बल बिरंचि हरि ईसा। पालत सृजत हरत दस सीसा।।
x x x x
जाके बल लवलेश ते, जितेहु चराचर झारि।
तासु दूत मैं जा करि, हरि आनेहु प्रिय नारि।।[3]

माया, ब्रह्मा, विष्णु और महेश तथा शेष का बल भी श्री राम जी का ही बल है जिनके बल का क्षुद्र अंश को पाकर संसार के क्षुद्र जीव भी बलवान बनते है, तो अतुलित बलवानों का भी वध करने वाले हैं, वे ही भगवान श्री राम वस्तुतः अतुलित बलशाली है। "जयत्यति बलोरामः"[4] कहकर पवन नन्दन ने उन्हीं अतुलबली भगवान श्री राम की जय जयकार किया है- जनकपुर के दूतों ने भी राजन राउ अतुल बल जैसे।[5] कहकर राजा दशरथ से उन्हीं श्री राम के अतुल बल का वर्णन किया

1- गीता -7/11
2- मानस - 5/20 1/2
3- श्री राम चरित मानस- 5-20/2- 4 1/2
4- वा०रा० 5/42/33
5- मानस- 1/292/1 1/4

है। वे हीअतुल बली राम पवन कुमार के हृदयागार में धनुष और वाण धारण किये हुए नित्य निवास करते हैं-

जासु हृदय आगार, बसहि राम सर चाप धर।[1]

वस्तुतः हनुमान जी का हृदय पवित्र एवं सुन्दर "आगार" है। उसमें विहार करने वाले हैं- अतुलित बली भगवान श्री राम, अतएवं हनुमान जी उन अतुलित बली श्री राम के धाम हैं। हनुमान जी का बल अपना बल नहीं वह तो अतुलित श्री राम का ही बल है,हनुमान जी तो उस अतुलित बल के नाम मात्र हैं तभी गोस्वामी तुलसीदास जी ने राम चरित मानस में अतुलित बल धामम कहकर हनुमान जी की वन्दना की है। हनुमान चालीसा में भी राम दूत अतुलित बल धामा लिखकर उनका जय जय कार किया है।

वा0रा0 में भगवान श्री राम ने महर्षि अगस्त्य से अपना यही विचार हनुमान जी के विषय में बतलाया है-

अतुलं बल मेतद वै वालिनो रावणस्य च।
न त्वेताभ्यां हनुमता सम मित्यवधारितम्।।
शौर्य दाक्ष्यं बल धैर्य प्राज्ञता नय साधनम्।
विक्रमश्च प्रभावश्च हनुमति कृतालयाः।।[2]

1- उपर्युक्त- 1/17
2- वा0रा0 7/35- 2-3

इसके अतिरिक्त भगवान श्री राम को सम्पूर्ण चरित्र हुए महर्षि अगस्त्य ने श्री हनुमान जी के गुणों के सम्बन्ध में अपना निर्णय इस प्रकार दिया है-

पराक्रमोत्साहमति प्रताप
सौशील्य माधुर्य नया नयैश्च।
गाम्भीर्य चातुर्य सुवीर्य धैर्य
हनुमत: कोडपि ऽधिकोडस्ति लोके।।[1]

अत: पराक्रम,उत्साह,बुद्धि,प्रताप,सुशीलता,कोमलता,न्याया का ज्ञान ,गम्भीरता, चतुरता,बल और धैर्य में श्री हनुमान से अधिक इस त्रिलोकी में कौन है। वायु पुत्र हनुमान के सामर्थ्य को कोई सीमा नहीहै, वह अप्रीतम बलशाली है। अग्नि के समान तेजस्वी वह वान किन्ही साधन विशेषों द्वारा नहीं मारा जा सकता है। अपने पाँच सेनापतियों को भी रावण ने हनुमान जी के बल के सम्बन्ध में समझाया था।

न मीर्तर्न बलोत्साहो,न रूप परिकल्पनम्।
महत्सत्वमिदं ज्ञेयं, कपि रूपं व्यवस्थितम्।[2]

रावण ने भी हनुमान जी के बल की प्रशंसा की है-

है कपि एक महाबलसीला, आवा प्रथम नगरू जेहिजारा।[3]

1- वा0रा0 7/36/44
2- उपर्युक्त -5/46/12-14
3- मानैस - 6/21 2 1/2,2 3/4

रावण की उक्त स्वीकृति ही अतुलित बल धाम हनुमान जी के अतुलबल की विजय-वैजयन्ती है। हनुमान जी का बल वास्तव में पारावार अपार एवं अथाह है। आज तक किसी ने भी इन अतुलित बल धाम के बल की थाह नहीं पायी। जो युद्ध के सामने आ गया, उसे ही मुँह की खानी पड़ी, चाहे वह भट हो या सुभट, महाभट हो या दारूण भट। अशोक वाटिका में जब हनुमान जी को फल खाने के लिए भटों ने हस्त क्षेप किया, तो उन भटों को हनुमान जी का प्रहार न सहन हो सका, राक्षसों ने रावण के पास जाकर इस प्रकार सूचना दी -

> नाथ एक आवा कपि भारी।
> तेहि अशोक वाटिका उजारी।
> खाए सिफल अरु विटप उपारे।
> रच्छक मर्दि मर्दि महि डारे।।[1]

हनुमान जी पैर, लांगूल और मुक्का तीनों से प्रहार करते हैं। इनकी तीनों अंगो का बल अद्वितीय तथा अमोघ है फिर भी इनके अचूक मुक्के का प्रहार विशेष सबल और अचूक है। लंका में प्रसिद्ध वीर, रावण, कुम्भकर्ण, तथा मेघनाद इनके एक-एक मुष्टि प्रहार को भी सहन नहीं कर सके। प्रचण्ड शक्ति का प्रयोग मूर्च्छित लक्ष्मण को जब रावण उठाने लगा तब वे उससे उठ न सके, इतने में ही हनुमान जी ने लक्ष्मण को देख लिया-

> देखि पवनसुत धायउ, बोलत बचन कठोर
> आवत कपिहि हन्यो तेहि, मुष्टि प्रहार प्रघोर।[2]

1- तुलसी कृत राम चरित मानस- 5/17/2
2- राम चरित मानस 6-83

रावण को मुष्टि प्रहार प्रघोर था, रावण भी हनुमान जी के अतुलित बल की सराहना मुक्त कंठ से करता था-

मुरछा गइ बहोरि सो जागा।
कपि बल बिपुल सराहन लागा।[1]

कुम्भकर्ण कोटि-कोटि गिरि शिखर प्रहार को सहता हुआ भी युद्ध में निर्बाध बढ़ता जारहा था। वह पवनात्मज का मुक्का लगते ही व्याकुल होकर धरती पर ढेर हो गया और सिर पीटने लगता है। जो कार्य असंख्य योद्धाओं द्वारा कोटि-कोटि गिरि शिखर प्रहार करने से भी न हो सका, वह वायु पुत्र के एक मुक्के की मार से तुरन्त सम्पन्न हो गया। धन्य है वायुकुमार और धन्य है उनका यह मुष्टि प्रहार। कुम्भ कर्ण ने भी रावण को समझाते हुए हनुमान जी के बल की प्रशंसा जी खोलकर की थी-

है दससीश मनुज रघुनायक।
जाके हनुमान से पायक ।।[2]

मेघनाद तो अशोक वाटिका के युद्ध में ही हनुमान जी के मुक्के से मूच्छित हो चुका था-

मुठिका मारि चढ़ा तरु जाई।
ताहि एक छन मुरुछा आई।।[3]

हनुमान के मर्म को जान लेने के बाद मेघनाद अपने आपको उनके सामने सदा पराजित अनुभव करता है। हनुमान जी के बार-बार ललकारने पर भी

1- उपर्युक्त 6
2- उपर्युक्त 6/62 Z । 1/2
3- राम चरित मानस- 5/18/4

वह उनके निकट नहीं आता है, बल्कि बड़ी सावधानी के साथ उनसे कटा-कटा फिरता था-

बार-बार पचार हनुमाना।
निकट न आव मरमु सो जाना।[1]

यह है अतुलित बलधाम हनुमान जी के मुष्टि प्रहार का अनोखा चमत्कार सदैव ही अभिनन्दनीय है- श्री पवन कुमार का अतुलित बल अन्ततः यह कहा जा सकता है जो बल बुद्धि से संचालित, विवेक में नियन्त्रित तथा भक्ति से प्रयुक्त होता है, परिणाम सर्वदा सुन्दर रहता है। शारीरिक बल का उपयोग धर्म सम्मत एवं राष्ट्र रक्षार्थ होना नीतिशास्त्र से उचित है। बल का सर्वांगीण विकास तभी संभव है, जब समस्त प्रकार जो पूर्व में वर्णन किये गये हैं, उन्हे समुचित सम्मान देकर यथेष्ट पोषण वितरित किये जांय।

हनुमान जी वस्तुतः सभी बलों में परिपूर्ण है।
तेजो बलं धृतिं दाक्ष्यं, प्राज्ञता नय साधनम्
विक्रमश्च प्रभावश्च, हनुमति कृतालयः ।।[2]

तत्पश्चात हनुमान के संगीतज्ञ स्वरूप को प्रस्तुत किया जा रहा है।

संगीत कोविद हनुमान-

परम भागवत श्री हनुमान जी बहुत निपुण संगीतज्ञ और गायक भी है। एक बार एक देव ऋषि दानवों के महान सम्मेलन में जलाशय के तट पर भगवान शंकर तथा देवर्षि नारद जी भी गा रहे थे। इतने में हनुमान जी ने मधुर स्वरूप

1- उपर्युक्त 6/50/2
2- वा०रा० 2/90

से ऐसा सुन्दर संगीत प्रारम्भ किया कि जिसे सुनकर उन सबके मुख म्लान हो गये, जो बड़े उत्साह से गा बजा रहे थे, वे सब अपना अपना गान छोड़कर मोहित हो गये और चुप होकर सुनने लगे, उस समय केवल हनुमान जी ही गा रहे थे-

"म्लान म्लानम भवत, कृशा: पुष्टा स्तदाभवन।
स्वां स्वां गीति मत:सर्वे तिरस्कृत्येव मूर्च्छता:।
तूष्णीम्भूतं सम भवद देवर्षि गण दानवम् ।
एक सा हनुमान गाता श्रोतार: सर्वस्व ते।।[1]

वस्तुत: श्री हनुमान जी सर्वसद्गुण गुणैक धाम है, एतदर्थ उनमें कौन सा सद्गुण है और कौन सा अवगुण कहना अनुपयुक्त है। हनुमान जी व्याकरण, ज्योतिष तथा संगीत के आधाचार्यों में आते हैं।

मूलत: संगीत शास्त्र के तीन प्राचीन आचार्य माने जाते हैं- हनुमान शार्दूल, तथा कादल। इनमें तीन मत ही मान्य हैं- हनुमन्मत, शिवमत, एवं भरतमत।

हनुमत्त त का ग्रन्थ" संगीत पारिजात" प्राप्त होता है। भद्र, ओघ, भाल प्रकाश विन्दु, सन्धि प्रच्छादन, उद्घाहितादि संगीता लंकारों के लक्षण में हनुमान जी के निर्देश का उल्लेख प्राप्त होता है। अनूप संगीत रत्नाकर में संगीत के आठ प्रवर्तकाचार्य माने गये हैं-

1- हनुमान 2- मातृगुप्त 3- रावण 4- नन्दिकेश्वर 5- स्वातिगण 6-बिन्दुराज 7- क्षेमराज 8- काहला ।

1- पद्म पुराण- पाताल खण्ड में उद्धृत।

श्री हनुमान जी के गायन की एक कथा स्कन्दपुराण में प्राप्त होती है- एक बार भगवान विष्णु तथा शिव एक साथ महर्षि गौतम के आश्रम पर पधारे महर्षि ने दोनों की पूजा एवं स्तुति की। दोनों ने वरदान माँगने को कहा तो महर्षि ने माँगा- यदि आप दोनो प्रसन्न है तो आज मेरे यहाँ का आतिथ्य ग्रहण करें, दोनों ने स्वीकार कर लिया दोनो गोदावरी स्नान करने गये देर तक जल क्रीड़ा करते रहे। स्नानोपरांत जब दोनों लोग बाहर निकले तो संगीतज्ञ हनुमान ने आकर गायन आरम्भ किया। हनुमान के संगीत में इतनी मधुरता एवं सरसता थी कि किसी को भोजन का स्मरण ही न रहा, अत्यधिक विलम्ब होते देख महर्षि गौतम ने आकर प्रार्थना की। हनुमान जी के गायन से भगवान विश्वनाथ ऐसा प्रसन्न हुए कि उन्होने अपना एक चरण हनुमान जी के अंजलि में रख दिया दूसरे चरण से उनके ललाट, ठुढ्ढी, कण्ठ आदि का स्पर्श करते हुए उसे उनके हृदय पर रखकर लेट गये।[1] भगवान विष्णु ने हर्षित होकर कहा- आज समस्त लोकों में हनुमान से धन्य कौन है? जिन्हे सदा शिव ने अपने चरण प्रदान किये।[1] सृष्टि कर्ता भगवान ब्रह्मा जी से प्रवर्तित वैखानस सम्प्रदाय के प्रधानाचार्यों में हनुमान जी का नाम सर्वोपरि है।

सकाम आराधक जहाँ श्री हनुमान जी की आराधना करके अपने विविध प्रकार की कामनाओं की पूर्ति करते हैं। निष्काम भाव से शरण आये साधकों को श्री राम दूत भवभय परित्राण कारिणी निखिल संक्लेश हारिणी, मर्यादा पुरूषोत्तम के पादारविन्दों में अमल भक्ति प्रदान करते है। श्री रघुनाथ के

1- अन्जनेय की आत्मकथा- परिशिष्ट-पृ0 296, सुदर्शन सिंह चक्र।
2- यह कथा "शिव चरित" में वर्णित है।

चरणों तक पहुँचाने वाले तो वे श्री अयोध्या नाथ के अत्यन्त अन्तरंग प्रधान परिकर है। अतः राम भक्तों के प्रथम आराध्य है।[1] "संगीत पारिजात" में श्री हनुमान जी संगीतशास्त्र के प्रमुख प्रवर्तक माने जाते हैं-

> कर्ता संगीत शास्त्रस्य हनुमाश्च महाकपि:
> शार्दूल काहला वेतौ संगीत ग्रन्थ कारिणौ।।[2]

"संगीत पारिजात" के अध्ययन से श्री हनुमत्संगीत शास्त्र की महत्ता एवं स्वरूप ज्ञात होता है। संगीत मर्मज्ञ भाव भट्ट विरचित "अनूप संगीत विलास" में श्री हनुमान जी के नाम पर अनेक संगीतालंकारों का वर्णन उपलब्ध होता है,यथा भद्र - "भद्रसंज्ञमलंकार माञ्जनेयोऽवदत् सुधी:।[3]

> एकैकस्य स्वरस्यात हननाम क्रमो भवेत।।

इस प्रकार श्री हनुमान जी सुप्रसिद्ध संगीताचार्य हैं,वे शास्त्रीय संगीत के प्रवर्तक हैं और भक्ति संगीत के तो मानो स्त्रोत ही हैं। तत्पश्चात हनुमान के दास्य भक्ति के स्वरूप को प्रस्तुत किया जा रहा है।

दास्यासक्ति के अप्रतिम-

निदर्शन हनुमान-

प्रभु के प्रति भक्त की आसक्ति अनेक प्रकार की होनी संभव है। देवर्षि नारद ,व्यास,शुकदेव,भीष्म,एवं परीक्षित आदि मे "गुणासक्ति" थी क्योंकि ये समस्त भगवद भक्त प्रभु के अलौकिक,अनन्यात्रपलब्ध सद्गुणों से

1- आञ्जनेय की आत्मकथा- पृ0 297-298 सुदर्शन सिंह चक्र।
2- संगीत पारिजात- 1/9
3- उपर्युक्त -1/10

सम्मोहित थे। रूपाशक्ति का उदाहरण गोप बधूटियाँ विदेहराज जनक दण्डकारण्य के ऋषिगण तथा मिथिला के नर नारी हैं। इन भक्तों ने कृष्ण अथवा राम के अद्भुत रूप लावण्य को देखकर ही स्वपर का भेद भुला दिया। मानस में गोस्वामी जी स्पष्टतः लिखते हैं-

> मूरति मधुर मनोहर देखी।
> भयउ विदेहु विदेहु विशेषी।।
> x x x x
> कहहिं परसपर वचन सप्रीती।
> सखि इन्ह कोटि काम छवि जीती।।[1]

पूजा शक्ति के सन्दर्भ में महाराज पृथु अम्बरीष एवं भरत का नाम लिया जाता है। भरत ने श्री राम की चरण पादुका को ही "श्री राम" मान लिया नाम गुणाशक्ति ध्रुव और प्रहलाद में थी। प्रहलाद ने अनन्त पीड़ाएँ सही परन्तु विष्णु का नामोच्चारण नहीं छोड़ा। ध्रुव ने भी द्वादशाक्षर मंत्र ॐ नमो भगवते वासुदेवाय के जप मात्र से प्रभु को स्वाधीन बना लिया था। सख्या शक्ति के के उदाहरण अर्जुन,श्रीदामा,उद्धव,संजय तथा सुग्रीवादि हैं। कान्ता शक्ति, रुक्मणी,सत्यभामा आदिपट रानियों में अथवा मीराबाई आदि प्रेयसियों में थीं। वात्सल्याशक्ति कश्यप-अदिति में,मनु शतरूपा में दशरथ-कौशल्या में वसुदेव- देवकी में तथा नन्द यशोदा में थी। तन्मयासक्ति याज्ञवल्क्यसुतीक्ष्ण

1- तुलसी कृत राम चरित मानस- बालकाण्ड दोहा-220-1-4 पृ0 130

शुकदेव एवं सनकादि में थी। सुतीक्ष्ण की तन्मयता तो विलक्षण थी-

> दिसि अरु विदिसि पंथ नहि सूझा।
> को मै चलेउ कहा नहिं बूझा।।
> x x x x
> मुनिहिं राम बहु भाँति जगावा।
> जाग न ध्यान जनित सुख पावा।।[1]

परम विरहासक्ति अर्जुन, उद्धव एवं व्रजांगनाओं में थी। श्री कृष्ण के परम धाम गमन के समाचार सुनने मात्र से उद्धव हतप्रथम हो उठे। भागवतकार लिखते हैं-

> स एव मुक्तोहरि मेध सोद्धव: प्रदिक्षण तं परिसृत्य पादयो:।
> शिरो निधाया श्रुकलाभिरार्द धीर्न्य सिञ्चद न्द परोऽप्यपक्रमे।

अन्त में बचती है दास्या भक्ति तथा आत्म निवेदना शक्ति। इन दोनों आसक्तियों के सर्वोत्तम उदाहरण मारुत नन्दन हनुमान है। दास्यां शक्ति में विदुर तथा अक्रूर आदि भी हैं। इसी प्रकार आत्म निवेदन में बलि एवं विभीषण भी हैपरन्तु हनुमान उन सन्दर्भों में अग्रगण्य है। भगवान राम से प्रथम बार मिलते ही हनुमान सर्वात्मना समर्पित हो उठते हैं। प्राय: भक्त के समर्पण में कोई न कोई स्वार्थ अथवा तिरोहित कामना होती है, परन्तु हनुमान के आत्म निवेदन में कोई स्वार्थ नहीं, कोई जैसे सर्प अपनी खोई मणि पा जाय वैसे ही वह श्री राम सरीखे अपने उपास्य को पाते हैं-

---

1- तुलसीकृत राम चरित मानस- अरण्य काण्ड पृ0 364 दोहा-10

प्रभु पहिचानि परेउ गहि चरना।

सो सुख उमा जाइ नहिं बरना।।

x x x x

अस कहि परेउ चरन अकुलाई।

निज तनु प्रगटि प्रीति उर छाई।।[1]

विश्ववाड्मय में मारुति सरीखे अनन्यसेवी अकिंचन निरीह नि:स्वार्थ एवं निष्ठावान भक्त का अन्य उदाहरण मिलना कठिन है। भक्ति क्या है? प्राचीन आचार्यों ने "भक्ति" शब्द के अनेक अर्थ किये गये हैं। काव्य शास्त्र में "भक्ति" लक्षणा नामक शब्द शक्ति को कहते हैं। आचार्य अभिनव गुप्त ने इस शब्द को अनेक व्याख्यायें की हैं- भजनं भक्ति:, भागो भक्ति: भज्जन भक्ति: आदि। उक्त व्याख्यायें जिस प्रकार लक्षणा पर चरितार्थ होती हैं ठीक उसी प्रकार "भक्ति" पर भी। भजन अथवा सेवा ही भक्ति है- भज्यते सेव्यते हरि: अनयेति भक्ति सचमुच बिना भक्ति के प्रभु का सामीप्य नहीं प्राप्त हो सकता। भंग: का अर्थ है, अलगाव पार्थक्य। जो सांसारिक विषय वासनाओं से प्राणी को पृथक कर दे, वही भक्ति है। हनुमान की भक्ति में तीनों निर्वचन चरितार्थ होते है। वह प्रभु राम के अनन्य उपासक हैं, उनके अविराम सेवक हैं। वह आजन्म ऊर्ध्वरेता ब्रह्मचारी है, सांसारिक विषय वासनाओं से सवर्था अप्रभावित, अस्पष्ट है, अन्तत: वे ज्ञान विज्ञान के भंडार है। अविद्या अथवामाया के विनाशक है। पराम्बा भगवती सीता के आशीष में ये सारे गुण साकार हो उठे हैं-

---

1- तुलसी कृत राम चरित मानस- किष्किन्धा काण्ड-2/5-6,3/1-5 पृ0 395

आसिष दीन्ह राम प्रिय जाना।
होहु तात बल शील निधाना।
अजर अमर गुन निधि सुत होहू।
करहुँ बहुत रघुनायक छोहू।।[1]

सीता का कुशल संदेश निवेदित करने के बाद प्रसन्न मन राम से हनुमान और कुछ याचना नहीं करते। उन्हें तो बस प्रभु का सामीप्य, उनकी सेवा अपर्या का सुवर्ण अवसर मात्र चाहिए-

नाथ भगति अति सुखदायिनी।
देहु कृपा करि अनपायिनी।।
सुनि प्रभु परम सरल कपिबानी।
एवमस्तु तब कहेउ भवानी।।[2]

भक्ति रसायन कार ने ठीक ही लिखा है कि जब तक भुक्ति ﴾सांसारिक सुख भोग﴿ एवं मुक्ति ﴾मोक्ष की इच्छा﴿ पिशाची की तरह हृदय में बैठी रहती है, तब तक वास्तविक भक्ति सुख का उदय कैसे हो सकता है? मुक्ति की कामना भी भक्ति में उतनी ही बाधक है जितनी लोकेषणाओं की पूर्ति की कामना। सच्चा भक्त तो वह है, जिसकी कोई लौकिक अलौकिक कामना होही नः-

भुक्ति मुक्ति स्पृहा यावत् पिशाची हृदि वर्तते।
तावद्भक्ति सुख स्यात्र कथमभ्युदयो भवेत।।

1- तुलसी राम चरित मानस- सुन्दरकाण्ड-17/2-3 पृ0 422 ,23
2- उपर्युक्त सुन्दरकाण्ड- 34 /1/2,पृ0 43।

इस प्रकार के निष्काम सेवक हनुमान ही हैं, निबन्ध के प्रारम्भ में आसक्तियों के जो उदाहरण प्रस्तुत किये गये हैं। सब के सब सोपाधि हैं, किन्तु दास्या सक्ति और आत्म निवेदना सक्ति ही निरूपाधि है, क्योंकि इन आसक्तियों में तत्परता है।

नारद पान्चरात्र में भक्ति को व्याख्या करते हुए कहा गया है-

सर्वोपाधि विनिर्मुक्तं तत्परात्वेन निर्मलम।
हृषीकेण हृषीकेश सेवनं भक्तिरूच्यते।।[1]

सर्वोपाधि मुक्तता हनुमान की भक्ति का सर्वोत्कृष्ट गुण हैं। प्रत्येक मानव के व्यक्तित्व में तीन शक्ति पक्ष होते हैं और प्रत्येक पक्ष का कोई एक निश्चित साध्य होता है- उदाहरणार्थ-

1- बुद्धिपक्ष (जिसका साध्य है ज्ञान)

2- क्रियापक्ष(जिसका साध्य है कर्मकाण्ड)

3- हृदय पक्ष (जिसका साध्य है भक्ति)

हनुमान के व्यक्तित्व में तीनों ही पक्ष समान रूप से स्पष्ट होते हैं। वह ज्ञान, विज्ञान के भण्डार, आचार व्यवहार, तथा शील समुदाचार के मूर्तिमान प्रतीक तथा विनम्रता के अवतार है। सुन्दरकाण्ड के प्रारम्भ में गोस्वामी जी की भाव भीनी शब्द पुष्पान्जलि देखने योग्य है-

अतुलित बल धामं हेम शैलाभ देहं,
दनुजवन कृशानुं ज्ञानिनामाग्रगण्यम।।
सकल गुण निधानं वानराणामधीशं,
रघुपति प्रिय भक्तं वात जातं नमामि।[2]

1- नारद पांचरात्र में उद्धृत।
2- श्री राम चरित मानस- सुन्दरकाण्ड श्लोक -3 पृ0 414

उपर्युक्त श्लोक में प्राभञ्जनि की बुद्धि,क्रिया एवं हृदय-तीनों पक्षों का समुचित प्रमाण मिल जाता है।

वस्तुतः हनुमान राम मय है। राम ही उनकी चेतना है,जीवनी शक्ति है। हनुमान का जप,तप,शौर्य तथा अस्तित्व सब राम के कारण है। अन्यथा एक वानर में कौन बड़ा वैलक्षण्य होता ? हनुमान को स्वयं अपनी लघुता का भाव है-

सुनहुँ विभीषन प्रभु कै रीती।
करहिं सदा सेवक पर प्रीती।।
x x x x
अस मैं अधम सखा सुनु,
मोहू पर रघुबीर।
कीन्हो कृपा कृपा सुमिरि गुन,
भरे विलोचन नीर।।[1]

भारतीय वाङ्मय में हनुमान दास्य भक्ति के अप्रतिम निदर्शन हैं। उनका अवतरण ही परोपकार के लिए हुआ है,इस परोपकार की चरितार्थता श्री राम का कार्य करने में है। सीतान्वेषण के पूर्व जाम्बवान ने मारुतनन्दन से यही कहा था-

कहइ रीछपति, सुन हनुमाना।
का चुप साधि रहेहु बलवाना।।

1- तुलसी कृत राम चरित मानस- सुन्दरकाण्ड -7/6-9 पृ0 418

राम काज लगि तब अवतारा।
सुनतहिं भयउ पर्वत कारा।।[1]

नर लीला में लीन मर्यादा पुरुषोत्तम सीता विरह व्याकुल श्री राम का अभीष्ट कार्य सिद्ध करने के लिए हनुमान प्राणों का मोह छोड़कर बिना भविष्य का विचार किये लंका की ओर प्रस्थान करते हैं और भगवान श्री राम द्वारा निर्दिष्ट कार्यों को सम्पादित करते हैं। संस्कृत के कनिष्ठका धिष्ठित कवि कालिदास को मेघदूत काव्य लिखने की प्रेरणा हनुमान के दौत्य कर्म से प्राप्त हुई थी, यह स्वीकार करने में किसी भी मनीषी को कठिनाई नहीं है। उत्तर मेघ के एक सन्दर्भ में कवि कुलगुरु स्वयं इस तथ्य का अनुमोदन करते हैं-

इत्याख्याते पवन तनयं मैथिलीवोन्मुखी सा
त्वामुत्कण्ठोच्छ्वसित हृदया वीक्ष्य संभाव्य चैवम्।
श्रोष्यत्यस्मात परम वहिता सौम्य: सीमन्तिनीनां
कान्तोदन्त: सुहृद पनत: संगमात किंचिदून: ।।[2]

तत्पश्चात् हनुमान के पंचमुखी स्वरूप को वर्णित किया जा रहा है-

<u>हनुमान का पंच मुखी स्वरूप-</u>

भक्त प्रवर श्री हनुमान के पंचमुख का वर्णन शास्त्रों में वर्णित है। देश में कहीं-कहीं पन्चमुख मारुति मूर्ति है-

---

1- उपर्युक्त सुन्दरकाण्ड- 3-7/30क पृ0 410
2- मेघदूतम- महाकवि कालिदास- उत्तरमेघ श्लोक संख्या 39, पृ0 168
प्रकाशन- देवभाषा प्रकाशन, दारागंज-इलाहाबाद-6

पन्चास्यमच्युत मनेक विचित्र वीर्यं,
वक्त्रं सुशंख विधृतं कपि राज वर्यम।
पीताम्बरादि मुकुटैरभि शोभितांग
पिंगाक्षमाद्य मनिशं मनसा स्मरामि।।[1]

अनेक प्रकार के पाँच मुखों वाले, विचित्र पराक्रम शील, शंखकार मुखवाले, कपिराज वर्य, पीताम्बर मुकुट आदि से शोभितांग पीले नेत्र वाले आदि देव हनुमान जी को हम मन से अहर्निशि स्मरण करते है। श्री विद्यार्णव तन्त्र के इसी हनुमत्प्रकरण में बताया गया है, कि हनुमान जी पंचमुख दस भुजाओं वाले भी हैं। उनका पूर्व दिशा का मुख वानर के समान है, उनकी कान्ति सूर्य सदृश है-

पूर्वं तु वानरं वक्त्रं कोटि सूर्य समप्रभम।
द्रष्टा करालवदनं भ्रुकुटी कुटिल ईक्षणम।।

* * * *

ऊर्ध्वं हयानन घोरं दानवान्तकरं परम।
येन वक्त्रेण विप्रेन्द्र तारकाख्यम महासुरेम।
जघान शरणं तत स्याद सर्वशत्रु हरं परम।।[2]

2- दक्षिण मुख नृसिंह जैसा है बहुत भीषण है, तेजोदीप्त है।

3- पश्चिम मुख गरुड़ के समान है, वह रोग का शमनकारी और विष को निष्प्रभाव करने वाला है।

4- उत्तर मुख नील वाराह जैसा वर्णित है।

1- विद्यार्णव तन्त्र, हनुमत्प्रकरण, 23-11
2- मन्त्र महार्णव- 1-5 तक-
राम दूत पत्रिका- पंचमुख संकटमोचन पृ0 40

5- यह ऊर्ध्व मुख हय ग्रीव का है,यह दानवनाशक है।

श्री हनुमान जी के दस हाथों के आयुधों का वर्णन निम्नवत है-

1- खाँडा 2- त्रिशूल 3- खट्वांग 4- अंकुश 5-पर्वत 6- खम्भा 7-मुष्टिका 8- गदा 9-वृक्षशाखा 10- पाश।

मूलत: हनुमान जी के पंचमुख धारण की कथा का कोई पुष्ट प्रमाण नहीं मिलता है किन्तु कुछ तत्वों के आधार पर ऐसा कहा जा सकता है कि हनुमान भगवान शिव के अवतार है और शंकर जी पंच मुख है,एतदर्थ उनके अंश होने से सहजत: हनुमान जी भी पन्च मुख है।

महर्षि मरीचि प्रणीत विमानार्चन कल्प में श्री हनुमान जी के स्वरूप के सन्दर्भ में कहा गया है-

हनुमान श्वेत वस्त्रधर: कपिरूप:
सर्वाभरण भूषित: द्विभुज: श्यामांग।।[1]

हनुमान जी श्वेत वस्त्र धारण करते है। कपिरूप है,सर्वाभरण भूषित है,द्विभुज है,और कृष्ण वर्ण है,श्री राम के दाहिने चरणों के समीप बैठते है। वस्तुत: ब्रह्म ने ही हनुमान के रूप में इस भूमण्डल पर अवतार सेवाधर्म लिया था। भक्त प्रवर श्री हनुमान जी ने सेवाधर्म का अनुपम आदर्श प्रस्तुत कर मानव मात्र को इष्ट के प्रति सर्वस्व समर्पण करने की भावना को जाग्रत किया है " ज्ञानिनामाग्रगण्य " होने के कारण वे सदा स्वस्थ स्थिर रह आनन्दित होते हैं परन्तु जन साधारण को भक्ति का मार्ग सुलभ करने के लिए मानव मात्र को श्री राम की उपासक बनाने के लिए,इस असत्य संसार की

1- आञ्जनेय का आत्म कथा- पृ0 10, सुदर्शन सिंह चक्र।

की वास्तविकता प्रकट करने के लिए अनात्म प्रेम के विनष्टीकरण के लिए,प्रभु को उस माया से छुटकारा दिलाने के लिए उसके विषय में कबीर ने कहा है- माया महा ठगिनि हम जानी। एवं भव रोगों से त्राण पाने हेतु राम बाण (औषधि) प्रस्तुत करने के लिए पवन सुत वीर बजरंगी ने पञ्चमुखी स्वरूप संधारण कर जन-जन को मोक्ष सुख और परा भक्ति की प्राप्ति में समर्थ बनाने के ध्येय से सर्व सुलभ निर्वाण सेतु का निर्माण किया है। "श्री हनुमान जी" के पञ्चमुखी स्वरूप का वास्तविक ज्ञान हमें बताता है कि जब अखिल ब्रह्म के संकल्प से द्वैत रूप प्रकट हुआ और तीनों गुणों के आधार पर उस अनात्म रूप की स्थिति न होते हुए भी प्रतीति का विषय बनी साथ ही चार पुरुषार्थ उस अनात्म प्रेम के क्रीडास्थल बने एवं स्वरूप विस्मृति के कारण अपनी असत्य वासना मृगतृष्णा की निश्चयात्मक समझ के कारण जब द्वैत का रूप विस्तृत हुआ तब स्वयं भगवान ब्रह्म में हनुमान रूप धारण कर इस ज्ञान को प्रकट करने के लिए पंच तत्वों के रूप में ब्रह्म ही व्याप्त हैं।"[1]

हनुमान जी पंच मुखी रूप धारण कर वही कार्य सम्पादित किया जो वे एक मुख से करते हैं। पंच तत्वों की एकता का बोध एवं उनके रूप में इष्ट देव की झाँकी का अनवरत दर्शन करने प्रभु नामोस्मरण करने और सर्वत्र भगवद्दर्शन करने की प्रवृत्ति से स्वरूप ज्ञान सुलभ है।

1- राम दूत- लेख हनुमान के पञ्चमुखी स्वरूप की आध्यात्मिक व्याख्या डॉ0 उमा कान्त "कपिध्वज" पृ0 4।

एक ही ब्रह्म पंचतत्वों के रूप में स्थित है। गीता के सिद्धान्त के अनुसार जब हम समस्त भूतों में अपनी आत्मा को और आत्मा में समस्त भूतों (अध्यस्थ) को देखने के अभ्यासी होंगे उस समय स्वरूप ज्ञान सर्वसुलभ होगा, और पराभक्ति की प्राप्ति होगी। सम्प्रति हनुमान जी के पंच मुखी होकर भगवन्नामों स्मरण करने और प्रभु को सर्वस्व समर्पण करने के रहस्य को समझकर आचरण करने में जीवन की सार्थकता है।[1]

तत्पश्चात् हनुमान के सचिवत्व की गरिमा युक्त कार्य कुशलता का वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है-

हनुमान का साचिव्य-

वैसे तृतीय अध्याय में हनुमान के सचिव रूप पर प्रकाश डाला जा चुका है, वा0रामायण तथा राम चरित मानस के अन्तर्गत। वा0रामायण में हनुमान का परिचय किष्किन्धा काण्ड में वर्णित है। हनुमान का परिचय सुग्रीव के सचिव के रूप में प्राप्त होता है। हनुमान बचपन से ही सुग्रीव के मित्र थे। सुग्रीव के दुर्दिनों में भी उनका साथ नहीं छोड़ते हैं। सुग्रीव के राजा बनने पर हनुमान उनका मंत्री रहता है।[2]

प्रारम्भिक राम सम्बन्धी आख्यान काव्यों में भी हनुमान को एक वानर गोत्रीय आदिवासी तथा सुग्रीव के बुद्धिमान सचिव के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

1- उपर्युक्त पृ0 43
2- तुलसी कृत राम चरित मानस- 3/22

सुग्रीव सचिवाय च कपि श्रेष्ठाय मन्त्रिणो।
स्वामि भक्ताय शान्ताय हनुमन्ताय नोनमः॥।[1]

जिस समय विभीषण श्री राम चन्द्र जी की शरण में आये, उस समय उन पर विश्वास किया जाय अथवा नहीं ऐसा विचार विमर्श प्रारम्भ हुआ। रामादल के समस्त बुद्धिमानों ने अपने-अपने विचार व्यक्त किये लेकिन किसी को विभीषण पर विश्वास नहीं हो रहा था। दूसरा पक्ष यह देखता है कि विभीषण धर्म रुचि सम्पन्न था। विभीषण का धर्मात्मत्व स्थायी था। सुग्रीव से लेकर मैन्द तक सभी वानरों को उसका धर्मात्मत्व स्थायी रूप में न लक्षित होकर व्यभिचारि भाव के ही रूप में दीख रहा था। किन्तु यदि सुग्रीव का कथन निश्चित हो गया होता तो उस समय-

सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते।
अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद व्रतं मम।।[2]

किसी का भी विश्वास प्राप्त करने के लिए धर्म रुचित्व आवश्यक है यह बात सुग्रीव आदि को समझ में नहीं आ रही थी, किन्तु हनुमान जी ने इसे समझा और उपर्युक्त प्रत्येक मत का खण्डन किया। क्योंकि श्री राम चन्द्र जी की शरणागति के लिए किसी भी देश अथवा काल की आवश्यकता नहीं होती और "निर्गुणमपि भर्तारम्" इस वचन के अनुसार विभीषण विपत्काल में रावण को स्वयं छोड़कर नहीं आया था। अपितु जब रावण ने ही पूर्णरूप से उसका अपमान किया और उसे निकाला, तब वह भगवान श्री राम के शरण में आता है।

1- राम दूत पत्रिका लेख- मन्त्री हनुमान श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी, पृ0 9
2- वा0रा0 6/18/34

वस्तुतः हनुमान जी के अन्दर सचिवत्व सर्वोत्कृष्ट विशेषता है, उनके बुद्धि कौशल्य के समक्ष अनेकानेक बुद्धिमानों का पराजय हुआ है। यदि खण्डित रूप में उपलब्ध हनुमन्नाटक को देखा जाय तो यह बात अनायास ही ध्यान में आती है कि हनुमान जी में बाल्मीकि की अपेक्षा कवित्व शक्ति भी अधिक थी। उन्होंने अपनी उसी शक्ति से विभीषण को पहचाना, इसीलिए गोस्वामी जी ने कहा है-

> कि एहुँ कुबेष साधु सनमानू।
> जिमि जग जामवंत हनुमानू।।
> उधरहिं अंत न होइ निबाहू।
> कालनेमि जिमि रावन राहू।।[1]

आज सनातन धर्म हनुमान जी के वचनानुसार लोगों को देशकाल विपरीत भासने पर भी परम अनुष्ठेय ही है। हनुमान जी ने यही दिखलाया है कि ईश्वर शरणागति युक्त होने के कारण सर्व देश काल में धर्म की मान्यता है और यही सचिवोत्तम हनुमान जी का वैशिष्ट्य है। तत्पश्चात हनुमान के आदर्श सेवक रूप को प्रस्तुत किया जा रहा है-

आदर्श सेवक हनुमान-

भक्ताधिराज श्री हनुमान जी राम के सर्वोत्तम दास भक्त है न केवल श्री राम की सेवा के लिए अपितु राम भक्तों की सेवा के लिए सर्वत्र, सर्वदा

1- राम चरित मानस- 1/7/34

एवं सर्वथा तत्पर रहते है।। श्री राघवेन्द्र सरकार के अग्रिम पायक,राम रीति रूपी रुचिर रसायन के अप्रतिम स्वादविद,मनसा वाचा-कर्मणा सत्य धर्मव्रती जानकीनाथ चरणानुरागी,सूर शिरोमणि साहसी,सुमति समीर कुमार, श्री हनुमान जी की मन्जुल -मंगल मोदमयी मूर्ति का सर्वाधिक सम्मोहक पक्ष है- उनकी सेवा सावधानता जिसकी परिधि में समुद्र-संतरण रावणमद मर्दन,कुम्भकर्ण गर्व खर्वीकरण,मेघनाद-मख-विध्वंसन निकुम्भ निपातन,धूम्राक्ष- धूलि धूसरणं त्रिशिर शिर-संहरण,अकम्पन उरकम्पन अतिकाय-काय संकोचन,अक्षवक्षविदारण एवं दिव्योषधि आनयन से लेकर भाव विह्वल हो चुटकी बजाने तक के व्यापार सम्मिलित हैं।

अपने इन्हीं "परम-सुजान" राम गुलाम के गुणों पर रीझे हुए मनसा -वाचा-कर्मणा गुलाम तुलसी आनन्दोच्छ वसित हो जय-जयकार कर उठते हैं-

जयति सिंहासना सीन सीतारमण, निरखि निर्भरहरष,नृत्यकारी।
राम संभ्राज शोभा-सहित सर्वदा तुलसी मानस-रामपुर-विहारी।।[1]

इसके अतिरिक्त मानस में भी हनुमान के बड़भागी होने का संकेत प्राप्त होता है-

बड़भागी अंगद हनुमाना।
चरण कमल चापत विधि नाना।।[2]

पुण्य श्लोक पवनात्मज के चरित्र का केन्द्रीय भाव है-राम गुलामी और राम गुलामी का प्राणतत्व-सेवा भावना। हनुमान की राम के प्रति दास्य भाव की भावना से सदा करते हैं। मूलत: यह योगियों के लिए अगम्य है-

---

1- विनय पत्रिका 27/5
2- राम चरित मानस- 6/10/3 1/2

आगम निगम प्रसिद्ध पुराना।
सेवा धरमु कठिन जगु जाना।।[1]
सिर भर जाउ उचित अस मोरा।
सब ते सेवक धर्म कठोरा।।[2]

सेवा धर्म परम गहनो योगिना मप्य गम्य:

सम्पूर्ण छल त्यागकर स्वामी की कर पग नयन वत सेवा करना ही सेवक धर्म संहिता का स्वर्णिम नियम है-

सेइअ स्वामिहिं सर्व भाव छल त्यागो। सेवक कर पग नयन सों,।

हनुमान इस नियम के सुविज्ञ हैं। वस्तुत: हनुमान जी एक आदर्श सेवक भी हैं। श्रेष्ठ सेवक के जिन गुणों का उल्लेख निम्नोक्त विदुर वचन में हुआ है, वे सभी उनके व्यक्तित्व में जगमगा रहे हैं-

अभिप्रायं यो विदित्वातु भर्तुः, सर्वाणि कार्याणि करोत्यतन्द्रो।
वक्ता हितानाम नुरक्त आर्य, शक्तिज्ञ आत्मेव हितोऽनुकम्प्यं।[3]

जो सेवक स्वामी के अभिप्राय को समझकर आलस्य रहित हो समस्त कार्यों को पूरा करता है, जो हित की बात कहने वाला, स्वामिभक्त सज्जन और राजा की शक्ति को जानने वाला है, उसे अपने समान समझकर आलस्य रहित हो समस्त कार्यों को पूरा करता है जो हित की बात कहने वाला स्वामि भक्ति सज्जन और राजा की शक्ति को जानने वाला है, उसे अपने समान समझकर

1- उपर्युक्त 2/292/ 3 1/2
2- उपर्युक्त 2/202/ 3 1/2
3- विदुर नीति 5/25

कृपा करनी चाहिए। उनके समग्रव्यक्तित्व में विनय शीलता और अनुशासन कामणि कांचन संयोग सर्वत्र दिखायी पड़ता है। उनकी अतुलनीय सेवा का स्मरण करते ही श्री राम चन्द्र जी मुक्त कण्ठ से पुकार उठते हैं।

एतस्य बाहुवीर्येण लंका सीता चलक्ष्मणः।
प्राप्ता मया जयश्चैव राज्यं मित्राणि बान्धवाः।
हनुमान यदि मे न स्याद वानराधिपते सखा।
प्रवृत्ति मपि को वेत्तुं, जानक्या शक्तिमान भवेत।।[1]

मुनीश्वर मैंने तो इन्हीं के बाहुबल से विभीषण के लिए लंका, शत्रुओं पर विजय अयोध्या का राज्य तथा सीता, लक्ष्मण मित्र तथा बन्धुजनों को प्राप्त किया है। यदि मुझे वानरराज सुग्रीव के सखा हनुमान नहीं मिलते तो जानकी का पता लगाने में भी कौन समर्थ हो सकता था। सेवक शिरोमणि भक्त श्री हनुमान की सेवा भावना सर्वोत्कृष्ट है। श्री लक्ष्मण जी को श्री सीता रक्षण कार्य सौंपते हुए श्री राम जी जिन चार बातों का उल्लेख किया, उन्हीं में सेवा सावधानता का मर्म भी छिपा हुआ है-

सीता केरि करेहु रखवारी।
बुद्धि विवेक बल समय विचारी।।[2]

बुद्धि विवेक बल और काल का विचार रखकर ही सेवा धर्म का सम्पादन संभव है। बुद्धि व्यवसायात्मिका होती है, वह कार्य में प्रवृत्त करती है।

1- वा०रा० 7/35 /9-10
2- श्री राम चरित मानस- 3/26/ 4 1/2

विवेक व्याकरणात्मक होता है ,वह कार्या कार्यव्यवस्थित क्रम में सदसत पक्षों की विवेचना कर तत्वार्थ सम्बन्ध में सहायता पहुँचाता है। बल कार्य सम्पादन का मूल उपादान है और समय का विचार अनुकूल हवा देखकर नाव खोल देने के समान है। श्री हनुमान जी के व्यक्तित्व में इन चारों गुणों का सगुम्फन है। वाल्मीकि रामायण में भी आकाशचारी जीव उनकी प्रशंसा करते हुए कहते हैं-

> यस्य त्वेतानि चत्वारि वानरेन्द्र यथातव।
> धृतिर्दृष्टिर्मतिर्दाक्ष्यं सकर्मसुन सीदति।।[1]

वानरेन्द्र जिस पुरुष में तुम्हारे समान धैर्य,सूझ बुद्धि और कुशलता ये चार गुण होते हैं,उसे अपने कार्य में कभीअसफलता नहीं मिलती है। सुग्रीव सेवा संलग्न श्री हनुमान के प्रत्येक आचरण से बुद्धि ,विवेक,बल और समय विचार की पुष्टि होती है। बुद्धिमान का प्रथम लक्षण है- "क्षिप्रं विजानाति चिरं श्रृणोति " चिरकाल तक सुनना और उसके रहस्य को तुरन्त ताड़ लेना। वस्तुस्थिति के मूल में पहुँचने की सामर्थ्य मारुतात्मज में कूट-कूट कर भरी है। श्री राम लक्ष्मण को देखते ही उन्हे सहज प्रतीति हो जाती है कि उनका आश्रयण सुग्रीव सुगति का सहज साधन बन सकता है क्योंकि बुद्धिमान एवं विक्रम सम्पन्न सुहृत्तमों के साहाय्य से साधन हीन ,वित्तहीन और विपत्तिमग्न जीव अनायास कृतकृत्य हो जाते हैं। वे सुग्रीव को श्री राम सख्य संस्थापनार्थ सुमन्त देकर अपने साचिव्य को सार्थक बनाते है। सहज विवेक सम्पन्न होने के नाते उनकी क्रान्तदर्शिनी प्रज्ञा श्री राम लक्ष्मण की महान भावत्व पर मुग्ध हो जाती है,और उन्हे उनके चरणों में सर्वात्मना समर्पण करा देती है। इन कोमल पद वाले कठिन भूमिगामी

1- वा0रा0 5/1/201

प्रभु जी को परिचर्या में प्रवृत्त होने के बाद श्री हनुमान सर्वत्र उन्हे पीठ पर आसीन कर अपनी सेवकाई सफल करते हैं। राम लक्ष्मण का कठोर भूमि पर चलना हनुमान जी को आँखों में तीखे काँटे को तरह गड़ने लगता है। वस्तुत: हनुमान जी मर्यादा पुरुषोत्तम के महान सेवक हैं।

श्री राम के सेवा के प्रसंग में उनके बल को इयत्ता बतलाने को शक्ति असंभव है। महाबली मारुतात्मज का रण कौशल देखकर तो श्री राम, लक्ष्मण, रावण, विधि, चक्रपाणि, चण्डापति, चण्डिका एवं देवतागण सभी प्रशंसा करते हैं-

"तुलसी लखत, रामु रावन, विबुध, विधि,
चक्रपानि चण्डीपति, चंडिका सिहात हैं।
बड़े-बड़े बानइत वीर बलवान बड़े,
जातुधान जूथप निपाते बात जात हैं।।[1]

वस्तुत: हनुमान जी एक आदर्श सेवक के रूप में प्रतिष्ठित है। सेवक को अपने प्रभु को कृपा का ही अवलम्ब रहता है, उस कृपा के आश्रय में ही वह अपने सब कार्यों का सम्पादन करता है, और प्रभु की कृपा की ही ओर निहारता रहता है। हनुमान जी की भगवानराम के प्रति अनन्य निष्ठा है, वे विश्व के, ब्रह्माण्ड के कण-कण में अपने प्रभु को विराजमान देखते हैं। एक बार विधि के निर्मल प्रकाश में विभीषण सुग्रीव, अंगद, नलनील, हनुमान आदि के साथ भगवान, श्री राम सुबेल पर्वत के शिखर पर विराजमान थे, उन्होने सबसे पूछा चन्द्रमा में श्यामता कैसी है? सभी लोगों ने अपने-अपने विचार प्रकट किये अन्त में हनुमान जी ने उत्तर दिया,

---

1- कवितावली, लंकाकाण्ड, 4।

जो कि हनुमान के सेवकत्व की पराकाष्ठा है-

कह हनुमंत सुनहु प्रभु, ससि तुम्हार प्रियदास।
तव मूरति विधु उर बसति,सोई स्यामता अभास।।[1]

हनुमान जी का उक्त उत्तर उनके हृदय की अनन्य निष्ठा का परिचायक है सेवा भाव कापूर्ण विकास हनुमान जी के जीवन में प्राप्त होता है। अनन्य वही है,जिसकी ऐसी बुद्धि कभी नहीं टलती कि मै सेवक हूँ और चराचर {जड़ चेतन} जगत मेरे स्वामी भगवान का रूप है। हनुमान जी का यह लक्षण अपने प्रभु श्री राम से प्रथम भेंट में दिखायी देता है-

सो अनन्य जाके,असि,मति न टरइ हनुमंत।
मैं सेवक सचराचर, रूप स्वामि भगवंत।।[2]

दास की गति अपने स्वामी को छोड़कर दूसरी ओर होती ही नहीं और उसके चिन्तन का विषय होता है,एक मात्र अपने प्रभु की सेवा। सेवक के हृदय में नित्य निरंतर अपने स्वामी के प्रति सेवा की भावना रखना ही आदर्श सेवक की पहचान है। वस्तुतः हनुमान जी निष्ठावान सेवकों के लिए परम आदर्श है। तत्पश्चात हनुमान के रुद्र रूप का विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है।

रूद्रावतार मारुति-

नानापुराण निगमागम सम्मत वाणी को गान करने वाले गोस्वामी तुलसी दास जी का कथन सत्य है कि भगवान आशुतोष ही हनुमान के रूप में अवतरित

1- श्री राम चरित मानस- 6/12
2- श्री राम चरित मानस- 4/3

हुए। वायुपुराण के पूर्वार्द्ध में शंकर जी के श्री हनुमान के रूप में अवतार लेने का उल्लेख है-

अंजनी गर्भ सम्भूतो हनुमान् पवनात्मजः ।
यदा जातो महादेवो हनुमान सत्य विक्रमः।।[1]

श्री महादेव जी पवन पुत्र अंजनी नन्दन सत्य विक्रमी श्री हनुमान के रूप में अवतीर्ण हुए। इसके अतिरिक्त स्कन्द पुराण में भी श्री हनुमान को शंकर बताया गया है।

यो वै चैकादशो रुद्रो हनुमान समहाकपिः।
अवतीर्णः सहायार्थं विष्णो रमित तेजसः।।[2]

"ग्यारहवें रुद्र ही अमित तेजस्वी विष्णु की सहायता हेतु महाकपि हनुमान हुए। इसके अतिरिक्त अगस्त्य संहिता में श्री हनुमान जी के अवतार को तिथि घड़ी आदि का स्पष्ट वर्णन करते हुए उन्हें शिवावतार बताया गया है-

ऊर्जे कृष्ण चतुर्दश्यां भौमे, स्वात्यां कपीश्वरः।
मेषलग्नेऽञ्जना गर्भात, प्रादुर्भूत स्वयं शिवः ।।[3]

हनुमत्पञ्चमुखी कवच में भी श्री हनुमान को रुद्रमूर्ति कहा गया है-

"ॐ रुद्र मूर्तये कर तल कर पृष्ठाभ्यां
नमः ॐ रुद्र मूर्तये अस्त्राय फट् ।[4]

1- वा०पु० 60/73
2- माहेश्वर, केदार, 8/99-100
3- अगस्त्य संहिता के अन्तर्गत वर्णित।
4- हनुमत्पञ्चमुखी कवच।

श्री राम कथा के अमर गायक गोस्वामी तुलसीदास जी ने स्थान-स्थान पर इस तथ्य का उद्घोष किया है वे अपने परमाराध्य के पायक श्री हनुमान जी के विषय में कहते हैं-

जेहिं सरीर रति राम सों, सोइ आदरहिं सुजान।
रुद्र देहं तजि नेहबस, बानर भे हनुमान।
जानि राम सेवा सरस, समुझि करब अनुमान।
पुरुखा ते सेवक भए, हरते भे हनुमान।।[1]

विनय पत्रिका में भी गोस्वामी जी ने हनुमान जी को रुद्रवतार, महादेव, वामदेव, पुरारी, आदि नामों से सम्बोधित किया है-

जयति रण धीर, रघुबीर हित, देवमणि,
रुद्र अवतार संसार पाता।

x x x x

जयति मंगलागार, संसार भारापहर,
बानराकार विग्रह पुरारी।[2]

उपर्युक्त प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि श्री हनुमान जी रुद्रावतार ही हैं। वस्तुतः हनुमान जी साक्षात परमेश्वर रुद्र ही हैं। उनकी रुद्र रूप में अभिव्यक्ति वेद, उपनिषद, रामायण, पुराण, आदि शास्त्रों में प्रसंगानुकूल निरूपित हैं। श्री हनुमान के परब्रह्म स्वरूप का चिन्तन पुराणों में अधिकाधिक उपलब्ध होता है, श्री राम प्रोक्त कवच के प्रसंग में श्री सनत्कुमार

1- दोहावली- 142-43
2- विनय पत्रिका- 25-27

की हनुमान जी के सम्बन्ध में प्रशस्ति है कि वे सब रूपों में अभिव्यक्त हैं, सर्वज्ञ है, सृष्टि करते तथा उसका पोषण करते हैं, एवं वे स्वयं ब्रह्मा, विष्णु और साक्षात महेश्वर है-

> स सर्वरूप: सर्वज्ञ: सृष्टिस्थिति करोऽवतु।
> स्वयं ब्रह्मा स्वयं विष्णु: साक्षाद्देवो महेश्वर:।[1]

वस्तुत: पर ब्रह्म नारायण ही शिव स्वरूप हनुमान हैं। महर्षि याज्ञवल्क्य ने भारद्वाज को बोध प्रदान किया कि "ॐ परमात्मा नारायण ही रुद्रावतार हनुमान के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

> ॐ यो ह वै श्री परमात्मा नारायण: स भगवान, मकारवाच्य:
> शिवस्वरूपो हनुमान् भूर्भुव: सुवस्तस्मै वै नमोनम:।[2]

जाम्बवान ने श्री राम को रुद्रावतार हनुमान को स्तुति करने की यों प्रेरणा दी -

> देव रुद्रावतारोऽयं मारुति, रुद्र स्तुति: क्रियताम।[3]

ऋग्वेद में मन्त्र द्रष्टा ऋषि द्वारा स्वकार्य सिद्धि के लिए रुद्र स्व रूप हनुमान के आवाहन का मन्त्र मिलता है-

> "कृशानु मस्तृन तिष्यं सधस्थ आ रुद्रं रुद्रेषु रुद्रिय हवामहे।[4]

इसके अतिरिक्त चम्पू रामायण में भी हनुमान के रुद्र रूप का वर्णन प्राप्त होता है-

---

1- नारद पुराण, पूर्व0 तृतीय पाद 78,24-25
2- तार सारोपनिषद- 3/3
3- हनुमन्नाटक- अंक संख्या- 6
4- ऋग्वेद- 10/64/8

सोऽपिप्लवंग भिवोक्ष्य समीर पुत्रं,चित्रीय माण हृदय:दिशिताश्लेन्द्र:
कैलाश शैल चल नागसि शापदायो,नन्दीश्वर:स्वयं मिहागत इत्यमस्ता[1]

महाकवि गिरिधर कृत गुजराती रामायण में भी हनुमान के रूद्र रूप का वर्णन प्राप्त होता है-

शंकर कहे धन्य अंजनी,तने पुत्र थाशे नेट।
रूद्र जे अगियारमा,ते प्रगटशे तुज पेट।।[2]

श्री शिव लाल पाठक कृत मानस समर्थक के अनुसार राम दूत हनुमान जी किष्किन्धाकाण्ड रूपी काशी में शिव रूप है। उनकी महाशक्ति ही भवानी पार्वती हैं उनकी जिस तरह भगवान शिव की अर्द्धांगिनी पार्वती जी एक ही रूप में विद्यमान है उसी तरह सशक्त हनुमान जी एक ही रूप में स्थित है,जिस प्रकार शिव का गुण तम रौद्र है,उसी तरह हनुमान जी का रौद्र रूप इस किष्किन्धा रूपी काशी में प्रकट है-

राम दूत है शुभ्र शु, शक्ती महा भवानि।
एक रूप है के चले,गुण युत काशी जानि।।[3]

मन्त्र शास्त्र में भी रूद्रावतार हनुमान के ध्यान नमस्कार आदि का वर्णन है- ॐ रूद्र मूर्तये शिरसे स्वाहा:[4] कृति वासीय रामायण में भी हनुमान के रूद्र रूप का वर्णन आता है-

---

1- चम्पू रामायण,सुन्दर- 88/1
2- गिरधर रामायण बालकाण्ड- 12/17
3- मानस समर्थक किष्किन्धा- 31
4- मन्त्र महार्णव,पूर्वखण्ड-पृ268

ध्यान योगे मा जानकी दीक्षा सत्वर।
वानरूपेते अवतीर्ण गंगाधर।।

*　　　*　　　*　　　*

नमः शिवाय बने अन्न दिल हनूर माथे।[1]

तत्पश्चात् गीतोक्त अनन्य भक्त के रूप में हनुमान का वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है।

गीतोक्त अनन्य भक्ति के मूर्त रूप हनुमान-

वस्तुतः हनुमान जी ही ऐसे परम भक्त है, जिनके जीवन में कर्मयोग भक्ति योग, ज्ञान योग का पूर्ण रूप से सम्मिश्रण है, जो उनके जीवन की उदात्तता को महिमामय बनाता है। श्रीमद् भगवत्गीता की दृष्टिकोण से ज्ञान योग, भक्ति योग और कर्मयोग तीनों ही भगवत्प्राप्ति के साधन है। मूलतः कर्मयोग ही ज्ञानयोग और भक्ति योग की प्राप्ति के साधन है। इस प्रकार भक्ति मार्गी के भी ज्ञानयोग और कर्मयोग स्वतः सिद्ध हो जाते हैं।

वस्तुतः हनुमान जी ऐसे भक्तियोगी है, उनके ज्ञानयोग, कर्मयोग स्वतः सिद्ध हैं। भक्ताधिराज श्री हनुमान जी की यह निश्चित धारणा है कि भक्ति स्वतन्त्र है, उसे किसी अवलम्ब की आवश्यकता नही है और ज्ञान विज्ञान सभी उसके अधीन है। भगवान श्री कृष्ण ने गीता में अनन्य भक्ति का स्वरूप यों दर्शाया है।

मत्कर्म कृन्मत्परमो मद्भक्तः संगवर्जितः।
निर्वैरः सर्व भूतेषु यः मामेति पाण्डव।।[2]

1- कृत्तिवासीय रामायण- लंकाकाण्ड
2- श्रीमद् भगवतगीता - 11/55

मूलतः "मत्कर्मकृत "का तात्पर्य है, समस्त कर्मों को भगवान के चरणों में अर्पितकर देना। अर्थात् मन बुद्धि से यह निश्चय कर लेना कि मैं भगवान के सर्वथा अर्पित हूँ और मेरे परम प्रापणीय भगवान हीं हैं। मन, बुद्धि से भगवान के अर्पित होकर कार्य करने का अर्थ यही है, कि भगवत्कार्य सम्पादन ही जीवन का परम लक्ष्य हो। भक्ताग्रगण्य हनुमान जी के सन्दर्भ में तो यह प्रसिद्ध ही है कि उनका अवतरण ही राम कार्य हेतु हुआ था। राम काज लगि तव अवतारा।[1] श्री हनुमान जी प्रतिक्षण अथक रूप से श्री राम का कार्य सम्पादन करने में ही अपने को सफल जीवी मानते हैं। स्वामी के कार्य सिद्धि के लिए ही उन्हें किसी प्रकार की चिन्ता नहीं। समुद्रोल्लंघन के समय जब जलनिधि ने विश्राम करने की इच्छा की तो हनुमान जी ने शिष्टता पूर्वक कह दिया-

राम काज कीन्हे बिनु मोहि कहाँ विश्राम।[2]

"मत्कर्म" का अनुसरण करने वाला भक्त अपनापन समाप्त कर देता है। परमाराध्य भगवान श्री राम के कार्य हेतु स्वयं को बँधवा लिया-

प्रभु कारज लगि कपिहि बँधावा।।[3]

तत्पश्चात् लंकाधीश रावण से निरभिमानता पूर्वक कहते हैं-

मोहिं न कछु बाँधे कइ लाजा।
कीन्ह चहउँ निज प्रभु कर काजा।।[4]

लंका से लौटने के उपरान्त स्वयं अपने मुँह से करनी का बखान नहीं किया-

---

1- श्री राम चरित मानस{ 5/30:3}
2- मानस - 5/1
3- उपर्युक्त- 5/20/2
4- उपर्युक्त-5/20/3

पवन तनय के चरित सुहाए।
जामवंत रघुपतिहि सुनाए।।[1]

"मत्परम" का अर्थ है, ऐसा भक्त जो मेरी प्राप्ति के लिए तत्पर रहे, अर्थात मेरी परायणता चाहने वाला हो उसका साधन और सिद्धि केवल भगवत्प्राप्ति ही है। श्री हनुमान जी तो जानते हैं कि भगवान के परायण होने में जाति, विद्या रूप कुल, धन क्रिया आदि का कोई व्यवधान नहीं है-

नास्ति तेषु जाति विद्या रूप कुल धन क्रियादि भेदः।[2]

भक्तवत्सल भगवान केवल भक्ति का नाता मानते हैं- मान उँ एक भगति कर नाता" इसी भाव को लेकर हनुमान जी विभीषण को राम का परायण होने का उपदेश दे रहे हैं-

कहहुँ कवन मैं परम कुलीना।
कपि चंचल सबही विधि हीना।
x x x x
अस मैं अधम सखा सुनु मोहू पर रघुबीर।
कीन्ही कृपा सुमिरि गुन भरे विलोचन नीर।।[3]

संजीवनी आनयन प्रसंग में जब भरत जी ने कहा कि "शैल सहित मेरे तीर पर चढ़ जाओ मैं अभी राम के पास पहुँचा दूँगा। तो हनुमान जी को थोड़ा अभिमान आया, किन्तु तुरन्त ही श्री राम के प्रभाव की स्मृति हो जाने से वन्दना करते हुए श्री भरत से बोले-

तव प्रताप उर राखि प्रभु, जैहउँ नाथ तुरन्त।।[4]

1- उपर्युक्त- 5/30/3
2- नारद भक्ति सूत्र -72
3- श्री राम चरित मानस- 5/7
4- मानस- 6/60

"मद्भक्त:" का अर्थ है, भक्ति योगी मेरे में ही अनन्य प्रेम रखने वाला हो वस्तुत: हनुमान जी भगवान के सहज सेवक हैं। सहज सेवक निष्काम भक्त होता है। वे किसी स्वार्थवश राम के सेवक नहीं थे। आर्त्तजिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ इन चार प्रकार के भक्तों में वे उच्च कोटि के ज्ञानी अर्थात् निष्काम भाव से भूषित भगवान के भक्त हैं-

जाहि न चाहिय कबहुँ कछु तुम्ह सन सहज सनेहु।।[1]

हनुमान जी तो श्री राम से भक्ति की याचना करते हैं-

स्नेहो मे परमो राजं स्त्वयि तिष्ठतु नित्यदा।[2]

भक्तिश्च नियता वीर भावो नान्यत्र गच्छतु।।

वस्तुत: हनुमान जी का अवतरण ही प्रभु कार्य के लिए हुआ था। भगवान ने ऐसे अधर्मियों का नाश करने के लिए ही तो अवतार लिया था। श्री हनुमान जी उस अवतार लीला में उनके सहायक थे, दास थे, सेवक थे। प्रभु का कार्य करना ही उनके जीवन का लक्ष्य था।

हनुमान जी सर्वथा निर्वैर थे जिसका स्वभाव ही परहित-साधन हो, वह किसी से वैर कैसे कर सकता है? श्री राम जी और उनके सेवक श्री हनुमान जी स्वभाव है।

हेतु रहित जग जुग उपकारी।
तुम्ह तुम्हार सेवक असुरारी।।[3]

वस्तुत: अनन्य भक्ति के पाँच साधन मत्कर्मकृत, मत्परम: मद्भक्त: संगवर्जित:, और सर्वभूतेषु, निर्वैर: है, हनुमान जी के चरित्र में स्पष्ट रूप से प्रतिदर्शित होता है।

1- उपर्युक्त- 2/13।
2- वा0रा0 7-40
3- श्री राम चरित मानस-10/21/1

निष्कर्ष-

उक्त अध्याय में शास्त्रानुमोदित हनुमान जन्म के विभिन्न हेतुओं, तथा उनके स्वरूपों का वर्णन प्रस्तुत किया गया है। वस्तुतः हनुमान जी का चरित्र दर्शन इतना उदात्त एवं पावनतम है कि जितना ही विवेचन किया जाय उतनी ही विलक्षणता प्रतिदर्शित होता है। हनुमान जन्म के साथ ही साथ उनकी कला नैपुण्य, संगीतात्मकता तथा विभिन्न अवतार हेतुओं के सन्दर्भों को भी उल्लिखित किया गया है। तत्पश्चात् षष्ठ अध्याय के अन्तर्गत श्री हनुमान के भक्ति प्रतीक मन्दिरों का परिचय तथा पूजन की विधि उपवास आदि के विवेचन का प्रयास किया जायेगा। श्री हनुमान के भक्ति स्वरूप की विभिन्न स्थितियों के विवेचन के उपरान्त उनके आराध्य रूप का वर्णन अपरिहार्य है।

षष्ठ अध्याय

श्री हनुमान भक्ति के प्रतीक मन्दिरों का संक्षिप्त परिचय एवं आराधना विषयक तथ्य

भारतीय भक्ति परम्परा में श्री हनुमान के भक्ति के प्रतीक मन्दिर आज भी विद्यमान हैं। श्री राम कथा के साथ-साथ श्री राम भक्त हनुमान का कथा भारत की सीमाओं को लाँघकर महासागरों के उस पार सुदूर देशों में व्याप्त हो गयी है जो आज किसीन किसी रूप में विद्यमान हैं। भारत की जनता धर्म के प्रति विशेष आस्थावान है। भारतीय जनता धर्म प्राण होने के कारण ही भारत देवालयों और मन्दिरों की धरित्री कहा जाता है। हमारे वैदिक वाङ्मय में देवी, देवताओं की संख्या भी प्रचुर है, किन्तु उनमें श्री हनुमान का स्थान सर्वोत्कृष्ट प्रतीत होता है।

कलियुग में हनुमान ही एक ऐसे देवता हैं, जो असंख्य भक्तों के आराध्य है। इनके नाम से ही समर्पित कितने ही तालाब, सरोवर, धाराएँ, गढ़ी और पर्वत आज भी विद्यमान हैं। वस्तुतः हनुमान के मन्दिरों की गणना करना असंभव है फिर भी मूलभूत तथ्यों के आधार पर प्रमुख मन्दिरों का विवरण प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है। भारत का शायद ही कोई ऐसा प्रान्त, नगर, जनपद या ग्राम हो जहाँ पर श्री हनुमान के मन्दिर न हों। अखाड़ों में इनकी प्रतिमा निश्चित रूप से रहती है, क्योंकि अतुलित बल धाम है, ऐसा सर्वविदित है।

भक्त श्री हनुमान की लोकप्रियता का एक रहस्य यह है कि ये समस्त कामनाओं की पूर्ति करने वाले तथा अष्ट सिद्धि एवं नवनिधियों के प्रदाता है। इनकी गति अबाधित है कीर्ति अक्षय है। इनके अतिरिक्त ये अमित वेगवान, महाबली, बुद्धिमान, शौर्य सम्पन्न, दक्षता, धैर्य नीति, पराक्रम प्रभाव के भंडार देवगुण सम्पन्न हैं।

अपने सामर्थ्यों एवं गुण के अनुसार इनके विभिन्न नाम हैं- यथा- शिवावतार, इसका विवरण दोहावली में प्राप्त होता है-

" जेहि सरीर रति राम सों सो आदरहिं सुजान।
रूद्र देह तजि नेह बस बानर भे हनुमान।।[1] "
"जानि राम सेवा सरस समुझि करब अनुमान।
पुरुषा ते सेवक भए हर ते भे हनुमान।।"[2]

सीता राम सुख प्रद, कपि तनु, कपि शान, आदि इनके विभिन्न नाम हैं। उपर्युक्त अमित गुण प्रभावों के कारण भक्ताधिराज श्री हनुमान अधिक लोकप्रिय है, एतदर्थ उनके भक्ति का असीम प्रचार प्रसार हो रहा है, वे अमर है, उन्हें अमरता का वरदान तो परामबा भगवती सीता के ही द्वारा ही प्राप्त हुआ था-

अजर अमर गुन निधि सुत होहू।
करहुँ बहुत रघुनायक छोहू।।[3]

1- दोहावली-पृष्ठ संख्या-53 दोहा संख्या 142
2- उपर्युक्त - पृष्ठ संख्या-53 दोहा संख्या 143
3- राम चरित मानस- सुन्दरकाण्ड -पृ0संख्या- 423- दोहा संख्या-17-3

सम्पूर्ण भारत में हनुमान के मन्दिर विद्यमान हैं। इन मन्दिरों में हनुमान जी की मूर्तियाँ अनेक रूपों में प्राप्त होती है- खड़ी स्थित, बैठी, लेटी मुद्रा के ही पर्वत लिए, कहीं गदा लिए, कहीं कंधे पर राम लक्ष्मण को बिठाये हुए, कहीं एक मुख और कहीं पंचमुख, कहीं दो और कहीं दस हाथ, कहीं हाथों में त्रिशूल, खड्ग, कमण्डलु, पर्वतापाश, वज्र आदि के लिए कहीं सौम्य और कहीं विकराल वेश, कहीं अभय और कहीं भयकारी वेश, कहीं राम भक्ति में लीन, कहीं संकीर्तन में लीन और कहीं सागर पार करते हुए आकाश में उड़ते तथा, कहीं श्री राम दरबार में विराजमान।

वस्तुतः मूलभूत तथ्य है कि अपने उदात्त चरित्र के विभिन्न रूपों के अनुरूप श्री हनुमान जी सम्पूर्ण भारत के मन्दिरों में विद्यमान हैं। भक्तगण इनके दर्शन और भक्ति से शान्ति, धैर्य, विजय, और बल प्राप्त करते हैं। एतदर्थ उनके रोग, शोक, भय, बाधा का निवारण होता है।

भारतीय मन्दिरों का क्रमिक विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है। उत्तर प्रदेश में भक्त हनुमान के प्रमुख मन्दिरों का विवरण प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है।

भारत के प्रमुख श्री हनुमान मन्दिर-

अ- अयोध्या-

क- हनुमान गढ़ी-

भगवान श्री राम चन्द्र जी की यह नगरी फैजाबाद जनपद में स्थित है। यह नगर सरयू नदी के दक्षिण तट पर स्थित है। यहाँ का सबसे

प्रसिद्ध मन्दिर हनुमान गढ़ी के नाम से प्रख्यात है। हनुमान गढ़ी राजद्वार के सामने एक उच्च टीलें पर चहुँदिक प्राचीर के भीतर स्थित है।[1] हनुमानगढ़ी के मुख्य मन्दिर तक पहुँचने के लिए लगभग साठ सीढ़ियों को पार करना पड़ता है। वहाँ पर हनुमान जी की स्थानक मूर्ति स्थापित है। इसके अतिरिक्त श्री हनुमान जी एक छः इंच की मूर्ति और प्रतिष्ठित है जो कि हमेशा सुगन्धित पुष्पों से सुसज्जित रहती है। श्री हनुमान भक्तों के लिए यह स्थल विशेष शुभ एवं कल्याणकारी है। मन्दिर के चारों तरफ सन्त महात्माओं के निवास हेतु सुन्दर स्थल बने हुए हैं। "हनुमानगढ़ी" के समीप में ही दक्षिण दिशा में सुग्रीव-टीला और अंगदटीला नामक सुरम्य स्थल स्थित है।

मूलभूत तथ्यों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि हनुमान गढ़ी की स्थापना आज से लगभग 300 वर्षों पूर्व स्वामी श्री अभय राम दास जी ने की थी। तत्कालीन समाज की श्रद्धामयी भक्ति भावना के संरक्षणार्थ सर्वप्रथम यहाँ श्री निर्वाणी अखाड़ा की स्थापना की, तत्पश्चात् यहीं हनुमान जी का विधिवत् पूजन, अर्चन, भोग राग की व्यवस्था मर्यादित रूप से की गयी।

"हनुमान गढ़ी" निर्माण के सन्दर्भ में एक कथा प्राप्त होती है। कहा जाता है कि एक बार लखनऊ तथा फैजाबाद के प्रशासक नबाब श्री मंसूर अली का पुत्र किसी भयंकर रोग से ग्रसित हुआ। सुयोग्य वैद्यों और हकीमों के उपचारोपरान्त उसके व्याधि में कोई सुधार न हो सकता। तत्पश्चात् अपने पुत्र के रोग के

1- कल्याण- हनुमान अंक- पृष्ठ संख्या-432-प्रकाश- गीता प्रेस, गोरखपुर

निवारणार्थ "हनुमानगढ़ी" के श्री हनुमान जी की शरण में आये और अविलम्ब उन्हें उस भीषण रोग से मुक्ति मिली।[1]

इसके फलस्वरूप नबाव के मन में श्री हनुमान जी के प्रति श्रद्धा जागृत हुई। श्रद्धावनत नबाव ने हनुमान गढ़ी के निकटस्थ स्थल 52 बीघे भूमि को मन्दिर को दान स्वरूप प्रदान कर दिया, और सन्त महात्माओं के सुविधार्थ विशाल इमली का बाग भी लगवाया, उसी समय स्वामी अभयराम दस जी निवेदन करके हनुमान जी का एक विशाल, भव्य, आकर्षक एवं सुदृढ़ मन्दिर का निर्माण करवाया, जो आज भी हनुमानगढ़ी के नाम से प्रख्यात है। नबाव की श्रद्धा भावना से प्रभावित हो आज भी बहुत से मुस्लिम बन्धु भी आकर श्रद्धापूर्वक, पूजन, अर्चन करते हैं।

इतना ही नहीं अनेक मुस्लिम संत श्री हनुमान की कृपा प्राप्त कर कृत कृत्य हुए हैं। प्रतीक रूप में स्थित उनके मजार आज भी असंख्य श्रद्धालु भक्तों द्वारा पूज्य है। हिन्दू भक्तों एवं दर्शनार्थियों के कारण यहाँ दैनिक भीड़ सी लगी प्रतीत होती है।

एतदर्थ यह कहने में अत्युक्ति नही प्रतीत होती कि श्री अवध में हनुमान गढ़ी के हनुमान जी की जितना पूजा और अर्चना होती है, उतनी सम्भवतः श्री सीता राम की भी नहीं होती है। ऐसा भक्तों का सामान्य विश्वास है।

---

1 - उपर्युक्त -हनुमानअंक- पृष्ठ संख्या वही।

ख- हनुमन्निवास-

यहाँ श्री अवध के सुप्रसिद्ध संत बाबा श्री गोमती दास जी रहते थे। उनका दैनिक जीवन प्राचीन ऋषियों की तरह यज्ञानुष्ठान में तत्पर रहना, साधुसेवा करना ही था। वे समस्त उत्सवों को बड़े धूम धाम से मनाते थे। वे सिद्धान्तवादी और मन्त्र के आचार्य थे। भक्त जन अपने कष्टों को विनय पत्र द्वारा उनके समक्ष उपस्थित करते थे, और संत श्री रात्रि में अनुष्ठान के माध्यम से निवृत्ति हेतु आज्ञा प्रदान करते थे। पश्चात संत श्री रूपकला जी हनुमन्निवास मन्दिर में ही निवास करते थे। ये हनुमान जी के अनन्य भक्त भी थे।

ग- पहाड़पुर-

एक दूसरी हनुमान गढ़ी फैजाबाद जनपद में गुप्तारा नाका पर स्थित है, जो पहाड़पुर नामक ग्राम में है। ऐसा वर्णन आता है कि श्री राम लक्ष्मण -रावण युद्ध के अवसर पर संजीवनी लाते समय श्री हनुमान जी पहाड़ सहित श्री भरत जी के समक्ष यहाँ गिरने से इस समरणीय स्थल का नाम लोक में पहाड़पुर हुआ। यह अयोध्या से पाँच मील दूर इलाहाबाद रोड पर स्थित है।[1]

---

[1] कल्याण- हनुमान अंक- पृ0 432, श्री भागीरथ मिश्र "ब्रह्मचारी"

घ- ज्ञानमुद्रा में श्री हनुमान-

भक्ताधिराज श्री हनुमान का यह विग्रह श्री अवध के हनुमानबाग में प्रतिष्ठित है। यह मूर्ति इतनी चित्ताकर्षक है कि इसके समक्ष जाने पर वहाँ से हटने का मन नहीं करता। करुणा वरुणालय अञ्जनानन्दन का यह विग्रह बरबस अन्तःकरण में स्थान बना लेता है। यही कारण है कि अयोध्या में निवास करने वाले संत प्रायः हनुमान बाग आया करते हैं। ये सिद्ध हनुमान जी हैं। यहाँ पर श्री हनुमान जी की पूजा अर्चना वैदिक रीति से सुचारु रूप से सम्पन्न होती है।

ङ-दास भाव में हनुमान जी-

"यत्र यत्र रघुनाथ कीर्तनम्
तत्र तत्र कृत मस्तकाञ्जलिम्
वाष्पवारि परिपूर्ण लोचनं
मारुति नमत राक्षसान्त कम्।।[1]

जहाँ-जहाँ श्री रघुनाथ जी का कीर्तन होता है, वहाँ-वहाँ मस्तक पर अञ्जलि बाँधे और नेत्रों में प्रेमाश्रु भरे राक्षसों को मारने वाले हनुमान जी विराजमान रहते हैं, ऐसे मारुति को हम नमन करते हैं। श्री राम भक्त हनुमान के इस भाव का यह श्री विग्रह अत्यन्त रमणीय एवं आकर्षक है। एतदर्थ इनके दर्शन मात्र से मनमुग्ध हो जाता है। अयोध्या के विद्वान संत

1- वायुपुराण- 3/22/320

एवं श्री हनुमान जी के प्रेमी भक्त इनके दर्शनार्थ प्राय:जाया करते हैं। यह अद्भुत मूर्ति श्री श्री 108 स्वामी श्री सार्वभौम स्वामी वासु देवा चार्य जी महाराज के द्वारा स्थापित की गयी थी। यह स्थल जानकी घाट पर श्री वेदान्ती जी के मन्दिर के समीप ही स्थित है।

कतिपय मनीषियों का कथन है कि हनुमान जी का यह विग्रह भगवान भुवन भास्कर से उनके विद्या प्राप्त करने की श्रद्धा भक्ति मयी विनीत मुद्रा में प्रतिष्ठित है। इस विग्रह की आराधना एवं पूजन से यथाशीघ्र लाभ प्राप्त होता है।

य- व्यास हनुमान-

भरत शत्रुघ्न दोनउ भाई।
सहित पवन सुत उपबन जाई।
बूझहिं बैठि राम गुन गाहा।
कह हनुमाना सुमति अवगाहा।।[1]

चतुर्दश वर्षोपरान्तवन से लौटने पर भगवान श्री राम का राज्याभिषेक हुआ। राज्य कार्य निर्विघ्न रूप से चल रहा था। उस समय श्री भरत जी और श्री शत्रुघ्न जी प्राय: एकान्त उपवन में पवन कुमार के साथ बैठकर भगवान श्री राम का लीला गुणगान श्रवण कियाकरते थे।

1- श्री राम चरित मानस- गोस्वामी तुलसीदास 7/25/2-3 गीताप्रेस- गोरखपुर।

सकल गुणों के निधान,अप्रतिम बलशाली,भगवान श्री राम के अनन्य भक्त,वायु पुत्र श्री हनुमान जी वक्ता थे। ये दोनों भाई अतिशय श्रद्धा एवं भक्ति पूर्वक पवन कुमार से भगवान श्री सीताराम की मधुर एवं मनोहर लीलाओं का रहस्य आदि पूछते और श्री हनुमान जी गदगद कंठ से उन्हे प्रभु का नाम गुण और यश सुनाया करते थे। इसी मुद्रा में मारुति की यह मूर्ति प्रतिष्ठित है। यह प्रतिमा अत्यन्त मनोहर एवं विलक्षण शक्ति सम्पन्न है। व्यास वेश में श्री हनुमान का यह विग्रह अयोध्या के रघुवीर नगर [रायगंज] मुहल्ले में प्रतिष्ठित हैं, विद्वानों का ऐसा मन्तव्य है कि यह वही स्थल जहाँ पवन पुत्र भरतादि बन्धुओं के सम्मुख भगवान श्री राम की कथा सुनाया करते थे। श्री हनुमान जी के प्रेमी भक्त दैनिक दर्शन करते हैं।

वाराणसी- क= श्री संकट मोचन मन्दिर-

श्री संकट मोचन हनुमान जी का मन्दिर शहर के दक्षिण हिन्दु विश्वविद्यालय के समीप लंका में स्थित है। मन्दिर के चारो तरफ एक छोटा सा बाग है। यहाँ का वातावरण एकान्त शान्त एवं उपासकों के लिए दिव्य साधन स्थानो के योग्य है। मन्दिर के प्रांगण में भक्ताधिराज श्री हनुमान जी दिव्य विग्रह के सम्मुख श्री राघवेन्द्र सरकार श्री किशोरी जी एवं श्री लखन लाल जी के साथ विराजमान हैं। इसी स्थल पर ही गोस्वामी तुलसीदास जी को हनुमान जी का दर्शन कोढ़ी वेष में हुआ था। गोस्वामी जी ने हनुमान जी से याचना की थी कि मुझे भगवान श्री राम का दर्शन हो जाय। भक्त श्री हनुमान

ने अपना दक्षिण बाहु उठाकर भगवान श्री राम का दर्शन करवाने के लिए आश्वासन दिया था। तत्पश्चात गोस्वामी जी ने हनुमान जी से निवेदन किया -प्रभो आप इसी रूप में भक्तों के लिए यहीं पर निवास करें। श्री हनुमान जी तथास्तु कहा,और वे वहीं विराजमान हो गये।[1]

ख- तुलसी मन्दिर-

संकट मोचन हनुमान जी से सम्बद्ध यह स्थान गंगा किनारे तुलसी घाट पर स्थित है। यह गोस्वामी तुलसी दास जी की साधना स्थली है। तुलसीघाट का तुलसी मन्दिर गोस्वामी जी द्वारा अनुप्राणित है। गोस्वामी जी की चरण पादुका,उनकी नौका का एक खण्ड और उनकी साधना स्थली यहाँ आज भी सुरक्षित है। गोस्वामी जी के इस स्थान का भवन चार सौ वर्षों से अधिक प्राचीन है।

संवत सोलह सौ असी,असी गंग के तीर।
श्रावण श्यामा तीज शनि,तुलसी तज्यौ शरीर।

इसके अतिरिक्त तुलसी घाट के इस पवित्र स्थान पर एक बालरूप श्री हनुमान जी की मूर्ति प्रतिष्ठापित है जो गुफा के नाम से प्रसिद्ध है। ये गोस्वामी जी को जैसे दर्शन दिये थे,उसी रूप में विद्यमान है।

ग- हनुमान घाट-

हनुमान घाट यहाँ का एक प्रसिद्ध घाट है। यहाँ श्री हनुमान जी का मन्दिर है। मन्दिर के श्री विग्रह की स्थापना समर्थ स्वामी श्री राम दास

1- कल्याण- हनुमान अंक-गीता प्रेस, गोरखपुर, पृ0सं0 433

जी महाराज द्वारा हुई थी। तीर्थाटन करते हुए जब श्रीसमर्थ यहाँ पधारे ,तब उन्होने इस मूर्ति को स्थापित किया था।

घ- बाल रूप श्री हनुमान मन्दिर-

भगवान श्री राम के अनन्य भक्त अञ्जनानन्दन का बाल विग्रह बहुत कम प्राप्त होता है। वाराणसी के उत्तरांचल मुहल्ला फाटक में बाल रूप हनुमान जी का अत्यन्त मनोरम विग्रह है। इस मनोहर विग्रह की विशेषता यह है कि इसकी स्थापना गोस्वामी तुलसीदास जी ने की थी,ऐसा वर्णन प्राप्त होता है।

प्रयाग-

प्रयाग में संगम तट किले के समीपस्थ हनुमान जी का इतिहास अद्भुत है। जनश्रुति है कि कन्नौज का कोई सन्तान हीन वणिक पुत्रेच्छा से श्री हनुमान जी का मन्दिर बनवाने का विचार कर ,विन्ध्याचल से प्रस्तर की एक बड़ी प्रतिमा का निर्माण कराकर,उस प्रतिमा का अनेक तीर्थ स्थानो से स्नान कराता हुआ प्रयाग आया,प्रयाग पहुँचने पर उसे स्वप्न हुआ कि इस प्रस्तर की प्रतिमा को वह यहीं छोड़ दे,और उसकी सभी इच्छाएँ पूरी हो जायेगी। फलतः वह वणिक इस प्रतिमा को तटकूल क्षेत्र में छोड़कर अपने निवास स्थान को चला गया,उसकी इच्छाएँ भी पूरी हो गयी। यह विशाल मूर्ति कालान्तर में पृथ्वी में दब गयी। कुछ समय पश्चात कुछ संतो ने खोदकर मूर्ति को साफ किया। तदन्तर हनुमान जी की उपासना करने लगे। फलस्वरूप हिजरी संवत 1119 में तत्कालीन मुगल बादशाह द्वारा श्री हनुमान जी के पास ही 2 बिस्वा जमीन उन तपस्वी महात्मा को प्रदान की गयी।[1]

1- हनुमान उपासना- सं0 कृष्ण चन्द्र जोशी,प्रकाशन- संजीव आर्ट प्रेस,कुबहाल पर्वत इलाहाबाद-पृ037 लेख- श्री राम कैलाश पाण्डेय।

हनुमत् निकेतन-

प्रयाग नगर में स्थित हनुमतनिकेतन श्री त्रिलोचन ब्रह्मचारी जी द्वारा निर्मित भव्य हनुमान जी का मन्दिर है जो हजारों श्रद्धालु भक्तों की श्रद्धा का केन्द्र बना हुआ है, हनुमान जी का विग्रह अत्याकर्षक द्रोणगिरि पर्वत को लिए हुए हैं।

चित्रकूट- हनुमान धारा-

कोटि तीर्थ से पहाड़ के ऊपर ही ऊपर करीब दो मील जाने पर हनुमान धारा स्थित है। सीतापुर से हनुमान धारा सम्भवतः तीन मील है। यह स्थल पर्वतमाला के मध्य भाग में स्थित है। पहाड़ के सहारे हनुमान जी की एक विशाल मूर्ति के ठीक सिर पर दो जल के कुण्ड हैं,जो सदा भरे रहते हैं, और उनमें निरन्तर पानी बहता रहता है,एतदर्थ इसे हनुमान धारा कहते हैं। धारा का जल पहाड़ में ही विलीन हो जाता है। उसे भक्त जन प्रभाती नदी या पाताल गंगा कहते हैं। यह स्थल बड़ा ही रमणीक है। लगभग 350 सीढ़ियाँ चढ़ने केबाद हनुमान जी के दर्शन होते हैं। यह स्थान वृक्षों से आच्छादित है, तथा शीतल भी है।

लखनऊ-

लखनऊ नगर स्थित अलीगंज मुहल्ले का हनुमान मेला सर्वविदित है। कभी लक्ष्मण पुर कहलाने वाली इस नगरी से होकर प्रवाहित होती हुई गोमती के उस पार 19वीं शती के आरम्भ में नबाव शुजाउद्दौला की पत्नी, नबाव वाजिद अलीशाह की दादी तथा दिल्ली के मुगलिया खानदान की बेटी

आलिया बेगम द्वारा बसाये गये अलीगंज मुहल्ले में एक श्री हनुमान मन्दिर है। हनुमान के इस मन्दिर का महत्व इतना अधिक है कि लखनऊ में ही नहीं, दूर-दूर तक जहाँ भी हनुमान जी का कोई नया मन्दिर बनता है, वहाँ उनकी मूर्ति के लिए पोशाक, सिन्दूर, लंगोटा, घंटा और छत्र आदि यहाँ से बिना मूल्य दिये जाते है और तभी वहाँ की मूर्ति स्थापना प्रामाणिक मानी जाती है।[1]

मथुरा से प्राप्त हनुमान का एक विग्रह जिसका संकेत कुमार स्वामी ने किया है[2] अति भंग मुद्रा में है। यह खण्डित है इसका विग्रह नहीं है, परन्तु बड़ी शक्तिशाली है, तथा उदय गिरि की वाराह मूर्ति से किसी भाँति भी कम प्रभावशाली नहीं है।[3]

तत्पश्चात् एक स्थानक मूर्ति हनुमान की मथुरा के राजकीय संग्रहालय में है, इसमें हनुमान समभंग मुद्रा में खड़े हैं। यह हनुमान विग्रह प्राय: 10वीं शताब्दी के प्रारम्भ की है। इनका बायाँ चरण उठा हुआ एक राक्षसी के पीठ पर है, दूसरा पैर शरीर के सीधे में स्थित है। इस विग्रह में हनुमान के मस्तक पर मुकुट है, कानों मे कुण्डल, तथा कटि में कटिबन्ध है, नीचे के अंगों में अधोवस्त्र है, ऊपर के शरीर पर एक गोल लपेटा हुआ दुपट्टा है जो दक्षिण कन्धे पर से होता हुआ घुटनों के नीचे तक आता है। अधोभाग में धोती है, जो जाँघो से ही है, पूँछ अपेक्षाकृत छोटी है, तथा पीछे की ओर निकली हुई है। इस विग्रह में हनुमान की अधोदृष्टि है।[4]

1-कल्याण -हनुमान अंक- उत्तर प्रदेश के प्रमुख हनुमान मन्दिर- श्री सूरज नारायण निगम पृ0 437

2-कुमार स्वामी-इण्डियन एण्ड इंडोनेशियन आर्ट पृ0 85-86

3-जे0एन0 बनर्जी-डेवलपमेन्ट ऑफ हिन्दू आइकोनोग्राफी प्लेट-25

4-मथुरा राजकीय संग्रहालय-नं00डी02 एफ 4-डॉ0नी0पू0जोशी, संग्रहालयाध्यक्ष द्वारा साभार।

गोरखपुर-

पूर्वान्चल में राप्ती नदी के तट पर श्री हनुमान गढ़ी के नाम से हनुमान जी का प्रसिद्ध स्थान है। प्रसिद्ध श्री गोरक्षपीठ में श्री गोरखनाथ जी के मन्दिर के उत्तर में हनुमान जी का प्राचीन मन्दिर था,अब उसको नया रूप दिया गया है और उसमें बहुत ही भव्य एवं विशाल प्रतिमा कीप्रतिष्ठा हुई है। इसके अतिरिक्त नगर में अन्य विशाल हनुमान मन्दिर स्थित है।

वृंदाबन-

लीला पुरूषोत्तम भगवान कृष्ण की नगरी वृन्दावन धाम में श्री सिंह पौर हनुमान जी मन्दिर इतिहास प्रसिद्ध श्री गोविन्द देव जी के पास है। धर्मान्ध औरंगजेब जब श्री गोविन्द देव जी के मन्दिर तुड़वा रहा था,उस समयसंत श्री विहारिनी देव जी ने प्रार्थना की और श्री हनुमान जी की प्रेरणा से तत्काल असंख्य बन्दर इकट्ठा हो गये। इस वानरी सेना की किलकिलाहट से यवन सेना को श्री धाम से दूर हटना पड़ा। श्री सिंह पौर जी हनुमान मन्दिर आज भी है।[1]

बद्री नाथ धाम-

मन्दिर की परिक्रमा में श्री गणेश जी के समीप ही हनुमान जी की मूर्ति हैतथा मन्दिर के पृष्ठभाग में हनुमान जी की संगमरमर की बनी हुई विशाल प्रतिमा है। भक्तगणों के लिए यह एक आकर्षक एवं आराधना केन्द्र है।

1- उपर्युक्त पृ0 437 ,आचार्य स्वामी श्री राधा ब्रज शरण देव जी महाराज

हनुमान चट्टी-

पण्डुकेश्वर की सात मील की दूरी पर हनुमान चट्टी है। यहाँ हनुमान जी की मूर्ति है। यह हनुमान जी की तपोभूमि बतायी जाती है। यहाँ अलक नन्दा के तट पर सुन्दर वृक्षों की पंक्तियाँ बड़ी मनोरम हैं।

पवाली-

हिमालय में बारह हजार फिट की ऊँचाई पर टेहरी जनपद में त्रियुगी नारायण के मार्ग पर यात्रियों का यह विश्राम स्थल है। पर्वत के एक बगल में वीर हनुमान का मन्दिर है। इस मन्दिर की मूर्ति वैशिष्ट्य पूर्ण है। दो फुट ऊँची इस मूर्ति के बाये हाथ में नंगी तलवार और दाहिने हाथ में गदा है। श्री मारुति का मुख सामनेनहीं है, दाहिना अंग देखने में आता है।

अंजनी हरिद्वार-

हनुमान जी की माँ अंजनी देवी का मन्दिर चण्डी देवी के मन्दिर के पास ही पहाड़ के दूसरी ओर है।[1]

विहार प्रान्त के कुछ प्रसिद्ध मन्दिर-

आँजन-

विहार प्रान्त में राँची में एक आँजन नामक एक ग्राम है, इसके विषय में ऐसी जनश्रुति है, कियहाँ पर महावीर हनुमान जी का जन्म हुआ था। आँजन ग्रामवासी अपने को हनुमान भक्त मानते है, इतना ही नहीं वे अपने को हनुमान जी का वंशज भी मानते हैं।[2]

1- उपर्युक्त -पृ0 438

जनकपुर-

जनकपुर नगर के निकट ही परिक्रमा मार्ग में हनुमान नगर नामक ग्राम है। यहाँ पर हनुमान जी का विग्रह विशाल भव्य एवं आकर्षक है। इसके अतिरिक्त श्री रामानन्द आश्रम में मनःकामना सिद्ध हनुमान जी की मूर्ति है, ये भक्तों की मनःकामना पूर्ण करते है।

सीतामढ़ी-

वस्तुतः सुप्रसिद्ध इस विहार प्रदेश के भागलपुर जिले के मंदार पहाड़ी एक मूर्ति हनुमान की प्राप्त हुई है।[1] यह मूर्ति इतना घिस गयी है, कि इसका छायाचित्र भी लेना असंभव हो गयाइसमें हनुमान समभंग में आलीढ़ मुद्रा में दिखाये गये है,इनके दाहिने हाथ में गदा है और बायें हाथ में पर्वत है।

वस्तुतः सुप्रसिद्ध इस विहार प्रदेश स्थल को पराम्बा भगवती सीता की प्राकट्य स्थली होने कोचिर गौरव प्राप्त होता है। यह पावना भूमि सदा ही सिद्धो,भक्तों और सन्तों की साम मास्थली और निवास स्थली रही है। मूलतः यहाँ का मुख्य मन्दिर जानकी मन्दिर है। इस मन्दिर के विग्रह के समक्ष श्री हनुमान जी की विनयावनत मनोज्ञ लघुमूर्ति और दक्षिण पार्श्व में विशाल वीर मूर्ति भक्तोंअभीष्ट दाता के रूप में अत्यन्त विख्यात है। श्री जानकी जी के मन्दिर से कुछ ही दूर पूर्व भाग में दीक्षामूर्ति लघु मूर्ति हनुमान जी की प्रतिष्ठित हैं। दीक्षामूर्ति हनुमान जी का छोटा सा दिव्य मन्दिर बड़ा ही सुहावना एवं आकर्षक है।

1- आर्कियालाजिकल सर्वे आफ इन्डिया द्वारा प्राप्त

उक्त स्थल को संत जन सिद्ध पीठ भूमि कहते हैं। यहाँ नाम-जप, श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण, श्री राम चरित मानस और हनुमान जी की आराधना उपासना से तथः सिद्धि प्राप्त होती है।[1]

पटना के राजकीय संग्रहालय में एक गुप्त काल की ईंट है, इसके ऊपर भी राम कथा उत्कीर्ण है।[2] इस दृश्य में सबसे आगे राम हैं, इनके बाईं ओर सुग्रीव हैं, इनके बगल में अंगद हैं। सुग्रीव के पीछे हनुमान है, औरउनके पीछे मुकुट धारी विभीषण तथा जाम्बवन्त {कलंक} यहाँ पर वर्णित हनुमान के शरीर पर कोई आभूषण दृष्टिगोचर नही हो रहा है। इस विग्रह में हनुमान का गले से ऊपर का भाग कपि का है और शरीर मनुष्य का। हाथ का पंजा वानरों जैसा दिखायी देता है। बिहार के भागलपुर जिले के अन्तर्गत अष्टचक की खुदाई से वी०पी०सिन्हा तथा बी०पी० सिंह को 57 मृण फलक प्राप्त हुए हैं, जो कदाचित् किसी मन्दिर में लगे हुए थे, उनमें एक मृणफलक पर उनकी आख्या के अनुसार महावीर हनुमान का अंकन है।[3] यह फलक गुप्त काल का प्रतीत होता है। इस फलक पर हनुमान एक हाथ में गदा लिए हुए हैं और दूसरे में पहाड़। यह पहाड़पुर के हनुमान विग्रह से मिलती जुलती है। दक्षिण भारत की प्राचीन हनुमान विग्रहों में एक राष्ट्रीय संग्रहालय दिल्ली में है।[4] बिहार के सिंह भूमि जिले के अन्तर्गत बेनी सागर से हनुमान की एक बड़ी सुन्दर मूर्ति दसवी शताब्दी में प्राप्त हुई है।[5]

1- उपर्युक्त पृ0 440, सन्दर्भ- पं0 श्री उपेन्द्र नाथ मञ्जुल {काव्य तीर्थ}
2- परमेश्वरी लाल गुप्त- पटना म्यूजियम कटलॉग आफ एण्टीक्विटीज, पटना म्यूजियम, पटना 1965, पृ0 291-6, प्लेट 48 आर्क 6528
3- इण्डियन आर्के आलोजी-1964-65 पृ0 19
4- राष्ट्रीय संग्रहालय नम्बर-59/153/142 डॉ0 वी0एन0शर्मा द्वारा प्राप्त
5- आर्केआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया के द्वारा।

बंगाल के प्रमुख मन्दिर-

कलकत्ता-

कलकत्ता नगर के हनुमान गली में स्थित हनुमान मन्दिर सुप्रसिद्ध है। लगभग डेढ़ सौ वर्ष पूर्व इस मन्दिर का निर्माण स्थानीय खत्री बन्धुओं के सहयोग से सम्पन्न हुआ था। मन्दिर में हनुमान जी का संकट मोचन विग्रह है, जो सर्वा भीष्ट दायक है। विग्रह में हनुमान जी के मुख का ही दर्शन होता है। सन् 1928 में उक्त मन्दिर की निरन्तर उन्नति एवं सुधार एवं स्थायी प्रबन्ध हेतु समिति का भी गठन होता है। इसके अतिरिक्त कलकत्ता नगर में ही स्थित राम कटरा का पंचमुखी हनुमान मन्दिर सुप्रसिद्ध है। यह विग्रह उस समय स्थापित हुआ, जब आज की यह महानगरी कलकत्ता एक मामूली छोटा सा ग्राम था।

उक्त मन्दिर के पन्चमुखी हनुमान जी मनोवांछित फल देने में ये समस्त कलकत्ता नगर में सुविख्यात है। नबाब लेन स्थित संकट मोचन मन्दिर सुप्रसिद्ध है। इस मन्दिर के समीपस्थ पंचमुखी हनुमान का मन्दिर सुप्रसिद्ध है। जिसमें हनुमान जी का अत्यन्त सुन्दर, आकर्षक, मनोहर एवं भव्य विग्रह 50 वर्षों से स्थापित है। विग्रह में हनुमान जी पाँचों मुखा विन्द स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते हैं। तदुपरांत कलकत्ता नगर के बड़ा बाजार स्थित सत्य नारायण पार्क के सामने जैन कटरा के समीप हनुमान जी का सुप्रसिद्ध मन्दिर लगभग 50 वर्षों से स्थापित है। यह विग्रह राजस्थान के सुप्रसिद्ध साला सरवाले हनुमान जी का ही प्रतिरूप प्रतीत होता है। तदुपरांत असम प्रदेश के कुछ प्रमुख हनुमान मन्दिरों के सन्दर्भ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

असम प्रदेश के कुछ प्रमुख हनुमान मन्दिर-

श्री कमला बारी-सत्र-

जोरहाट से लगभग 25 किलोमीटर दूर ब्रह्मपुत्र नदी के उस पार महात्मा श्री कमलाकान्त द्वारा संस्थापित कमलाबारी सत्र है। यहाँ एक श्री विष्णु मन्दिर है और विशाल कीर्तन गृह है। इसमें सिंहासन पर भगवान का वाङ्मय स्वरूप श्रीमदभागवत पुराण स्थापित है। इस वाङ्मय विग्रह के सम्मुख लगभग 6 फुटर ऊँचा श्री हनुमान जी का एक दारूमय श्री विग्रह है। यह विग्रह लगभग दो ढाई सौ वर्ष पूर्व का निर्मित हैऔर अत्यन्त प्रसिद्ध है।

मणिपुर-

उक्त स्थल पर एक महाबली आश्रम स्थित है,जो पुष्प एवं फलों से लदे हुए वृक्ष लता आदि से सुशोभित है। उसी में एक अत्यन्त प्रसिद्ध एवं प्रत्यक्ष फलदायक हनुमान जी का प्राचीन मन्दिर है,जिसका निर्माण राजर्षि भूपतिराज द्वारा हुआ है। यहाँ बहुत से साधु निवास करते है,एवं यह सदा वानरों से घिरा रहता है।

चूंगाजान- नागालैंड-

यह स्थान असम प्रदेश के दीमापुर जिले में है। यहाँ बहुत वर्षों पहले बाबा शंकर दास जी त्यागी नामक एक प्रसिद्ध महात्मा हो गये है। कहते है;इनको श्री हनुमान जी के दर्शन हुए थे। जहाँ बाबा को दर्शन प्राप्त हुआ था उसी स्थान पर आज श्री हनुमान जी का विशाल मन्दिर निर्मित है। यह सिद्ध स्थल असम प्रदेश में सुप्रसिद्ध है।

दक्षिण भारतीय प्रसिद्ध श्री हनुमान मन्दिर-

ऋष्यमूक पर्वत -

यह स्थल बेल्लारी जनपद में स्थित है। पौराणिक मान्यता है कि इस पर्वत पर ही श्री हनुमान जी सहित सुग्रीव निवास करते थे, और इस पर्वत प्रान्त में श्री हनुमान जी ने भगवान श्री राम से प्रच्छन्न वेष में भेंट की थी। यहाँ तुंगभद्रानदी धनुषाकार बहती है।

किष्किन्धा-

इसी स्थल की एक शिला पर भगवान राम के बाण रखने का चिन्ह है। पौराणिक मान्यता है कि भगवान श्री राम ने यहाँ बालि बध केपश्चात विश्राम किया था, गुफा के पीछे हनुमान पहाड़ी है कतिपय मनीषियों का अनुमान है कि यहाँ पर सुग्रीव का मधुवन नामक अनुपम उद्यान था, जिसके मधुर फलों को बंदर भालुओं ने उस समय खाया था जब वे भगवती सीता का अनुसंधान करके जाम्बवान अंगद और हनुमान सहित लंका की ओर लौट रहे थे। यहाँ पर हनुमान जी मन्दिर है, कुछ विद्वानों का मत है, कि पम्पा सर यहाँ था, जहाँ आज हास्पेट नगर है।

दक्षिण भारत के केरल प्रदेश के कोचीन से प्राप्त एक हनुमान का विग्रह दिल्ली के संग्रहालय में है। यह विग्रह 11वीं शताब्दी का होना चाहिए।[1] तत्पश्चात हनुमान के अन्य विग्रह प्राप्त होते हैं। जावा के परमबनम् चण्डी लोरों

1- श्री वी0एन0 शर्मा द्वारा प्राप्त। विग्रह का प्राप्ति स्थल ठीक ज्ञात नहीं है।

जोंग रांग में राम कथा अंकित मिलती है। यहाँ के फलक ईसा को 9वीं शताब्दी के माने जाते हैं। इनमें एक स्थल पर सुग्रीव के राजगद्दी का दृश्य उत्कीर्ण है। यहाँ हनुमान सुग्रीव के मुख्य मंत्री के रूप में दिखाये गये हैं। इसमें ग्रीवा के ऊपर का भाग इनका कपि का है और शरीर मनुष्य का। इनकी पूँछ पीछे की ओर है दोनों हाथों को एक दूसरे से बाँधे हुए कुछ आगे की ओर झुके हुए है। ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे सुग्रीव को सलाह दे रहे हों। सुग्रीव के पीछे उनकी पत्नी तारा बैठी हुई है।[1]

नवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध की एक कांसे की हनुमान की मूर्ति मद्रास के राजकीय संग्रहालय में स्थित है। यह सुप्रसिद्ध हनुमान विग्रह मद्रास के टेन्नेवेली के शरभादेवी के मन्दिर की है। इसमें हनुमान का दाहिने कर की उँगलियों के अग्रभाग मुख पर तथा बायाँ हाथ पेट पर है, इसकी इस मुद्रा को बनर्जी ने तक्षशिला के हीपोक्रेटिस देवता की मुद्रा तथा मथुरा के श्रीफणिग की मुद्रा के समान बताया है।[2]

माल्यवान पर्वत-

(स्फटिक शिला) पौराणिक मान्यता है कि वनवास काल में भगवान श्री राम ने वर्षा के चार माह यहीं व्यतीत किये थे। इसी पर्वत पर लंका से लौटकर श्री हनुमान जी ने अशोक वाटिका की वंदिनी भगवती सीता के अनुसंधान की विवरण तथा उसका सन्देश भगवान श्री राम को सुनाया था।

1- शिवराममूर्ति- द आर्ट ऑफ इण्डियन एशिया- प्लेट 496 -497 डी फलक-12
2- जे0एन0 बनर्जी- डेवलपमेन्ट ऑफ हिन्दू आइकोनाग्राफी, पृ0 261

भद्राचलम-

भद्रा चलम् आन्ध्र प्रदेश में वाड़ी से 15 मील दूर स्थित है। गोदावरी के तट के समीप एक प्राचीन श्री राम मन्दिर है, जो कि सम्भवत: समर्थ रामदास जी द्वारा निर्मित ज्ञात होता है।

श्री राम मन्दिर के निकट ही हनुमान जी का विशाल मन्दिर है। इसमें मारुति की स्थापना श्री समर्थ के हाथ से हुई है।

गुत्तेनदीवि-

यह सुप्रसिद्ध क्षेत्र पूर्व गोदावरी के समीप जनपद के मुम्मिडवरम तालुका में एक शाखा भारद्वाजी के तट पर स्थित है। यहाँ आञ्जनेय का अत्यन्त आकर्षक एवं प्रभावशाली विग्रह है। आज से लगभग 25 वर्ष पूर्व श्री सीता राम जी की स्थापना करने के बाद से अब हनुमान जी यहाँ शान्त होकर यहाँ विराज रहे हैं। जनश्रुति है कि यहाँ पर इन हनुमान जी की प्रतिष्ठा महर्षि गौतम ने की थी।[1]

औरंगाबाद-

नगर के मध्य में स्थित श्री सुपारी हनुमान का प्रसिद्ध मन्दिर है। इसमें श्री हनुमान जी की बैठी हुई पूर्वाभिमुखी मूर्ति है। मारुति के नेत्र चक्राकार होने के कारण मुँह पर दीप्ति छायी रहती है, जिससे मूर्ति अत्यन्त भव्य लगती है। पौराणिक मान्यता है कि ये मारुति स्वयम्भू होने के कारण पहले सुपारी

1- कल्याण- हनुमानांक- दक्षिण भारत के प्रसिद्ध हनुमान मन्दिर- पृ0 447 वल्लपल्लि भास्कर श्री राम कृष्णामाचार्य एलु।

के आकार के थे,और धीरे-धीरे बैठते-बैठते वर्तमान आकार को प्राप्त हो गये हैं। अत: ये "श्री सुपारी मारुति" कहलाते हैं।

पलगुर-

द्वैतमत के संस्थापक आचार्य आनन्द तीर्थ अर्थात् श्री मध्वाचार्य श्री हनुमान जी के अवतार माने जाते हैं। कर्नाटक में श्री हनुमान जी की सर्वाधिक मान्यता है। प्राय: 13वीं शताब्दी से श्री मध्वाचार्य के पट्ट शिष्यों ने समस्त कर्नाटक में जगह-जगह श्री मारुति की स्थापना की। इनमें कुछ मन्दिरों में मूर्ति की स्थापना श्री व्यास राय ने की। इन मारुति मूर्तियों की विशेषता यह है कि उनकी पूँछ नक्काशी की हुई है। विजय नगर के श्री यन्त्रोद्धार मारुति के अतिरिक्त इस प्रकार के श्री मारुति-विग्रह बीजापुर के पास अथनूर,धारवाड़ जिले में भेडीवाड,बागल कोट के पास तुलसी गिरि और बेलगाँव जिले में कल्लारी में भी है। ये मारुति-विग्रह भी प्रभावशाली है।

बीजापुर जिले में ही स्थित पट्टडकाल की वीरुपाक्ष मन्दिर के सभा मण्डप के एक खम्भे पर श्री राम कथा अंकित है,इसके ऊपर की ओर तो शिव ताण्डव का दृश्य है। इसके नीचे सूर्पणखा के विरूप करने की कहानी अंकित है,इसके नीचे राम का खर दूषण से युद्ध है। सबसे नीचे बायी ओर सीता हरण दिखाया गया है और दाहिनी ओर सीता को हनुमान संदेश देते हुए प्रदर्शित हैं। हनुमान इसमें मुकुट पहने हुए हैं- कुण्डल तथा हार धारण किये हुए हैं। हाथ में गदा है। पहले ये सीता को राम की अँगूठी दे रहे हैं और दूसरे में सीता से विदा ले रहे हैं।

1- चित्र,आर्कियालाजिकल सर्वे आफ इण्डिया द्वारा प्राप्त- सं0575/1961

उडुपी-

मध्व सम्प्रदाय में हनुमदुपासना एवं पूजा को विशेष महत्व दिया जाता है। श्री मध्वाचार्य ने उडुपी में एक विशाल "उडुपीकृष्ण" के मन्दिर की स्थापना की थी। इस मन्दिर के एक भाग में श्री हनुमान जी की मूर्ति स्थापित है। दक्षिण भारतीय विभिन्न हनुमान मन्दिरों में हनुमदर्चना आज भी मध्व सम्प्रदाय की इसी पूजा पद्धति के अनुसार होती है।

तुलसीगिरि-

बीजापुर जनपद में स्थित हनुमान मन्दिर की प्रसिद्धि, तुलसीगिरि मुख्य प्राण के नाम से है। ये हनुमान जी वांछित कामना की पूर्ति करते हैं।

मन्त्रालय-

कर्नाटक के मन्त्रालय नामक अति प्रसिद्ध ग्राम में श्री पंचमुखी हनुमान का एक भव्य मन्दिर है। स्वामी श्री राघवेन्द्र तीर्थ जी ने इस मन्दिर को स्थापित किया था। ये हनुमान जी इष्टफल प्रदायक कहे जाते हैं।[1]

यलवन गुड़ी क्षेत्र-

कर्नाटक के यलवन गुड़ी ग्राम में हनुमान जी का एक मन्दिर है। इस मन्दिर की स्थापना द्वैताचार्य स्वामी द्वारा हुई थी।

शोलंगीपुरम क्षेत्र-

तमिलनाडु प्रदेश के शोलंगीपुरम क्षेत्र में एक पहाड़ी पर हनुमान जी का मन्दिर है। इन हनुमान को "योग हनुमान" के नाम से सम्बोधित किया जाता है

1- कल्याण- हनुमानांक- पृ0 449

मंजरथ-

श्री हनुमान जी ने अपनी विमाता को मार्जारी रूप से यहाँ विमुक्ति दिलायी थी, एतदर्थ यह मार्जार क्षेत्र कहलाता है। यहाँ फेना तथा गोदा नदियों के संगम पर वृषाकपि, सोमेश्वर, हनुमदीश्वर, गणेश तथा त्रिविक्रम जी के विशाल मन्दिर हैं। मन्दिर में मार्जारी प्रतिमा है। यह एक महत्वपूर्ण हनुमत्तीर्थ है।[1]

कन्या कुमारी-

भारत भूमि के दक्षिण तम छोर पर अवस्थित प्राचीन तीर्थस्थान देवी कन्या कुमारी के मन्दिर के प्रवेश प्रकार के अन्दर उत्तर पूर्व की ओर एक प्रस्तार स्तम्भ के निचले भाग पर श्री राम भक्त श्री हनुमान जी की संजीवनी पर्वत धारी एक छोटी-सी आकृति उत्कीर्ण है। मन्दिर के दर्शनार्थी भक्त गण श्री हनुमान जी की इस मूर्ति को प्रणाम करके आगे बढ़ते हैं।

रामेश्वरम्- श्री विश्वनाथ (हनुमदीश्वर)-

श्री रामेश्वरम् तमिलनाडु के श्री राम नाथ पुरम जनपद का भारत प्रसिद्ध पवित्र धाम है। चारों दिशाओं के चार धामों में रामेश्वरम् दक्षिण दिशा का धाम है, और यह एक समुद्री द्वीप में स्थित है। श्री रामेश्वर मन्दिर के निकट ही विश्वनाथ (हनुमदीश्वर) मन्दिर है। यह लिंग हनुमान जी द्वारा लाया गया था। श्री हनुमान जी भगवान श्री राम के आदेश से कैलाश से शिवलिंग

1- उपर्युक्त-पृ0 449- श्री गोविन्द राजाराम जी जोशी।

लाये थे,जो रामेश्वरम् के समीप विश्वनाथ लिंग नाम से स्थापित है। उसके पश्चात् अपने एक अंश से श्री विग्रह रूप से श्री हनुमान जी यहाँ स्थित हुए। यह मूर्ति अत्यन्त विशाल है।[1]

हनुमत्कुण्ड-

गन्ध मादन-पर्वत पर श्री रामेश्वर मन्दिर से उत्तर पश्चिम में हनुमत्कुण्ड है। पौराणिक मान्यता है कि इसको हनुमान जी ने बनाया था। इस सम्बन्ध में एक लोक विश्रुत प्राचीन आख्यान प्राप्त होता है-

प्राचीन आख्यान काल में कुशल नीतिज्ञ,प्रजापालक एवं परम धार्मिक धर्मसख नामक राजा राज्य करते थे। राजा के संतान नहीं थी,उन्होंने संतान प्राप्ति हेतु ब्राह्मणों और देवज्ञों से अपनी व्यथा कहा- समस्त ऋत्विज ने गम्भीर मन्त्रणा के अनन्तर राजा को पुत्रेष्टि यज्ञ करने को कहा। समस्त कामनाओं को पूर्ति करने वाला मोक्ष प्रदाता हनुमत्कुण्ड के निकट राजा ने पुत्रेष्टि यज्ञ किये ,जिसके फलस्वरूप उनको संताने प्राप्त हुई। पुत्रों के यौवन में प्रवेश करते ही नरेश ने राज्य वितरण कर पत्नियों सहित तपश्चरणार्थ गन्धमादन पर्वत पर चले गये। वे वहाँ प्रतिदिन हनुमत्कुण्ड में स्नान करते हुए तपश्चरण करने लगे। श्री रामेश्वर मन्दिर के निकट सीताकुण्ड के पास ही श्री हनुमान की पंचमुखी -मूर्ति वाला मन्दिर है। पौराणिक मान्यता है कि श्री हनुमान जी ने समुद्र पार करने का अनुमान यहाँ से किया था।

1- कल्याण -हनुमानांक-पृ0 450

मध्य प्रदेश के प्रसिद्ध हनुमान मन्दिर-

मध्य प्रदेश के पाठन स्थान पर एक विशालकाय हनुमान को भव्य मूर्ति है।[1] उक्त मूर्ति में हनुमान का बायाँ पैर उठा हुआ है, जिससे ज्ञात होता है कि ये कहीं जाने को मुद्रा में हैं।

प्राय: 11 वीं शताब्दी की एक मूर्ति मध्य भारत के जिला जबलपुर के कूदन गाँवमें स्थित है।[2] इसमें हनुमान जी आभंग मुद्रा में खड़े हैं, उनका बायाँ हाथ व्याख्यान मुद्रा में है।

इसी युग की एक अन्य हनुमान का विग्रह मध्यप्रदेश के नौगाँव जिले के धुबेला के राजकीय संग्रहालय में है।[3]

एक हनुमान का विग्रह उज्जैन के राजकीय संग्रहालय में है। इसका ऊपर का भाग नहीं है, केवल हनुमान जी के दो पैर दृष्टिगोचर होते है। लंका बांया पैर उठाये और दाहिना मोड़े हुए हैं यह एक हाथ पृथ्वी पर टेके सुखासन पर बैठी हुई है, यह अपना मस्तक घुटने पर टिकाये हुए हैं। लंका यहाँ हनुमान द्वारा विजित प्रदर्शित की गयी है।[4]

1- आर्कआलाजिकल सर्वे आफ इन्डिया द्वारा प्राप्त।
2- के0डी0 बाजपेयी द्वारा प्राप्त।
3- डाइरेक्टर, स्टेट म्यूजियम धुबेला द्वारा प्राप्त, म्यूजियम नं0 9065
4- आन्नुअल आडमिनिस्ट्रेशन रिपोर्ट आफ द आर्कआलाजिकल डिपार्टमेन्ट ग्वालियर स्टेट- 1934-35 [1938] प्लेट- 7सी फलक-28

मध्य प्रदेश के माण्डसोर जनपद के मानपुर में स्थित क्षत्री संग्रहालय में दो हनुमान के विग्रह प्राप्त हुए हैं।[1] ये प्रायः 15 वीं शताब्दी की है।

पंचमुखी हनुमान-

मध्य प्रदेश में ही एक पंचमुखी हनुमान का मन्दिर प्राप्त हुआ है। यह पंचमुखी हनुमत्कवच के वर्णनानुसार ही है। मूर्ति की बायी ओर का मुख कपि का है, दक्षिण ओर का मुख नरसिंह का है, पश्चिम का मुख गरुड़ का है, और उत्तर का मुख वाराह का है। यह पंचमुखी हनुमान की मूर्ति भाव नगर राज्य से 1934 ई0 में प्राप्त हुई थी। यह मूर्ति तलाजा के श्मशान पर था।[2]

नीलगंगा के हनुमान-

यह स्थान उज्जैन रेलवे स्टेशन के दक्षिण में स्थित है। यहाँ एक सुप्रसिद्ध तालाब है। स्कन्द पुराण के अवन्ती खण्ड के अनुसार माता अंजनी के साथ श्री हनुमान जी ने यहाँ तप किया था। पुण्य सलिला भागीरथी गंगा जब भक्तों के पातकों का प्रक्षालन करते-करते नील वर्ण की तब ब्रह्मदेव की आज्ञा से वे शिप्रा में आकर गुप्त रूप से मिली और इस स्थान पर प्रकट हुई थी, तभी से इसको "नीलगंगा" कहा जाता है। यहाँ के मुख्य तीर्थाधिपति श्री हनुमान जी ही हैं।[3]

1- संग्रहाध्यक्ष क्षेत्रीय म्यूजियम मानपुर, जि- मन्दसौर, मध्य प्रदेश।

2- ए0एस0गर्दे - ए रेअर इमेज ऑफ हनुमान, इन इट पंचमुख अंजनेय- न्यू इण्डियन आण्टिक्वेरी वा02 1939-40 पृ0 113-114 चित्र वाट्सन म्यूजियम के सेक्रेटरी की कृपा से प्राप्त।

3- कल्याण- हनुमानांक- मध्य प्रदेश के हनुमान मन्दिर-श्री नाथूरामजी शुक्ल

धार-

भारत के महान विद्यानुरागी सम्राट भोज की धारा नगरी को आजकल धार कहा जाता है। इन्दौर से 13 मील पर यहाँ स्टेशन स्थित है। धार नगर में कुम्हार बावड़ी के सिद्धेश्वर हनुमान का मन्दिर सुप्रसिद्ध है। यहाँ हनुमान जी उत्तराभिमुख हैं, जो प्रभु श्री राम का कार्य सम्पन्न कर लौट रहे हैं। यह स्थान एक सिद्धपीठ है। भक्तों का विश्वास है कि यहाँ मनःकामना सहज ही पूर्ण होती है।

टीकमगढ़-

टीकमगढ़ मध्य प्रदेश का प्रसिद्ध स्थान है। कचहरी के पास "हनुमान चालीसा" के नाम से मीनार के आकार का एक मन्दिर स्थित है। इस मन्दिर को टीकमगढ़ नरेश महाराज श्री वीर सिंह ने बनवाया था। यह लगभग 40 फुट ऊँचा है। इसके अन्दर करीब ढाई सौ चक्करदार सीढ़ियाँ हैं। ऊपर श्री हनुमान जी की सुन्दर प्रतिमा है। मन्दिर की कलाकृति आश्चर्य जनक है।

दतिया-

झाँसी से लगभग 16 मील दूर पर दतिया स्टेशन है। इसी के पास ही उडनू टौरिया नामक एक ऊँचा स्थान है। उस टौरिया पर श्री हनुमान मन्दिर है। टौरिया को हनुमान किला भी कहते हैं। मन्दिर में जाने के लिए लगभग 360 सीढ़ियाँ चढ़नी पड़ती है।

इसके अतिरिक्त मध्य प्रदेश में अन्य मन्दिर भी हैं।

गुजरात के प्रमुख हनुमान मन्दिर-

अहमदाबाद भाव नगर रेलवे लाइन पर स्थित बोटाद जंक्शन से सारंग पुर लगभग 12 मील दूर है। यहाँ एक प्रसिद्ध मारुति प्रतिमा है। महायोगिराज गोपाला नन्द स्वामी ने इस शिलामूर्ति की प्रतिष्ठा वि0संवत 1905 आश्विन कृष्णा पंचमी के दिन की थी। प्रतिष्ठा के समय मूर्ति में श्री हनुमान का आवेश हुआ, और वह हिलने लगी। तभी से इन कष्ट भंजन श्री हनुमान जी की सर्वत्र मान्यता हो गयी, तथा अब भी सहस्त्रों हिन्दू मुसलमान इस सिद्ध विग्रह के चमत्कारों से चकित होते रहते हैं।

अहमदाबाद-

अहमदाबाद कैंट विभाग में साबरमती के तट पर विशाल हनुमान मन्दिर है। यह लगभग 200 वर्ष पुराना प्रतीत होता है। इसमें स्थित हनुमान जी का विग्रह सुन्दर एवं आकर्षक हैं। यह प्राचीन मूर्ति बहुत ही भव्य है।

हनुमान धारा-

सौराष्ट्र के जूनागढ़ के समीप गिरिनार, पर्वत के ऊपर वायव्य कोण में 1500 सीढ़ियाँ चढ़ने पर एक ऐतिहासिक प्राचीन स्थल है। यहाँ पर एक विशाल कुण्ड भी है। पौराणिक मान्यता है कि इस कुण्ड का सम्पूर्ण जल किनारे पर स्थित हनुमान जी के मुख से निकलता है। एतदर्थ इस स्थान का नाम हनुमान धारा पड़ा।

भुरखिया-

सौराष्ट्र के लाठी शहर से 6 मील पर प्रसिद्ध भुरखिया हनुमान जी का मन्दिर है। जनश्रुति है कि प्राचीन काल में रामानन्द सम्प्रदाय के प्रभावशाली महंत श्री रघुवीर दास जी के शिष्यदामोदर दास जी को स्वप्न में श्री हनुमान जी ने आदेश दिया कि चैत्र शुक्ल पूर्णिमा को आधी रात के समय में सभाड़ तथा लाठी शहर के बीच निर्जन बन में प्रकट होऊँगा। महात्मा दामोदर दास ने अपने पूज्य गुरुदेव से आज्ञा लेकर पूजन सामग्री सहित कुछ लोगों के साथ पैदल चल पड़े। वि0सं0 1642 मंगलवार चैत्र शुक्ल पूर्णिमा को अर्द्धरात्रि के समय उस जन शून्य जंगल में बड़े जोर से धमाके के साथ उनका पूजन अर्चन किया। तभी से इनका नाम "भुरखिया" पड़ागया, जिसका अर्थ है भूमि की रक्षा करने वाला।

सभी प्रकार का मन: कामनाएँ पूर्ण करने वाले होने के कारण इस क्षेत्र में भुरखिया हनुमान जी की बड़ी प्रसिद्ध हैं। इसके अतिरिक्त अन्य बहुत से प्रसिद्ध हनुमान मन्दिर भी गुजरात में हैं।

राजस्थान के प्रसिद्ध हनुमान मन्दिर-

सवाई माधोपुर-

आज से लगभग ढाई सौ वर्ष पूर्व एक कुँए का निर्माण करते समय एक हनुमान जी की दिव्य प्रतिमा मिली। कुँए के निकट ही हनुमान जी की प्रतिमा को प्रतिष्ठित कर दिया गया। सन् 1950 ई0 में तो यहाँ एक भव्य

मन्दिर बन गया।

श्री बाला जी-(बड़ीगाँव)-

यहाँ का यह सुविख्यात ऐतिहासिक श्री हनुमान मन्दिर नागौर बीकानेर रेलवे लाइन पर स्थित श्री बाला जी रेलवे स्टेशन से तीन फर्लांग पश्चिम की ओर एक पहाड़ी पर स्थित है। यह मन्दिर ऐतिहासिक दृष्टि से प्रायः साढ़े तीन सौ वर्ष प्राचीन माना जाता है। आज से लगभग साढ़े तीन सौ वर्ष पूर्व एक महान तपस्वी संत श्री 108 शुकदेव पुरी जी महाराज हुए थे। वे उच्चकोटि के भक्त थे। डूँगरी में स्थित हनुमान जी की अति प्राचीन मूर्ति है।

बंग-

जिला नागौर के डेगाना तहसील में यह प्रसिद्ध स्थान है। यहाँ हनुमान जी का विशाल मन्दिर है, जिसमें हनुमान जी की तीन मूर्तियाँ स्थापित है -1- दास हनुमान ,2- वीर हनुमान, 3- भक्त हनुमान।

सालासर-

श्री राम पायक हनुमान जी का यह मन्दिर राजस्थान के चरू जिले में हैं। गाँव का नाम सालासर है। इसलिए सालासर "वाले बाला जी" के नाम से प्रसिद्ध हैं। साला सर बाला जी का मन्दिर लोक विख्यात है, जिसमें श्री बाला जी की भव्य प्रतिमा सोने के सिंहासन पर विराजमान है। सिंहासन के ऊपरी भाग पर श्री राम दरबार है, तथा निचले भाग में श्री राम चरणों में हनुमान जी विराजमान हैं। मन्दिर के चौक में एक जाल का वृक्ष है, जिसमें लोग अपनी मनोकांक्षा पूर्ति हेतु नारियल बांध देते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य भी प्रसिद्ध मन्दिर हैं।

हरियाणा एवं पंजाब के कुछ हनुमान मन्दिर-

सिरसा-

यह स्थल दिल्ली रेवाड़ी भटिण्डा लाइन पर उत्तरी रेलवे स्टेशन के समीप में स्थित है। यहाँ के आशीर्मुखी हनुमान जी बड़े विख्यात हैं। इस मन्दिर में हनुमान जी की प्राण प्रतिष्ठा सं0 2026 वि कार्तिक शु0 ।। को समारोह के साथ सम्पन्न किया गया।

पटियाला-

इस नगर के समीप में सरहिंदी दरवाजे के निकट महावीर जी का प्राचीन मन्दिर है। पंजाब में हनुमान भक्तों का एक वर्ग है। जो महावीर दल के नाम से अभिहित है।[1]

फिरोजपुर-

यहाँ स्टेशन के समीप ही एक हनुमान जी का विशाल मन्दिर है जो देवी सहाय हनुमान मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध है। यह मन्दिर लगभग 150 वर्ष प्राचीन है।

अन्य मन्दिर-

इसके अतिरिक्त अन्य मन्दिरों में भी हनुमान की मूर्तियाँ प्राप्त होती हैं।

हनुमान की मूर्तियाँ होय सला कला की मैसूर के सोमनाथपुर के मंदिर में तथा हैलविड के मंदिरों पर अंकित है, ये प्राय: 17वीं शताब्दी की है। इन दोनों स्थानों पर मंदिर के चारों ओर भागवत तथा राम कथा अंकित है। राम कथा के सन्दर्भ में हनुमान के भी दर्शन होते हैं।

सोमनाथ पुरम में और दृश्यों केअतिरिक्त हनुमान के कन्धे पर राम बैठे हुए राक्षसों से लड़ रहे हैं। कमखाड़ा के मन्दिर में हनुमान को शिव के साथ दर्शाया गया है।[1]

मुर्शिदाबाद के वारानगर के चार बंगला मंदिर के द्वारपर अंकित एक फलक पर हनुमान पुष्पक विमान के आग्र भरत को सूचना देने को जाते हुए दिखाये गए हैं। वे आकाश मार्ग से जा रहे हैं और भरत के यहाँ पहुँचकर हाथ जोड़कर द्वारपाल से संदेश कहला रहे हैं।[2]

दूसरी ओर इसी मंदिर के और फलक पर राम को हनुमान अपने कंधे पर लिए हुए हैं,और राम धनुष बाण से लड़ रहे हैं जैसे वाल्मीकि रामायण में वर्णन है।[3]

अथैव मनु संक्रम्य हनुमान्वाक्यम ब्रवीत।

मत पृष्ठे समारुह्य राक्षसं शास्त्रु मर्हसि।।

इसके अतिरिक्त विजया नगर के राज्य सिंहासन के चबूतरे के चारों ओर कुछ फलक बने हुए है,जिन पर राम चरित्र अंकित है,जिस पर कुछ कपि फल खाते हुए दिखाए गये हैं। यह हनुमान का अंगद इत्यादि के साथ मधुवन के फल खाने का चित्रण है। यह चित्रण 16वीं शताब्दी का है।[4] त्रिवेन्द्रम के पद्म नाभक के मंदिर के भीतर फाटक के पास ही हनुमान को काले पत्थर

1- ओ0सी0 गांगाली,ए0 गोस्वामी- इण्डियन टेल कोटा आर्ट,रूपा एण्ड कं0 5 बंकिम चटर्जी स्ट्रीट ,कलकत्ता 12,1959 चित्र 26

2- उपर्युक्त -चित्र 33

3- वा0रा0 युद्धकाण्ड -59-125 गीताप्रेस गोरखपुर संस्करण।

4- जिम्मर- द स्टोरी ऑफ राम-प्लेट- 45

की बड़ी मूर्ति है, जिसमें हनुमान के बायें हाथ में कमल है, और दक्षिण हाथ उठा हुआ है।

महाराष्ट्र के प्रमुख मन्दिर- पूना-

1- हुल्या मारुति-

श्री हुल्या मारुति का मन्दिर संभवतः 350 वर्ष पूर्व का है। हुल्या मारुति की मूर्ति एक काले पत्थर पर उत्कीर्ण है। जनश्रुति है कि इस मूर्ति की स्थापना श्री समर्थ राम दास स्वामी ने की थी। सभामंडप में गर्भागार के द्वार के ठीक सामने एक मध्यम आकार का पीतल का घंटा टंगा है। उसके ऊपर शक संवत 1700 खुदा हुआ है।

सांगली-

सांगली रेलवे स्टेशन से दो मील की दूरी पर कृष्णा नदी के समीप विष्णु घाट पर हनुमान जी का एक मन्दिर है, इसका नाम तपोवन हनुमान जी मन्दिर है, यह मन्दिर सम्भवतः 305 वर्ष पूर्व का प्रतीत होता है। इसका द्वार पूर्वाभिमुख है और सामने कृष्णा का प्रवाह है। इस मूर्ति की स्थापना श्री राम दास पंचायतन के श्री आनन्द मूर्ति जी ने 1991 शकाब्द के भाद्र पक्ष मास में की थी। श्री राम दास पंचायतन में 1- श्री समर्थ राम दास स्वामी 2- जय राम स्वामी 3- रंग नाथ स्वामी 4- केशव स्वामी और 5- आनन्द मूर्ति थे।

अम्बाझरी-

यह स्थान नागपुर से लगभग सात मील की दूरी पर स्थित है। इसके निकट पहाड़ी पर एक बहुत पुराना और विशाल हनुमान मन्दिर है। मन्दिर

मे श्री हनुमान जी की मूर्ति पाँच फुट ऊँची है। ये हनुमान जी भावुक जनों के मनों कामनाओं को पूर्ण करने वाले हैं।

राम पायली-

भण्डारा जनपद में तुम सरवारा शिवनी मार्ग पर चनई नदी के तट पर भगवान श्री राम का मन्दिर है,उसके समीप ही हनुमान जी का अति प्राचीन मन्दिर है। जनश्रुति है कि इसी भू भाग में श्री राम चन्द्र जी ने शबरी को दर्शन दिया था। भगवान राम के पाद स्पर्श से पुनीत होने के कारण यह ग्राम पूर्व "राम पदावली" नाम से प्रसिद्ध था। यहाँ की हनुमान मूर्ति अत्यन्त प्रभावशाली है।

बेलगाँव-

नगर के मध्य भाग में मारुति गली में स्थित श्री हनुमान जी का मन्दिर बहुत ही प्रसिद्ध है। यह मन्दिर सम्भवतः 300 से 350 वर्ष पूर्व का है।

नासिक-

नासिक पंचवटी में गोदावरी के घाट पर अहल्याकुण्ड और शार्ङ्पाणि-कुण्ड है। इन कुण्डों के दक्षिण भाग की खुली जगह में हनुमान जी का विशाल मन्दिर है। कतिपय विद्वानों का मत है कि यह मूर्ति अग्नि देव की है।

मोदुँगा के हनुमान जी-

दादर वडाला-बस डिपो बम्बई 31 पर स्थित यह प्रसिद्ध मन्दिर अल्बेला हनुमान मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध है। संभवतः यह मन्दिर तीन सौ वर्ष

प्राचीन है। यह मूर्ति आकर्षक,भव्य एवं विलक्षण प्रतीत होती है। हिन्दुओं के अतिरिक्त मुसलमान, सिख ईसाई भी इनकी आराधना करते हुए देखे जाते हैं।[1]

हनुमान टेकरी-

शान्ता राम सरोवर के समक्ष (वेस्टर्न एक्सप्रेस हाई वे मलाड बम्बई,ईस्ट 64) यह स्थान संकट मोचन विजय हनुमान टेकरी के नाम से प्रसिद्ध है। इ मन्दिर की स्थापना 1942 ई0 के लगभग हुई। यहाँ का वातावरण शान्त, एवं आनन्ददायक है। इसके अतिरिक्त बम्बई में पन्चमुखी हनुमान, चिंचौली हनुमान आदि कई अन्य प्रसिद्ध मन्दिर भी हैं।[2]

समर्थ श्री राम दास द्वारा स्थापित एकादश श्री हनुमान मन्दिर-

समर्थ श्री राम दास स्वामी ने अपने जीवन काल में सम्पूर्ण भारत वर्ष की पद यात्रा की थीं। उन्होंने अपने द्वादश वर्षीय यात्रावधि में मन्दिरों की स्थापना करते हुए विधर्मी शासन के दमन से हत प्रभ तथा निराश हिन्दू जनता को श्री हनुमान जी उपासना में लगाकर उसमें शौर्य सम्पादन की भूमिका प्रशस्त कर दी। स्थल-स्थल पर हनुमान मन्दिरों एवं मठों की स्थापना की। अपने परिभ्रमण काल में समर्थ श्री राम दास जी ने अयोध्या से लेकर रामेश्वरम तक अनेक श्री हनुमान मन्दिरों की स्थपना की है, तथापि महाराष्ट्र के अन्तर्गत स्थापित मन्दिरों की संख्या बहुत अधिक है, उनमें से प्रमुख एकादश श्री हनुमान

1- उपर्युक्त पृ0 457.
2- कल्याण हनुमानांक- पृ0 457

मन्दिर विशेष प्रसिद्ध हैं। 1- मारुति,शहापुर ,2- श्री मारुति-मसूर,3-श्री प्रताप मारुति-चाफल,4- श्री दास-मारुति चाफल, 5- श्री मारुति पारगाँव, 6- श्री मारुति-उंब्रज 7-श्री मारुति शिराले,8- श्री मारुति-मन पाडले, 9- श्री मारुति-मझगाँव ,10- श्री मारुति-शिंगड़वाडी,11-श्री मारुति-बहे बोरगाँव। ये सभी श्री हनुमान मन्दिर महाराष्ट्र के सतारा जिले में है। इन मन्दिरों की स्थापना शक 1567 से लेकर 1571 तक की कालावधि में हुई है।[1]

इसके अतिरिक्त भारत में अन्य बहुत से हनुमान के मन्दिर हैं। उक्त अध्याय में भारत के प्रमुख मन्दिरों को ही प्रस्तुत किया गया है। भारत के अतिरिक्त जावा, थाईलैण्ड, कम्बोडिया और लाओस में श्री हनुमान जी के मन्दिर प्राप्त हुए हैं। विदेशियों के भी अन्तःकरण में हनुमान के प्रति दृढ़ आस्था है।

तदुपरांत हनुमान के पूजन, उपासना, तथा उपवास आदि के सन्दर्भ में कतिपय सन्दर्भ प्रस्तुत किया जा रहा है।

पूजन की विधि उपासना उपवास-

हनुमान जी की उपासना, पूजन, उपवास आदि करने से भक्तों को मनो वांछित फल प्राप्त होते हैं। एतदर्थ हनुमान जी की उपासना आज भी समीचीन मानी जा सकती है। जिस प्रकार ध्यान, धारणा और समाधि के प्रभाव

1- उपर्युक्त- पृ0 457

से रुद्र आदि अन्य देवों का सम्मान होता है,उसी प्रकार हनुमान जी के पूजन, उपासना से सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण होते हैं। हनुमान जी अखण्ड ब्रह्मचर्य के पालन से सबसे अधिक पूजित और सर्ववन्द्य हुए हैं,एतदर्थ इनकी उपासना सर्वत्र होती है। हनुमान जी की उपासना से ही लोकोत्तर फल प्राप्त हो सकता है। उपासक लोक हनुमान जी को उनके विभिन्न रूपों को आधार बना कर पूजन करते हुए देखे जा सकते हैं। वस्तुतः भक्तगण आपदिन्धविनाशार्थ वीर रूप की और मंगल लाभार्थ दास रूप की आराधना करते हैं। वास्तव में हनुमान जी के महत कार्यों में सर्वोत्कृष्ट वीरत्व और स्वामी की सेवा भक्तों को अभीष्ट सिद्धि आदि में दासत्व रूप प्रतिदर्शित होता है। मन्त्र महोदधि,मन्त्र महार्णव,और मन्त्र संग्रह आदि में इनके प्रत्यक्ष होने के उपाय भी बतलाये गये हैं।

पूजन की विधि उपवास-

भक्ताधिराज श्री हनुमान के पूजन एवं उपासना में पूजा,जप, पाठ और ध्वजा पताकादि का होना परमावश्यक है। इसके अतिरिक्त भक्ति, श्रद्धा ,समर्पण की भावना से ओत प्रोत होना चाहिए। हनुमान जी की उपासना के सन्दर्भ में षोडशोपचार पूजन का भी उल्लेख प्राप्त होता है,जिसमें कि 1- आवाहन,2-आसन,3-पाद्य,4- अर्घ्य,5- आचमन,6-स्नान,7-वस्त्र(यज्ञोपवीत) 8- गन्ध,9-अक्षत 10-पुष्प,11-धूप,12-दीप,13-नैवेद्य,14-पुनराचमन,15-ताम्बूल 16- दक्षिणा-प्रदक्षिणा नीराजन आदि करना चाहिए।

स्नान शुद्ध जल से करना चाहिए। हनुमान जी को तेल में मिले हुए सिन्दूर को लेपन करने का विधान है। उपासकों को निर्मल मन से हनुमान जी

की उपासना करना चाहिए। हनुमान जी के सर्वांग में सिन्दूर का लेपन करना, अत्याकर्षक है। मन्त्रशास्त्रों में भी इसकाउल्लेख प्राप्त होता है।

गन्धादिक में शुद्ध केसर के साथ ही घिसे हुए मलयागिरि चन्दन का उपयोग करने का विधान है।[1]

पुष्पों में कमल, केवड़ा, हजारा, सूर्याभिमुख-सूर्यमुखी आदि का अर्पण करना चाहिए। स्त्रीवाची पुष्पों रातरानी, केतकी, बेला आदि का अर्पण हनुमत आराधना में निषिद्ध माना जाता है। नैवेद्य में गुड़, नारियल का गोला, मोदक घी और गेहूँ की रोटी का चूरमा आदि अर्पण करने का विधान है।

नीराजन घी में भीगी हुई पाँच दीप बत्तियों का प्रयोग करना चाहिए। विशेष या महापूजा में 5, 21, 50 या 108 बत्तियों का प्रयोग करना चाहिए।

पूजनोपरांत उपास्य देव का जप करनाचाहिए उसके तीन प्रकार हैं- वाचिक, उपांशु और मानसिक।

त्रिकालदर्शी तत्वज्ञ महर्षियों एवं मनीषियों ने आराध्य देवों के विज्ञानमय ध्यान नियत किये हैं। हनुमान जी के अनेक ध्यान हैं, क्योंकि ये अजर अमर हैं, ब्रह्म स्वरूप माने गये हैं। एतदर्थ सकाम उपासना में कामना के अनुकूल स्वरूप का तथा निष्काम उपासना में व्यापक स्वरूप का ध्यान करना चाहिए। तत्पश्चात् हनुमान जी के विभिन्न आकर्षक स्वरूपों का ध्यान करते रहना चाहिए। इनके ध्यान के सन्दर्भ में श्लोक प्राप्त होता है।

1- उपर्युक्त -पृ0 487

उद्यन्मार्तण्डकोटि प्रकट रुचियुतं चारुवीरासनस्थं
मौञ्जीय ज्ञोपवीताभरण रुचिर शिखाशोभित कुण्डलांगम्।।
भक्तानामिष्टदं तं प्रणत मुनि जनं वेदनाद प्रमोदं
ध्यायेद्देवं विधेयं प्लवग कुलपतिं गोष्पदी भूत वार्धिम्।।

उदय होते हुए करोड़ों सूर्य जैसे तेजस्वी, मनोरम, वीरासन में स्थित, मूँज की मेखला तथा यज्ञोपवीत धारण करने वाले लालवर्ण की सुन्दर शिखावाले, कुण्डलों से शोभित भक्तों को अभीष्ट फल देने वाले मुनियों, द्वारा वन्दित, वेदनाद से प्रहर्षित, वानर कुल के स्वामी और समुद्र को गोपद के समान लाँघ जाने वाले देवता रूप श्री हनुमान जी का ध्यान सर्वोत्कृष्ट प्रतीत होता है।

तदुपरान्त हनुमान जी की उपासना करनी चाहिए। उपासना पूजन, आदि करने के पश्चात सम्पुटित पाठ के कुछ मन्त्र प्रस्तुत किये जा रहे हैं-

1- रामायणादि में किसी भी श्लोक के "रां रामाय नमः" का सम्पुट लगाने से हनुमान जी प्रसन्न होते हैं।

2- ॐ हनुमते नमः से सर्व सिद्धि होती है।

3- अञ्जनागर्भ सम्भूतः कपीन्द्र सचिवोत्तम।
राम प्रिय नमस्तुभ्यं हनुमन् रक्ष सर्वदा।।

हे अञ्जना के गर्भ से उत्पन्न हुए, सुग्रीव के श्रेष्ठ मंत्री, श्री राम के प्यारे हनुमान आपको प्रणाम है। आप मेरी सदा रक्षा करें। उक्त मन्त्रोच्चारण से अभीष्ट लाभ प्राप्त होता है।

4- मर्कटेश महोत्साह सर्व शोक विनाशन।
शत्रून संहर मां रक्ष श्रियं दापय मे प्रभो।।

हे वानरा धीश, महान उत्साही, सब प्रकार के शोक का नाश करने वाले प्रभो मेरे शत्रुओं का नाश कर दो, मेरी रक्षा करो, लक्ष्मी प्रदान करो।

5- जयत्यति बलो रामो लक्ष्मणश्च महाबलः।

राजा जयति सुग्रीवो राघवेणाभिपालितः।।

x x x x

न रावण सहस्त्रं मे युद्धे प्रतिबलं भवेत।

शिला भिश्च प्रहरतः पादपैश्च सहस्त्रशः।।[1]

उक्त मन्त्रोच्चारण से राष्ट्र विप्लव, महामारी भय, महाशत्रु के आक्रमण, अनेक प्रकार की असह्य आपत्तियाँ और देशोपद्रवादि शान्त हो जाते हैं।

6- सदैव नित्यं परितप्यमान

स्त्वामेव सीतेत्यभिभाषमाणः।

धृत व्रतो राज सुतो महात्मा

तवैव लाभाय कृत प्रयत्नः।।[2]

देवि राज कुमार महात्मा श्री राम आपके लिए सदा दुःखी रहते हैं, "सीता-सीता, कहकर आपकी ही रट लगाये हैं तथा उत्तम व्रत का पालन करते हुए वे आपकी ही प्राप्ति के प्रयत्न में लगे हुए हैं।

उक्त मन्त्रोच्चारण से उद्वाह या स्त्री प्राप्त होती है। सम्पुटित पाठ करने से मनोवांछित फल की प्राप्ति होती है। निर्मल मन से हनुमान जी की

1- वा०रा०-5/42/ 33-35
2- वा०रा०-5/36/ 46

उपासना करनी चाहिए। भक्ताधिराज श्री हनुमान जी की उपासना से ही प्राणिमात्र के दैहिक,दैविक,भौतिक ताप से निवृत्ति प्राप्त हो सकती है। उक्त प्रसंग में हनुमान जी की उपासना और पूजन,पाठ आदि के सन्दर्भ में प्रकाश डाला गया है। तदुपरान्त हनुमान उपासना के मन्त्रों तथा उनके प्रभावों के सन्दर्भ में प्रकाश डाला जा रहा है।

हनुमान भक्ति के मन्त्र तथा प्रभाव-

हनुमान भक्ति के बहुत से मन्त्र प्राप्त होते हैं। "हनुमदु पासना" में हनुमान के सन्दर्भ में कुछ मन्त्रों का वर्णन आता है। हनुमदुपासना के अतिरिक्त शारदातिलक ,अर्धोतीनिका,प्रपन्चसार,नारद पुराण के भागवत तन्त्र,आनन्द रामायण,सुदर्शन संहिता और रुद्रयामल में भी हनुमान मन्त्रों के सन्दर्भ प्राप्त होते हैं। नारद पुराण की सामग्री सर्वोत्कृष्ट प्रतीत होती है,एतदर्थ हनुमान के सन्दर्भ में उल्लिखित मन्त्रों का उल्लेख किया जा रहा है-

हनुमान जी के मन्त्रों के स्मरण चिन्तन,एवं मनन से भक्तों को अभीष्ट प्राप्त होता है। इनकी आराधना से मनुष्य हनुमान जी के सदृश आचरण करने वाला बन जाता है। हनुमान जी का यह मन्त्र अभीष्ट फलदायक सिद्ध हुआ है- "ह्रौं हस्फ्रें ख्फ्रें हस्त्रौं हस्ख्फ्रें हसौं हनुमते नमः यह बारह अक्षरों वाला महामन्त्र राज कहा जाता है।

उक्त मन्त्र के श्री राम चन्द्र जी ऋषि है,और यह जगती छन्द है। इसके आराध्य परम भागवत श्री हनुमान जी है। इसमें "हसौं" बीज है,और "हस्फ्रें,शक्ति है। उपर्युक्त छः बीजों से षडङ्गन्यास करना चाहिए।

तदुपरांत भक्ताधिराज श्री हनुमान जी का इस प्रकार ध्यान करना चाहिए-

उद्यत्कोट्यर्क संकाशं जगत्प्रक्षोभकारकम्।

श्री रामांघ्रि ध्यान निष्ठं सुग्रीव प्रमुखार्चितम्।।

वित्रा सयन्तं नादेन राक्षसान् मारुतिं भजेत्।[1]

उक्त मन्त्र का बारह हजार बार जप करना चाहिए। तत्पश्चात् हनुमान जी का आवाहन करना चाहिए फिर हनुमान जी का अष्ट दल कमल के आठ दलों में आठ नामों की आराधना करें- श्री राम भक्त, महातेजा, कपिराज, महाबल, द्रोणादिहारक, मेरु पीठार्चन कारक, दक्षिण आभास्कर, तथा सर्वविघ्न विनाशक। तदुपरान्त समस्त लोकपालों की तथा उनके वज्र आदि आयुधों की पूजा करना चाहिए। तत्पश्चात् उक्त मन्त्र की आराधना करना चाहिए, जो समस्त अभीष्ट मनोरथों का प्रदाता है-

"नमो भगवते आन्जनेयाय महाबलाय स्वाहा"

उक्त मन्त्र 18 अक्षरों का है। इसके आराध्य ऋषि, अनुष्टुप, छन्द, परम भागवत हनुमान देवता, "ह" बीज और स्वाहा शक्ति है, ऐसा मनीषियों का कथन है। "आन्जनेयाय नमः:" का हृदय में रुद्रमूर्तये नमः का शिर में "वायुपुत्रायनमः नमः"। का शिखा में, अग्नि गर्भाय नमः का कवच में "राम दूताय नमः" का नेत्रों में तथा ब्रह्मास्त्राय नमः का अस्त्र स्थान में न्यास करना चाहिए।

हं हनुमते रुद्रात्मकाय हुं फट् यह बारह अक्षरों का महामन्त्र है, जो अणिमा आदि अष्ट सिद्धियों का देने वाला है। इसके श्री रामचन्द्र जी ऋषि,

जगती छन्द,श्री हनुमान जी देवता,हं बीज और हुम् शक्ति कही गयी है। तदुपरान्त ध्यान करने की प्रक्रिया को बताया गया है-

महाशैलं समुत्पाट्य धावन्तं रावणं प्रति।
लाक्षारक्ताक्षं रौद्रं कालान्त कथ गोपमम्।।

× × × ×

तिष्ठ तिष्ठ रणे दुष्टं सृजन्तं घोर निः स्वनम्।
शैव रूपिणमभ्यर्च्य ध्यात्वा लक्षं जपेन्मनुम्।।[1]

इस प्रकार साधकों को अनुष्ठान करने चाहिए "हं पवन नन्दनाय स्वाहा" यह दस अक्षर का मन्त्र है,जो समस्त कामनाओं को प्रदान करने वाला है। इसके ऋषि ,देवता आदि पूर्ववत् ही हैं। षडङन्यास भी पूर्ववत् करना चाहिए, तदुपरान्त इस प्रकार ध्यान करना चाहिए-

ध्यायेद्रणे हनुमन्तं सूर्य कोटि सम प्रभम्।
धावतं रावणं जेतुं दृष्टवा सत्वर मुत्थितम्।।

× × × ×

हाहाकारैः सदर्पैश्च कम्पयन्तं जगत्त्रयम्।
आब्रह्माण्डं समाव्याप्य कृत्वा भीमं कलेवरम्।।[2]

ध्यानो परान्त विद्वान साधकों को एक लाख जप और पूर्ववत् दशांश हवन करना चाहिए। इस मन्त्र का भी विधिवत पूजन पूर्ववत ही होगा। इस प्रकार मन्त्र सिद्ध होने पर मन्त्रोपासक अपना हित साधन कर सकता है।

1- नारद पुराण- 74/122-125
2- उपर्युक्त- 74/145-147

इस श्रेष्ठ मन्त्र का साधन भी गोपनीय रहस्य ही है। उक्त मन्त्र के स्मरण,जप, चिन्तन से हनुमान जी का प्रत्यक्ष दर्शन भी प्राप्त होता है।

"ॐ यों यों हनुमन्त फल फलित धग्धगिति

आयुराष परुडाह"यह पच्चीस अक्षरों का मन्त्र है। इसके ऋषि देवता आदि पूर्ववत ही है। तदुपरांत अन्य मन्त्र भी प्राप्त होते हैं-

"ॐ नमो भगवते आन्जनेयाय अमुकस्य श्रृखलां।

त्रोटय त्रोटय बन्धमोक्षं कुरु कुरु स्वाहा।।

उक्त मन्त्र के ऋषि ईश्वर,अनुष्टुप छन्द,श्रृगला मोचक पवनपुत्र श्री मान हनुमान देवता ,हं बीज और स्वाहा शक्ति है। बन्धन से मुक्ति के लिए इसका विनियोग किया जाता है। छः दीर्घ स्वर तथा रेफ युक्त बीज मन्त्र से षडगन्यास करें, यथा- हां हृदयाय नमः हीं शिरसे स्वाहा इत्यादि, तदुपरांत इस प्रकार ध्यान करना चाहिए।

वामे शैलं वैरि भिदं विशुद्ध टंक मन्यतः ।

दधान स्वर्ण वर्ण च ध्यायेत कुण्डलिनं हरिम।।[1]

इस प्रकार ध्यान पूर्वक एक लाख जप करना चाहिए। अन्यमन्त्र में भी हनुमान जी का वर्णन आता है,जोकि अभीष्ट फल प्रदान करने वाला है-

"ॐ नमों हनुमते मम मदन क्षोभं संहर संहर

आत्म तत्वं प्रकाशय प्रकाशय हुं फट् स्वाहा"

यह साढ़े छत्तीस अक्षरों का मंत्र हैं। इसके वशिष्ठ ऋषि, अनुष्टुप छन्द और परम भागवत हनुमान जी देवता हैं। उक्त मन्त्राक्षरों द्वारा

षडगन्यास करके कपीश्वर हनुमान जी का इस प्रकार ध्यान करना चाहिए-

जानुस्थ वाम बाहुं च ज्ञान मुद्रा परं हृदि।
अध्यात्म चित्त मासीनं कदली वन मध्यगम।।
बालार्ककोटि प्रतिमं ध्यायेज्ज्ञान प्रदंहरिम।।[1]

इस मन्त्र के स्मरण चिन्तन, एवंजप से मन्त्रोपासक या साधक तत्वज्ञान प्राप्त कर लेता है। तदुपरांत भूत भगाने वाले सर्वोत्कृष्ट मन्त्र को वर्णित किया जा रहा है-

ॐ श्री महाअञ्जनाय पवनपुत्रा वेशया वेशय ॐ श्री हनुमते फट्"।

यह पच्चीसअक्षर का मन्त्र है। इस मन्त्र के ब्रह्मा, ऋषि गायत्री छन्द हनुमान देवता, श्री बीज और फट्शक्ति कही गयी है। छः दीर्घ स्वरों में युक्त बीज द्वारा षडगन्यास करने का प्राविधान है- ध्यान की प्रक्रिया निम्नवत है-

आञ्जनेयं पाटलास्यं स्वर्णाद्रि सम विग्रहम।
पारिजात तद्रु मूलस्थं चिन्तयेत साधकोत्तमः।[2]

इस प्रकार ध्यान करने का विधान है। उक्त मन्त्रों को गोपनीय रखना चाहिए। भक्ताधिराज श्री हनुमान जी के मन्त्रों में अखंड शक्ति समाहित है। इनमन्त्रों के स्मरण, चिन्तन एवं मनन से शाश्वत सुख की प्राप्ति अवश्यंभावी है। उक्त अध्याय में प्रमुख मन्त्रों के ही सन्दर्भ प्रस्तुत किये गये हैं, फिर भी अन्य मन्त्रों के भी सन्दर्भ प्रस्तुत किये जा रहे हैं। हनुमान जी की उपासना, पूजन एवं आराधना के मूलाश्रय मन्त्र ही हैं। हनुमान जी की उपासना हेतु ब्रह्ममुहूर्त में उठकर हस्तपाद

1- उपर्युक्त-75/95-96
2- उपर्युक्त -75/102

को प्रक्षालित कर स्नान करना चाहिए। तदुपरांत प्रसन्न चित्त होकर चतुर्भुज धारी भगवान विष्णु ब्रह्मा, शंकर आदि का ध्यान करना चाहिए, तथा दोनों चरणों में पुष्पांजलि अर्पित करते हुए मानसिक रूप से प्रणाम करना चाहिए।

प्रणाम मन्त्र-

नमामि सुकूलं शांतं प्रत्यक्ष शिवरूपिणम।

शिरसा योगं पोठस्य मुक्ति कामार्थ सिद्धये।।[1]

तत्पश्चात गुरु को वन्दना करके, प्रसन्न मन से उनकी आज्ञानुसार, अजपा जप का संकल्प करके, गुरु द्वारा निर्दिष्ट मार्ग पर स्वरानुसंधान पूर्वक, समस्त आकांक्षाओं को दूर करके, प्रसन्न मन से अपने कार्य सिद्धि के लिए अनुष्ठान का संकल्प करना चाहिए-

समुद्र वसने देवि पर्वतस्तन मंडले।

विष्णु पत्नी नमस्तुभ्यं पाद स्पर्श क्षमस्वमें।।

इस प्रकार पृथ्वी की वन्दना करके, नदी के तट पर जाकर वैदिक स्नानोपरांत उपासना प्रारम्भ करना चाहिए। मूल रूप निम्नवत है-आत्मतत्वाय स्वाहा[1], मूलं विद्यातत्वाय स्वाहा मूलं शिवतत्वाये स्वाहा, अथवा ऊँ ह्रीं स्वाहा। तदुपरांत आचमन करके, स्नान करके, देश कालानुसार इष्ट देवता का ध्यान करके जल में त्रिकोण बनाकर, तीर्थमंडलान्तर्गत, भुवन भास्कर का आवाहन करके पुनः आचमन करके स्नान करके देश कालानुसार इष्ट देवता का ध्यान करके, जल में त्रिकोण बनाकर, तीर्थमंडलान्तर्गत, भुवन भास्कर का आवाहन करके पुनः आचमन करके तीन प्रकार की स्नान क्रियाओं से निवृत्त होना चाहिए। इस प्रकार

1- हनुमदुपासना विधिः पृ0 गंगा विष्णु कृष्णदास, लक्ष्मी वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस मुम्बई, बृदज्योतिषार्णवधर्म स्कन्धान्तर्गता वर्णित हनुमदु पासना।

2- उपर्युक्त पृ0 20/30

सूर्य का आवाहन करना चाहिए। तत्पश्चात सूर्य भगवान को अर्घ्य देना चाहिए फिर कमल रूपी सूर्य मंडल में हनुमान देवता का आवाहन करना चाहिए-

"ॐ अंजनी जाय विद्महे वायु पुत्राय धीमहि: तन्न: कपि: प्रचोदयात"। तत्पश्चात गायत्रीमन्त्र का जाप करना चाहिए, फिर हनुमान जी की उपासना करना चाहिए। इसके पश्चात हनुमान जी के दिव्य स्वरूप का ध्यान करना चाहिए। इसके पश्चात अपनी मनोकामना पूर्ण हेतु हनुमान की उपासना प्रारम्भ करना चाहिए, फिर हनुमत्त स्तोत्र का स्मरण करना चाहिए।

ॐ अस्य श्री हनुमत-कवच स्तोत्र मंत्रस्य श्री राम चन्द्र ऋषि: श्री हनुमान परमात्मा देवता अनुष्टुप छन्द: मारुतात्मज इति बीजम अंजनी सुनरिति शक्ति: लक्ष्मण प्राण दातेति कीलकम राम दूतायेति अस्त्रम हनुमान देवता इति कवचम पिंगाक्षोऽमित विक्रम इति मन्त्र: श्री राम चन्द्र प्रेरणया राम चन्द्र प्रीत्यर्थं मम सकल कामना सिद्धि यर्थं जपे विनियोग:।

अथ करन्यास-

ह्रां अंजनी सुताय हृदयाय नम: । ॐ ह्रीं रूद्र मूर्त्तये शिरसे स्वाहा। ॐ हूँ राम दूताय शिखाये वषट। ॐ ह्रै अग्नि गर्भाय नेत्र त्र्याय वौषट्। ॐ ह्र: ब्रह्मास्त्र निवारणाय अस्त्राय फट।

अथ अंगन्यास-

ॐ ह्रां अन्जनी सुताय हृदयाय नम:। ॐ ह्रीं रूद्र मूर्त्तये शिरसे स्वाहा। ॐ हूँ राम दूताय शिखाये वषट। ॐ ह्रै अग्नि गर्भाय नेत्र त्र्याय वौषट।

ॐ ध: ब्रह्मास्त्र निवारणाय अस्त्राय फट्। तदुपरांत कुछ सिद्ध मन्त्र प्रस्तुत किये जा रहे हैं-

ॐ नमो भगवते हनुमदा ख्य रुद्राय सर्वदुष्ट जन मुखस्तम्भनं कुरु कुरु ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ठ ठ फट्स्वाहा।[1]

ॐ नमो हनुमते शोभिता ननाय, यशो ऽलंगकृता म, अन्जनी गर्भ सम्भूताय, राम लक्ष्मण मन्द कारकाय, काप सैन्य प्राकाराय पर्वतोत्पाटनाय, सुग्रीव साह्य करणाय परोच्चाटनाय कुमार ब्रह्म चर्याय गम्भीर शब्दोदयाय, ॐ हां हो हूं सर्व दुष्ट ग्रह निवारणाय स्वाहा।।[2]

ॐ नमो हनुमते पवन पुत्राय वैश्वानर मुखाय पाप दृष्टि घोर दृष्टि हनुमदाज्ञा स्फुर ॐ स्वाहा ।।[3]

इसके अतिरिक्त अन्य हनुमान के मन्त्रों का विवरण प्राप्त होती है, जैसे हनुमन्न्हामालामन्त्र, हनुमत सहस्त्र नामावलि हनुमन्यन्त्र चमत्कारानुष्ठान पद्धति आदि। यहाँ पर मात्र हनुमान जी के कतिपय आवश्यक मन्त्रों को ही प्रस्तुत किया गयाहै। हनुमान मन्त्रों के कतिपय प्रभाव द्रष्टव्य है-

1- प्रेत बाधा निवारणार्थ मन्त्र-

ॐ दक्षिण मुखाय पन्च मुख हनुमते, कराल वदनाय नारसिंहाय ॐ हां ही हू ही ह: सकल भूत प्रेतदमनाय स्वाहा।।[4]

उक्त मन्त्र के दस हजार बार जप करने से सिद्ध हो जाता है। मन्त्र जाप के उपरांत हवन करने का प्राविधान है।

1- रुद्रावतार श्री हनुमान- पृ0 राजेश मालवीय आनन्द कुटीर जगतगंज, वाराणसी- पृ0 64-65

2- उपर्युक्त

3- उपर्युक्त

4- पन्चमुखी हनुमत्कवचम-28

2- विष उतारने के लिए मन्त्र-

ॐ पश्चिम मुखाय गरुडा ननाय पन्च मुख हनुमते मं मं मंसकल विष हराय स्वाहा।[2]

3- शत्रु संकट निवारणार्थ मन्त्र-

ॐ पूर्वकपि मुखाय पन्चमुख हनुमते टं टं टं टं टं सकल शत्रु संहरणाय स्वाहा।[3]

4- कार्य सिद्धि हेतु-

ॐ नमो हनुमते सर्व ग्रहान् भूत भविष्य वर्तमानाय् दूरस्थ समीप स्थान् छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि सर्वकाल दुष्ट बुद्धोनुच्चा- च्चाटय परबलान क्षोभय क्षोभयं मम सर्वकार्याणि साधय साधय। ॐ नमो हनुमते ॐ ह्रां ह्रीं हं फट। देहि ॐ शिव सिद्धिः ॐ ह्रां ॐ ह्रीं ॐ ह्रूं ॐ ह्रैं ॐ ह्रौं ॐ ह्रः स्वाहा ।

इसके अतिरिक्त अन्य भी हनुमान जी के सन्दर्भ में बहुत से मन्त्र है, जिनके स्मरण, चिंतन एवं मनन से मनो वांछित कामनाये पूर्ण हो जाती है। उक्त अध्याय में हनुमान के कतिपय प्रमुख मन्त्रों को ही प्रस्तुत किया जा सका है।वस्तुतः हनुमत्पूजा, आराधना में कतिपय अपनी विशेषता अवश्य ही है, जो साधकों का ध्यान सहज ही अपनी ओर आकृष्ट कर लियाकरती है।

हनुमान भक्ति की विशिष्टता-

भक्ताधिराज श्री हनुमान में भक्ति विशिष्ट है, संयम विशिष्ट है, अनासक्ति विशिष्ट है, कल्याण परायणता विशिष्ट है, प्रभु का प्रतिनिधित्व विशिष्ट

1- उपर्युक्त - 29
2- पंचमुखी हनुमत्कवच -27

है, त्याग और वैराग्य भी विशिष्ट है, एतदर्थ हनुमान भक्ति की विशिष्टता सर्व वन्द्य है।[1] भारतीय जन मानस में हनुमत्पूजा, विशेष रूप से प्रचलित है। मूलतः हनुमत्पूजा का प्रचार प्रसार दक्षिण में समर्थ राम दास जी ने किया था, लेकिन कतिपय मौलिक तथ्यों के आधार पर ऐसा ज्ञात होता है कि समर्थ राम दास जी ने गोस्वामी जी द्वारा प्रचलित हनुमत्पूजा से प्रेरणा लेकर दक्षिण तक फैलाया हो। कतिपय मनीषियों का ऐसा मत है कि हनुमत्पूजा का किसी न किसी रूप में प्रचलन भारत वर्ष में अवश्य था।

इसी सन्दर्भ में जगद्गुरु स्वामी रामानन्द जी की आरती श्री हनुमान लला की को रखा जा सकता है। एतदर्थ यह कहा जा सकता है कि संकट मोचन के लिए अष्ट सिद्धि नव निधि प्राप्ति के लिए तथा राम भक्ति की सिद्धि के लिए हनुमत्पूजा को वैष्णव भाव वाली प्रतिष्ठा गोस्वामी जी द्वारा ही प्राप्त हुई थी। उक्त अध्याय में प्रमुख मन्दिरों का संक्षिप्त परिचय तथा हनुद्भक्ति के मन्त्रों तथा उनके प्रभावों को प्रस्तुत किया गया, इसे ही पर्याप्त नहीं कहा जा सकता, लेकिन प्रमुख तथ्यों को दृष्टिगत रखा गया है। सप्तम अध्याय में हनुमान के वैज्ञानिक आधुनिक रूपों का अध्ययन करते हुए अन्य देवताओं की भक्ति का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जायेगा।

—

1- तुलसी सन्दर्भ और समीक्षा- ले0 डॉ0 बल्देव प्रसाद मिश्र- पृ0 176 सं0 डॉ0 त्रिभुवन सिंह।

सप्तम अध्याय

हनुमान के वैज्ञानिक स्वरूप का विवेचन

प्रस्तुत अध्याय में सर्वप्रथम हनुमान का वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया जा रहा है। वस्तुतः हनुमान का जीवन इतना उदात्त एवं महिमामय है, जिसका विश्लेषण शब्दों में अनुबन्धित नहीं किया जा सकता, फिर भी मूल तथ्यों के आधार पर यत्किञ्चित दृष्टि डालने का प्रयास किया जा रहा है। भक्त प्रवर गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा विरचित श्री राम चरित मानस के अन्तर्गत बालकाण्ड में मंगला चरण में लिखा है- "वन्दे विशुद्ध विज्ञानौ कवीश्वर कपीश्वरौ"[1]

अर्थात कवीश्वर श्री बाल्मीक जी और कपीश्वर श्री हनुमान जी के विशुद्ध वैज्ञानिक स्वरूप को मैं वन्दना करता हूँ। वस्तुतः हनुमान जी का विशुद्ध वैज्ञानिक एवं व्यापक स्वरूप प्राणवायु आक्सीजन प्रतीत होता है। इस उक्ति की सार्थकता को मानस के द्वारा सिद्ध किया जा सकता है-

"प्रनवउँ पवन कुमार खल बन पावक ज्ञान घन
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।।"[2]

वस्तुतः हनुमान जी को पवन पुत्र बताया जाता है। मूलतः आक्सीजन ही पवन का एक भाग है। आक्सीजन सूंघने पर आनन्दानुभूति होती है। ईश्वर का व्यापक स्वरूप आनन्द जिसे गोस्वामी जी ने श्री राम ने कहा है,

---

1- श्री राम चरित मानस- गोस्वामी तुलसी दास जी द्वारा विरचित- बालकाण्ड -श्लोक संख्या-4 पृ० संख्या-17

2- राम चरित मानस- बालकाण्ड- सोरठा संख्या 17 पृ०संख्या-29

हनुमान जी (आक्सीजन) के हृदय रूपी भवन में निवास करता है। खल वन पावक या दनुज वन कृशानु अर्थात् दुष्ट रूपी वन को भस्म करने के लिए हनुमान जी अग्नि रूप है। वैज्ञानिक दृष्टि से दहन का अर्थ है, आक्सीजन से संयोग एवं प्रकाश और ऊष्मा का निकलना। अतः दहन में प्रकाश एवं ऊष्मा का निकलना अर्थात् अग्नि का पैदा होना, बिना आक्सीजन के संभव नहीं है। इस प्रकार आक्सीजन या हनुमान जी ईश्वरीय लीला के एक पात्र है।

उपर्युक्त वर्णित सोरठे में हनुमान के पंचमुखी स्वरूप का दिग्दर्शन हो रहा है। वस्तुतः पवन कुमार में पवनतत्व, खल बन पावक में पावक तत्व, ज्ञानघन में घन (बादल) के कारण जल तत्व, हृदय आगार में पोले पन के कारण आकाश तत्व और सर चाप धर में ठोस आयुध अथवा निश्चित आकृतियों के कारण पृथ्वी तत्व ज्ञात होता है। पाँचों स्त्रोतों से हनुमान जी की कल्याण क्रिया प्रवाहित होती दृष्टिगत हो रही है।[1] मूलतः आपत्तियों का अपहरण करना ही खल वन पावक का बनना, सर्वसम्पदा का दातृत्व ही है, ज्ञान की घनता, लोकाभिरामता ही है, हृदयागार में प्रभु को बसा लेना। "धर" का तात्पर्य है धारण करना। भगवान राम के हृदयस्थ होना ही हनुमान का मुख्य प्रतिपाद्य है। भगवान के श्री चरणों में अविरल आस्था होने से ही काम, क्रोध आदि शत्रुओं को नष्ट किया जा सकता है और तभी प्रभु सर्वदा शस्त्र युक्त होकर विराजते हैं। वस्तुतः "चाप" कार्मुक जो कर्म का प्रतीक है और "शर" अर्थात लक्ष्य भेदी आयुध जो ज्ञान का प्रतीत है। राम स्वतः भक्ति के प्रतीक हैं, रस के प्रतीक है, आनन्द

1- तुलसी- सन्दर्भ और समीक्षा सं० डॉ० त्रिभुवन सिंह, पृ० 182 लेखक डॉ० बल्देव प्रसाद मिश्र।

के प्रतीक हैं। अतएव सर चाप धर राम हुए ज्ञान शक्ति औरआनन्द या चित,
सत आनन्द के मूर्तिमान रूप।

"बसहिं " सार्वकालिक क्रिया है। स्वतः अनिकेत (बिना घर बार के)
रहते हुए अर्थात संसार के अनासक्त रहते हुए अथवा पवन की भाँति कहीं बंधकर
न रहते हुए भी हनुमान जी ने अपने आराध्य को अपने हृदय निकेत में स्थायी
रूप से इस प्रकार बसा लिया है कि वे वहीं सदा सर्वकाल के लिए बस गए हैं।

वस्तुतः हनुमान जी के अन्दर दहन करने की क्षमता है। स्वर्णमयी
लंका दहन करने की क्षमता हनुमान जी में ही है-

पवन तनय बल पवन समाना।
बुद्धि विवेक विग्यान निधाना।।[1]

अकार्बनिक रसायन विज्ञान के पदार्थ जैसे जल आक्साइड,हाइड्रो-
आक्साइड पर आक्साइड,नाइट्रेट,फोसफेट,बोरेट,कार्बोनेट,सल्फेट,क्लोरेट,क्रोमेट,
पर मैग्नेट,सल्फाइट,नाइट्राइट,सिलिकेट,एल्यूमि,आदि आक्सीजन की देन है।
कार्बनिक रसायन विज्ञान के पदार्थ जैसे कार्बोक्सिलिक अम्ल,एल्कोहल ,फीनोल,
एस्टर ईथर,एल्डिहाइड,कीटोन,कार्बोहाइड्रेट (चीनी ग्लूकोज) प्रोटीन,सैल्यूलोज
(लकड़ी कागज ,कपास) स्टार्च,एमीनो एसिड नायलोन टैरीन,आदि में आक्सीजन
होती है। धातु की आक्साइड जल से मिलकर क्षार बनाती है तथा अधातु की
आक्साइड जल से मिलकर अम्ल बनाती है। इस प्रकार हनुमान जी या आक्सीजन

1- श्री राम चरित मानस- किष्किन्धा काण्ड- दोहा 30क- 4,पृ0 410

को विज्ञान निधानम् या विज्ञान की खान कहा जा सकता है। समुद्र और वायु सहित पृथ्वी का पचास प्रतिशत ऑक्सीजन है, तथा पचास प्रतिशत से अन्य सभी तत्व हैं-

सोलह योजन मुख ते ठयऊ।
तुरत पवन सुत बत्तिस भयऊ।।[1]

सोलह और बत्तीस ऑक्सीजन के क्रमशः परमाणु भार और अणु भार है। इन संख्याओं का उपयोग किया जाना आश्चर्य जनक नहीं है। राम रूपी रसायन वितरण करना हनुमान जी का ही कार्य हो सकता है-

राम रसायन तुम्हरे पासा।
सदा रहोरघुपति के दासा।।

यदि हनुमान जी का विशुद्ध वैज्ञानिक एवं व्यापक स्वरूप ऑक्सीजन है तथा जिसके ग्रहण करने पर आनन्दानुभूति होती है, उसमें श्री राम का व्यापक स्वरूप दृष्टिगत होती है तो ऑक्सीजन को राम रसायन अर्थात आनन्द देने वाला रसायन कहा जा सकता है-

राम दूत अतुलित बल धामा।
अंजनि पुत्र पवन सुत नामा।
- - - - - - - - - - - -
बाल समय रवि भक्ष लियो तब
तीनहुँ लोक भयो अँधियारो
छाँडि दियो रवि कष्ट निवारो।।[2]

1- श्री राम चरित मानस- सुन्दरकाण्ड -दोहा संख्या-2/7,पृ0 414
2- हनुमान चालीसा-हनुमाष्टक के अन्तर्गत वर्णित है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से ओजोन ऑक्सीजन का अपर रूप है। ऐसा प्रतीत होता है कि संभवतः "ओजोन" को "अंजनि" मान लिया गया होगा। ओजोन को गरम करने पर ऑक्सीजन पैदा होती है। अतः हनुमान जी ऑक्सीजन रूप में अंजनि के पुत्र हैं। वायु मंडल की ओजोन परत रवि कष्ट अर्थात कॉस्मिक विकिरण जीवों की रक्षा करती है। बाल समय रवि भक्ष लियो को छाडि दियो (छान) दियो ऐसा ज्ञात होती है-

> चीर घातिनी छाँडिसी साँगी।
> तेज पुंज लछिमन उर लागी।।
> मुरछा भई शक्ति के लागे।
> तब चलि गयउ निकट भय त्यागे।[1]

वीर घातिनि शक्ति लक्ष्मण के हृदय में लगी, जिससे उन्हें हृदयाघात हुआ और मूर्च्छित हो गये। वस्तुतः हृदय आघात और मूर्च्छा दोनों में ही ऑक्सीजन का उपयोग किया जाता है। लक्ष्मण को पुनः स्वस्थ्य करने की व्यवस्था का भार हनुमान जी को ही सौंपा गया है, जो संजीवन या संजीवनी लाकर देते हैं। संजीवनी का अभिप्राय है, मरणासन्न को पुनः जीवित के समान करने वाली जो कि ऑक्सीजन है। क्योंकि हृदयघात वाले मनुष्य को यदि ऑक्सीजन न दी जाय तो उसकी मृत्यु निश्चित है। परन्तु मरे हुए को अर्थात जिसकी आत्मा छोड़ चुकी हो, उसे ऑक्सीजन पुनः जीवित नहीं कर सकती है। एतदर्थ ऑक्सीजन आत्मा के अति निकट है, पर आत्मा नहीं। यदि आत्मा स्वामी है तो ऑक्सीजन सेवक हैं। ऑक्सीजन

1- श्री राम चरित मानस- लंका काण्ड-दोहा संख्या 54/7-8, पृ0 477

जड़ है, पर आत्मा चेतन है। आत्मा का केवल एक गुण आनन्द ऑक्सीजन है। वस्तुतः सभी जीव मिलकर ही ईश्वर का विश्वरूप बनाते हैं। जीवों का जीवन बिना ऑक्सीजन के संभव नहीं है। ऑक्सीजन जीवों या विश्व रूप ईश्वर का बहुत बड़ा सेवक है। मानस में भी हनुमान जी को श्री राम का या विश्व रूप ईश्वर का महान सेवक बताया गया है-

हनुमान सम नहिं बड़ भागी। नहिं कोउ राम चरन अनुरागी।[1]

सुन कपि तोहि समान उपकारी। नहिं कोउ सुर नर मुनितनुधारी।[2]

मानस में गोस्वामी जी की दी गयी संक्षिप्त जीवनी के अनुसार गोस्वामी जी को हनुमान जी की विशेष कृपा प्राप्त थी। हनुमान जी का विशुद्ध वैज्ञानिक, व्यापक एवं आनन्द मय स्वरूप तो ऑक्सीजन है, पर उनका चेतन स्वरूप भी होना परमावश्यक है, एतदर्थ गोस्वामी ने "राम रसायन तुम्हरे पासा" लिखा है। उनके चेतन स्वरूप का वर्णन गोस्वामी जी ने निम्न प्रकार से लिखा है-

लाल देह लाली लसै, अरु धरि लाल लंगूर।

वज्र देह दानव दलन जय जय कपि सूर।।[3]

हनुमान जी की देह, जैसे सुबह शाम सूर्य की लाली दिखायी देती है, या रक्त लाल होता है, उस तरह की रक्तवर्ण है। उनके परमाराध्य श्री राम जब नर देह धारण करते है तो सेवक होने के नाते वह नर की देह धारण न करके लंगूर की देह धारण करते हैं।

1- श्री राम चरित मानस- उत्तरकाण्ड- दोहा 50-7, पृ0554
2- उपर्युक्त सुन्दरकाण्ड दोहा- 32-8 पृ0430
3- संकट मोचन हनुमानाष्टक के अन्तिम वर्णित है।

हनुमान जी को प्रतिमा को लाल करने के लिए सिन्दूर लगाया जाता है। पहले पारे का लाल सल्फाइड (HgS) सिन्दूर के नाम से प्राप्त होता था। पारे का लाल सल्फाइड ईश्वर निर्मित है, अर्थात खानों से प्राप्त किया जाता है पर आजकल सीसे को लाल आक्साइड (Pg3O4) सिन्दूर के नाम से प्राप्त होती है।

यह मानव निर्मित है, परन्तु हनुमान जी का वैज्ञानिक रूप है, क्योंकि यह गरम करने पर ऑक्सीजन देती है और इस प्रकार हनुमान जी के विशुद्ध वैज्ञानिक स्वरूप ऑक्सीजन का प्रतिनिधित्व करती है।

सिन्दूर हनुमान जी का प्रतीक भारतीय महिलाओं का सुहाग चिन्ह भी है। निर्मल मन से व्यक्ति हनुमान को प्राप्त कर सकता है। हनुमान के द्वारा ही राम भक्ति प्राप्त की जा सकती है-

निर्मल मन जन सो मोहि पावा।
मोहि कपट छल छिद्र न भावा।।[1]

प्राणायाम, योगासन, घूमना तथा अन्य व्यायाम हनुमान जी की साधना के साधन हैं। उनकी आराधना के द्वारा मन में सुविचार उत्पन्न होता है। नियमित रूप से हनुमान जी की साधना के बाद प्रार्थना करने से आनन्दानुभूति होती है। वृक्ष दिन में कार्बन डाई आक्साइड लेकर ऑक्सीजन छोड़ता है, एतदर्थ वृक्ष लगाना ऑक्सीजन रूपी हनुमान की सेवा है। उत्तर काण्ड में गोस्वामी जी ने लिखा है-

"पुण्यं पाप हरं सदा शिवकरं विज्ञान भक्ति प्रदं"[2]

1- श्री राम चरित मानस-सुन्दर काण्ड दोहा- 445 पृ0 436
2- श्री राम चरित मानस- उत्तर काण्ड श्लोक संख्या-2, पृ0 607

राम चरित मानस विज्ञान और भक्ति को देने वाला है। जहाँ तक ऑक्सीजन का प्रश्न है, इस का अनुसंधान कर्ता लेखक को माना जाना चाहिए, क्योंकि ऑक्सीजन को खोज वैज्ञानिकों द्वारा आज से लगभग दो सौ वर्ष पहले की गयी जबकि राम चरित मानस की रचना आज से चार सौ वर्ष पहले की गयी। ईश्वर आनन्द मय है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से ऑक्सीजन का छोटे से छोटा अंश या कण जो स्वतन्त्र अवस्था में रह सके, अणु कहलाता है और उसमें ऑक्सीजन के सभी गुण होते हैं। इसलिए अणु में भी आनन्द प्रदान करने का गुण होता है। अतः आनन्द या ईश्वर भी विज्ञान के अनुसार सूक्ष्मातिसूक्ष्म रूप में भी विद्यमान है जिसे आत्मा कहते हैं। यदि अणु का अस्तित्व है तो आत्मा का अस्तित्व भी होना चाहिए।

हनुमान जी का विशुद्ध वैज्ञानिक व्यापक एवं आनन्दमय स्वरूप ऑक्सीजन मानस द्वारा सिद्ध करने के पश्चात् कहा जा सकता है कि मानस में विज्ञान शब्द का उपयोग "साइन्स" के लिए ही किया गया है। परन्तु गोस्वामी जी ने रामायण की आरती में लिखा है-

गावत वेद पुराण अष्ट दस,
छओ शास्त्र सब ग्रन्थन्ह को रस।
गावत संतत संभु भवानी,
अरु घट संभव मुनि विग्यानी।।[1]

1- श्री राम चरित मानस आरती- पृ0 608

एतदर्थ अन्य ग्रन्थो जैसे वेद और गीता मे भी विज्ञान का अर्थ "साइन्स" होना चाहिए।

"मनुष्य को योग्य है कि सत्य मार्ग मे स्थित होकर,सत्य क्रिया और विज्ञान से परमेश्वर को जानकर मोक्ष को इच्छा करे। ऐसे विद्वान मुक्ति को प्राप्त होते है।[1]

यह विज्ञान सहित ज्ञान विधाओं का राजा,सब गोपनीयों का राजा,अति पवित्र,अति उत्तम,प्रत्यक्ष फल वाला, धर्म युक्त साधन करने मे बड़ा सुगम और अविनाशी है।[2]

मै तेरे लिए इस विज्ञान सहित ज्ञान को सम्पूर्णतया कहूंगा। जिसको जानकर संसार मे फिर और कुछ भी जाने योग्य शेष नहीं रह जाता।[3]

गोस्वामी ने भी उत्तर काण्ड मे लिखा है-

ग्यान विवेक बिरति बिग्याना। मुनि दुर्लभ गुन जो जग जाना।
तिन्ह तें प्रिय बिरक्ति पुनि ग्यानी। ग्यानिहु ते अति प्रिय बिग्यानी।।

ईश्वर को ज्ञानी से अधिक विग्यानी प्रिय है,क्योकि विज्ञानी सत्य या नियमों को खोज मे रहता है। विज्ञान पढ़ते समय अनेक के लिए एक नियम होता है।

बिनु बिग्यान कि समता आवइ।
कोउ अवकास कि नभ बिनु पावइ।।[4]

1- ऋग्वेद-1/13/83/5
2- श्रीमद् भगवद गीता 9/1
3- उपर्युक्त 7/2
4- श्री राम चरित मानस-उत्तर काण्ड 90क-3 पृ0 576

विज्ञान के बिना समता या समभाव नहीं आ सकता। विज्ञान के द्वारा यह ज्ञात होता है कि सजीव अर्थात् पशु,पक्षी मानव वनस्पति आदि सभी सेलों के बने हुए हैं। कोई भी जीव बिना ऑक्सीजन के जीवित नहीं रह सकता। हनुमान जी का विशुद्ध वैज्ञानिक एवं व्यापक स्वरूप ऑक्सीजन गोस्वामी जी द्वारा रचित ग्रन्थों से ही सिद्ध करने का प्रयास किया गया है-

कृत युग सब योगी विग्यानी।
करि रिग्यान तरहिं भव प्रानी।
शुद्ध सत्व,समता विग्याना।
कृत प्रभाव प्रसन्न मन जाना।।[1]

शुद्ध सत्व गुण,समता,विज्ञान,और मन का प्रसन्न होना,इस सत्य युग का प्रभाव मानना चाहिए। वास्तविक लोकतन्त्र वह है जिसमें लोग स्वेच्छा से कार्य करें। सत्य का अर्थ है,अपरिवर्तनशील जिसे विज्ञान में नियम कहते हैं। भगवान श्री राम ने नियमों को पूर्णतः पालन किया,एतदर्थ उन्हे मर्यादा पुरुषोत्तम या आदर्श मानव कहा जा सकता है। वस्तुतः हनुमान जी का जीवन भी अनुशासित एवं मर्यादित है। उनके जीवन का मुख्य उद्देश्य भगवान श्री राम को पूर्ण रूपेण समर्पण है।

भविष्य देवता हनुमान तथा हनुमान का आधुनिक रूप-

हनुमान ही केवल भविष्य के देवता हो सकते हैं। समस्त देवताओं में से केवल हनुमान का ही अजरता अमरता का वरदान प्राप्त हुआ,एतदर्थ भविष्य

1- श्री राम चरित मानस-उत्तर काण्ड 103 क-1 ,104-क
2- पृ0 583-84

देवता हनुमान ही हैं। वस्तुतः हनुमान को अजर अमर माना जाय या नहीं, यह प्रधानतः अपने-अपने विश्वास की बात है। इतिहास घोषित किया जाने वाला रामायण ग्रन्थ राम को तो लोकान्तर गमन बताता है, किन्तु हनुमान जी के अजरत्व अमरत्व की साक्षी देता है और कहता है कि वे अब भी सशरीर इस भारत में विद्यमान हैं। रामायण ही नहीं, महाभारत भी उनके अजरत्व अमरत्व की साक्षी देता है। वे अर्जुन के रथ पर बैठे थे, भीम का गर्व तोड़ा था आदि-आदि। इस सन्दर्भ में एक बहु प्रचलित श्लोक है-

अश्वत्थामा बलिर्व्यासः हनुमनाश्च विभीषणः।
कृपः परशु रामश्च सप्तैते चिर जीविनः।।

अर्थात अश्वत्थामा, बलि, व्यास, हनुमान, विभीषण, कृपाचार्य और परशुराम चिरजीवी है।[1] चिरजीवी का तात्पर्य युगों-युगों तक विद्यमान रहने वाला। भविष्य देवता वही हो सकता है, जो चिरजीवी हो, एतदर्थ हनुमान जी भविष्य देवता हैं। वस्तुतः साधना के क्षेत्र में कल्पना का बड़ा महत्व होता है। इतिहास यथा तथ्य वर्णन करके तुष्टि का वर्धन करता है किन्तु कल्पना उस इतिहास पर तरह-तरह के रंग चढ़ाकर हमारी पुष्टि और तुष्टि का वर्धन करती है। हनुमत चरित्र में यदि इतिहास और कल्पना दोनों का सम्मिश्रण हो गया है, तो सर्वदा हित साधना के लिए वह सम्मिलित चरित्र ही श्रद्धास्पद होना आवश्यक है। वस्तुतः हनुमान जी ही भविष्य देवता हो सकते हैं, क्योंकि वे महान बलशाली स्वर्ण शैल की आभायुक्त शरीर वाले हैं। हनुमद वन्दना में गोस्वामी जी ने लिखा है-

---

1- तुलसी सन्दर्भ और समीक्षा- डॉ0 त्रिभुवन सिंह-लेख बल्देव प्रसाद मिश्र पृ0 177

अतुलित बल धामं स्वर्ण शैलाभ देहं,
दनुज वन कृशानुं ज्ञानिनामाग्र गण्यम।
सकल गुणनिधानं वानराणाम धीशं,
रघुपति वरदूतं वातजातं नमामि।।[1]

उपर्युक्त वर्णित श्लोक में हनुमान जी के विशेषणों का यह सप्त रंगी इन्द्र धनुष बड़े ही आकर्षक रंगों से भरा हुआ है। उनके लिए सबसे पहली बात यह है कि वे शक्ति के देवता है- अतुलित बल धाम हैं। इनके शरीर के अनुकूल बल भी है, वे स्वर्ण शैलाभ देह हैं, रक्त शैलाभ देह नहीं, लालवर्ण क्रोधावेश का होता है। बल और वपु की विशालता के साथ ही उनकी विघ्न विनाशन की प्रक्रिया भी प्रबल है। वे दनुज वन कृशानु है- राक्षस कुल रूपी सूखी घास को भस्म कर डालने के लिए दावानल के समान। इनका चतुर्थ विशेषण है ज्ञानिनाम-ग्रगण्य- ज्ञानियों में अग्रगण्य उनमें केवल क्रियाशक्ति ही नहीं किन्तु ज्ञान शक्ति भी भरपूर है।

हनुमान जी सर्वव्यापक रूप से विद्यमान हैं भविष्य देवता ही आधुनिक युग का महान शक्तिशाली देवता हो सकता है। हनुमान जी भविष्य देवता होने के कारण सर्ववन्ध हो गये हैं। हनुमान जी का ही व्यक्तित्व एक ऐसा है जो सर्वसाधारण के कल्याण के लिए भगवान राम के आपदामपहर्ता अर्थात आपत्ति हरण के और दातारं सर्व सम्पदाम अर्थात संपत्ति वितरण के दोनों ही गुण देश काल निरपेक्ष धारण किये रहता है। इस सन्दर्भ में रामायण का साक्ष्य

1- श्री राम चरित मानस- सुन्दरकाण्ड- श्लोक संख्या- 3 पृ0 414

प्राप्त होता है कि भगवान श्री राम ने वैकुण्ठ गमन किया, तब जगत कल्याण हेतु हनुमान जी को अपने प्रतिनिधि रूप से यहाँ छोड़ गये तबसे ये राम कथा के पूर्व ही अलक्षित रूप से पहुँच जाया करते हैं। किन्तु निज भक्त अथवा राम भक्त की पुकार सुनकर अपना संकट मोचन नाम सार्थक किया करते हैं। एतदर्थ हनुमान भविष्य देवता सिद्ध होते हैं। अपने विभिन्न कार्य पद्धतियों से भक्तजनों के कल्याणार्थ रूप धारण किया करते हैं। वस्तुतः हनुमान के चिरजीविता को (अजरत्व, अमरत्व को) इतिहास या विज्ञान के विरुद्ध नहीं कहा जा सकता, न राम कथा के पूर्व प्रकट होने की शक्ति को। वा०रामायण में भी इस कथांश का सन्दर्भ प्राप्त होता है। हनुमान जी के लिए आज भी अल्प अग्नि के समान, अपने अनुकूल वातावरण में स्वरूप आकार बन जाना, योग निष्णात सिद्ध हो जाना असम्भव नहीं है, एतदर्थ हनुमान जी पुरातन इतिहास और अधुनातन विज्ञान के विशाल क्षेत्र में व्याप्त है।

यदि विशुद्ध तार्किक दृष्टिकोण से हनुमान जी को केवल मनुष्य मानकर आकलन किया जाय तो भी उनका भावी कल्याणकारी सामने आ जाता है। उनका चरित्र ही इतना पावन है, जिसके कारण वे आज भी सर्ववन्द्य हैं। अनार्य वंश संभूत किष्किन्धा निवासी आंजनेय ने ज्ञान में अत्यधिक असाधारण शक्ति प्राप्त कर ली थी। अणिमा महिमा, गरिमा और लघिमा ये चारों सिद्धियाँ उन्हें प्राप्त थी, अतएव जब वे चाहते तब मशक समान रूप धारण कर लेते थे और जब चाहते तो पर्वताकार बन जाते थे, वे जब चाहते तब निर्भर के समान

1- तुलसी सन्दर्भ और समीक्षा संपादक- डॉ० त्रिभुवन सिंह, पृ० 177
लेख- डॉ० बल्देव प्रसाद मिश्र।

गुरु और जब चाहते तब तूल के समान लघु अथवा हवा में उड़ने वाले बन जाते थे। मरुत के समान गतिमान होकर वे मारुति कहाए। हनुमान जी ज्ञानियों में ज्ञानी कर्मिष्ठों में कर्मिष्ठ,कवियों में कवि,और साधकों मे साधक होकर उन्होंने प्रभु की जैसी कृपा पात्रता प्राप्त कर ली थी,वह अन्यत्र मिलना कठिन है।[1]

आजन्म ब्रह्मचारी होकर उन्होंने कहीं अपना घर नहीं बनाया, किन्तु पवन के रूप में वे घट-घट वासी हैं,पवन के बिना कोई भी व्यक्ति जीवित नहीं रह सकता,भविष्य देवता आधुनिक रूप में वहीं हो सकता है जो जीवों को जीवन्तता प्रदान कर सके। एतदर्थ हनुमान जी आधुनिक रूप में पवन के द्वारा जगत को जीवन्तता प्रदान करते हैं। ऐश्वर्य से परमविरागी होकर ईश्वर के परम अनुरागी वे जिस कोटि के थे,उसका परिचय लंका विजय के बाद मणि मुक्ता फोड़ फोड़ कर उनमें राम की खोज अथवा अपना वक्षस्थल चीर कर उसमें राम के दर्शन करा देने की उनकी क्षमता के उदाहरणों में मिल जाता है। उनके लोक कल्याणकारी निरभिमानी व्यक्तित्व में मान ने यदि कहीं स्थानपाया था तो उनके नाम के केवल उत्तरार्द्ध में। वस्तुतः एक आदर्श भक्त की यही महानता है, कि अपने आराध्य के प्रति पूर्ण रूपेण समर्पित बना रहे।

भक्त प्रवर श्री हनुमान जी वास्तव में मन (चित्त) एवं सद्गुरु के प्रतीक हैं,किन्तु वे सद् विचार के भी प्रतीक हैं। जब आत्मा रूपी राम अपनी ही अर्द्धांगिनी शान्ति एवं भक्ति रूप सीता से विरहित हो जाता है तब वह विचार रूप पवनपुत्र को उसकी खोज में प्रेषित करता है। भक्ति मार्ग में चलने पर प्रायः त्रिगुणात्मिका माया व्यवधान उपस्थित करती है। उन सभी का सामना

1- उपर्युक्त- पृष्ठ संख्या-180
2- उपर्युक्त- पृ0 180

हनुमान जी बड़े धैर्यपूर्वक कहते हैं-

राम काज कीन्हे बिनु, मोहि कहाँ बिश्राम।[1]

भक्त प्रवर श्री हनुमान जी सतोगुणी माया (सुरसा) को सम्मान देकर मार्ग से हटाते हैं, तमोगुणी माया (सिंहिका) को नष्ट कर देते हैं और रजोगुणी माया (लंकिनी) को अधमरी कर देते हैं। तभी तो सद् विचार रूपी हनुमान को अशोक वन में शान्ति रूपी सीता के दर्शन होते हैं और आत्मा राम के साथ उनके पुनः संयोग का मार्ग प्रशस्त होता है। शान्ति को प्राप्त करने वाला ही आधुनिक रूप में कर्म व्यापी हो सकता है। इस सन्दर्भ में हनुमान जी सर्वोत्कृष्ट देवता हैं। इसके अतिरिक्त हनुमान जी भक्ति और ब्रह्म के मध्य जो दूतत्व का परिचय देते हैं, वह जीव और ब्रह्म से एकात्मकता स्थापित करना ही है। हनुमान जी सामान्य रूप राम के दूत तो थे ही, कुशल दूत बनकर ही प्रभु का सन्देश परमात्मा भगवती सीता तक पहुँचाते हैं। हनुमान जी सामान्य दूत नहीं वरदूत भी थे, क्योंकि अंगद जी ने भी दूतत्व किया है, जिन्हें हम अवर दूत कह सकते हैं। दोनों के क्रिया कलाप और वाक कौशल के तुलनात्मक अध्ययन से वरत्व (श्रेष्ठत्व) स्पष्ट हो जायेगा।

विशेष अर्थ में श्री हनुमान जी ब्रह्म राम के वरदूत हैं। सामान्य गुरु नहीं, विशेष सद्गुरु, सद्गुरु जीव कल्याण तत्व अर्थात प्रभु भक्ति के सद्गुरु तुल्य विशेष संदेश वाहक हैं।[2] भक्त प्रवर श्री हनुमान जी में समस्त जीवों, पशु, पक्षियों आदि को जीवन प्रदान करने की क्षमता है। आज भी हनुमान जी अलक्षित रूप से

1- श्री राम चरित मानस- सुन्दर काण्ड-दोहा-1 पृ0 414
2- तुलसी: सन्दर्भ और समीक्षा-सं0 डॉ0 त्रिभुवन सिंह, पृ0 181

प्राणि मात्र के कल्याणार्थ सतत तत्पर है। उनके स्मरण मात्र से जीवों के कष्ट तत्क्षण दूर हो जाते हैं। ऐसे सर्वव्यापी पवनात्मज सर्ववन्द्य हैं। आधुनिक दृष्टि से भी हनुमान जी का विशेष महत्व है,क्योंकि अन्तरिक्ष में पवन काशासन है, हनुमान जी पवनात्मज है। कोई भी अन्तरिक्ष अभियान पवन के द्वारा ही संभाव्य है। हनुमान जी के स्मरण चिंतन से बड़े से बड़े दुःसाध्य कार्य भी आसान बन जाया करते हैं,यह उनके अविरल भक्ति की विशिष्टता है। तदुपरान्त हनुमान काअन्य देवताओं से तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है-

अन्य देवताओं की भक्ति से हनुमान भक्ति का तुलनात्मक अध्ययन-

अन्य देवताओं की अपेक्षा हनुमान भक्ति अत्यधिक फलदायी है। ऐसा कतिपय साक्ष्यों के आधार पर ज्ञात हुआ है। भगवद भक्तों में हनुमान का स्थान अग्रिम पंक्ति में है। अयोध्या में उनका यशोगान करते हुए भगवान ने कहा-

मद्देहे जीर्णताम् यातु यत्व योपकृतमकपे
नरः प्रत्युपकारार्थं मापत्स्वा यातु पात्रताम्।[1]

हे कपि, तुम्हारे किए हुए उपकार मेरे शरीर में ही जीर्ण हो जाँय,उनके बदले में मैं प्रत्युपकार न कर सके। क्योंकि प्रत्युपकार का पात्र तो व्यक्ति तभी होता है,जब विपत्ति में पड़ता है। ऐसी स्थिति ही कभी न आवे। लंका से पराम्बा भगवती भक्ति सीता का समाचार लेकर लौटे हुए हनुमान की ओर अश्रुपूर्ण नेत्रों से देखते हुए भगवान् श्री राम ने प्रवर्षण गिरि पर कहा था-

---

1- वाल्मीकि रामायण के अन्तर्गत वर्णित।

सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाहीं। देखउँ करि विचार मन माहीं।[1]

किन्तु हनुमान को अपनी भक्ति अथवा शक्ति का गर्व न हो जाय एतदर्थ भगवान श्री राम ने युद्ध के समयान्तर्गत उनको भरत से भेंट करा दी। हनुमान जी अत्यन्त प्रखर वेग से लक्ष्मण के प्राणरक्षार्थ हिमालय से संजीवनी बूटी लिए मध्य रात्रि में आकाश मार्ग से जा रहे थे। इसी समय सहसा भरत का बाण लगने से राम राम कहते हुए मूर्च्छित होकर गिर पड़े। मूर्च्छा भी ऐसी लगी कि उन्हे सचेष्ट करने के भरत के सारे उपचार व्यर्थ गये,अन्त में भरत ने अपनी भक्ति को दाँव पर लगा दिया-

जौं मोरे मन वच अरु काया।
प्रीति राम पद कमल अमाया।
तौ कपि होउ विगत श्रम सूला।
जौं मो पर रघुपति अनुकूला।।[2]

इस मन्त्र के कान में पड़ते ही हनुमान सचेत हो उठ बैठे। सम्पूर्ण वृतान्त सुनकर भरत ने बहुत विलाप किया। उनकी प्रेम कातरता और विनम्रता देखकर भक्त प्रवर हनुमान गदगद हो जाते हैं।

चढ़ु मम सायक सैल समेता।
पठवौं तोहि जहँ कृपा निकेता।।[3]

अभिमान भी विगलित हो गया। भक्ति के आदर्श को मूर्तिमान स्वरूप देने के लिए भगवान ने अपने अंश से भरत को प्रकट किया था। भरत की

1- राम चरित मानस - ~~लंकाकाण्ड~~ सुन्दरकाण्ड - दोहा ~~60क~~ -6 ~~पृ0 488~~ 31-6- 530
2. उपर्युक्त. लंकाकाण्ड दोहा - 59-1क-6-पृ.569
3. उपर्युक्त - 60 - 6 - पृ. 570

भक्ति विलक्षण कोटि की भक्ति है। हनुमान की भक्ति समर्पण प्रधान है। भक्ति की वास्तविक सार्थकता आराध्य के चरणों में समर्पित होना है। भरत और हनुमान की भक्ति तुलनात्मक दृष्टि से सर्वोत्कृष्ट प्रतीत होती है। सदाशिव तत्व जब विघ्न विनाशक का कर्तव्य धारण करता है, तब उसका किसी न किसी प्रकार का मायाशबलित रूप हो ही जाता है। वह जब विद्भाव लेकर विघ्न विनाशक का कार्य करता है, तब आत्मज रूप से गणेश बन जाता है, और जब सद्भाव लेकर शक्ति अथवा पराक्रम का भाव लेकर, विघ्न विनाशन का कार्य करता है, जब अवतार रूप से हनुमान बन जाता है। तुलनात्मक दृष्टि से यदि विचार किया जाय तो गणेश और हनुमान दोनो ही सिन्दूर चर्चित माने गये हैं। दोनों का ही विशिष्ट रूप से संकट निवारक और मंगलदायक है। दोनों का ही शरीर मनुष्य का और मुख विशिष्ट पशु का है। वस्तुतः गणेश जी ज्ञान पक्ष वाले हैं- बुद्धि दाता है, एतदर्थ उनका मस्तिष्क बहुत बड़ा बताया गया है और वे स्वतन्त्र रूप से परमात्मा के प्रति मूर्ति माने गये।

हनुमान जी क्रिया पक्ष वाले हैं- शक्ति दाता हैं, एतदर्थ वे विशाल काय शक्ति पुंज, वन मानुष (प्रबल मर्कट) का मुखौटा लिए हुए चित्रित किये गये हैं। विघ्न विनाशनके लिए शैवों में यदि गणेश जी है, तो वैष्णव राम भक्तों में भक्त प्रवर हनुमान जी है। हनुमान जी सद्यः प्रसन्न होने वाले देवता हैं। इनकी उपासना और देवों की उपासना की अपेक्षा सरल है। दृढ़ आस्था, निश्छल भावना से हनुमान की उपासना करने मे मनोवांछितार्थ शीघ्र प्राप्त होते हैं।

हनुमान जी की उपासना में अमोघ शक्ति है, जिसके द्वारा भक्तजनों का कष्ट तत्क्षण ही हट जाता है।

हनुमान के आधुनिक स्वरूप में उनका मुख वानर का बनायाजाता है, शरीर मनुष्य का तथा लांगुल लम्बी पुच्छ सहित वृषभ की भाँति थी। वस्तुतः इनका मुख प्राचीन कपि पूजन का प्रतीक है, शरीर और इनकी गदा इनके आदिवासी होने का प्रमाण देते हैं। इनकी वृष के समान पूँछ इनकी शक्ति का द्योतक बताती है।[1]

हनुमान जी की भक्ति समस्त देवताओं की अपेक्षा अधिक फल प्रदान करने वाली है। कहीं-कहीं हनुमान जी की तुलना यक्ष से की गयी है। यक्ष पूजन का स्वरूप संभवतः वहीं रहा होगा जो आज भी है। इन्हे सर्वप्रथम जल चढ़ाया जाता है इसके पश्चात लाल वस्त्र तथा सुगन्धित चन्दन और पुष्पमाला इसके पश्चात धूप दीप और नैवेद्य अर्पित होता है। हनुमान जी की पूजा यक्ष रूप मे इस प्रकार होती थी तथा वैष्णव रूप मे भी पूजा प्रचलित थी। जैन ग्रन्थों मे भी यक्ष पूजन का कुछ ऐसा ही विधान मिलता है।[2]

तुलनात्मक अध्ययन से यह ज्ञात है कि हनुमान जी ही एक ऐसे देवता हैं। जिनके स्मरण एवं चिन्तन से प्राणि मात्र को शाश्वत सुख प्राप्त हो सकता है। तदुपरांत विदेशों में हनुमान के सन्दर्भ में जो तथ्य प्राप्त होता है प्रस्तुत किया जा रहा है।

विदेशों में हनुमान स्वरूप की झलक मात्र-

हनुमान जी के सन्दर्भ भारत में ही नहीं वरन् विश्व के देशों में भी इनका विस्तृत प्रचार प्रसार है। हनुमान जी का चरित्र ही इतना उदात्त एवं

1- हनुमान के देवत्व तथा मूर्ति का विकास- डॉ0 राय गोविन्द चन्द्र पृ0 384
2- यू0पी0शाह- जैन आइकोनोग्राफी-पृ0 68

महिमामय है कि वे जन-जन हृदय में रमे हुए हैं। हनुमान जी अपने विभिन्न रूपों के माध्यम से भक्त जनों के कष्ट निवारणार्थ सतत् तत्पर हैं।

विदेशों में हनुमान जी को वानरके वेशभूषा में चंचल रूप में चित्रित किया गया है। विदेशों में भी भारत की भाँति राम लीला का प्रचार प्रसार है। विभिन्न चरित्र कथाओं के आधार पर राम कथा का मंचन होता है। थाईलैण्ड में भी राम लीला के अतिरिक्त रामायण के आधार पर अभिनय नाटक के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।[1] थाईलैण्ड की राजधानी बैंकाक में भगवान बुद्ध का एक मन्दिर है, जिसमें बुद्ध की एक बैठी हुई स्पर्श मुद्रा में मूर्ति है। यह मूर्ति सम्भवतः हरे बेढ पत्थर की है, जो मरकत बुद्ध के नाम से सुप्रसिद्ध है। इस मन्दिर के पूर्व दक्षिण और पश्चिमी दीवारों पर चित्र सम्भवतः राम क्येन नाम थाईलैन्ड के, ग्रन्थ पर आधारित है। वस्तुतः राम क्येन का अर्थ है राम कीर्ति। इसमें वर्णित कथा वाल्मीकि की राम कथा से कुछ वैभिन्न्य है। एक रबीबरियन (किष्किन्धा) में तथा दूसरी जाम्बू में वानर सेनाये थी। राम क्येन की पुरातन हस्त लिखित प्रति जो उपलब्ध है वह सम्भवतः 17वीं शताब्दी की है।[2] राम क्येन के पात्र सब श्याम के निवासी हैं। हनुमान जी और बल का समुद्र निर्माण के समय युद्ध का वर्णन प्राप्त होता है, जिसका निर्णय मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम करते हैं।[3] राम को अहि रावण द्वारा पाताल ले जाने की कथा भी यहाँ मिलती है।[4] इसके अतिरिक्त हनुमान प्रथा, वेककाया,

---

1- हनुमान का देवत्व तथा मूर्ति का विकास- डॉ० राय गोविन्द चन्द्र पृ०233
2- एशिया के हृद्यावर्तों में भगवान राम धर्मयुग-पृ० 12
3- एतद् सूचना जिलरान्यूर सिआमीज (फररी 1951) पृ० 576
4- उपर्युक्त- पृ० 614

सुवर्ण मच्छा नामक नागकन्या वानरी अप्सरा के अतिरिक्त अन्य अप्सराओं के साथ क्रीड़ा करने का भी वर्णन प्राप्त होता है।[1] तदुपरांत हनुमान की सरोवर में स्नान करने का विवरण भी प्राप्त होता है,साथ ही साथ एक जोंक का वर्णन भी प्राप्त होता है जो हनुमान जी को पकड़ लेती है।[2]

स्वर्णमयी लंका पहुँचने पर इनकी भेंट लंका से होती है,जैसे वा0रामायण में वर्णित है। इसके अतिरिक्त लंका में इनके कृत्यों का वर्णन भी प्राप्त होता है। परान्बा भगवती भक्ति सीता के समक्ष उसी समय उपस्थित होते हैं,जिस समय वे अपनी वेणी से अपनी ग्रीवा में फाँसी लगाने का प्रयास करती हैं। उपर्युक्त समय पर पहुँच कर भक्ताधिराज श्री हनुमान जी उनके वेणी की गाँठ खोल देते हैं।

तदुपरांत सेतु बन्ध के पूर्व विभीषण कीपुत्री बेंजकिया रावण की आज्ञा से सीता के रूप में नदी में मृत वत् बहती हुई जाती है,इस दृश्य को देखकर भगवान श्री राम के निराश होने पर हनुमान उसे जलाने का उपक्रम करते है,राम हनुमान के साथ उसे लंकाभेज देते हैं।[3] तत्पश्चात समुद्र पार करते हैं। समुद्रपार करने के पश्चात लंका के पास एक मनोहरवन दिखाई देता है। यह वन भानुराज ने राम की सेना को आकर्षित करके भूमि के नीचे खींच लेने को अपने मस्तक पर धारण किया था। महान बलशाली हनुमान भूमि में प्रवेश करके उसे मार डालते हैं।[4]

1- उपर्युक्त- पृ0 22-34
2- बुल्के- राम कथा,पृ0 499
3- राम कथा उत्पत्ति और विकास- बुल्के पृ0 553। अध्याय-25
4- उपर्युक्त अध्याय 26

रावण के गुप्तचर शुक सर जब गोध के रूप में राम को सेना में प्रवेश करके, विभीषण के संकेत पर हनुमान उसे पकड़ लेते हैं।[1]

राम कियेन के अनुसार इन्द्रजित जब ब्रह्मास्त्र से लक्ष्मण तथा वानर सेना को बहुत आहत कर देता है, तब राम मूर्च्छित होकर गिर पड़ते हैं तथा सुषेण के कथनानुसार हनुमान औषधि लाने को भेजे जाते हैं। इसी प्रकार हनुमान को यहाँ भी तीन बार औषधि लाने जाना पड़ता है- यहाँ एक बार कुम्भकर्ण की शक्ति से फिर इन्द्रजीत के ब्रह्मास्त्र से तथा उसके पश्चात रावण की शक्ति से लक्ष्मण संज्ञाहीन होते हैं। तीनों बार हनुमान जी औषधि लाने जाते हैं। कुम्भकर्ण अपनी ओकद्य शक्ति नामक भाले से लक्ष्मण को मूर्च्छित करता है तथा हनुमान उनकी चिकित्सा के हेतु औषधि तथा पाँच नदियों का जल लाते हैं। यह जल भरत के पास बताया गया है हनुमान हिमालय से औषधि और अयोध्या से जल लाते हैं।[2]

इसके पश्चात जब कुम्भकर्ण अपनी शक्ति को जगाने को यज्ञ आरम्भ करता है तो उसे अंगद तथा हनुमान विध्वंस करते हैं। इसी प्रसंग में यह भी कथा मिलती है कि कुम्भकर्ण अपना शरीर बढ़ाकर वानरों की ओर आती हुई नदी के प्रवाह को रोक देता है। इस पर हनुमान प्यासे वानरों के दुःख को निवारण करने के हेतु उस पर पद प्रहार करते हैं जिससे वह भाग जाता है।

राम कियेन ग्रन्थ के वर्णनानुसार हनुमान की माता अंजना का नाम स्वाहा है। वह गौतम पुत्री है। अपनी माता अहल्या का व्यभिचार अपने

1- राम कथा उत्पत्ति और विकास- फादरकामिल बुल्के- पृ0 554
2- राम कथा उत्पत्ति और विकास- पृ0 571

पिता से कहने के कारण उसको माता उसको शाप देती है कि पुत्र प्रसव करने तक वह एक पैर पर खड़ी रहे। आशुतोष भगवान उस पर द्रवित हो जाते हैं और उसे यह आदेश देते हैं कि वह वायु को अपने मुँह में रखे। इसके फलस्वरूप तीन मास पश्चात हनुमान स्वाहा के मुख से वानर रूप में प्रकट होते हैं। थाई राम जातक नामक ग्रंथ के अनुसार राम सीता की खोज करते समय एक ऐसा फल खा जाते हैं, जिससे वे तीन वर्ष तक के लिए वानर रूप धारण कर लेते हैं। पावमली और अन्जना भी वहीं फल खा लेती है, इस प्रकार वे दोनों वानर और वानरी की अवस्था में हनुमान को उत्पन्न करते हैं।[1] इनके अनुसार लंका में अंगद और हनुमान दोनों ही भेजे जाते हैं। इसके अतिरिक्त कम्बोज में जिस राम कथा का प्रचार-प्रसार हुआ, उसका रूप अंकोरवाट की भीतों पर चित्रित है। इस मन्दिर का समय प्राय: 11 वीं, 12वीं शताब्दी माना जाता है। वहाँ के ख्मेर साहित्य के रे आय केर[2] राम केर्तिनान के ग्रन्थ में राम कथा का वर्णन प्राप्त होता है। वहाँ भी हनुमान वायु तथा अंजना के पुत्र हैं। इसमें राम किर्येन की भाँति लक्ष्मण से हनुमान के युद्ध की चर्चा है। यहाँ भी राम उनके कुण्डलों को देख लेते हैं।

अंजना पहिले ही हनुमान को बता देती है कि जो तुम्हारे कुण्डलों को देख सकेगा, वही तुम्हारा स्वामी होगा। राम से मिलकर वे सुग्रीव को संवाद देने जाते हैं।[3] वाली तथा राम के युद्ध के पश्चात वाली अपने दो पुत्रों को तथा अपनी पत्नी को राम को सौंप देता है और यह भी कहता है कि हनुमान उनकी सेवा के हेतु उपयुक्त व्यक्ति हैं।[4]

1- बुल्के- राम कथा पृ0 666
2- इसे राम कीर्ति भी कहा गया है- बुल्के वही, पृ0 274
3- वही, पृ0 467
4- उपर्युक्त 480

वाल्मीकि रामायण में सुग्रीव राम कार्य को अपनी विलासिता के मद में भूल जाते हैं। वहाँ राम केति के अन्तर्गत सर्ग 67 महाजम्बु या सम्बुरान इन्द्र के शाप के कारण वानर रूप को प्राप्त होता है। यह बाली का परममित्र और निकट के वानरों पर शासन करने वाला कहा गया है। सुग्रीव इस महाजम्बु के कारण राम की सहायता करने से डरता है। सुग्रीव तथा हनुमान का महाजम्बु के पास जाने का विवरण भी प्राप्त होता है।

तदुपरांत लाओस में राम कथा के दो स्वरूप प्रचलित है। एक का नाम फालक फालाम है, और दूसरे का नाम फोरम्मक है। पहले का अर्थ श्री लक्ष्मण श्री राम दूसरे का फालक फालाम ब्रह्मजात जो रावण का दूसरा नाम प्रथम कथा का जन साधारण का विशेष प्रचार प्रसार था।

यह कथा लाओस देश की राजधानी लुआंग प्रबंग के मन्दिर के भीत पर चित्रित है। वहाँ के राज महल में इस कथा का प्रति वर्ष अभिनय भी होता है। इसमें वर्णित रावण दस सिरों वाला राक्षस नहीं है अपितु एक रूपवान राजकुमार है। इन्द्र उसके आराध्य देव हैं तथा सीता उनके पुत्री के रूप में चित्रित है। इसकी पृष्ठ भूमि अयोध्या नहीं अपितु लाओस है। यहाँ के नदियों का उनके घाटियों का इसमें वर्णन है।

फालाम में रावण की सीता लड़की है और हनुमान राम के पुत्र हैं। यहाँ भी रावण एक रूपवान राजा है। इस राम जातक का निर्माण प्रायः 16 वीं शताब्दी में होना माना जाता है।[1]

हनुमान की कथा फालक फालाम में इस प्रकार है कि एक ऋषि ने तपस्या का जीवन छोड़कर एक सुन्दर युवती की मूर्ति बनाई और उसमें जान डाल

1- राम जातक- जरनल श्याम सोसाइटी भाग 36, पृ०-।

दो और उससे विवाह किया। यहाँ पर वर्णित सुग्रीव तथा बालि के कथा में बहुत अन्तर है। परम्परा भगवती भक्ति सीता के अन्वेषणार्थ हनुमान तथा ओफा को प्रेषित किया जाता है, जो समुद्र को पारकर लंका पहुँचते हैं। इन्हें राम अपनी दो अंगूठियाँ प्रदान करते है। मार्ग में हनुमान तथा उनके भाई एक ऋषि को आज्ञा को अवहेलना करके एक सरोवर के किनारे पहुँचते हैं। तत्पश्चात ये लंका को तरफ प्रस्थान करते हैं और मनुष्य रूप धारण कर अंगूठी सीता को दे देते हैं, परन्तु वहाँ ये बड़ा उत्पात करते हैं। ये राजा का घोड़ा देवी शान्ता के घोड़े से बांध देते हैं। तत्पश्चात् हनुमान और उनके भाई पुनः वानर रूप धारण कर लेते हैं। चैतन्य होने पर रावणासुर अपने सैनिकों को इन दोनों को पकड़ने के लिए छोड़ते हैं। ये कर्मचारी इन्हें पकड़ लेते हैं। इनको मारने का एक ही उपाय है कि हमारी पूंछों में कपड़ा बाँधकर उस पर तेल डालकर आग लगा दो जाय सैनिक ऐसाही करते हैं। इस पर ये रावणासुर के नगर लंका के सब महलों को जला डालते हैं। और पीछे समुद्र में कूद कर राम के पास पहुँच जाते हैं। फिर राम रावण का भीषण संग्राम होता है। रावणासुर के मरने के पश्चात् जब सीता को लेकरराम अपनी नगरी में लौट आते हैं। तभी श्री राम की इच्छा होती है कि हनुमान मनुष्य रूप दिया जाय। वे इनको एक वृक्ष का फल खिलाते हैं और वह एक सुन्दर युवा बन जाता है। इसके पश्चात् सीता के निर्वासन की कथा तथा लवकुश के जन्म की कथा मिलती है।[1]

चम्पा में डॉ0 रघुवीर के अनुसार राम कथा का प्रचार छठवीं शताब्दी में जावा में 9वीं शताब्दी में, कम्बोडिया में 11 वीं शताब्दी में

1- नव देश में रामायण कथा- डॉ0 रघुवीर- आज 23-10-1966 पृ0 14 कालम 1-3

तथा थाईलैण्ड में बारहवीं शताब्दी में हुआ।[1] वस्तुतः रामकथा के ही सन्दर्भों में ही हनुमान कथा का भी प्रचार प्रसार हुआ, एतदर्थ जहाँ भी राम कथा का वर्णन प्राप्त होता है वहाँ पर हनुमान कथाओं का सन्दर्भ प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त सिंघल में जो राम कथा प्राप्त होती है, वह कई स्थलों पर आस पास के देशों में प्रचलित राम कथा से बिल्कुल भिन्न है। वहाँ हनुमान के स्थान पर बालि लंका जाते हैं और सीता को राम के पास पहुँचा देते हैं।

सिंहल में राम कथा का जो स्वरूप सुरक्षित है, उसमें राम अकेले ही वनवास जाते है तथा उनकी अनुपस्थिति में सीता को रावण हर ले जाता है। वहाँ बाली हनुमान का स्थान लेते हैं । वे लंका का दहन करके सीता को राम के पास ले आते है। इसमें रावण का सीता चित्र बनाती है, इसकारण उनका परित्याग होता है। वाल्मीकि के आश्रम में सीता को एक बालक उत्पन्न होता है तथा वाल्मीकि द्वारा दो और बालकों की सृष्टि होती है। अन्त में इन तीनों का राम की सेना के साथ युद्ध होता है।[2] यह स्वरूप राम कथा का प्राचीन हो सकता है।

अनामक जातकम में राम सीता वनवास, सीताहरण, बाली सुग्रीव युद्ध सेतु बन्ध, अग्नि परीक्षा की कथायें वाल्मीकि के रामायण की भाँति ही प्रायः वर्णित है। इसमें राम अपने मामा के आक्रमण की तैयारियाँ सुनकर ही वन को चले जाते हैं। बाली राम के धनुष संधान की क्षमता सुनकर ही भाग जाता है, उसको मारने का अवसर ही नहीं आता। इन राम कथाओं का अनुवादडॉ० रघुवीर ने किया है।[3] यदि अनामकम् जातकम तथा दशरथ कथानकम् दोनों को मिला दिया

1- उपर्युक्त, पृ0 14 कालम-1

2- हिन्द एशिया में राम कथा- बुद्धि नाथ मिश्र- आज साप्ताहिक, 30 अप्रैल, 1967, पृ0 13

3- रामायण इन चाइना- रघुवीर, प्रो0 डा0 एव चिक्यो यमा मोटो- दी इन्टर नेशनल अकादमी ऑफ इंडियन कल्चर-लाहौर, अगस्त 1938

तो भारत में प्रचलित राम कथा का कुछ स्वरूप खड़ा हो सकता है।

जावा में राम कथा प्रायः सातवीं शताब्दी के अन्त में पहुँच चुकी थी जैसा कि वहाँ के जोग जकार्ता या अयोध्या कार्ता में परम ननन या परम ब्रह्म के शिवमन्दिर के निचली भीत के पाषाण खण्डों पर उत्कीर्ण फलकों से ज्ञात होता है। यहाँ की कथा वाल्मीकि के रामायण के आधार पर है। इसके अतिरिक्त सेरी राम की प्रचलित हस्तलिपि 1633 की है।[1] हिकायत सेरी राम में रावणचरित से प्रारम्भ कर के सीता त्याग तथा राम सीता मिलन तक की कथा है। इसमें भी हनुमान राम के वीर्य उत्पन्न बताये जाते है।[2] यहाँ त्रिजटा वृद्ध आशा और निष्ठा के रूप में प्रदर्शित है। मलाया के राज्य सभा में रामायण पढ़ने और नृत्य में राम कथा को दर्शाने की प्रथा बहुत प्राचीन काल से है। जावा में आज भी रामायण नृत्य की शिक्षा सोलो नगर में मुख्य रूप से दी जाती है। इस सन्दर्भ में राम कथा का गायन मंचन भी होता है। प्रत्येक पात्र की रंग योजना निश्चित है, जैसे रावण का मुख लाल तथा रावण, हनुमान का मुख श्वेत रहता है। सेरीराम के कथनानुसार राम हनुमान के कन्धे पर सेतु पार करते हैं। पतनी पाठ के अनुसार हनुमान राम के कन्धे को आधार बनाकर कूदते हैं। इस कथा के सन्दर्भ में यह भी मिलता है कि समुद्र लंघन करते समय हनुमान का वीर्य समुद्र में गिर गया इसे मछलियों की रानी ने निगल लिया और गर्भवती हो गयी इस कथा में हनुमान अपनी छलांग में जाकर उतरते हैं और उनका आतिथ्य स्वीकार करके

1- बुल्के- रामकथा पृ0 268 दूसरा संस्करण।
2- उपर्युक्त पृ0 270

उन्हीं के बताये हुए मार्ग से जाकर लंका पहुँचते हैं।[1]

लंका में इन्हें राम के नाम एक पत्र देने का भी विवरण प्राप्त होता है।[2] यहाँ के वर्णित कथा के अनुसार एक भिक्षा का रूप धारण कर लंका में प्रवेश करते हैं।[3]

एक अन्य सन्दर्भ में सेरी राम के कथनानुसार हनुमान एक पक्षी का या एक और पाठ के अनुसार मधु मक्खी का रूप धारण करके ही लंका में प्रवेश करते हैं तथा उन्हें सीता के जीवित होने का समाचार भी मिल जाता है। इसी समय हनुमान बहुत से महर्षियों तथा भिक्षुओं को एक मन्दिर की ओर जाते देखते हैं और उनकी बात चीत से यह जानकारी प्राप्त कर लेते हैं कि इन्द्रजित मृत राक्षसों को जलाने के लिए यज्ञ कर रहा है। यह समाचार वे ही लंका से आने पर राम को देते हैं तथा लक्ष्मण को लेकर यज्ञ का विध्वंस करते हुए दृष्टिगत होता है।[4]

सेरी राम के अन्य कथनानुसार राम द्वारा पराजित तथा आहत रावण रणभूमि में पड़ा रहता है। सीता की अग्नि परीक्षा के पश्चात भरत और शत्रुघ्न लंका पहुँचते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य कथाओं के सन्दर्भ भी प्राप्त होते हैं।

हनुमान जन्म के पश्चात एक दिन वन में फल खोजते हुए नवोदित सूर्य को लाल फल समझकर आकाश में कूद जाते हैं, जिसमें इनके मरने का संकेत प्राप्त होता है। भुवन भास्कर भगवान सूर्य इनके पितामह की प्रार्थना स्वीकार कर इन्हें पुनः जीवित कर देते हैं, तथा माया युद्ध के अनेक मंत्र इनको प्रदान करते हैं।[5]

1- बुल्के रामकथा- पृ0 499
2- उपर्युक्त -पृ0 510
3- जनरल ऑफ रायल एशियाटिक सोसाइटी स्टेट्स ब्रान्च- 1910, पृ0 20
4- बुल्के -पृ0 574-575
5- बुल्के कथा - पृ0 661

इसके अतिरिक्त तिब्बत में भी राम कथा संभवतः आठवीं नवीं शताब्दी में पहुँच चुकी थी। राम कथा की हस्तलिखित प्रतियाँ प्राप्त हुई, जो सम्भवतः इस काल की ही थी।[1] वहाँ पर वर्णित राम कथा में हनुमान को राम अंगूठी के अतिरिक्त एक पत्र भी देते हैं। विवर में प्रवेश करते समय हनुमान जी की पूँछ पकड़ कर सब वानर भीतर घुसते हैं। वहाँ की देवी की पुत्री इन्हें मोहित कर देती है, जिससे हनुमान को दिशा भ्रम हो जाता है, परन्तु वे आगे बढ़ते जाते हैं। विवर से बहिर्गत होने पर संपाती केस्थान पर पदा नामक गीध से उनकी भेंट होती है, वह इन्हे अपने पिता अगजम की कथा सुनाता है, और कहता है कि रावण के हाथ सीता को छुड़ाने के प्रयास में मारा गया था। इस कथा में पदा के भाई संपवा के पंख जलते हैं।[2] हनुमान के प्रयास से सीता राम का मिलन होता है।

इसके अतिरिक्त खोतानी जो पूर्वी तुर्किस्तान में प्रचलित है, बौद्ध धर्म से प्रभावित है। प्रायः घटनायें तिब्बती रामायण की भाँति की यहाँ भी है। प्रारम्भ में बौद्ध प्रस्तावना जातकों की भाँति दी हुई है, इसके पश्चात् रावण के कुल का वर्णन है। हनुमान सम्बन्धित कोई विशेष सन्दर्भ नहीं हो पा है।

तदनन्तर चियन नाम में 7वीं शताब्दी के एक शिलालेख से ऐसा पता चलता है, कि वहाँ वाल्मीकि राम्यण का प्रचार छठी शताब्दी के पूर्व ही हो गया था। वहाँ का प्राचीन राम परक साहित्य अब सुरक्षित नहीं है।

1- तिब्बत हिन्द एशिया में राम कथा- बुद्धि नाथ मिश्र- आज, साप्ताहिक अंक 30 अप्रैल, 1967 पृ0 13 कालम-1

2- मारेशल लालू- लहिस्तु आर द राम आ तिब्बेते- जुरनाल आजियातिक आक्तोब्र डेसाम्ब्र-1936 पृ0 560-562

अठारहवीं शताब्दी की राम कथा जो मिलती है, उसमें रावण दक्षिण हिन्द चीन का राजा बताया जाता है, और राम के पिता उत्तर हिन्द चीन के। रावण दशरथ के राज्य पर आक्रमण करता है और उन्हे हराकर सीता को हरण करके ले जाता है।[1] इस प्रकार राम कथा का जो प्रचार विदेशों में हुआ था उनमें यहाँ की राम कथा का रूप बहुत परिवर्तित प्राप्त होता है। विदेशी कथाओं में हनुमान के चरित्र में एकात्मकता नहीं पायी जाती। परन्तु एकरूपता तो भारतीय वाङ्मय में भी नहीं पाई जाती है, जो काल भेद और प्रांतभेद के कारण होना स्वाभाविक था। हनुमान का स्वरूप जो जैन ग्रन्थों में प्राप्त होता है वह वा०रा० के चरित्र से मूलतः भिन्न है। जो चरित्र इनका वा०रा० में मिलता है वह आनन्द रामायण के अनुसार नहीं है। इससे सिद्ध होता है कि विदेशों में हनुमान स्वरूप की झलक मात्र प्राप्त होता है। इतिशुभम।

1- बुद्धि नाथ मिश्र- तिब्बत, हिन्द एशिया में राम कथा- "आज" साप्ताहिक विशेषांक 7 मई, 1967, पृ014, कालम -3-4

उपसंहार

भारतीय भक्ति परम्परा में हनुमान भक्ति का विशिष्ट स्थान है। भारत में भी अन्य देशों की भाँति प्राचीन काल से ही कपि पूजा होती थी, जिसका संकेत ऋग्वेद में वृषाकपि के सन्दर्भ में मिलता है, जिनकी पूजा इन्द्र की पूजा से अधिक होने लगी थी।[1] भक्ति ईश्वर विषयक अनन्य अनुराग ही है, जिसके हृदय में स्थिर हो जाने पर ज्ञान कर्म शून्य सा हो जाता है। भक्ति मुख्यतः अहैतुकी ही है, जिसके उदय मात्र से ही भक्त की अस्मिता का विलयन हो जाता है और समस्त आकांक्षाएं भी समाप्त हो जाती हैं। वास्तव में यह भक्ति किसी विराट स्वरूप के प्रति ही होती है, और जिसे इसकी मार्मिक अनुभूति होती है, वही सच्चा भक्त या समादरित हो सकता है। भक्ति वह दर्पण है जहाँ सद्विचार सदैव प्रतिबिम्बित होता रहता है।

भारतीय भक्ति का सांगोपांग विश्लेषण प्रस्तुत करने वाले चार आचार्य मुख्य रूप से दृष्टिगत होते हैं। इनके द्वारा विरचित ग्रन्थों के आधार पर सम्पूर्ण वैष्णव भक्ति की लता लहलहा रही है। नारद भक्ति सूत्र, शाण्डिल्य भक्ति सूत्र, रूप गोस्वामी की उज्ज्वल नीलमणि, भक्ति रसामृत सिन्धु ही भक्ति के मूल स्रोत हैं। इन ग्रन्थों में भक्ति की विभिन्न धाराओं एवं परम्पराओं का उल्लेख प्राप्त होता है। भक्ति रसामृत सिन्धु में भक्ति को दो रूपों में विभाजित किया गया है-1- गौणोपरा परा भक्ति सर्वश्रेष्ठ भक्ति है तथा यह सिद्धावस्था की भक्ति है। गौणी भक्ति साधनावस्था की भक्ति है। इसके

1- ऋग्वेद- 10-86 सूक्त।

दो भेद है- वैधी तथा रागानुगा। मूलतः वैधी भक्ति शास्त्रों से अनुशासित है।[1] रागानुगा भक्ति प्रेम पर आधारित है, इसके भी दो भेद है, कामरूपा और सम्बन्ध रूपा। गोपिकाओं की भक्ति कामरूपा थी। सम्बन्ध रूपा भक्ति आराधक और आराध्य के सम्बन्ध के अनुसार चार प्रकार की मानी जाती है- दास्य, सख्य वात्सल्य और दाम्पत्य। दास्य भक्ति के प्रतीक हनुमान, सख्य भक्ति के प्रतीक उद्धव, और वात्सल्य भक्ति की प्रतीक यशोदा तथा दाम्पत्य भक्ति की प्रतीक राधा ये आदर्श भक्ति की कोटि में ही आते हैं। दास्य भक्ति के प्रतीक हनुमान हैं, एतदर्थ भक्ति परम्परा में हनुमान का स्थान सर्वोपरि सिद्ध होता है। भारतीय धर्म शास्त्रों में इन आदर्श भक्तों के अतिरिक्त अन्य भक्तों का भी विवरण प्राप्त होता है, जिनका चरित्र और जीवन भारतीय भक्ति को एक नवीन दिशाबोध प्रदान करता है। मूलतः राम कथा के पात्रों में हनुमान के अविरल भक्ति के अतिरिक्त उनके बल, बुद्धि और अद्भुत कृत्यों का वर्णन भी प्राप्त होता है। भक्ताधिराज श्री हनुमान एक आदर्श सेवक होने के साथ-साथ राम के अनन्य भक्तों के परमाधार भी हैं। परवर्ती साहित्य में भी उनके भक्ति का वर्णन प्राप्त होता है। राम के अनन्य भक्त होने के कारण ही वे स्वयं जनता की भक्ति के आलम्बन बन सके।

ईश्वर के प्रति पूर्णानुरक्ति ही भक्ति है, परन्तु जब तक मन माया मय संसार में लिप्त है, तब तक वह ईश्वर के प्रति अनुरक्त नहीं हो सकता। वस्तुतः हनुमान का जीवन पूर्ण भक्ति मय था जिसके कारण वे आज भी सर्ववन्द्य बने हुए हैं। हनुमान के चरित्र कथा के सन्दर्भ में तीन क्रमिक सोपान लक्षित होते हैं।

1- शासनेनैव शास्त्रस्य सा वैधी भक्ति रुच्यते श्लोक संख्या-4, लहरी 2, भक्ति रसामृत सिन्धु।

प्रारम्भ में वे वानरराज के सुयोग्य सचिव के रूप में मध्य में कुशल दूत के रूप में,और अन्त में दास्य भक्ति के आदर्श रूप में। हनुमान जी को अपने दासत्व का अहंकार भी है-

दासोऽहं कोसलेन्द्रस्य रामस्याक्लिष्ट कर्मणः।
हनुमान् शत्रु सैन्यानां निहन्ता मारुतात्मजः ।।[1]

हनुमान राम के प्रति पूर्णरूपेण समर्पित थे। हनुमान जी आदर्श भक्त होने के साथ-साथ महान् विद्वान भी थे। हनुमान जी की विद्वता वाग्निपुणता उनके चरित्र की महत्वपूर्ण विशेषता है। महर्षि अगस्त्य ने भी उनके शास्त्रज्ञता तथा व्याकरणज्ञता का उल्लेख किया है। वेदज्ञ हनुमान जी ने सूत्र,वृत्ति,वार्तिक, महाभाष्य और संग्रह इन सबका अच्छी तरह से अध्ययन किया है। अन्यान्य शास्त्रों के ज्ञाता तथा छन्द शास्त्र के अध्ययन में भी इनकी समानता करने वाला दूसरा कोई विद्वान नहीं है। सम्पूर्ण विद्याओं के ज्ञान तथा तपस्या के अनुष्ठान में यह बृहस्पति की बराबरी करता है। नवव्याकरण के सिद्धान्त को जानने वाला हनुमान निश्चित ही ब्रह्मा के समान सदा समादरित रहेगा।[2]

हनुमान निवृत्त तृष्ण भक्त थे,इनके जीवन में प्रभु को छोड़कर कोई आकांक्षा उत्पन्न नहीं हुई। इनके हृदय कुंज में अनपायनी भक्ति का निवास है। विद्याबल,वैभव,सर्वगुण सम्पन्न होने पर भी अकिंचन है। यही कारण है कि इनके तेज के समक्ष कोई ठहर नहीं पाता है,क्योंकि इनका सम्पूर्ण जीवन श्री राम पदारविन्द मकरन्द के उत्कट सौगन्ध में आनन्दोल्लासित है। एतदर्थ रावणादि

1- वा0 रामायण- सुन्दरकाण्ड- 30/102
2- वा0रामायण - उत्तर 36/46/47

का तेज इनके तेज से अभिभूत हो जाता है। यहाँ हनुमान जी की यही याचना है-

"स्नेहो मे परमो राजंस्त्वयि तिष्ठतु नित्यदा
भक्तिश्चनियता वीर भावो नान्यत्र गच्छतु।।"[1]

भक्ताधिराज श्री हनुमान जी भगवान श्री राम से यही प्रार्थना करते हैं कि प्रभु मेरी बुद्धि अन्य भावों में कुंठित हो जाय, आप में ही सदैव स्थिर रहे। मनसा, वाचा, कर्मणा, आपके श्री चरणों में हमारी आस्थापूर्ण है। इस प्रकार हनुमान जी की अनन्य भक्ति एवं गुण वैभव अवर्णनीय है। हनुमान भक्ति का रूप मूलतः विलक्षण है। जब मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम से भक्ति स्वरूपा भगवती सीता दूर चली गयी, तब भी भक्ति के परमाधारक हनुमान की आवश्यकता पड़ती है। हनुमान जी ही भक्ति के पूर्ण अनुसंधान में सफल होते हैं। यद्यपि ज्ञान की परम परिणति भक्ति ही है। परन्तु कतिपय मनीषी भेद मानते हैं। भक्ति के सन्दर्भ में प्राचीन काल से ही भेद भावना चली आ रही है, इस दूरी को भी यदि कोई मिटा सका, तो वह भक्ति के अनन्य साधक हनुमान ही हैं।

विमोह नगरी लंका में से भक्ति को निकाल लेना यह कार्य हनुमान जी द्वारा ही संभव है। प्रायः ऐसा देखा जाता है कि विमोह नगरी लंका में पहुँचने के बाद संसार का प्राणी विमोहित हो जाता है और अपने ध्येय को विस्मृत कर देता है लेकिन हनुमान जी ही ऐसे भक्ति के कुशल पारखी हैं,

---

1- उपर्युक्त -4/16

और वह लंका में भक्ति स्वरूपासीता को पूर्णरूप से पहचान लेते हैं। यह हनुमान जी की सर्वोत्कृष्ट भक्ति का परिचायक है। वास्तव में हनुमान जी राम भक्तों के परमाधार रक्षक और श्री राम मिलन के अग्रदूत है। राम भक्तों को हनुमान जी से सहज ,प्रेम,आश्रय और सस्नेह रक्षा प्राप्त होती है। हनुमान जी के वचन में ही नहीं,वरन् उनके वास्तविक जीवन में कोई असम्भव तत्व नहीं था। हनुमान भक्ति के अनेकों उदाहरण वाल्मीकि रामायण में प्राप्त होते हैं। मृतक को जीवन देना हनुमान जी के लिए अति सामान्य बात है। श्री लक्ष्मण के जीवन को तथा उनके द्वारा प्रभु श्री राम की भी सुरक्षा के निमित्त श्री हनुमान जी ही हैं। उनकी भक्ति की महानता को देखकर जिस प्रकार अखिल विश्व के लोगों के लिए सागर सागरोपमः सागर अपनी उपमा आप ही है,उसी प्रकार हनुमान भक्ति के उपमान स्वरूप हनुमान स्वयं ही हैं।

भारतीय भक्ति परम्परा में हनुमान के चरित्र के विभिन्न आयामों के अन्तर्गत उनके अद्भुत कार्य क्षमता का ज्ञान प्राप्त होता है। वैज्ञानिक दृष्टि से यदि विचार किया जाय तो हनुमान जी आँक्सीजन प्रतीत होते हैं, क्योंकि प्राणिमात्र को जीवित रहने के लिए आँक्सीजन की आवश्यकता पड़ती है। मूलतः हनुमान जी का विशुद्ध वैज्ञानिक एवं व्यापक स्वरूप आँक्सीजन है जिसके ग्राण करने पर आनन्दानुभूति होती है,उसमें श्री राम का व्यापक स्वरूप भी दृष्टिगत होता है। इसलिए आँक्सीजन को राम रसायन कहा जा

सकता है-

रामदूत अतुलित बल धामा।
अंजनि पुत्र पवन सुत नामा।।[1]

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से ऑक्सीजन का छोटे से छोटा अंश या कण जो स्वतन्त्र अवस्था में रह सके, अणु कहलाता है, और उसमें ऑक्सीजन के सभी गुण होते हैं। इसलिए अणु में भी आनन्द प्रदान करने का गुण होता है। हनुमान जी का विशुद्ध वैज्ञानिक व्यापक एवं आनन्दमय स्वरूप ऑक्सीजन है। ऐसा कतिपय साक्ष्यों के आधार पर ज्ञात होता है।

उक्त मूलभूत तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है, कि हनुमान जी ही भविष्य देवता हो सकते हैं, क्योंकि भारतीय धर्मशास्त्रों में तैतीस करोड़ देवताओं का सन्दर्भ प्राप्त होता है। उसमें से मात्र हनुमान जी को ही अजरता, अमरता का वरदान प्राप्त हुआ है-

अजर अमर गुन निधि सुत होहू।
करहुँ बहुत रघुनायक छोहू।[2]

वास्तव में भविष्य देवता वही हो सकता है जो अजर अमर हो। हनुमान को अजर अमर माना जाय या नहीं, यह अपने-अपने विश्वास की बात है। इतिहास घोषित किया जाने वाला रामायण ग्रन्थ राम को तो लोकान्तर गमन

1- हनुमान चालीसा के अन्तर्गत वर्णित- गोस्वामी तुलसीदास जी कृत।
2- श्री राम चरित मानस- सुन्दरकाण्ड- 17/3

बताता है किन्तु हनुमान जी के अजरत्व अमरत्व को साक्षी देता है,और कहता है कि वे अब भी सशरीर इस भारत भूमि में विद्यमान है। रामायण ही नहीं, महाभारत भी उनके अजरत्व अमरत्व की साक्षी देता है। हनुमान जी ही अर्जुन के रथ पर आसीन हुए थे, भीम का गर्व आदि चूर्ण किया था। इस सन्दर्भ में एक बहु प्रचलित श्लोक भी प्राप्त होता है-

अश्वत्थामा बलिर्व्यासः हनुमानश्च विभीषण
कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः ।।[1]

अर्थात् अश्वत्थामा बलिव्यास,हनुमान ,विभीषण ,कृपाचार्य और परशुराम चिरजीवी हैं। चिरजीवी का तात्पर्य युगों-युगों तक विद्यमान रहने वाला।

वास्तव में भविष्य देवता वही हो सकता है जो चिरजीवी है। एतदर्थ हनुमान जी भविष्य देवता के रूप में सुप्रसिद्ध हैं। हनुमान सर्वव्यापक रूप से सर्वत्र विद्यमान हैं। भविष्य देवता ही आधुनिक युग का महान शक्तिशाली देवता हो सकता है। हनुमान जी भविष्य देवता होने के कारण सर्ववन्द्य हो सके हैं।

हनुमान के आधुनिक स्वरूप का भी विश्लेषण किया जाता है। हनुमान के आधुनिक स्वरूप में उनका मुख वानर के सदृश बनाया जाता है,शरीर मनुष्य का तथा लांगूल लम्बी पुच्छ सहित वृषभ की भाँति थी। इनका मुख प्राचीन कपि पूजन का प्रतीक है,शरीर तथा इनकी गदा इनके आदिवासी होने का प्रमाण

1- तुलसी सन्दर्भ और समीक्षा- सं0डॉ0 त्रिभुवन सिंह-बल्देव प्रसाद मिश्र
पृ0 177

देते हैं। इनकी वृष के समान पूँछ इनकी अपूर्व शक्ति का प्रतीक है, क्योंकि प्राचीन सभ्यताओं में वृषभ को शक्ति का प्रतीक मानकर पूजा होती थी। इसके अतिरिक्त हनुमान जी को एक हाथ में पहाड़ लिए हुए उड़ते हुए दिखाया गया है, यह इनके वज्ररूप का प्रतीक है। हनुमान जी के हाथ में गदा के भी कई स्वरूप प्राप्त होते हैं। नेपाल में इनकी मूर्तियों में जो गदा दिखाई देती है, वह प्राय: कुल्हाड़ी जैसा प्रतीत होता है। हनुमान जी के किसी-किसी मूर्ति में इनकी गदा का रूप मुद्गल की भाँति प्रतीत होता है। हनुमान जी के आधुनिक रूपों में अन्य कई रूप प्राप्त होते हैं, जैसे राम लक्ष्मण को कन्धे पर लिए हुए या एक हाथ वक्षस्थल पर रखे हुए और दूसरा मस्तक पर रखे हुए आदि राम कथा के विस्तार के फलस्वरूप कल्पित किये गये प्रतीत होते हैं। हनुमान जी का हाथ जोड़े हुए तथा वीर आसन में बैठे हुए स्वरूप इनको राम का भक्त प्रदर्शित करने की इच्छा से कल्पित ज्ञात होता है, इससे ऐसा ज्ञात होता है कि, इनका पंचमुखी स्वरूप इनको रुद्रावतार मानने पर निर्माण किया गया होगा, जैसे आशुतोष के पंचमुखी लिंग बनाये जाते हैं। हनुमान को चार हाथों वाला स्वरूप इनको विष्णु का अवतार मानकर बनाया गया होगा। इनके हाथों में आयुधों को देखने से प्रतीत होता है। दस हाथ वाले हनुमान त्रिदेव रूप के प्रतीक ज्ञात होते हैं।

मूलत: पशु पक्षी से सन्दर्भित देवताओं की कल्पना भारत में ही नहीं अपितु मिस्र, बाबुल, चीन तथा दूसरे प्राचीन देशों में भी कीजाती है। अन्य देशों की भाँति यहाँ भी हाथी के मस्तक वाले गणेश की, वाराह मुख वाले वाराह की, कपि के मस्तक वाले हनुमान की कल्पना की गयी। उक्त विवरण के आधार पर ऐसा ज्ञात होता है कि हनुमान की उपासना कपि के रूप में ही

प्रारम्भ हुई होगी। गुप्तकालीन मूर्तियों में इनका मुख केवल कपि का ज्ञात होता है,शरीर पूरा मनुष्य का प्रतीत होता है।

इसप्रकार इनके आधुनिक स्वरूप में हमें इनका यक्ष तथा भारत के आदिवासियों के देवता के रूप में सम्मिश्रण स्पष्ट रूप से प्रतिदर्शित होता है। इनके नामों में भी मारुति,महावीर,बजरंगी वली यक्षों से सम्बन्धित मिलते हैं और हनुमन्त आदि वासियों से।

वाल्मीकि रामायण में महर्षि वाल्मीकि ने हनुमान के मानवीय चरित्र को यथार्थ रूप में तथा मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया है,परन्तु अलौकिकत्व को समन्वित रूप देने का भी प्रयास किया है। इसके अतिरिक्त हनुमान को वानर श्रेष्ठ कपि तथा व्याकरण और शास्त्रों का महान पण्डित भी सिद्ध किया है,तथा उनको आदिवासियों से भी सम्बन्धित बताया है। महाकवि तुलसीदास ने हनुमान के दिव्य अलौकिक और अवतारी चरित्र को राम तथा सीता के बाद सर्वाधिक विस्तृत रूप से भक्त रूप में भक्ति के सर्वोत्कृष्ट साधक रूप में प्रस्तुत किया है।

अन्ततः यह कहा जा सकता है कि भारतीय भक्ति परम्परा में हनुमान का जो भक्तिपरक चरित्र तुलसी साहित्य में प्राप्त होता है,वह अन्यत्र किसी भी साहित्य में उतनी स्पष्टता के साथ नहीं प्राप्त होता है। विश्ववाङ्मय में मारुति सरीखे अनन्य सेवी अकिञ्चन विरोह एवं निष्ठावान भक्त का अन्य उदाहरण मिलना कठिन है।

– – –

परिशिष्ट "क"

हनुमान प्रयोग- (लेखक तुलसीदास)

(वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय सरस्वती भवन स्थ पाण्डुलिपि संख्या 24520 क्रम संख्या 3/87 लिपिकाल: सं० 1948)

1- स्वर्णशैल संकास कोटि रवि तरुण तेज घन।
उर विशाल भुजदण्ड चण्ड नख वज्र वज्र तनु।।
पिंगल नयन भृकुटी कराल रसना रद आनन।।
कपिश केश करकस लंगूर खल दल बल भानन।।
कह तुलसि दास बस जासु उर मारुत सुत मूरति विकट।।
संताप ताप तेहि पुरुष कहुँ सपनेहुँ नहि आवत निकट।।7।।

2- जयति हनुमान बलवान पिंगाक्ष शुचिकनक गिरि शरिश तनु रुचिरवीर
अंजनी सुवन सियराम प्रियकोश पति दलन तमी चर कटक वीरं।।
दहन शक्रारि वन महाद्रुम ज्ञानघनं सुयश कह निगम सब सुमतिधीरं।
समुझि भुज जोर कर जोरि तुलसी कहै हरह दुःख-दुसह भव
भीषम पीरं।।8।।

सवैया- 3-करम के पास परिताप कीधौ श्रापहु ते,
बाढ़ी राशि व्यथा सो तो महा दुखदाई है,
जंत्र मंत्र टोटकादि औषद अनेक किये,
घटत न नेकुमानो अवरल पाई है।
तुलसी कहत कर जोरि छल छाड़िनाथ,
तुम्हे तन वली जग अवर अधिकाई है,
दीनै मानि महावीर दूरि कीजै शीश परि
राम दूत तेरो जस सर्व वेद गाई है।।9।।

4- राम काज लागि अवतारा लोन्हो को धराई
जनको सहाय हेतु देर न लगाइये।
शील धाम पूरा काम आठो जाम लेत नाम
कोशमति कृपा कर रोग विनसाइए।
दास शोत पोर काल नेमि सम जानि वायु
पूत लूमते लपेटि के भगाइए।
डाटि के चपेटि मारि डुरि डारि कोश नाथ,
पुण्य वाहु तुलसी के शोत दिन ल्याइए।।10।।

5- पाप के प्रभाव को को कर्म के सुभाव को को
काल के करालता को प्रेरो काहू रोश को।।
जंत्र मंत्र टोटको को कुलाचार खोट को को।
पूर्व दिज द्रोह को जप योध सुवनशोल को।।
ऐते हेतु सम्भव पिशाचो रूप शिवापीर।
भागि जाहि वेगवानि जान वलि को शाको।
आनि हनुमान की सपथ बलवान को दोहाई।
महावीर को जो रहे पोर शोस को।। ।। ।।

परिशिष्ट "ख"

संस्कृत

सहायक ग्रन्थों की अनुक्रमणिका

(अ)

1- अष्टाध्यायी- महर्षि पाणिनि कृत-गीता प्रेस, गोरखपुर

2- अथर्ववेद संहिता-सनातन धर्म प्रेस, मुरादाबाद सं0 1896

3- अग्नि पुराण- आनन्दाश्रम संस्कृत सीरीज 41 हरि नारायण आप्टे आनन्दाश्रम पूना,1900 ई0

4- अध्यात्म रामायण- गीताप्रेस गोरखपुर,13वाँ संस्करण सं0 2020।

5- आनन्द रामायण - प्रकाशक डी0वी0मूल गाँव कर गोपाल नारायण कम्पनी कालका देवी रोड बम्बई 1926

6- अद्भुत रामायण- महर्षि बाल्मीकि विरचितम् रामाचरण विद्यावागीश- प्र0- प्रताप चन्द्र मिश्र सरस्वती यन्त्र मुद्रित 1808 शाके।

7- अनर्घराघव- श्री मुरारिकृत- निर्णय सागर प्रेस बम्बई 1908

(उ)8-उत्तरराम चरितम्-भवभूति-सं0 टी0आर0रत्नम् अय्यर निर्णय सागर, प्रेस बम्बई 1939

(ऋ)9 ऋग्वेद- चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस वाराणसी

(क)10-कठोपनिषद- गीता प्रेस ,गोरखपुर

11- कूर्म पुराण- खेमराज श्री कृष्ण दास वेंकटेश्वर प्रेस मुम्बई सं0 1983

(ग)12- गरुड पुराण- श्री वेंकटेश्वर स्टीम यन्त्रालय बम्बई।

13- गोविन्द रामायण- गुरु गोविन्द सिंह द्वारा प्रणीत राम कथा-विनोदकुमार सन्मार्ग प्रकाश- 13 यू0पी0रोड दिल्ली-6

(छ)14- छान्दोग्योपनिषद- आनन्दाश्रम पूना।

(त)15- तत्त्वसंग्रह रामायण- राम ब्रह्मानन्द अनाल्स आफ ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, मद्रास।

(न)-16- नारद भक्ति सूत्र- गीता प्रेस गोरखपुर ।

17- नील मत पुराण- मोती लाल बनारसी दास-लाहौर

18- नारदीय पुराण- खेम राज कृष्ण दास, वेंकटेश्वर प्रेस,बम्बई,सं0 1980

(प)-19-प्रसन्न राघव- जयदेव कवि विरचितम् सं0 श्री जीवानन्द विद्यासागर भट्टाचार्य,श्री राम पुर 1872 ई0

20- पद्मपुराण- पद्म चरितम् रविषेणाचार्य सम्पादक पन्ना लाल जैन, भारतीय ज्ञानपीठ,प्रथम भाग 1958 द्वितीय भाग फरवरी 1959

(भ) 21- भासनाटक चक्रम- अभिषेक नाटकम् सं0 श्री बल्देव उपाध्याय

(म) 22- महाभारत तात्पर्य निर्णय- मध्वाचार्य

23- मुण्डकोपनिषद- गीता प्रेस, गोरखपुर।

24- मनुस्मृति- चौखम्बा प्रकाशन,संस्कृत सीरिज वाराणसी

25- महाभारत- महर्षि व्यास कृत,गीता प्रेस ,गोरखपुर।

26- मार्कण्डेय पुराण- राम स्वरूप शर्मा द्वारा अनु0 सनातन प्रेस,मुरादाबाद सं0 1992

27- महावीर चरितम् -सम्पादक टोडर मल आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस 1928

28- मेघदूतम् - महाकवि कालिदास कृत देवभाषा प्रकाशन दारागंज,इलाहाबाद-6

29- महानाटक-दामोदर मिश्र

30- श्रीमद्भागवत- नित्य स्वरूप गोस्वामी,ब्रह्मचारिणः वृन्दावन सं0 1955

31- श्रीमद् भक्त रसायन- मधुसूदन सरस्वती।

(य)

32- यजुर्वेद- सं0 वेबर लन्दन 1851

(व)

33- बृहदारण्यक- गीता प्रेस ,गोरखपुर

34- वा0 रामायण - महर्षि वाल्मीकि,गीता प्रेस,गोरखपुर

35- वामन पुराण- श्री वेंकटेश्वर स्टीम मुद्रणालय मार्गशीर्ष सं0 1960

36- वाराह पुराण- खेमराज श्री कृष्णदास वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई 1920 ।

(श)

37- श्वेताश्वतरोपनिषद- गीता प्रेस ,गोरखपुर

38- स्कन्दपुराण- खेम राज श्री कृष्ण दास,वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई 1983

(ह)-

39- हनुमन्नाटक- दामोदर दास कृत।

40- हनुमत्संहिता - हस्तलिखित सरस्वती भवन सं0 1870

41- हनुमदु पासना- श्री कृष्ण दास वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस ,बम्बई।

(हिन्दी तथा अन्य)

(अ)

42- आंजनेय की आत्म कथा- सुदर्शन सिंह चक्र, श्री कृष्ण जन्म स्थान मथुरा

(उ)

43- उत्तरी भारत में संत परम्परा- परशुराम चतुर्वेदी प्रयाग।

(क)

44- कम्ब रामायण और राम चरित मानस- डॉ0 राम प्रकाश अग्रवाल,कल्पना प्रकाशन,मेरठ

45- कृत्तिवास रामायण- हिन्दी अनुवादक- पं0 (महाकवि कृत्तिवास कृत) नन्द कुमार अवस्थी

46- कवितावली- तुलसी दास कृत,अनुवादक इन्द्र देव नारायण,गीताप्रेस,गोरखपुर

47- कृष्ण भक्ति काव्य मेंसखी भाव- शरण बिहारी गोस्वामी।

48- कंबन रामायण-कंबन रचित- अनुवादक श्री न0वी राज गोपालन,बिहार राष्ट्र भाषा परिषद पटना।

49- केशव कौमुदी- राम चन्द्रिका- महाकवि केशव कृत -श्री राम नारायणलाल बेनी माधव ,इलाहाबाद।

(ग)

50- गीता रहस्य अथवा कर्मयोग शास्त्र - श्री बाल गंगाधर तिलक

(च)

51- चिन्तामणि- आ0 राम चन्द्र शुक्ल

(ज)
52- जय हनुमान- श्याम नारायण पाण्डेय कृत
(त)
53- तुलसी दास ,जीवनी और विचारधारा- डॉ0 राजा राम रस्तोगी अनुसंधान प्रकाशन,आचार्य नगर,कानपुर।
54- तुलसी सन्दर्भ और समीक्षा- सं0 डॉ0 त्रिभुवन सिंह,प्रकाशन काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,वाराणसी
55- तुलसी दर्शन मीमांसा- डॉ0 उदय भानु सिंह
56- तुलसी ग्रन्थावली- प्रकाशन नागरी प्रचारिणी सभा,काशी सं0 1980
(द)
57- दोहावली- गोस्वामी तुलसी दास कृत,गीताप्रेस,गोरखपुर।
(प)
58- पद्मावत का काव्य सौन्दर्य- शिव सहाय पाठक-प्रकाशन स्टूडेन्ट स्टोर रामपुर रोड, बरेली।
(भ)
59- भक्ति का विकास- डॉ0 मुंशी राम शर्मा 'सोम'प्रकाशन-चौखम्भा भवन वाराणसी।
60- भक्ति परम्परा में निराला- डॉ0 उर्मिला सिंह
61- भक्ति काव्य के मूल स्रोत-डॉ0 दुर्गाशंकर मिश्र
62- भागवत सम्प्रदाय - डॉ0 बल्देव प्रसादउपाध्याय।
(म)
63- मध्यकालीन धर्म साधना-आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
64- मध्ययुगीन काव्य साधना- डॉ0 राम चन्द्र तिवारी
65- मध्यकालीन साहित्य में अवतार वाद- डॉ0 कपिल देव पाण्डेय
66- मालवीय लोक साहित्य- एक अध्ययन- डॉ0 श्याम परमार।
67- गुजराती रामायण- महा कवि गिरधर कृत- डॉ0 गजानन्द नरसिंह साठे डॉ0 दोनेश हरिलाल भट्ट।
68- माधुर्य केलि कादम्बनी- मधुराचार्य
69- मानस में राम कथा- डॉ0 बल्देव मिश्र,प्रथम संस्करण सं01956

(र)

70- राम कथा के पात्र (बाल्मीकि,तुलसी एवं मैथिली शरण गुप्त के सन्दर्भ) ले0 डॉ0 ह0म0 राजूरकर,प्र0 ग्रन्थम् ,कानपुर।

71- राम कथा (उत्पत्ति और विकास)- लेखक रेवरेंड फादर कामिल बुल्के, एस0जे0,एम0ए0 डी0फिल0,हिन्दी परिषद प्रकाशन,प्रयाग विश्वविद्यालय प्रयाग।

72- राम चरित मानस का काव्य शास्त्रीय अनुशीलन- डॉ0 राज कुमार पाण्डेय, अनुसंधान प्रकाशन,आचार्य नगर ,कानपुर।

73- राम चरित मानस और पूर्वांचलीय राम काव्य- डॉ0 रमानाथ त्रिपाठी आदर्श साहित्य प्रकाशन,वेस्टगोलम्पुर,दिल्ली।

74- राम चरित मानस- गोस्वामी तुलसी दास कृत,गीता प्रेस,गोरखपुर

75- राधा वल्लभ सम्प्रदाय -सिद्धान्त और साहित्य -डॉ0 विजयेन्द्र स्नातक

76- राम कृष्ण काव्येतर- हिन्दी सगुण भक्ति काव्य-डॉ0 छोटे लाल दीक्षित

77- राम की शक्ति पूजा- महाकवि सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला" कृत।

78- राम दूत-(महाकाव्य) डॉ0 कुंवर चन्द्र प्रकाश सिंह-प्रकाशन- आत्माराम एण्ड सन्स ,दिल्ली-लखनऊ।

79- राजस्थानी राम कथा- विमलेश-ललित प्रकाशन मन्दिर,झुंझनू,राजस्थान

80- रंग नाथ रामायण- राजा गोनबुद्ध राजू रचित (तेलगु रामायण) अनुवादक ए0सी0 कामाक्षिराव- संपादक- अवध नन्दन,बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना,सं0 1961

81- राम भक्ति में रसिक सम्प्रदाय- डॉ0 भगवती प्रसाद सिंह- गोरखपुर

82- रीतिकालीन कविता में भक्ति तत्व- डॉ0 उषा पुरी,दिल्ली।

83- रुद्रावतार हनुमान- अंजना प्रकाशन,वाराणसी-2

(व)

84- विनय पत्रिका- गोस्वामी तुलसी दास कृत,गीता प्रेस,गोरखपुर

85- वृहद उपासना रहस्य- प्रेम लता कृत

(स)

86- सूर और उनका साहित्य- डॉ0 हरवंश लाल शर्मा

87- सूफी मत साधना और साहित्य- डॉ0 राम पूजन तिवारी

88- संत साहित्य- डॉ० सुदर्शन

89- संत वैष्णव काव्य पर तांत्रिक प्रभाव,डॉ० विश्वम्भर नाथ उपाध्याय

(ह)

90- हनुमान के देवत्व तथा मूर्ति का विकास- ले० डॉ० राय गोविन्द चन्द्र
प्रकाशन हिन्दी साहित्य सम्मेलन,प्रयाग

91- हिन्दुस्तान की पुरानी सभ्यता-डॉ० बेणी प्रसाद।

92- हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय- डॉ० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल।

93- हिन्दी साहित्य का प्रवृत्यात्मक इतिहास-डॉ० शिव मूर्ति शर्मा

94- हिन्दी काव्य में भक्ति का स्वरूप- डॉ० नित्यानन्द शर्मा।

95- हिन्दी साहित्य का इतिहास- डॉ० नगेन्द्र

96- हनुमत्पताका- महाकवि काली कृत- भारती प्रेस ,उरई।

97- हनुमान चरित मानस- श्री दीना नाथ शुक्ल दीन द्वारा विरचित।

98- हनुमान रामायण- श्री नरेन्द्र शर्मा विरचित चारुशीला बाग,अयोध्या।

99- हनुमच्चरित्र- ले० विद्यावाचस्पति,पं० गणेशदत्त "इन्द्र"

100- हनुमान अंक- डॉ० वीर भद्र सिंह

101-हनुमान बाहुक- गोस्वामी तुलसी दास कृत,गीता प्रेस,गोरखपुर

(ज्ञ)

102-ज्ञान समुद्र -संत सुन्दर दास कृत।

(पत्र-पत्रिकायें)

103-हिन्दुस्तानी एकेडमी की त्रैमासिक पत्रिका- अक्टूबर 1946- नारद एवं
शाण्डिल्य की भक्ति पद्धति- लेखक-डॉ० आद्या प्रसाद मिश्र

104-कल्याण का भक्ति विशेषांक- लेख-भक्ति- डॉ० सम्पूर्णानन्द

105-सम्मेलन पत्रिका- हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग।

106-कल्याण संघनाद-गीताप्रेस गोरखपुर।

107-कल्याण हनुमानांक- जनवरी 1975

108-हिन्दी अनुशीलन-डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक- प्रयाग।

109-राम दूत त्रैमासिक पत्रिका, अप्रैल 1983

110-मारुति काव्यांजलि-प्रकाशन श्री हनुमान आराधना मंडल प्रयाग

111-कल्याण गणेशांक -गीताप्रेस,गोरखपुर

112-कल्याण धर्मांक- गीता प्रेस गोरखपुर

113-धर्म युग- एशिया के हृदयांचलों में भगवान राम।

114-आज- दैनिक प्रकाशन वाराणसी- डॉ0 रघुवीर जब देश में रामायण कथा।

115-हिन्द एशिया में राम कथा- बुद्धि नाथ मिश्र "आज" साप्ताहिक,
30 अप्रैल 1967,पृ0-13

116-कल्याण उपनिषदांक।

ENGLISH

1. Encyclopaedia of Religion and Ethics - James Hastings.

2. Philosophy of Poetry - N.N. Chaudhury.

3. A study of Vaishnavism by Sri Kunja Govind Goswami.

4. Hindustan Religion - H.H. Wilson.

5. A History of Indian Philosophy - By Das Gupta.

6. The Nature of the Physical Worled by Sir A.D. Eddington.

7. Vaishnavism, Shaivism and minor Religious System - Sir R.G. Bhandarkar.

8. Indian Interpreter, Oct. 1909, Jan. 1910.

9. The Religion of India - By A. Barth.

10. Vedic Mythology - A.A. Mecadanel.

11. Ancient Indian Ginyology and Cranology - F.I. Parjitor.

12. Lectures on Ramayan - By B.S.S. Shastri.

13. Orcelogical Sarve of India.

14. The Art o Indian Asia - Jimbhar Plate 496 - 497, Phalak - 121.

15. Development of Hindu Iconography, page - 261.

16. Jain Iconography - U.P. Shah.

17. Ramayan in China - Raghubir Pr. Dr. Chikeya yamamotei - The International Academy of Indian Culture Lahur, August 1938.

18. Journal of Royal Asiatic Society States Branch 1910.